स्वामी श्रद्धानन्द की सम्पादकीय टिप्पणियाँ

प्रधान सम्पादक

डॉ. विष्णुदत्त राकेश

स्वामी श्रद्धानन्द की सम्पादकीय टिप्पणियाँ



श्री स्वामी श्रद्धानन्द

स्वामी श्रद्धानन्द की सम्पादकीय टिप्पणियाँ

प्रधान सम्पादक

डॉ. विष्णुदत्त राकेश

सम्पादक

डॉ. जगदीश विद्यालंकार

डॉ. कृष्ण अवतार अग्रवाल

संजय वर्मा

1999

श्री स्वामी श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र

गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार

स्वामी श्रद्धानन्द की सम्पादकीय टिप्पणियाँ

प्रथम संस्करण : 1999

मूल्य : 450 रुपये

प्रकाशक
श्री स्वामी श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र
गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार

प्रमुख वितरक
राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
2/38, अंसारी मार्ग
दरियागंज, नई दिल्ली-110002

मुद्रण-व्यवस्था
भूमिका प्रकाशन
मकान नं. 38, गली नं. 2, संत विहार
दरियागंज, नई दिल्ली-110002

SWAMI SHRADDHANAND KEE SAMPADKIYA TIPPANIYAN
Edited by Dr. Vishnudutt Rakesh

दो शब्द

महान् स्वतन्त्रता सेनानी स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज के क्रान्तिकारी अग्रलेखों ने जनसाधारण को उस समय असाधारण रूप से प्रभावित किया था। स्वाधीनता के इतिहास-लेखन के लिए इस सारी सामग्री का एक स्थल पर प्रकाशन अत्यन्त आवश्यक था। इस दिशा में कोई कार्य भी नहीं हुआ। इस अभाव की पूर्ति हेतु श्रद्धानन्द अनुसन्धान प्रकाशन केन्द्र ने एक योजना बनाई। उसी के तहत ग्रन्थ प्रकाशित होकर आपके हाथ में है। लोकमान्य तिलक के 'केसरी', स्वामी श्रद्धानन्द के 'सद्धर्म प्रचारक' और 'श्रद्धा' तथा वालमुकुन्द गुप्त के 'भारत मित्र' जैसे अखबारों ने स्वाधीनता के लिए समर्पित होनेवाले युवकों एवं नवयुवतियों की एक लम्बी शृंखला खड़ी कर दी। ब्रिटिश साम्राज्य इस वैचारिक आँधी से विचलित हो उठा। इस परिप्रेक्ष्य में 'सद्धर्म प्रचारक', 'श्रद्धा' और 'लिबरेटर' का अध्ययन अनेक रोमांचक और प्रेरक तथ्यों को हमारे सामने उद्घाटित करता है।

स्वामी श्रद्धानन्द हिन्दी पत्रकारिता के जनक कहे जा सकते हैं। उनके सुपुत्र पंडित इन्द्रजी तो जन्मजात पत्रकार थे। पत्रकार पिता ने पत्रकार पुत्र के साथ गुरुकुल में पत्रकारिता के जिस गोमुख का उद्भव किया, उसे थोड़े ही समय में गुरुकुल के स्नातकों ने विरासत के रूप में अंगीकृत कर प्रशस्त कर दिया, फिर तो एक के बाद एक गुरुकुल स्नातकों की लम्बी कतार हिन्दी पत्रकारिता के भवन को खड़ा करने में जुट गई।

गुरुकुल के पत्रकार लेखकों में सत्यदेव विद्यालंकार, श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार, श्री सत्यकाम विद्यालंकार, श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, श्री हरिवंश विद्यालंकार, श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार, श्री रामगोपाल विद्यालंकार, श्री दीनानाथ सिद्धान्तालंकार, श्री युधिष्ठिर विद्यालंकार, श्री यज्ञदत्त विद्यालंकार, श्री क्षितीक्ष वेदालंकार, श्री ब्रह्मदत्त विद्यालंकार तथा कृष्ण चन्द्र मेहता के नाम उल्लेखनीय हैं। साहित्यिक दृष्टि से भी श्री सत्यकाम ने 'धर्मयुग' तथा 'नवनीत', श्रीचन्द्र गुप्त ने 'आजकल', 'विश्वदर्शन' तथा 'सारिका', श्री नरेन्द्र विद्यावाचस्पति ने 'प्रतिभा', श्री प्रताप विद्यालंकार ने 'अभियान' तथा श्री विद्यासागर विद्यालंकार ने 'प्रकर' पत्रिकाओं का सम्पादन कर अपने साहित्य की गहरी छाप छोड़ी।

श्री विश्वनाथ विद्यालंकार के सम्पादन में प्रकाशित 'वैदिक विज्ञान' मासिक भी सदैव याद किया जाता रहेगा।

विश्वविद्यालय के शताब्दी प्रकाशन ग्रन्थ यज्ञ योजना की यह षष्ठ आहुति है। विश्वविद्यालय ने इसके पूर्व स्वामी श्रद्धानन्द पर सत्यदेव विद्यालंकार तथा डॉ. रणजीत सिंह के ग्रन्थ प्रकाशित किए हैं। पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति पर डॉ. कुशलदेव शंकरदेव कापसे का ग्रन्थ भी यहाँ से प्रकाशित हो चुका है। प्रस्तुत ग्रन्थ स्वामीजी के पत्रकार रूप को प्रामाणिकता के साथ उद्‌घाटित करता है।

इस ग्रन्थ के प्रधान सम्पादक के रूप में हिन्दी विभाग के आचार्य तथा प्रकाशन केन्द्र के निदेशक डॉ. विष्णुदत्त जी राकेश को मैं साधुवाद देता हूँ। उन्होंने एक विस्तृत अनुशीलनात्मक भूमिका लिखकर स्वामीजी के पत्रकारिता विषयक योगदान का तलस्पर्शी अनुशीलन प्रस्तुत किया है।

पुस्तकालयाध्यक्ष डॉ. जगदीश विद्यालंकार ने इस दुर्लभ सामग्री के संकलन एवं प्रकाशन के लिए पर्याप्त दौड़-धूप की, उन्हें सतत आशीर्वाद। आशा है, विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित अन्य प्रकाशनों के समान सहृदय पाठक इस ग्रन्थ को भी स्नेहपूर्वक अपनाएँगे।

ऋषि बोधोत्सव
25.02.1998

–डॉ. धर्मपाल
कुलपति
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

क्रान्ति के क्षितिज पर

वाराणसी निवास के दिनों में महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) महाकवि भारतेन्दु तथा उनके मंडल के कवियों के समान शृंगारी काव्य रचना तथा समस्यापूर्ति की ओर भी प्रवृत्त हुए थे। सन् 1873 में उच्च शिक्षा के लिए उन्होंने क्वींस कालेज बनारस में प्रवेश लिया था। यह वही समय था, जब भारतेन्दु ने 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का प्रकाशन किया। यह सांस्कृतिक इतिहास को समझने के लिए एक बड़ी घटना के रूप में सामने आई क्योंकि हिन्दी पत्रकारिता में हिन्दी के माध्यम से राजनीति, उपनिवेशवाद, धर्म, इतिहास, भाषा, साहित्य तथा समाज सुधार पर लेख लिखने तथा प्रकाशित होने का कार्य इसके द्वारा प्रारम्भ हुआ। महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्पर्क में 1879 में आने पर जहाँ उनके अन्धविश्वासों से ग्रस्त नास्तिक जीवन की समाप्ति हुई वहीं उस उन्मादी काव्य रचना का प्रवाह भी थम गया। उनकी जीवन दृष्टि अब प्रांजल और व्यापक हो गई थी। इस सम्बन्ध में वह लिखते हैं—'बाबू हरिश्चन्द्र कवि भी अद्वितीय समझे जाते थे। सारस्वत ब्राह्मण कक्कूजी के पुत्र ने मेरा उनसे परिचय कराया और यहाँ मेरा आना-जाना आरम्भ हुआ। उर्दू शायरी से प्रेम हो चुका था, हिन्दी का रस भी मिलने लगा। परन्तु इन दोनों का मेरे जीवन पर अच्छा असर नहीं पड़ा। रामचरित मानस के स्वाध्याय ने मेरे आचार-व्यवहार की आवारगी के दिनों में रक्षा की थी परन्तु उर्दू कवियों और भारतेन्दु की संगति में मानसिक पवित्रता का भाव ढीला पड़ने लगा। सामने से कोई सुन्दरी आ रही है। उसको देखते उसके शरीर, वस्त्र, चाल-ढाल पर भारतेन्दु जी ने कविता कहना आरम्भ किया और उसके सामने पहुँचने तक पूरा हो गया। कविता का तो यह आदर्श समझा जाता था, परन्तु ब्रह्मचर्य, सदाचार, मानसिक पवित्रता पर कुल्हाड़े की चोट लगाई जाती है।' भारतेन्दु ने उन्हें काव्य-रचना के नैतिक पक्ष की दृष्टि से निराश किया। अंग्रेजी के सर वाल्टर स्काट की तर्ज पर उपन्यास लेखन का कार्य शुरू किया पर यह विधा भी उन्हें रास नहीं आई। जालन्धर में मुख्तारी करते हुए उन्होंने उर्दू में नज्में लिखनी शुरू कीं, महफिलों में प्रशंसा भी मिली पर यहाँ भी मन नहीं जमा। अन्त में उन्होंने भारतेन्दु को पथ प्रदर्शक पत्रकार मानते हुए साप्ताहिक पत्र निकालने का निश्चय किया और 19 फरवरी, 1889 को 'सद्धर्म प्रचारक' का पहला अंक निकाला।

हिन्दी प्रचार की प्रेरणा भारतेन्दु को महर्षि दयानन्द सरस्वती से मिली। स्वदेशी का पाठ भी उन्होंने सत्यार्थ की पाठशाला में पढ़ा। महर्षि को उन्होंने अपने सम्पादक मंडल में भी स्थान दिया। उनका बलिया मेले का भाषण महर्षि की स्वदेशी धारणा का ही भाष्य है। स्वामी श्रद्धानन्द ने हिन्दी भाषा के प्रचार एवं स्वदेशी को इन्हीं दोनों महानुभावों से ग्रहण किया।

स्वामीजी ने 'सद्धर्म प्रचारक' में लिखा था—'दृढ़ प्रयत्न करना चाहिए कि प्रतिनिधि सभा का दफ्तर और आर्यसमाजियों का पत्र व्यवहार आर्यभाषा में हो जावे। क्या उर्दू का स्थान आर्यभाषा को लेते मैं अपनी आँखों से देख सकूँगा ?' इतना ही नहीं, उन्होंने उर्दू में निकलनेवाले प्रचारक को घाटा सहकर भी हिन्दी में निकाला। गुरुकुल में हिन्दी में विज्ञान, इतिहास, पुरातत्त्व तथा सांख्यिकी पर हिन्दी में पुस्तकें तैयार कराईं। महर्षि के पत्रों का सम्पादन कर पत्र सम्पादन के क्षेत्र में अग्रणी कार्य किया। पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी तथा आचार्य पद्मसिंह शर्मा इस दृष्टि से उनके अनुकर्त्ता थे। कल्याण मार्ग का पथिक लिखकर आत्मकथा लेखन का मार्ग प्रशस्त किया, आर्यपथिक लेखराम लिखकर जीवनी विधा को प्राणवान् बनाया, बन्दीघर के विचित्र अनुभव लिखकर संस्मरण कला का नमूना पेश किया तो मातृभाषा का उद्धार और उत्तराखंड की महिमा लिखकर सांस्कृतिक निबन्ध लेखन की परम्परा पुष्ट की। आदिम सत्यार्थ प्रकाश और आर्यसमाज के सिद्धान्त उनकी समीक्षात्मक दृष्टि का परिचय देते हैं। मानव धर्मशास्त्र तथा शासनपद्धति एवं पारसी-मत और वैदिक धर्म उनकी शोधप्रधान कृतियाँ हैं। उनकी हिन्दी सेवाओं की प्रशंसा हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. श्यामसुन्दर दास, आचार्य विधुशेखर भट्टाचार्य, मुंशी प्रेमचंद, गणेशशंकर विद्यार्थी तथा आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने मुक्तकंठ से की है।

स्वामी दयानन्दजी को अपने विचारों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए हिन्दी में पत्र निकालने की प्रेरणा भारतेन्दु से मिली थी। यद्यपि भारतेन्दु मंडल के सनातनी पंडित स्वामीजी से सहमत न थे। पंडित अम्बिकादत्त व्यास ने 'वैष्णव पत्रिका' में जब यह लिखा कि उदयपुर नरेश महाराणा सज्जनसिंह द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती से मनुस्मृति आदि ग्रन्थों के पढ़ने की बात सत्य नहीं है तो भारत सुदशा प्रवर्तक के जुलाई 1983 के अंक में व्यासजी के असत्य कथन की आलोचना प्रकाशित की गई। यह पत्र स्वामीजी की सहमति से ही प्रकाशित हुआ था। स्वामी श्रद्धानन्द ने भी 'सद्धर्म प्रचारक', 'सत्यवादी', 'श्रद्धा' तथा 'लिबरेटर' जैसे पत्र इसी अभिप्राय से प्रकाशित किए। धार्मिक प्रचार, शिक्षा सुधार, सामाजिक जागरण और राजनीतिक क्रांति के लिए इसके अतिरिक्त और उपयुक्त तथा समर्थ माध्यम हो भी क्या सकता था ?

हिन्दी कवियों में श्री मैथिलीशरण गुप्त, श्रीधर पाठक तथा आचार्य महावीर

प्रसाद द्विवेदी तथा हिन्दी सेवी राजनीतिज्ञों में श्री लोकमान्य तिलक, महामना मालवीय, महात्मा गाँधी, लाला लाजपतराय तथा काका कालेलकर उनके प्रबल प्रशंसक थे। वह प्रसिद्ध तथा अप्रसिद्ध हिन्दी सेवियों को भरपूर सम्मान देते थे। यही कारण है कि उनके समाचार-पत्रों में ऐसे कई अप्रसिद्ध हिन्दी सेवियों का भी नोटिस लिया गया है जिनकी चर्चा बड़े साहित्येतिहास लेखकों ने नहीं की। 18 फरवरी, 1921 की 'श्रद्धा' की एक टिप्पणी देखिए—'हिन्दी के कवि पीर मुहम्मद यूनिस का इस सप्ताह अचानक शरीरपात हो गया। आप बेतिया (बिहार) के रहनेवाले थे। मुसलमान होकर भी आपको हिन्दी से विशेष प्रेम था। आपकी कविता पढ़ने का जिन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वे जानते हैं कि उसमें कैसा रस और सौन्दर्य होता था। आपने कुछ एक खंडकाव्यों की रचना भी की है। हम आपके परिवार के साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हुए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह आपकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे।'

स्वामीजी उन हिन्दी लेखकों को अधिक पसन्द करते थे जो भारत की सामासिक संस्कृति के पक्षधर थे। स्वाधीनता के लिए हिन्दू-अहिन्दू सब का संगठित होना उनकी प्राथमिकता थी। 2 जुलाई, 1920 की 'श्रद्धा' में इसी आशय से उन्होंने श्रीधर पाठक की यह कविता प्रकाशित की :

प्यारा हिन्दुस्तान हमारा।
प्यारा बयावान औ जंगल, झील पहाड़ नदी औ दलदल,
बीहड़ बाग फूल मेवाफल, प्यारा है हर एक नज़ारा।
प्यारी गंगा प्यारी जमना, गोदावरी नर्मदा कृष्णा,
हिमालया हिन्दू कुश विन्ध्या, प्यारी ज़मीन आसमान प्यारा।
हिन्दू मुसलमान ईसाई, बौद्ध पारसी जैनी भाई,
मन्दिर मूरत तीरथ मस्जिद, मक्का, प्राग, हज्ज हरद्वारा।

श्रीधर पाठक स्वामीजी से मिलने हरिद्वार भी आए थे। पंडित सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार से उनकी गहरी आत्मीयता थी। मसूरी प्रवास के दिनों में देहरादून की रमणीय प्रकृति और नैसर्गिक सुषमा से वह प्रभावित हुए थे। कश्मीर और देहरादून पर उनकी कविताएँ प्रसिद्ध हैं। पाठकजी प्रकृति चित्रण के कारण सच्चे स्वच्छन्दतावाद के प्रवर्तक माने गए हैं। दूसरे कवि पंडित रामनरेश त्रिपाठी थे। उनके 'मिलन' (1917) और 'पथिक' (1920) काव्यों की उस समय धूम थी। असहयोग आंदोलन के कारण वह स्वामीजी के निकट आए थे। स्वामीजी ने उनकी 'कविता कौमुदी' की अच्छी समीक्षा की थी। 'पथिक' की इन पंक्तियों ने असहयोग सेनानियों का मार्गदर्शन किया था :

पराधीन रहकर अपना सुख शोक न कह सकता है,
वह अपमान जगत में केवल पशु ही सह सकता है।

त्रिपाठीजी के अतिरिक्त एक और शायर थे शान्ति बहादुर बेबस, जिन्हें स्वामीजी का आशीर्वाद प्राप्त था। 9 जुलाई, 1920 की 'श्रद्धा' में बेबस की कविता छापकर उन्हें प्रोत्साहित किया :

कब तक नहीं मिलेगा, मेरा वो आशियाना
मेरी भली गुज़र थी यह था बहिश्त मुझको
रहता था चैन से मैं, मिलता था आबोदाना।
मेरे ही दर पै आके, तूने पनाह पाई
ज़ालिम ज़रा न सोचा यूँ ठीक था सताना।
आरामगाह मेरी कब फिर नसीब होगी,
घर मेरा बन गया है मेरा ही क़ैदखाना।
तू खुद बेखुद है मुलज़िम और खुद बना है मुंसिफ
तेरी निगाह में तो रोना भी है बहाना।

पराधीन भारत में साहित्य के विप्लव के स्वर तिलक के उद्घोष के बाद सुनाई पड़ने लगे। प्रथम स्वाधीनता संग्राम कीं असफलता तथा महारानी विक्टोरिया की किसी धर्म में हस्तक्षेप न करने की नीति ने भारत के बौद्धिकों को मूर्छित कर दिया। सेवक कवि ने जिनका निधन 1881 में हुआ तथा जो काशी के रईस हरिशंकर और काशिराज महाराजा ईश्वरीनारायण सिंह के दरबारी कवि थे, घोषणा की :

श्री मलिका विकटोरिया, छायो तेज ललाम,
समर कृपानादिकन को, रह्यो न अब कछु काम।

आर्यसमाजी भी धर्मप्रचार की धुन में इसी मूर्च्छा से त्रस्त थे। श्री सत्यदेव विद्यालंकार ने लिखा है कि 'अपने धर्म प्रचार की धुन के पीछे पागल आर्यसमाजियों को तो इस घोषणा ने मूर्छित ही किया हुआ था। मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) जी पर भी यह मूर्छा पूरी तरह छाई हुई थी। आश्चर्य तो यह है कि 1901 से 1912 तक सरकार द्वारा इतने लांछित, अपमानित एवं पददलित होने पर भी आर्यसमाजियों की यह मूर्छा भंग नहीं हुई।' भारतेन्दु एवं मुंशीरामजी में अंग्रेजी शासन के प्रति प्रारम्भिक नरमी के पीछे धार्मिक सहिष्णुता के अतिरिक्त कोई दूसरा भाव न था। यद्यपि 1885 में कांग्रेस की स्थापना के बाद देश में परिवर्तन की लहर उठने लगी थी पर यह विरोध सामाजिक-सांस्कृतिक अधिक और राजनीतिक कम था किन्तु तिलक के राजनीति में पदार्पण के साथ उपनिवेशमूलक शोषण के विरुद्ध गहरा स्वर उद्बुद्ध हुआ और

हिन्दी पत्रकारिता तथा साहित्य में स्वदेशीवाद तथा राष्ट्रवाद की प्रबल चर्चा होने लगी। स्वामीजी को राजनीति में तिलक ने सर्वाधिक प्रभावित किया। यही कारण है कि 'सद्धर्म प्रचारक' में धार्मिक तथा शैक्षिक समस्याओं के साथ-साथ उन्होंने तिलक के मन्तव्यों पर अपने विचार प्रकट किए।

गुरुकुल स्वामीजी के लिए राष्ट्रीय शिक्षा का ही केन्द्र नहीं था, वह तो गुरुकुल को स्वाधीनता आन्दोलन का प्रमुख केन्द्र बनाकर राजनीति में युवकों की सक्रिय भागीदारी की तैयारी कर रहे थे। दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह कर रहे गाँधीजी को श्री गोखले की मार्फत उन्होंने ब्रह्मचारियों द्वारा एकत्र 1500 रुपए की सहायता 1913-14 में भिजवाई। इस संदर्भ में 21 अक्तूबर, 1914 को गाँधीजी ने यह पत्र लिखा :

'प्रिय महात्माजी,

श्रीयुत एन्ड्रूज ने आपके नाम और काम का परिचय मुझे दिया है। मैं अनुभव करता हूँ कि मैं किसी अजनबी को पत्र नहीं लिख रहा हूँ। इसलिए आशा है कि आप मुझे आपको 'महात्माजी' लिखने के लिए क्षमा करेंगे। मैं और श्रीयुत एन्ड्रूज आपकी और आपके काम की चर्चा करते हुए आपके लिए इसी शब्द का प्रयोग करते हैं। श्री एन्ड्रूज ने यह भी बताया है कि आपसे, गुरुदेव से तथा श्री रुद्र से वे किस प्रकार प्रभावित हुए हैं। आपके विद्यार्थियों ने सत्याग्रहियों के लिए जो काम किया है, उसका वर्णन भी उन्होंने मुझसे किया है। गुरुकुल के जीवन का जो चित्र उन्होंने खींचा है, उससे मैं यह पत्र लिखते हुए अपने को गुरुकुल में बैठा हुआ समझता हूँ। निस्सन्देह उन्होंने मुझे इन तीनों संस्थाओं को देखने के लिए अधीर बना दिया है और मैं उनके संचालकों, भारत के तीनों सपूतों के प्रति अपना आदर व्यक्त करना चाहता हूँ।'

गाँधीजी भारत पधारे, उनके फोनिक्स आश्रम के विद्यार्थी गुरुकुल में रहे। इन विद्यार्थियों के हृदय पर स्वामीजी तथा आश्रम पद्धति का गहरा प्रभाव पड़ा। 8 फरवरी, 1915 को स्वामीजी के तार के प्रत्युत्तर में गाँधीजी ने लिखा—'महात्मा जी, आपका तार मुझे मिला था। इसका प्रत्युत्तर तार से भेजा था, वह आपको मिला होगा। मेरे बालकों के लिए जो परिश्रम आपने उठाया और उन्हीं को जो प्यार बतलाया, उस वास्ते आपका उपकार मानने का मैंने भाई एन्ड्रूज को लिखा था, लेकिन आपके चरणों में सिर झुकाने की मेरी उम्मीद है। इसलिए बिन आमंत्रण आने की भी मेरी फरज समझता हूँ। मैं बोलपुर से पीछे फीरूँ उस वखत आपकी सेवा में हाजर होने की मुराद रखता हूँ।'

इसके बाद 8 अप्रैल, 1915 को गाँधीजी गुरुकुल में आए। स्वामीजी ने गाँधीजी को मानपत्र देते हुए 'महात्मा' की उपाधि से विभूषित किया।

स्वामीजी का राजनीतिक जीवन 9 मार्च, 1919 का प्रारम्भ हुआ, जब उन्होंने

दिल्ली में सत्याग्रह की तैयारी के लिए एक सार्वजनिक सभा में भाषण किया। इससे पूर्व गाँधीजी ने साबरमती आश्रम से जो पत्र स्वामीजी को लिखा उससे पता चलता है कि धर्माधारित राजनीति के गाँधीजी विरोधी नहीं थे। गाँधीजी ने लिखा :

'भाई साहेब,

आपका पत्र मिला। मेरा यह विश्वास है कि जब तक हम लोग धार्मिक भावना से राजनीति क्षेत्र में प्रवेश नहीं करते, तब तक भारत का सच्चा और वास्तविक अभ्युदय नहीं हो सकता। यदि आप स्वागत समिति के सभापति हो जाएँगे तो आप कांग्रेस में धार्मिक भाव पैदा करने में समर्थ हो सकेंगे। इसलिए आपको स्वागत समिति का सभापति होना ही चाहिए। यही सलाह मैं आपको दे सकता हूँ।'

स्वामीजी ने गाँधीजी के अनुरोध को स्वीकार करते हुए अमृतसर कांग्रेस की स्वागत समिति का अध्यक्ष होना मान लिया। आतंक से निष्प्राण पंजाब में कांग्रेस का अधिवेशन कराना और कांग्रेस के मंच पर हिन्दी भाषण कर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने का श्रेय स्वामीजी को जाता है।

असहयोग आन्दोलन में स्वामीजी के खुलकर आ जाने से कुछ आर्य नेताओं को राजकोप की शंका सताने लगी। कुछ मुखर तथा कुछ दबे स्वर में इस निर्णय का विरोध करने लगे किन्तु स्वाधीनता के दीवाने स्वामीजी विचलित न हुए। उन्होंने 15 मार्च, 1919 को बम्बई से इन्द्रजी को पत्र लिखा—'असहयोग सत्याग्रह के आन्दोलन में मेरे प्रवेश से कुछ आर्यसमाजी घबरा रहे हैं। तुम मेरी ओर से ठीक समझकर 'सद्धर्म प्रचारक' में लिख दो कि स्वामी श्रद्धानन्द संन्यासी हैं। उनका किसी आर्य संस्था से विशेष सम्बन्ध नहीं। उनके सत्याग्रह में शामिल होने के अर्थ नहीं कि आर्यसमाज संस्था रूप में इसमें शामिल है। ऐसे आर्यसमाजी होंगे जो सत्याग्रह को उचित न समझें।'

इसी आशय का एक पत्र 25 सितम्बर, 1920 को उन्होंने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान लाला रामकृष्णजी को लिखा था—'इस समय मेरी सम्मति में असहयोग की व्यवस्था के क्रियात्मक प्रचार पर ही मातृभूमि के भविष्य का निर्भर है। यदि यह आन्दोलन अकृतकार्य हुआ और महात्मा गाँधी को सहायता न मिली तो देश की स्वतन्त्रता का प्रश्न पचास वर्ष पीछे जा पड़ेगा। यह जाति के जीवन-मृत्यु का प्रश्न हो गया है। इसलिए मैं इस कार्य में शीघ्र लग जाऊँगा। यदि आपकी सम्मति में इस काम में लगने के लिए मुझे गुरुकुल या आर्यसमाज के अन्य कार्यों से अलग हो जाना चाहिए तो जैसा पत्र आप तजबीज करेंगे मैं पब्लिक में भेज दूँगा। मैं इस कार्य से रुक नहीं सकता। मुझे यह काम इस समय सर्वोपरि दीखता है।'

स्पष्ट है, स्वामीजी देश की स्वाधीनता को अपनी प्रथम वरीयता मानते थे। 'सद्धर्म प्रचारक' को वह इसी लक्ष्य की पूर्ति का माध्यम बना चुके थे। इसी समय

उन्होंने 'श्रद्धा' साप्ताहिक के प्रकाशन की योजना बनाई।

स्वामीजी ने राष्ट्रीय शिक्षा के अतिरिक्त असहयोग, स्वदेशी, अछूतोद्धार तथा शुद्धि आन्दोलन को अपना लक्ष्य बनाया। 'श्रद्धा' (1920-21) तथा 'लिबरेटर' (1926) में इन्हीं बिन्दुओं पर उन्होंने अपने विचार व्यक्त किए हैं। गाँधीजी ने अछूतोद्धार की प्रेरणा स्वामीजी से ली। 18 मार्च, 1916 को गुरुकुल में होनेवाले अछूतोद्धार सम्मेलन में गाँधीजी ने कहा था–'यदि नानकचन्द यह न कह गए होते कि अछूतों के गोत्र वे ही हैं जो दूसरे राजपूतों के हैं तो भी हम उन्हें अछूत न समझते क्योंकि सबसे प्रेम करना हमारा कर्तव्य है। श्री शंकर नायर ने मुझसे कहा था कि अछूतों के साथ असमानता का व्यवहार करने के कारण भारत हमारे हाथ से चला गया। मैं भी ऐसा विश्वास करता हूँ। जब कोई और हमारे साथ ऐसा अपमानजनक व्यवहार करेगा तब हम इसे समझेंगे। सच कहें तो हमने वास्तव में भयानक पाप किया है। अपनी अन्तरात्मा और अपने कल्याण के लिए हमें प्रायश्चित्त करना चाहिए।'[1]

इसके अतिरिक्त क्रिश्चियन कालेज मद्रास के प्रधानाचार्य रेवरेंड जी पिंटेनरिंग की अध्यक्षता में 16 फरवरी, 1916 को भाषण करते हुए भी उन्होंने कहा था–'समझ में नहीं आता कि धन्धे के बिना पर किसी को अस्पृश्य कैसे माना जा सकता है ? आप जो विद्यार्थी हैं और आधुनिक शिक्षा पा रहे हैं, यदि आप भी इस पाप के भागी हुए, इससे तो यही अच्छा होता कि आप निरक्षर ही रह जाते। क्योंकि आपने एक विदेशी भाषा के माध्यम से सोचा है और आपकी सारी शक्ति उसी में लग गई है और इसलिए हमने आश्रम में यह नियम भी बनाया है कि हमारी शिक्षा का माध्यम देशी भाषाएँ होंगी।'[2] देश्य भाषा के माध्यम से शिक्षा देने का सफल प्रयोग वह गुरुकुल में देख चुके थे।

गाँधीजी की ही तरह स्वामीजी ने लिखा–'हिन्दुओं में प्रचलित अस्पृश्यता का अभिशाप उनके सम्मान पर बट्टा है और उनके इस पाप का दुष्परिणाम सम्पूर्ण भारतीय राष्ट्र भुगत रहा है। जब कभी हमारे राजनीतिक नेता स्वराज्य की माँग पेश करते हैं तो उनके सामने उनके पापों को रखकर उनका मुँह बन्द कर दिया जाता है। जो लोग अपने ही समाज के एक-तिहाई लोगों को गुलाम बनाए हुए हों और उन्हें पैरों तले कुचल रहे हों, उन्हें विदेशियों द्वारा किए गए अत्याचारों के विरुद्ध शिकायत करने का कोई अधिकार नहीं।'

इतना ही नहीं, कांग्रेस के मंच से अछूतोद्धार की बात भी स्वामीजी ने ही की। अमृतसर में 27 दिसम्बर, 1919 को भाषण करते हुए स्वामीजी ने कहा–'राष्ट्र में एक वस्तु की कमी है। वह क्या है ? मुक्ति सेना के जनरल बूथकर ने सुधार

---

1. सम्पूर्ण गाँधी वाङ्मय, खंड 13, पृ. 261
2. वही, पृ. 264

योजना समिति के सम्मुख अपने वक्तव्य में कहा था कि साढ़े छह करोड़ भारतीय अछूतों को विशेष सुविधा दी जानी चाहिए क्योंकि वे ब्रिटिश सरकार के आधार स्तम्भ हैं। मैं आपसे निवेदन करूँगा कि आप इस वक्तव्य के अन्तस्तल में घुस कर जानने का प्रयत्न करें कि वे साढ़े छह करोड़ अछूत सरकार के आधार स्तम्भ कैसे बन सकते हैं। जब कि आप इस पवित्र पंडाल में इकट्ठे हुए हैं तो मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि आप यह शपथ उठाएँ कि इन अछूतों के प्रति आपका व्यवहार इस प्रकार का हो कि उनके बच्चे आपके बच्चों के साथ कालेज और स्कूलों में पढ़ सकें। आप उन्हें अपने परिवारों में उसी प्रकार घुलने-मिलने दीजिए, जिस प्रकार आप स्वयं अपने परिवारों में घुलते-मिलते हैं।'

1920 के नागपुर कांग्रेस के अधिवेशन में स्वामीजी ने ही अछूतोद्धार का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। 1921 में इसके क्रियान्वयन को लेकर उच्च हिन्दुओं और मुसलमानों ने आक्रोश व्यक्त किया। स्वामीजी ने दुःखी मन से 9 सितम्बर, 1921 को एक पत्र गाँधीजी को लिखा जो बाद में 'लिबरेटर' में प्रकाशित हुआ।

1924 में 9 मई को कालीकट वायकोम में दलित जातियों के सत्याग्रह में भाग लेकर लखनऊ कांग्रेस अधिवेशन में अस्पृश्यता निवारण के लिए ठोस कार्यक्रम प्रस्तुत कर तथा स्यालकोट पंजाब के अछूत मेघों (1902) को शुद्ध कर स्वामीजी ने सच्चे मन से इस दिशा में काम किया था। उनकी देखरेख में दिल्ली तथा उसके आसपास के सैकड़ों अछूतों को आर्यसमाज ने राष्ट्र की धारा से जोड़ दिया। यही कारण है कि स्वामीजी के बलिदान पर श्रद्धा व्यक्त करते हुए गाँधीजी ने कहा था—'स्वामीजी ने अछूतों के लिए जो कुछ किया उससे अधिक किसी और पुरुष ने भारत में नहीं किया। उनका अछूतों के प्रति प्रेम इतना अधिक था कि एक बार उन्होंने मुझसे कहा था कि कांग्रेस अछूतों के लिए कितना ही काम करे परन्तु जब तक महासमिति का प्रत्येक सदस्य कम से कम एक अछूत नौकर अपने घर में रखने की प्रतिज्ञा न ले तब तक कांग्रेस की सेवा कोई बड़ी नहीं कही जाएगी।'

स्वामीजी ने 1922 में अमृतसर में गुरु के बाग सत्याग्रह में सिखों के साथ सत्याग्रह कर जेलयात्रा की। 6 दिसम्बर, 1922 को मियाँवाली जेल से मुक्त होने के बाद उन्होंने इन्द्रजी को पत्र लिखकर बताया कि अब वह केवल दो कार्य करेंगे और पूरी शक्ति के साथ करेंगे—(1) दलित जातियों का उद्धार तथा (2) ब्रह्मचर्य का प्रचार। गुरुकुल में इन दोनों दिशाओं में कार्य हुआ।

असहयोग आन्दोलन और स्वदेशी को लेकर गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने बड़ा कार्य किया। पंडित इन्द्र विद्यावाचस्पति, आचार्य रामदेव, पंडित सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, दीनदयालु शास्त्री, पूर्णचन्द्र विद्यालंकार, आचार्य अभयदेव, पंडित चन्द्रमणि विद्यालंकार तथा दीनानाथ विद्यालंकार आदि ने स्वामीजी के पगचिन्हों पर चलकर स्वाधीनता के यज्ञ में बढ़-चढ़कर भाग लिया। गाँधीजी को जब गुरुकुल के विद्यार्थियों ने सन्देश

भेजने के लिए पत्र लिखा तब 5 नवम्बर, 1920 को पूना से गाँधीजी ने यह उत्तर दिया :

'गुरुकुल ने मेरे बालकों को प्रेमपाश में बद्ध कर दिए थे, यह बात मैं कैसे भूल सकता हूँ ! आपको मैं क्या सन्देश भेजूँ ? परन्तु यदि कुछ कहना चाहिए तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि क्या आप आधुनिक समय का यज्ञ कर स्तेय के पाप से बचते हो ? आप सूत्र चक्र चलाकर हिन्दुस्तान के भूख से दुःखित लोगों का खयाल प्रतिदिन करते हो ? क्या आपने अनुभव कर लिया है कि इस समय छोटा-सा चक्र चलाना महायज्ञ है ? नेहाभिक्रमनाशोस्तीति।'[1]

गाँधीजी के साथ असहयोग आन्दोलन में मुख्यतः स्वामी श्रद्धानन्द तथा करवीर पीठ के शंकराचार्य मुक्तभाव से जुड़े थे। 4 नवम्बर, 1920 को नासिक की जिस सभा में गाँधीजी ने भाषण किया था, उसकी अध्यक्षता श्री करवीर पीठाधीश्वर ने की थी तथा 14 मार्च, 1919 को रौलेट विधयेक पर विरोध के लिए जो सभा बम्बई में हुई थी, उसमें स्वामी श्रद्धानन्द भी उपस्थित थे। गाँधीजी ने भाषण प्रारम्भ करते हुए कहा था—'आप लोगों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि आज इस सभा में संन्यासी श्रद्धानन्द पधारे हुए हैं। हमारी सेना में उनका सम्मिलित होना हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत बन गया है।'[2]

5 सितम्बर, 1920 को गाँधीजी ने लिखा—'मेरा आन्दोलन एक धार्मिक आन्दोलन है और प्रत्येक सच्चे मुसलमान के लिए असहयोग आन्दोलन जिसमें कौंसिलों का बहिष्कार भी शामिल है, एक ऐसे धार्मिक आदेश की तरह बन्धनकारी है जिसे कभी तोड़ा नहीं जा सकता। स्वामी श्रद्धानन्द तथा बाबू चित्तरंजनदास ने इस आन्दोलन का उद्देश्य पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करना बतलाया है।' स्वामीजी ने असहयोग के प्रचार-प्रसार में कोई कसर उठा नहीं रखी। उन्होंने अपने पत्रों द्वारा स्वदेशी संकल्प का प्रारूप तथा अंग्रेजी शासन का विरोध जिस उत्कटता तथा निर्भीकता से किया उससे प्रभावित होकर 3 अप्रैल, 1919 को गाँधीजी ने स्वामीजी को तार दिया—'मद्रास प्रान्त के भ्रमण से अभी लौटा हूँ। आपने समाचार-पत्रों को जो ज़ोरदार वक्तव्य दिया है, उसे भी पढ़ा है। उस पर मुझे गर्व है। रौलेट कानून का विरोध करने में आपने तथा दिल्ली के लोगों ने जिस अनुकरणीय धैर्य से काम लिया है, उसके लिए मैं आपको तथा दिल्ली के लोगों को साधुवाद देता हूँ। हम उसके पीछे निहित दमन की भावनाओं का विरोध कर रहे हैं, यह कोई आसान कार्य नहीं है।'[3]

स्वामीजी के वक्तव्यों को विभिन्न समाचार-पत्रों में भेजने का कार्य

---

1. सम्पूर्ण गाँधी वाङ्मय, खंड 18, पृ. 458
2. वही, खंड 15, पृ. 140
3. वही, पृ. 178

श्री सी.एफ. एन्ड्रूज को करना पड़ा। 'श्रद्धा' की प्रसार संख्या सीमित थी पर अंग्रेजी पत्रों में स्वामीजी के वक्तव्य श्री एन्ड्रूज ही भेज रहे थे। गाँधीजी ने इसीलिए 4 मई, 1919 को एक पत्र श्री एन्ड्रूज को लिखकर आदेश दिया–'मेरा आग्रह है कि जब तक ज़रूरत हो तब तक तुम्हें श्रद्धानन्दजी के साथ रहना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि वहाँ से छुट्टी पाने पर तुम यहाँ आओ ताकि हम सारी स्थिति का सिंहावलोकन कर सकें। यह रक्तपात, यह ज़ोर-जुल्म, यह फौजी कानून, ये सैनिक ढंग की सज़ाएँ–इन सबके बीच प्रेम का कानून पूरी तरह काम कर रहा है, उसके अपार प्रमाण मिलते रहते हैं। तुम्हें और स्वामीजी को प्यार।'[1]

स्वामीजी की बात तब हिन्दू और मुसलमान खुले हृदय से सुनते थे। 7 अप्रैल, 1919 को जामा मस्जिद के मिम्बर से भाषण करनेवाले वह प्रथम तथा अन्तिम हिन्दू थे। गाँधीजी स्वामीजी के इस जादुई प्रभाव से चकित और श्रद्धानत थे, अतः 11 अप्रैल, 1919 को उन्होंने बम्बई से स्वामीजी को तार भेजा–'हिरासत से छूटकर अभी-अभी आया हूँ। और बातें बाद में। कुछ जगहों पर जानें गईं, इसका अफसोस। लोगों का अपने पर नियंत्रण रखना और हिंसा से बचना बिलकुल जरूरी। यह बात लाहौर अमृतसर इत्यादि में कहें।'[2]

गाँधीजी की सहृदयता का राजनीतिक मुसलमानों ने अनुचित लाभ उठाया। 2 मई, 1919 को आन्दोलन की अव्यावहारिकता से खिन्न होकर स्वामीजी ने सत्याग्रह कमेटी से त्यागपत्र दे दिया। उनके लिए स्वराज्य की प्राप्ति के साथ आर्य संस्कृति की रक्षा का प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण था। इसके साथ ही स्वामीजी इस बात से भी सहमत न थे कि सरल जनता को अहिंसा अपनाने के नाम पर फौजियों के हवाले होने दिया जाए; अथवा लाखों सिविल और मिलिटरी के सरकारी नौकरों को उनकी नौकरी से अलग कर वैकल्पिक आजीविका की व्यवस्था किए बिना अराजकता फैलने दी जाए।

स्वामीजी ने 9 मई, 1919 को अपने पत्र में लिखा– 'शोक यह है कि जिन सहस्रों आदमियों ने आपमें श्रद्धा के भाव से प्रेरित होकर सांसारिक और अपने भविष्य की परवा न करके सांसारिक सब कुछ छोड़ा, उनसे कुछ भी सम्मति न लेकर आप एकदम घोषणा पत्र छपवा देते हैं। रौलेट एक्ट के विरुद्ध मेरा व्यक्तिगत सत्याग्रह जारी रहेगा।'

पंजाब के दंगों पर गाँधीजी के मौन ने उन्हें भीतर तक झकझोर दिया। गाँधीजी से अलग होने में यह भी एक प्रमुख कारण था। गाँधीजी ने स्वामीजी के त्यागपत्र पर लिखा–'पंजाब के दंगों के सम्बन्ध में मेरे मौन के कारण बहुत से मित्रों ने मुझे गलत समझा है और अब यह एक सर्वविदित बात है कि मुझे संन्यासी स्वामी

---

1. सम्पूर्ण गाँधी वाङ्मय, खंड 15, पृ. 280
2. वही, पृ. 367

श्री श्रद्धानन्द जी जैसे अनेक प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध नेताओं के सहयोग से वंचित होना पड़ा है यद्यपि मेरे प्रति उनका मैत्रीभाव ज्यों का त्यों बना हुआ है।'[1]

गाँधीजी के प्रति स्वामीजी की श्रद्धा में कोई कमी नहीं आई। श्री चिन्तामणि ने जब गाँधीजी के असहयोग पर प्रहार किया तो स्वामीजी तिलमिला उठे। उन्होंने 21 मई, 1920 की श्रद्धा में लिखा—'संयुक्त प्रान्त के एकमात्र माडरेट पत्र के 14 मई के प्रमुख लेख में मि. चिन्तामणि ने 'महात्मा गाँधी और सहयोग त्याग' पर लिखते हुए ऐसा स्वर अलापा है जिसकी मधुर तान बिलकुल ही गोरेशाही की हित चिन्ता के ठेकेदार पत्रों के स्वर में मिल गई है। जिन विचारों की पायोनियर, सिविल मिलिटरी गज़ट या इंग्लिशमैन में आशा हो सकती थी, वैसे ही विचार उस लेख में प्रकट किए गए हैं। इसलिए नहीं कि आपको भारत की नौकरशाही के हित की बड़ी फिकर है परन्तु इसलिए कि आप महात्मा गाँधीजी की सत्यनीति को सहन नहीं कर सकते। आप चिन्ता की पारसमणि की लाग से शासन-सुधार, सत्याग्रह, स्वदेशी और खिलाफ़त के मामलों को सोना बनाने का भरसक यत्न करते रहे हैं और अब भी आप सहयोग त्याग (Non Co-operation) के लोहे को सोना बनाना चाहते हैं पर आपकी मार ऐसी है जो लोहे को मिट्टी बनाये न छोड़ेगी। भूलकर आपकी कलम पंजाब के अत्याचारों के विरुद्ध चल पड़ी थी, उसके लिए आपने प्रायश्चित्त करते हुए मुसलमानों को चेतावनी देने के लिए लिखा है कि यदि पंजाब के लोग कुछ स्थानों में उपद्रव और सरकारी अधिकारियों का अपमान न करते तो सरकारी लोगों को कठिनता से ही अत्याचार करने का अवसर मिलता।'

स्वामीजी निर्भीक पत्रकार थे। सरकार ने भारत रक्षा कानून का दुरुपयोग करते हुए जब पंडित जवाहरलाल नेहरू को खतरनाक मानकर मसूरी से निकाला तब स्वामीजी ने इसका जोरदार विरोध किया। उन्होंने 21 मई, 1920 की 'श्रद्धा' में लिखा—'मान्य जवाहरलाल नेहरू उन देशभक्तों में से हैं जिन्होंने कभी अपनी देशभक्ति की डींग नहीं मारी। आपका जैसा शान्त स्वभाव है, वैसे ही आप देशभक्त कांग्रेसमैन हैं। आपमें देशभक्ति और जातीयता कूट-कूटकर भरी हुई है। पिछली पंजाब की जाँच में आपने भी बड़ी सहायता पहुँचाई थी। पंजाब के अनेक स्थानों पर आप स्वयं गए थे। अभी आप अपनी धर्मपत्नी के स्वास्थ्य बिगड़ने से हवा बदलने के लिए मसूरी गए हुए थे और उसी सेवाय होटल में ठहरे थे जिसमें हमारी सरकार ने अफगान प्रतिनिधियों का सत्कार करने के लिए अनेक प्रपंच रचे हुए हैं। श्री पंडितजी के साथ आपकी वृद्धा माता और बहिन भी थीं। आपको उन प्रतिनिधियों से कोई मतलब न था परन्तु फिर भी आप खतरनाक समझे गए। उसी स्थान में सत्रह दिन रह चुकने के बाद आपको भारत रक्षा कानून के आधार पर प्रान्तीय सरकार की ओर से आज्ञा दी गई कि यतः आप सामाजिक शान्ति के लिए

1. सम्पूर्ण गाँधी वाङ्मय, खंड 15, पृ. 367

कंटक हैं या हो सकते हैं अतः आपको देहरादून जिले के बाहर होना चाहिए। यह घटना मामूली नहीं है। यह जहाँ शान्त देशभक्त नेता का घोर अपमान होने से जाति का भयंकर अपमान है वहाँ भारत रक्षा कानून का अशुद्ध (अनुचित) तथा ज़बरदस्त प्रयोग है। इस केवल घटना के ही परन्तु मनमानी करतूतों के विरुद्ध जिनकी हमें बटलर राज्य में आशा नहीं हो सकती, भयंकर देशव्यापी आन्दोलन की भारी आवश्यकता है।'

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, सी.एफ. एन्ड्रूज, बाबू तोताराम सनाढ्य आदि महानुभावों ने प्रवासी भारतीयों की समस्या को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया। स्वामीजी ने भी इस समस्या पर गम्भीरता से विचार किया। फीजी के अत्याचारों से वह व्यथित थे। उन्होंने वहाँ होनेवाले अत्याचारों की जाँच के लिए कमीशन भेजे जाने और उसका खर्च उठाने की अपील करते हुए 20 अगस्त, 1920 की 'श्रद्धा' में 'प्रवासी भारतवासी' शीर्षक से टिप्पणी लिखी—'सातवीं जुलाई 'भारतमित्र' में फीजी से लौटे हुए प्रवासी भाइयों के जो उत्तर छपे हैं, उन्हें पढ़कर प्रत्येक भारतीय को अत्यन्त दुःख और आश्चर्य होगा। दो सौ से ऊपर मर्द और कुछ स्त्रियाँ भी पकड़ी गईं। जब ये लोग पकड़े गए तो नित्य ये लोग सबेरे छह से शाम के छह बजे तक धूप में खड़े किए जाते थे-और खाने के लिए रोटियों के टुकड़े इन लोगों की तरफ इस तरह फेंक दिए जाते थे मानो सब कुत्ते हैं। गोरे और जंगली सिपाही आकर स्त्रियों को मर्दों के सामने और मर्दों को स्त्रियों के सामने नंगा करके तमाशा देखते थे। सिपाही संगीनों से स्त्रियों के लहँगे चीरते थे। कहाँ तक कहें जो अत्याचार हुए उनके सामने, मशीनगन भी काँप जाएगी।

क्या हम इस अपमान को यों ही चुपचाप सह लेंगे ? हमारा कर्तव्य है कि हम तुरन्त ही एक कमीशन इन अत्याचारों की जाँच करने के लिए फीजी भेजें। हम जानते हैं कि इस डेपुटेशन या कमीशन को भेजने में हमारा चार-पाँच हजार रुपया खर्च होगा लेकिन इससे फीजी प्रवासियों की जो भलाई होगी, उसे खयाल में रखते हुए यह रक़म कोई बड़ी भारी नहीं है।'

यद्यपि दिसम्बर, 1904 में ननकू स्वर्णकार के प्रयत्न से बाबू मंगलसिंह के घर पर फीजी में आर्यसमाज स्थापित हो चुका था पर वहाँ विशेष प्रगति 1913 से हुई जब स्वामी राममनोहरानन्द धर्म प्रचार के लिए फीजी पहुँचे। 1917 में 'बा' में आयोजित आर्य सम्मेलन में भारतीय गुरुकुल की तर्ज पर वहाँ भी गुरुकुल खोलने का प्रस्ताव किया गया। 1919 में 'ननोवा' में गुरुकुल की स्थापना हुई। पंडित हरदयाल तथा पंडित शिवदत्त ने अध्यापन कार्य सँभाला। यहाँ के अधिकारियों ने स्वामी श्रद्धानन्द से भी पत्र-व्यवहार किया पर असहयोग आन्दोलन में व्यस्त रहने के कारण स्वामीजी का ध्यान इस ओर नहीं गया। 1924 में मथुरा में महर्षि दयानन्द जन्म-शताब्दी समारोह के संयोजक स्वामी श्रद्धानन्द थे। दक्षिण अफ्रीका से स्वामी

भवानी दयाल संन्यासी भी इस अवसर पर पधारे थे। यह आर्यसमाजी थे। इन्होंने अपने पैतृक ग्राम (शाहाबाद के निकट) में वैदिक पाठशाला तथा सासाराम में आर्यसमाज की स्थापना की थी। 1911 में बिहार आर्यप्रतिनिधि सभा के अवैतनिक उपदेशक बनकर यह 'आर्यावर्त' समाचार पत्र का सम्पादन भी कर चुके थे। आचार्य अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, श्री लक्ष्मीनारायण गर्दे तथा धूलचन्द अग्रवाल आपके प्रेरणास्रोत थे। आपकी 'प्रवासी की आत्मकथा' तथा 'दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास' प्रमुख कृतियाँ हैं। भवानीदयाल संन्यासी के अनुरोध पर स्वामी श्रद्धानन्द ने पंडित गोपेन्द्र नारायण पथिक को फीजी भिजवाया। पथिकजी गुरुकुल वृन्दावन के प्रेमी थे। आपके प्रयत्न से ही फीजी के विद्यार्थी पढ़ने के लिए 1927 से वृन्दावन आने शुरू हुए। 1927 में ही गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक पंडित अमीचन्द्र विद्यालंकार सपत्नीक फीजी गए। अमीचन्द्रजी कानपुर के निवासी थे। उन्होंने लातुका के निकट नसोवा नामक स्थान पर स्थापित गुरुकुल में अध्यापन कार्य किया। वह गुरुकुल कांगड़ी के पहले स्नातक थे जिन्हें महारानी एलिजाबेथ द्वितीय के राज्याभिषेक पर स्वर्णपदक से सम्मानित किया गया था। आपकी पुस्तकों में हिन्दी रीडर, हिन्दी बातचीत तथा हिन्दी व्याकरण प्रमुख हैं। पंडित प्रभुदयाल मंडल के कवि रामचन्द्र शर्मा की ये पंक्तियाँ फीजी में गूँजती रहीं :

भगवान हमारे भारत के नीके दिन किस दिन आयेंगे।
हम सभी प्रवासी रिलमिल कर जब आनन्द मोद मनायेंगे।
हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई नर जन्म सुफल कर पायेंगे।
सन्मान में भारत माता के हम धर्म ध्वजा फहरायेंगे।

फीजी के भारतीय मानस पर स्वामी श्रद्धानन्द का अमिट प्रभाव पड़ा। उनकी स्मृति में वहाँ श्रद्धानन्द मेमोरियल स्कूल खोला गया। श्री प्रह्लाद आर्य उसके सफल प्रधानाचार्य रहे। स्वामी श्रद्धानन्द विषयक यह रचना वहाँ प्रायः गाई जाती है :

हम सबके दिल में प्यार श्रद्धानन्द के लिए,
श्रद्धा है बेशुमार श्रद्धानन्द के लिए।
सेवक था सच्चा देश का, दीवाना धर्म का,
करता किसी की परवाह न परवाना धर्म का,
हर दिल है शुक्रगुजार श्रद्धानन्द के लिए।
यह वैदिक धर्म का नज़र आए जो बगीचा,
उसको दे अपना खून उस शहीद ने सींचा,
लाखों हैं पैरोकार श्रद्धानन्द के लिए,
सौ बार नमस्कार श्रद्धानन्द के लिए।

स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा गाँधी, दीनबन्धु एन्ड्रूज तथा बनारसीदास चतुर्वेदी

ने फीजी के प्रवासी भारतीयों को आत्मसम्मान की रक्षा के लिए खड़ा होना सिखाया। जोगिन्दर सिंह कँवल की 'एकपाती' रचना में समस्त फीजी प्रवासियों का यह भाव सिमटकर स्थायी हो गया है :

कैसे थे वे दिन, कितना लम्बा था संघर्ष
शायद मीठी कड़वी यादें
आज भी तेरी सूखी नाड़ियों में
तूफान मचा देती होंगी।
प्रवासियों को आत्मसम्मान दिलाने की
तेरी गूँजती क्रान्तिकारी आवाज़
जिसे सत्कारा था
महात्मा गाँधी और एन्ड्रूज ने भरपूर,
समुद्र की सर्द हवाओं को चीरकर
फीजी की सब सभाओं को—
और यहाँ के आन्दोलनों को गरमाती रही।

स्वामी श्रद्धानन्द ने भवानीदयाल संन्यासी को पत्र लिखकर प्रवासी भारतीयों को जो संदेश भेजा था, उसका महत्त्व ऐतिहासिक है :

'प्रिय भवानीदयाल जी, नमस्ते।

देशान्तरों में प्रवासी भारतीयों की जो स्थिति इस समय हो रही है, उसको जानकर प्रत्येक भारतीय के अन्दर प्रेम और सहानुभूति का संचार होता है। प्रवासी भाइयों को यह निश्चय रखना चाहिए कि जब तक स्वदेश को स्वराज्य की प्राप्ति नहीं होती तब तक उनको कष्ट सहना और अपमानित होना ही पड़ेगा। किन्तु मेरी शुभ इच्छा है कि सब प्रकार की विपत्तियों को सहन करते हुए भी वह अपने देश के गौरव की हानि न होने दें। यद्यपि बाह्य चक्षु उस आन्दोलन को देखने में सर्वथा असमर्थ हैं जो स्वराज्य प्राप्ति के लिए इस समय हो रहा है परन्तु दिव्य चक्षु द्वारा इस प्राचीन जाति का भविष्य बड़ा उज्ज्वल दिखाई देता है। अपने प्रिय प्रवासी भाइयों के लिए मेरा अन्तिम सन्देश यह है कि वे अपने अधिकारों की प्राप्ति के पवित्र धार्मिक युद्ध में आर्य संस्कृति को न भूलें और अपने आचरणों से सिद्ध कर दें कि प्राचीन आर्यावर्त के उच्चभाव उनके अन्दर काम कर रहे हैं। जिस सहस्रबाहु ने इस अत्यन्त प्राचीन जाति को पाँच हजार वर्ष से गिरते-गिरते बचा रखा है उस पर पूर्ण श्रद्धा रखने से, दो बाहुओं वाले उनका कुछ न बिगाड़ सकेंगे।

आपका मंगलाभिलाषी
श्रद्धानन्द संन्यासी[1]

1. स्वामी श्रद्धानन्द : एक विलक्षण व्यक्तित्व—डॉ. निरुपण विद्यालंकार तथा डॉ. विनोदचन्द्र विद्यालंकार, पृ. 458

स्वामीजी की राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली 'गुरुकुल ब्रह्मचर्याश्रम पद्धति' का अनुकरण महात्मा गाँधी ने भी किया। 14 जून, 1915 को अहमदाबाद से उन्होंने स्वामीजी को जो पत्र लिखा, उससे स्वामीजी के प्रयोग का औचित्य प्रमाणित होता है :

'महात्मा जी,

लड़के सब गुरुकुल आने के बाद में सब व्यवस्था करने की जंजाल में पड़ गया। उसलिए आपको मैं पत्र अगाड़ी न लिख सका। लड़कों पर आपने जो प्रेम बतलाया है, वह वे कभी नहीं भूल सकते हैं।

अहमदाबाद में हाल तो आश्रम खोल दिया है। उसकी नियमावली हिन्दी में बन रही है। तैयार होने से आपका अभिप्राय के लिए भेजी जाएगी।

आपका कृपाकांक्षी
मोहनदास गाँधी के वन्देमातरम्'[1]

इतना ही नहीं, उनके ब्रह्मचारियों ने भी गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के व्रत और श्रम को अपना आदर्श माना। 14 अगस्त, 1924 को गाँधीजी द्वारा 'यंग इंडिया' में लिखित इस टिप्पणी से बात और स्पष्ट हो जाती है :

'महाविद्यालय के छात्रों ने श्रद्धानन्दजी के गुरुकुल में पढ़नेवाले उन विद्यार्थियों की परिपाटी का अनुकरण किया है जिन्होंने दक्षिण अफ्रीका के दिनों में मजदूरी करके दान के लिए राशि इकट्ठी की थी। महाविद्यालय के छात्रों ने अपने विद्यालय के लिए बन रही इमारतों के निर्माण में मज़दूरों की तरह हाथ बँटाया है और वे प्राप्त होनेवाली यह मजदूरी सहायता की राशि में दे देंगे। इस प्रकार के काम की सम्भावनाएँ अनन्त हैं।'[2]

स्वामीजी की शिक्षा का लक्ष्य क्या था ? इसे जानने के लिए 1 अप्रैल, 1921 की 'श्रद्धा' में प्रकाशित 'नवस्नातकों को आचार्य का उपदेश' भाषण का यह अंश देखना चाहिए। यह भाषण बीस हजार लोगों के बीच हुआ था। श्री मोतीलाल नेहरू, लाला लाजपतराय तथा श्री आसफ अली भी इस उत्सव पर व्याख्यान देने के लिए उपस्थित थे। स्वामीजी की भावनाओं का प्रतिबिम्ब है यह भाषण :

'जिस शिक्षा द्वारा जान-बूझकर हिन्दू-मुसलमानों को लड़ाया जाय, जिसमें प्राचीन महापुरुषों को असभ्य बर्बर कहा जाय और जिसमें हमारे दिमागों को अंग्रेजों का दास बना दिया जाय, वह कभी भी भारतीय नहीं हो सकती है। हैदराबाद, मैसूर, काश्मीर में कभी हिन्दू-मुसलमानों का झगड़ा नहीं होता। अतः यह ठीक है कि हिन्दू-

1. सम्पूर्ण गाँधी वाङ्मय, खंड 13, पृ. 110
2. वही, खंड 24, पृ. 586

मुसलमानों की लड़ाई सरकार को अभीष्ट है और उनका इस लड़ाई से सदा सम्बन्ध रहता है। यह तालीम शिक्षा भी नहीं है। इसमें गुरु-शिष्य का सम्बन्ध कुछ भी नहीं है। दुकानें खुली हैं। रुपया दे जाओ और प्रोफेसर साहब का लेक्चर सुन जाओ। गुरु को शिष्य की उन्नति का खयाल स्वप्न में भी नहीं हो सकता है। उसे अपनी माहवारी तनख्वाह चाहिए। मैं कहता हूँ कि इन स्कूलों में गुरु गुरु नहीं हैं, ठग हैं। इसलिए आप इस बात पर विश्वास कीजिए कि प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही सर्वोत्तम तथा आदर्श है। विद्या का दान करनेवाले गुरु में न तो धन की लालसा हो, न किसी से राग, न किसी से द्वेष, तब ही शिक्षा का ठीक प्रचार हो सकता है। जहाँ शिक्षणालय गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर चल रहे हों, जहाँ आदर्श गुरु तथा सद्गुणी शिष्य हों, जहाँ धर्म ही एकमात्र शासक हो, वहाँ ही उत्तम आदर्श वेदानुमोदित शिक्षा दी जा सकती है।'

स्वामीजी के सिद्धान्त और आचरण में एकरूपता थी। वह सत्य तथा उपयोगी बात करने में लाग-लपेट नहीं करते थे। तिलकजी, जैसा पहले कहा जा चुका है, उनके परमादर्श थे। उनके निधन पर 6 अगस्त, 1920 की 'श्रद्धा' में 'राजनीति का सूर्यास्त' लेख लिखते हुए उन्होंने कहा था—'तिलक के होश सँभालने से पहले भी राजनीतिज्ञ थे और उनके समय में भी राजनीतिज्ञ हो चुके हैं और हैं जिनका लोहा माना गया है परन्तु फिर भी मैं यही कहता हूँ कि अपनी मातृभूमि में राजनीति का सूर्यास्त हो गया। इंग्लैंड के तत्त्वज्ञानी बेकन के विषय में लिखा गया है कि वह फिलासफी को आसमान पर से ज़मीन पर लाया; तिलक महाराज के विषय में निश्चय है कि भारतवर्ष में राजनीति को अंग्रेजी-पढ़ों के पुस्तकालय से बाहर निकालकर जनता की झोंपड़ियों में पहुँचाने के अगुआ यही थे। 'केसरी' पहला राजनीतिक समाचार पत्र है जो किसानों की झोंपड़ियों और मज़दूरों की गोष्ठियों में पढ़ा जाना शुरू हुआ था और गणपति पूजा पहला संगठन है जिसने जनता के बड़े भाग को एक राजनीतिक सूत्र में पिरो दिया।'

इस पर तिलकजी ने रूढ़िवाद से ग्रस्त होकर अपने पुत्र के विदेश जाने पर जब प्रायश्चित्त किया तब 'श्रद्धा' में स्वामीजी ने इस समाचार को छापकर अपनी अप्रियता प्रकट की। इतना ही नहीं, उन्होंने 9 जुलाई, 1920 की 'श्रद्धा' में 'पुत्र का पिता से विरोध' यह टिप्पणी लिखी—'विदेश यात्रा के लिए लोकमान्य तिलक के प्रायश्चित्त के विरोध में हम 'श्रद्धा' के पिछले अंक में लिख चुके हैं। अब सहयोगी 'वन्देमातरम्' द्वारा ज्ञात हुआ है कि तिलकजी के सुपुत्र ने 'इन्दु प्रकाश' में एक पत्र छपवाकर यह उद्घोषित किया है कि मैं अपने पिता के प्रायश्चित्त को सर्वथा नापसन्द करता हूँ। यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि—इस उपनिषद् का क्रियात्मक उदाहरण है।'

शुद्धि आन्दोलन के प्रश्न पर तथा मुस्लिम तुष्टीकरण की अन्धनीति पर

स्वामीजी का गाँधीजी से गहरा मतभेद हो गया। मुस्लिम नेताओं द्वारा महामना मालवीय, लाला लाजपतराय तथा स्वामी श्रद्धानन्द पर मुस्लिम विरोधी होने का आरोप लगाया गया। 4 मार्च, 1925 को गाँधीजी तथा मोतीलाल नेहरू ने हिन्दू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध में जो उपसमिति गठित की थी उसमें मौलाना मुहम्मद अली, शौकत अली, स्वामी श्रद्धानन्द, जवाहरलाल नेहरू तथा मि. जिन्ना शरीक हुए थे। अखिल भारतीय गोरक्षा मंडल की समिति में भी दादा साहब रघुनाथ पांडुरंग करन्दीकर, बाबू भगवानदास, डॉ. मुंजे तथा मालवीयजी के साथ स्वामी श्रद्धानन्द जी को भी नामित किया गया था। गाँधीजी ने गोरक्षा मंडल का जो संविधान बनवाया, उस पर लाला लाजपतराय, मालवीयजी, डॉ. मुंजे तथा स्वामी श्रद्धानन्द की सहमति ली गई। 22 मार्च, 1925 के 'नवजीवन' में इस आशय का समाचार भी प्रकाशित हुआ पर स्वामीजी के हिन्दुत्ववादी कठोर रुख पर मुस्लिम राजनेता असन्तुष्ट ही बने रहे। गाँधीजी ने स्वामीजी के सम्बन्ध में 29 मई, 1924 को 'यंग इंडिया' में लिखा—'स्वामी श्रद्धानन्दजी पर भी अविश्वास किया जाता है। मैं जानता हूँ कि उनके भाषण चिढ़ पैदा करनेवाले होते हैं परन्तु वे हिन्दू-मुस्लिम एकता भी चाहते हैं। दुर्भाग्य से उनका खयाल है कि हर एक मुसलमान को आर्यसमाजी बनाया जा सकता है, वैसे ही जैसे शायद अधिकांश मुसलमान हर एक गैर-मुस्लिम का किसी न किसी दिन इस्लाम कबूल करना सम्भव मानते हैं। श्रद्धानन्दजी निडर और बहादुर आदमी हैं। उन्होंने अकेले ही गंगा के किनारे एक वीरान इलाके को शानदार गुरुकुल के रूप में बदल दिया। उन्हें अपने तथा अपने काम में सच्चा विश्वास है पर उनमें उतावलापन है और वे आसानी से चिढ़ जाते हैं।'[1]

शुद्धि का कार्य स्वामीजी ने हिन्दुत्व के संगठन की दृष्टि से शुरू किया था। उन्होंने 1921 में मोपला कांड तथा सहारनपुर, मुल्तान एवं कोहाट के भीषण दंगों का दृश्य देखा था, एक ओर मुसलमान मलकाना राजपूतों तथा मूलाजाटों को मुसलमान बना रहे थे तो दूसरी ओर ईसाई अछूतों को धर्मान्तरित कर रहे थे। स्वामीजी ने इसके प्रतिरोध में 13 फरवरी, 1923 को आगरा में शुद्धि सभा की स्थापना की। 13 अप्रैल, 1923 को दिल्ली से इन्द्रजी के सम्पादन में 'वीर अर्जुन' पत्र निकाला। शुद्धि और हिन्दू संगठन के काम के प्रचार के लिए उर्दू में 'तेज', हिन्दी में 'अर्जुन' तथा अंग्रेजी में 'लिबरेटर' पत्र निकाले गए। इन समाचार-पत्रों के प्रकाशन तथा शुद्धि कार्य के लिए श्री सेठ जुगल किशोर जी बिड़ला ने भरपूर सहयोग दिया। स्वामीजी ने शुद्धि विषयक अपने विचार 1924 में 'सेवियर आफ ए डाइंग रेस' नामक अंग्रेजी पुस्तक में प्रकट किए। उनकी यह भी इच्छा थी कि प्रत्येक शहर में एक-एक हिन्दू राष्ट्र मन्दिर की स्थापना होनी चाहिए जहाँ कम से कम पच्चीस हजार व्यक्ति इकट्ठे होकर गीता, उपनिषद, रामायण, महाभारत तथा

1. गाँधीजी वाङ्मय, खंड 24, पृ. 149

वेद की कथा सुन सकें जहाँ गोमाता, सरस्वती माता तथा भूमि माता की वन्दना हो सके।' बिड़लाजी के शब्दों में—'गुरुकुलों की स्थापना, शुद्धि संगठन के कार्य से तो हिन्दुओं में नवजीवन-सा आ गया। जाति के जीवन के लिए जनसंख्या तथा योग्यता दोनों की ही वृद्धि होनी आवश्यक है।'

गाँधीजी ने शुद्धि के मसले पर स्वामीजी से असहमति व्यक्त की। उन्होंने आर्यसमाज पर भी आक्षेप किए। प्रतिक्रिया में आर्यसमाज ने भी उनका खुलकर विरोध किया। पाठकगण का ध्यान मैं गाँधीजी के दो पत्रों की ओर आकृष्ट करता हूँ :

(1) 'मैं इस बात के लिए उत्सुक हूँ कि आर्यसमाज और श्रद्धानन्दजी समाज की जितनी सेवा कर चुके हैं, उससे अधिक करें। इसलिए मैंने एक आलोचक के नाते नहीं बल्कि एक मित्र और शुभेच्छु के नाते उनका ध्यान उनकी संकीर्णताओं की ओर आकृष्ट किया है।'[1]

(2) मैं फिर कहता हूँ कि आपके शुद्धि आन्दोलन में मुझे पादरियों के धर्म प्रचार की बू आती है। मैं चाहता हूँ कि आप इससे ऊँचे उठें। अगर आप अपने ही क्षेत्र को सुधारने का आग्रह करें तो आपका पूरा समय और पूरी शक्ति उसी में लग सकती है। मेरी तरह अगर आप भी मानते हैं कि आर्यसमाज हिन्दू धर्म का अंग है तो हिन्दू को हिन्दू बनाने का प्रयत्न कीजिए। मैंने आप पर टीका इसलिए की है कि मैं वर्तमान राष्ट्रीय और धार्मिक आन्दोलन में आपका सहयोग चाहता हूँ।'[2]

13 अगस्त, 1924 को इन्द्रजी भी गाँधीजी ने ऐसा ही एक पत्र लिखा :

'चि. इन्द्र,

इस समय प्रत्येक उत्सव पर मैं तो एक ही प्रार्थना करता हूँ कि हे ईश्वर, हिन्दू और मुसलमान दोनों के हृदय को पलटा दे। उसमें से ज़हर निकाल दे। प्रेम भर दे। सबको समझा दे। देश के गरीबों के लिए वे सूत कातें। हिन्दू के दिलों को साफ कर और अस्पृश्यता का नाश कर। और क्या भेजूँ ! मेरा उम्मेद है, तुम्हारा प्रयत्न सफल होगा।

मोहनदास के आशीर्वाद'

यह पत्र मूल रूप से श्री चन्द्रगुप्तजी विद्यालंकार के पास सुरक्षित है। स्वामी को अपना पक्ष 'लिबरेटर' के माध्यम से जनता के बीच रखना पड़ा। इस प्रकार धर्मान्तरण, शुद्धि एवं अस्पृश्यता ही 'लिबरेटर' के विचारबिन्दु हैं। कांग्रेस के जन्म से लेकर अपने समय तक का सर्वेक्षण भी उन्होंने इसमें प्रस्तुत किया। 1 अप्रैल,

---

1. गाँधी वाङमय, खंड 24, पृ. 220
2. वही, पृ. 234

1926 से 'लिबरेटर' अंग्रेजी साप्ताहिक का प्रकाशन आरम्भ हुआ।

स्वामीजी को शुद्धि आन्दोलन पर गाँधीजी ने जिस दृष्टिकोण से समझा है उससे जाति उद्धार तथा वृहत्तर भारतीय समाज का स्वप्न देखनेवाले असहमत हैं। स्वामीजी धार्मिक दृष्टि से बड़े उदार थे। डॉ. अन्सारी यदि उनकी उपस्थिति में गुरुकुल में नमाज़ पढ़ सकते थे तो शंकराचार्य श्री भारती कृष्णतीर्थ गुरुकुल में शिव-शिवार्चन भी कर सकते थे। नाभा रियासत के जेतो शहर तथा गुरु का बाग अमृतसर में सिखों के साथ सरकार के विरुद्ध आन्दोलन भी चला सकते थे। हाँ, राजनीतिक विवाद ने उन्हें धर्मान्ध मुसलमानों का निशाना अवश्य बना दिया। ख्वाजा हसन निजामी के पत्र 'परवेश' तथा 'अलमान' उनके विरुद्ध विष उगलने लगे और उसका परिणाम हुआ 23 दिसम्बर, 1926 को उनका बलिदान।

इस प्रकार 1889 से लेकर 1926 तक का उनका पत्रकारिता का जीवन-संघर्ष, त्याग, क्रान्ति तथा उत्सर्ग का नमूना है। इस अवसर पर फ़िराक़ साहब की ये पंक्तियाँ मुझे याद आ रही हैं :

ग़रज़ कि काट दिए जिन्दगी के दिन ऐ दोस्त,
वो तेरी याद में हों या तुझे भुलाने में।

स्वामीजी के बलिदान ने क्रान्ति के क्षितिज का उद्‌घाटन किया। उनके द्वारा प्रदर्शित हिन्दुत्व की लहर चारों ओर फैल गई। 1926 में हिन्दू संगठन, शुद्धि संस्कार, अछूतोद्धार, समाजसुधार तथा हिन्दी प्रचार के काम को बढ़ावा देने के लिए बाबू रामलाल वर्मा ने 'हिन्दू पंच' नामक सचित्र साप्ताहिक का प्रकाशन शुरू किया। इस पत्र का मुख्य उद्‌घोष था :

लज्जा रखने को हिन्दू की, हिन्दू नाम बचाने को,
आया हिन्दू पंच हिन्द में, हिन्दू जाति जगाने को।

1930 में आर्यसमाज काशी की ओर से पंडित जयप्रकाश चौधरी काव्यतीर्थ के सम्पादन में पुनः 'सद्‌धर्म प्रचारक' पाक्षिक का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि स्वामी श्रद्धानन्द के सम्पादन में 'सद्‌धर्म प्रचारक' 1889 से 1915 तक निकलकर बन्द हो गया था। शुद्धि और हिन्दू संगठन की दृष्टि से 1932 में स्वामी सच्चिदानन्द सरस्वती के सम्पादन में दिल्ली से 'श्रद्धानन्द' नामक मासिक पत्र निकला। श्रद्धानन्द शुद्धि सभा का यह मुखपत्र 1948 तक निकलता रहा।

इस प्रकार 'सद्‌धर्म प्रचारक' सत्रह वर्ष, 'श्रद्धा' दो वर्ष तथा 'लिबरेटर' एक वर्ष तक भारतीय जनजीवन को प्रेरित करते रहे। 'सद्‌धर्म प्रचारक' में पंडित ब्रह्मानन्द, पंडित इन्द्र विद्यावाचस्पति तथा पंडित हरिश्चन्द्रजी; 'श्रद्धा' में आचार्य

दीनानाथ सिद्धान्तालंकार तथा 'लिबरेटर' में पी.आर. लेले उनके सहयोगी थे। स्वामीजी की भाषा तथा विचार आग उगलने वाले थे। उनकी टिप्पणियाँ तथा अग्रलेख मुर्दों में जान फूँक देते थे। 8 जनवरी, 1921 की 'श्रद्धा' में छपा उनका एक उद्‌बोधन यहाँ उद्‌धृत करने का लोभ सँवरण नहीं कर पा रहा हूँ :

'पंजाब की मोहनिद्रा अभी तक टूटी नहीं है। वीरों की भूमि में अभी तक कायरता और नपुंसकता के भाव काम कर रहे हैं। यह कैसी विचित्र बात है कि जिस पंजाब हत्याकांड के लिए न केवल भारत अपितु सारे संसार में हाहाकार मच गया, जिस पंजाब के विद्यार्थियों को सिर पर बिस्तरे रखवाकर 18 मील तक कड़ी धूप में चलवाया गया, वही पंजाब अभी तक नौकरशाही के साथ सहयोग दे रहा है !

पंजाब, जागो ! अपना कर्तव्य समझो। इस हालत पर जरा शर्म करो कि जलियांवाला बाग में जिस अत्याचारी ने तुम्हारे साथ खून की होली खेली, तुम अभी तक उसी के आँचल में मुँह छिपाए बैठे हो।'

ऐसे आत्मबलिदान के वातावरण में जिसकी लौह लेखनी कवि भूषण और चन्द्रवरदायी की तरह तोप का मुहाना बनी रही, जिसके शब्द बिजली बनकर वीरों के मन-मस्तिष्क में कौंधते रहे, जो शीशदान के वासंती फाग को जातीय जीवन का उत्सर्ग पर्व मानकर सामयिक घटनाओं पर बेबाक टिप्पणियाँ लिखता रहा, उस राष्ट्रीय पत्रकारिता के पितामह स्वामी श्रद्धानन्द की पत्रकारिता पर नई पीढ़ी को गर्वोल्लसित होना चाहिए। इन लेखों और टिप्पणियों को समझे बिना न तिलक को समझा जा सकता है और न गाँधी को। महात्मा गाँधी और श्रद्धानन्द संन्यासी राजनीति के जिस दौर से गुजरे, उसमें भी दलितोद्धार धर्मान्तरण तथा अपने घर वापसी (शुद्धि आन्दोलन) के मुद्दे ज्वलन्त थे। कांग्रेस, मुस्लिम लीग तथा हिन्दू महासभा का त्रिकोणात्मक खिंचाव था। स्वामीजी इस त्रिकोण के मध्यबिन्दु थे।

स्वामीजी के साथ इतिहासकार नहीं थे, उन्हें समझने में भारी भूल हुई। मैं आशा करता हूँ कि 'स्वामी श्रद्धानन्द के सम्पादकीय लेख' तथा 'स्वामी श्रद्धानन्द की सम्पादकीय टिप्पणियाँ' पुस्तकें नये सिरे से स्वाधीनता आन्दोलन और सामाजिक सरोकारों को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध होंगी। आज के सन्दर्भ में इस दृष्टिकोण को भी समझा जाना चाहिए।

इस पुनीत सारस्वत यज्ञ में परिद्रष्टा माननीय प्रो. शेरसिंह जी, कुलाधिपति माननीय श्री सूर्यदेव जी तथा कुलपति माननीय डॉ. धर्मपाल जी ने अवभृथस्नान की भूमिका निवाही तथा मुझे ऋत्विज होने का सौभाग्य मिला अतः मैं स्वयं को कृतार्थ अनुभव करता हूँ। मेरा विश्वास है कि स्वामीजी के विचार-सिन्धु का निर्मल विन्दु पा जाने के बाद फिर कुछ और पाने को शेष नहीं रह जाता।

इक तेरी तमन्ना ने कुछ ऐसा नवाज़ा है,
माँगी नहीं जाती अब कोई दुआ हमसे।

डॉ. जगदीश विद्यालंकार ने ग्रन्थ के सुरुचिपूर्ण प्रकाशन के लिए हर सम्भव दौड़धूप की। अंग्रेजी टिप्पणियों का अनुवाद डॉ. कृष्ण अवतार अग्रवाल ने तैयार किया तथा टिप्पणियों का समाकलन मेरे शिष्य संजय वर्मा ने किया। इन तीनों को हृदय से साधुवाद। श्री आचार्य प्रो. वेदप्रकाश शास्त्री, कुलसचिव डॉ. श्यामनारायण सिंह जी तथा वित्ताधिकारी श्री जयसिंह गुप्त के सहयोग के लिए विशेष धन्यवाद।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि पाठकों को यह ग्रन्थ राष्ट्रीय सोच के लिए प्रेरित करेगा। इन शब्दों के साथ कुलपिता परिव्राजक शिरोमणि स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज को हमारे कोटि-कोटि प्रणाम :

यतिः श्रद्धानन्दो जयति स परिव्राट् परिवृढः।

–डॉ. विष्णुदत्त राकेश
डी.लिट्.
आचार्य हिन्दी विभाग एवं
निदेशक स्वामी श्रद्धानन्द अनुसन्धान प्रकाशन केन्द्र
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

विषय-सूची

खंड–1

सद्धर्म प्रचारक

स्तंभ : संसार की गति

स्तंभ : संसार-समाचार

स्तंभ : संसार समाचार पर टिप्पणियाँ

खंड–2

श्रद्धा

स्तंभ : संसार समाचार पर टिप्पणियाँ

खंड-3

द लिबरेटर

परिशिष्ट

खंड-1

सद्धर्म प्रचारक

(संपादकीय टिप्पणियाँ)

स्तम्भ : संसार की गति
संसार समाचार
संसार समाचार पर टिप्पणियाँ

एडीटोरियल नोटिस

वैदिक धर्म की बुजुर्गी का सबूत इससे बढ़कर और कोई नहीं हो सकता। उसकी गरज़ आदर्श जीवन बनाना है। कोई जमाना था कि *अंग्रेजी तालीम* और अंग्रेजी तहजीब के भँवर में पड़कर भारत निवासियों का ये ख्याल हो चला था कि *धर्म को व्यापार* से अलग कर देना चाहिए और *अंग्रेजी तालीम* पर ही क्या मुनहसर है। नवीव वेदान्त की *जाहिली तालीम* ने भी इस बारे में भी लोगों के ख्याल बहुत कुछ बिगाड़ दिए थे। लेकिन आखिरकार साधु-सन्त अपना असर दिखाए बगैर नहीं रह सकता था। हाल ही में विलायत के एक मशहूर रिसाले में डरहम के पस-पादरी साहब ने बड़ा जबरदस्त मजमून छपवाया है जिसमें उन्होंने जाहिर किया कि ईसाई धर्म बेमानी है, अगर इसका असर एक ईसाई की हरेक व्यापारी जिन्दगी पर पड़े। लेकिन खींचातानी से कुछ भी बन नहीं सकता। मजहब का लफ्ज ही ऐसे मायने में इस्तेमाल होता रहा है कि सिवाय चन्द-एक मिसालों के काबिल होने के उसका असर इनसानी जिन्दगी पर मुकम्मल तौर पर नहीं पड़ सकता। बरखिलाफ इसके धर्म उन सब उसूलों का मजमुआ है जिसको धारण करना मनुष्य के लिए जरूरी है। जब कि मत-शास्त्रों और मजहब की टेढ़ी चाल को छोड़कर वैदिक धर्म की शरण नहीं आते। तब तक मुकम्मल इनसानी जिन्दगी पैदा करना वहमो-ख्याल से बढ़कर नहीं है।

[सद्धर्म प्रचारक, 28 जून, 1895]

एडीटोरियल नोटिस

स्त्री शिक्षा की हालत अभी तक बड़ी ही अबतर (गिरी हुई) हालत में है। जहाँ मिशन स्कूलों की गरज सिर्फ मजहबी ईस्वी का प्रचार है वहाँ शिक्षा विभाग को हिन्दुस्तानी औरतों की जरूरियात न मालूम होने के बाइस गवर्नमेन्ट और बोर्ड स्कूलों से भी कुछ बेहतरी की उम्मीद नहीं हो सकती। यही वजह है कि जबकि किसी नई कन्या पाठशाला देश में खुलने के लिए तैयारी होती है उसके कारकून जालन्धर पाठशाला के मुंतजमान (प्रबन्धकों) से नीम-पाठशाला के लिए कुछ माँगते हैं, लेकिन मिलता नहीं। कन्या महाविद्यालय स्कीम के हामियों (पक्षधरों) के लिए ये एक उम्दा मौका अपने देश की स्त्री शिक्षा की रहनुमाई करने का इस वक्त मौजूद है। जालन्धर के पुरुषार्थी भाई नई पाठशालाओं को मुकम्मल करने में पुरुषार्थ दिखलाएँगे। इस काम में मैं भी पूरा हिस्सा लेने के लिए तैयार होऊँगा। लेकिन एक आदमी का यह काम नहीं। अगर हिम्मत से काम लिया जाए तो देश की हरेक आजाद कन्या पाठशाला कन्या महाविद्यालय सोसाइटी के साथ सम्बन्ध हासिल करना अपना धर्म समझेगी। आखिरकार जमाना आएगा, जबकि हम स्त्रियों की तालीम के लिए एक यूनिवर्सिटी कायम कर सकेंगे। ये ख्यालात आज कबल-बज-वक्त (भविष्य के लिए ठीक) मालूम देते हैं। लेकिन दस साल और गुजरने दीजिए और फिर उन्हें कोई विचारशील भीड़ कबल-अज-वक्त कहकर न टालेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 17 जनवरी, 1896]

पारसियों का मजहब अब वैदिक धर्म

जिन साहेवान का मजहबी दुनिया में कुछ दखल है उन्हें मालूम होगा कि पारसी मजहब का बानी (चलानेवाला) जरदस्त हुआ है। यह महात्मा मसीह से 500 वर्ष पहले गुजरा है। इसकी जन्मभूमि वह स्थान है जिसको आजकल 'बुलख़' कहते हैं। बचपन ही से इसको विद्या हासिल करने का बड़ा शौक था। इल्म, नजूम और ज्योतिष में अपनी जिन्दगी का बड़ा हिस्सा नष्ट किया। उसने अपनी शिक्षा को अपने ऊपर ही महदूद (सीमित) न रखा, बल्कि अपने ख्यालात को फैलाने के लिए सोचा कि बिना प्रचार किए मेरे ख्यालात नहीं फैलेंगे। मगर प्रचार का काम शुरू करने से पहले उसने आर्यावर्त की सैर की। और यहाँ काफी अरसे तक शिक्षा हासिल की। यहाँ संस्कृत की अच्छी-अच्छी पुस्तकें पढ़ीं। चुँनाचे महर्षि जैमिनी से गुरुदत्त तक शिक्षा हासिल करता रहा। विद्या हासिल करने के बाद वह ईरान देश में गया। पहले ही वहाँ का राजा असफंदयार और उसके वज़ीर गुस्तसफत के दरबार में लेक्चर दिया। जिसका असर ये हुआ कि दोनों ने उसके ख्यालात को स्वीकार किया और उसको मानने लगे। यहाँ तक कि उस राजा और उसके मन्त्री के तुफैल से ईरान देश में उसका मजहब राजधर्म हो गया। फिर तो सैकड़ों उपदेशक बादशाह की तरफ से मुकर्रर किए गए—जिन्होंने धर्म का खूब प्रचार किया और आपकी तरह यह मजहब खूब फैल गया। फिर उसने एक पुस्तक लिखी जिसका नाम—'जन्दावस्था' है। जिसके मजहबी रसूल बिलकुल आर्य धर्म से मिलते हैं। जबान भी बिलकुल संस्कृत की मुआफिक है। बल्कि संस्कृत की बिगड़ी हुई है और उसने जहाँ-तहाँ वेद का हवाला अपनी पुस्तक में दिया है। ईरान का नाम भी आर्य देश के प्रचारकों के नाम से मन्सूफ (प्रचलित) हुआ। पहले 'आर्य' असल नाम था, बिगड़ते-बिगड़ते ईरान हो गया जिसकी तरजीब बाइबिल ने भी की है।

[सद्धर्म प्रचारक, 25 दिसम्बर, 1896]

चीन का मफसदहा बढ़ता जाता है

चीन में बद-उसूल सल्तनत हैगेर के *इल्वों* की जान खतरे में है। अपनी-अपनी रियासत से सिपाह–तलब हो रही है। ये मुक्केबाजों का फिरका न मालूम कहाँ से पैदा हो गया है जो न सिर्फ रियासत हैगेर की फौज की परवाह नहीं करता, बल्कि चीन की सारी फौज को भी नफरत की निगाह से देखता है। लेकिन इस वक्त यूरोपियन गोरों के रू-ब-रू एशिश की कौमें चारों खाने पस्त हो रही हैं और उम्मीद यही है कि अगर इसी तरह काम होता रहा तो एशिया का कोई भी हिस्सा इनके हिस्सों नजरों से बच न सकेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 13 जून, 1900]

सरकारी स्कूल और मजहबी तालीम

इस मसले पर मुद्दत से जोर दिया जा रहा है कि सरकारी मदरसों में मजहबी तालीम होने की वजह से हमारे नौजवान नास्तिक और अन्ध-विश्वासी होते जा रहे हैं। लेकिन गवर्नमेन्ट वक्त का हमेशा यही जवाब होता रहा है कि जिस मुल्क में बेशुमार मजहब एक-दूसरे के उसूले-मुखालिफ (नियमों के विरुद्ध) मौजूद हों उस जगह मजहबी तालीम का इन्तजाम गवर्नमेन्ट का अपना जिम्मा लेना बहुत ही खतरनाक काम है। अमूमन ईसाइयों में उनसे ज्यादा तादाद जैनियों की है और उनसे ज्यादा मौहम्मदी हैं और सबसे ज्यादा हिन्दू हैं। इसके अलावा आर्य समाज और दीगर बहुत सी जातियाँ हैं जिनका एक-दूसरे के सिद्धान्तों से बहुत कुछ इख्तिला (वैमनस्य) है। ऐसे हालात की मौजूदगी में फिर मजहबी तालीम का इन्तजाम न करने की वजह से हालिया गवर्नमेन्ट वक्त पर किसी किस्म का इल्जाम कायम नहीं हो सकता। फिर भी मजहबी तालीम का अभाव हरेक सभ्य आदमी को काबिले अफसोस मालूम होता है। हाल ही में मिस्टर शिकांगी साहब बहादुर (भू.पू. डिप्टी कमिश्नर–पंजाब) ने शहरे-लन्दन की ईस्ट एसोसिएशन में एक मजमून पढ़ा। मजमून में बयान किया है कि परमेश्वर की हस्ती और उसके इखलाकी इन्तजाम की निसवत हरेक गवर्नमेन्ट स्कूल में तालीम लाज़िमी होनी चाहिए। इस पर बहस होने पर हाज़रीन (विद्वानों) की राय अमूमन यह थी कि मजहबी तालीम में ब्रिटिश गवर्नमेन्ट को कुछ भी दखल नहीं होनी चाहिए। लेकिन साथ ही उसे यह ताकीद की गई है कि हरेक मजहब के लीडरों को अपने मजहब की तालीम का खुद इन्तजाम करना चाहिए। विश्वस्त सूत्रों से सुना है कि वक्त पंजाब के शिक्षा विभाग की तरफ से मजहबी सोसाइटियों को अख्तियार मिलेगा कि वही अपने ख्यालात के लड़कों को उपदेश कराने के लिए अपने-अपने उपदेशक भेज सकें। हमने यह भी सुना है कि इखलाकी गीतों का गाना भी मदरसे में चालू किया जाएगा। हमारे ख्याल में इन बातों से कुछ भी मतलब की बात हासिल नहीं हो सकती। अंग्रेजी और दुनियावी तालीम के मन और असर को आधा घंटे का उपदेश दूर नहीं कर सकता। हमें दीगर फिरकाजात और धर्मो से इस वक्त मतलब नहीं है, लेकिन हम यह कह सकते है कि अगर आर्य पुरुष अपनी सन्तानों को पूर्ण आर्य बनाना

चाहते हैं तो उनके लिए लाजिमी है कि शिक्षा विभाग के इन तजुर्बों का इन्तजार न करते हुए गुरुकुल को सही बना दें और सही तरीके पर अपनें बच्चों को तालीम दिलाकर उस वक्त की कमी को पूरा करे।

[सद्धर्म प्रचारक, 24 अगस्त, 1900]

नेशनल कांग्रेस की तरफ नेशन की तवज्जें

नेशनल कांग्रेस की तरफ नेशन की तवज्जें दिलाने के लिए हम असर (सहयोगी) 'ट्रिब्यून' ने 27 अगस्त के पर्चे में एक खास मजमून लिखा है। इस मजमून में तमाम महजबी और इस्लाम कौम की सोसाइटियों को मुल्क में फिसाद बरपा करने और ना-इत्तिफाकी का बीज बोने वाली करार देकर महज नेशनल कांग्रेस को ही हमारी उम्मीदों की अँधियारी का एक रोशन हिस्सा करार दिया है। लेकिन अफसोस कि साहब मजमून को खुद दबे दाँतों मानना पड़ता है कि नेशनल कांग्रेस ने और कुछ नहीं हिंदू सभा के ही दो टुकड़े करा दिए। यह सच है कि इस ना-इत्तिफाकी का बीज सर सैयद अहमद ने बोया। लेकिन वह भी तो पॉलिटिकल वर्कर ही थे। लेकिन अफसोस है कि पॉलिटिकल कांग्रेस के हामियों ने असली पॉलिटिक्स (राजनीति) को नहीं समझा। इत्तफाक़ वही ठीक हुआ करता है जिसकी बुनियाद ही सच्चाई पर हो। अगर नेशनल कांग्रेस का अगराज़ (मकसद) रास्ते पर सच्चाई पर निर्भर है तो उन्हें इस इल्जाम से नहीं डरना चाहिए कि उसने ना-इत्तिफाकी कराई या फिरके बनवा दिए। लेकिन सवाल तो यह है कि नेशनल कांग्रेस के हामी अपना फर्ज अदा कर रहे हैं या नहीं। महीनों गुजरे, हम सवाल कर चुके हैं कि जिन लाखों-करोड़ों को तुम्हारी इजलास का पता ही नहीं, माह दिसंबर में उनके वकील बनकर अब तुम काम करोगे तो क्या तुम्हारी आत्मा शांत हो जाएगी। तुमने अपने फर्ज को अदा किया। यह एतराज महज यह कहकर नहीं टल सकता कि विलायत में आम आदमी राजनीति के मामलात को नहीं समझते। यह गलत है कि आपके ही इंग्लिस्तान के वापिस आए हुए भाई काबिले-एतबार हैं। विलायत का हरेक क्रिश्चियन और साइंसदां, खिदमतगार वगैरहा अपना रोजाना अखबार अलहदा खरीदकर पढ़ता है। खैर हम नेशनल कांग्रेस के दीगर सवालात के तहकीकात करने की जरूरत नहीं है, न ही अपने तौर पर हम हू-ब-हू पॉलिटिक्स को बखूबी समझ सकते हैं। लेकिन इस कदर जरूर कहने की जुर्रत करते हैं कि ख्वा कोई भी सोसाइटी क्यों न हो, धार्मिक, राजनीतिक या सामाजिक हरेक को ईमानदारी और सच्चाई के उसूल पर मक्कारी से अलहदा होकर काम करना चाहिए। फिर इस देश की असली बेहतरी दूर नहीं होगी।

(सद्धर्म प्रचारक, 7 सितंबर, 1900]

इंडियन नेशनल कांग्रेस

इन दिनों हिंद में आलमगीर हरकत दिखाई देती है। लाखों रुपया खर्च हो जाता है। जो रेलवे कंपनियों और सरकारी अफसरान-रेलवे ने बहुत जगह में आधा किराया कर दिया था, ताकि हम मदुराई पहुँच सकें। लाखों रुपया कंपनियों की नजर हुआ। सालाना जल्से पर भी लाखों खर्च होते हैं। लेकिन मोहम्डन एजुकेशन नेशनल कांग्रेस जमा होकर मुसलमान की तालीमी कमी पर अफसोस भी जाहिर नहीं करता, बल्कि अपने दीगर भाइयों से गवर्नमेन्ट को बदजन्त (भ्रमित) कराने के जरिए से अपने ख्याले-खाम में अपनी बेहूदगी का सामान जमा कर जाती है। कहीं वैश्य महासभा अपने शानदार पंडाल के नीचे जमा होकर महज बिरादरी की चौधरियों की खवत की राज में समय गँवाकर फड़कती हुई तारें अंग्रेजी अखबारों में भेज देती है। कहीं कायस्थ कान्फ्रेंस, कहीं गौड़ महासभा, कहीं कुर्मी कान्फ्रेंस, गरज कि इस तरह की बेशुमार सभाएँ अपनी-अपनी खिचड़ी अलहदा-अलहदा पकाने के लिए जमा हो जाती हैं। इस साल में भी ऐसा ही हुआ। लेकिन इस जागृत अवस्था की रानी सिर्फ एक है। जिसका नाम इंडियन नेशनल कांग्रेस रखा गया है। जिस तरह की राजकन्या के विवाह का हाल सुनकर दासी कन्याओं के विवाह भी रच लिये जाते हैं, इसी तरह इस मौके पर दीगर कई सभाओं को हमेशा कहा जाया करता है कि भाई इस वक्त नेशनल कांग्रेस का जलसा हो लेने दो। तुम किसी और वक्त में अपना हिसाब कर लेना। चाहे इस दलील पर राजकन्या के विवाह के मौके पर दासी कन्याओं के विवाह बन्द हुआ करते हैं। वहाँ जवाब मिला करता है कि अगर राजा को अपनी कन्या से प्रेम है और 'बुटेक' लग्न पर विवाह करना चाहता है तो हमारे लिए भी तो 'लग्न' यही है। हम कैसे 'लग्न' चूककर अपनी कन्या की बरबादी का वाइस (कारण) बनें।

इस तरह छोटी-छोटी सभाएँ भी लाचार हो जाती हैं। जब जागृत अवस्था के दिन ही आठ हैं तो वह बिचारी क्या करें ! दूसरे वक्त में कौन इन सभाओं में शरीक होगा। बस, ले-देकर इन्हीं दिनों में सारे देश का सुधार खत्म करना पड़ता है। उनमें से इन सभाओं का जिक्र करने की जरूरत नहीं है जोकि लाहौर

से बाहर हो जाएँ। क्योंकि विवाह के वक्त सिर्फ दुल्हन की तरफ निगाहें लगा करती हैं। बाकी लोगों को कोई नहीं पूछता।

[सद्धर्म प्रचारक, 14 सितम्बर, 1900]

स्त्री शिक्षा की हालत एशियाई मुल्कों में

एशियाई मुमालिक (देशों) में इस वक्त स्त्रियों की जो दुर्गति है वह अफ्रीका की वहशी कौमों के अन्दर भी दिखाई नहीं देती। यूँ तो सारा एशिया ही जबाने-हाल से कह रहा है कि स्त्रियाँ महज मर्द की दीगर जायदाद की तरह बनाई गई हैं लेकिन भारतवर्ष में स्त्रियों की हालत बहुत ही ज्यादा खराब है। भारतवर्ष के इस असर से आसपास के देश भी नहीं बच सकते। चुनांचे स्याम एक ऐसा मुल्क है जहाँ पर पर्दे की नजमूम रस्म नहीं है। ताहम सह शिक्षा से वहाँ भी स्त्रियों को तालीम देने का रिवाज़ नहीं था। कुछ अरसे से इस जगह में इंस्टीट्यूशन लड़कियों को पढ़ाने के लिए खोले गए हैं। एक तो रोजियल (निम्न जाति की) लड़कियों के लिए है जो सदाबहार स्कूल कहलाता है और अरसा तीन बरसों से खुला हुआ है। उसे स्याम की मलिका ने खोला है। जिसमें महज दिन को नीच कौम की लड़कियाँ पढ़ती हैं। लेकिन इसके अलावा एक टुडविंग कालिज है जिसे सतराला कालिज कहते हैं। ये कालिज 'स्याम' के राजा के खानदान और मुल्क-स्याम के अमीरजादों के लिए खोला गया है। और सबकी सब लड़कियाँ आश्रम में रहकर तालीम पाती हैं इस कालिज को भी राजा ने ही खुलवाया था। लेकिन कुछ अरसे से अप्रसन्न होकर चूँकि राजा ने अपने खानदान की लड़कियों को उठवा लिया है इसलिए बावजूद आठ साला आला कार्रवाई के इस कालिज में भी लड़कियाँ कम रह गई हैं। लेकिन बावजूद ऐसी सख्त मुखालफ़त के ही इसकी यूरोपियन प्रिंसिपल लेडी की हिम्मत से कालिज अपना काम कर रहा है। स्याम की ऐसी हालत सुनकर इस जगह स्त्री शिक्षा के लिए काम करने वालों को किस कदर तसल्ली होती है। लेकिन जब देखने में आता है कि बावजूद जबानी इकरारदादों के अब तक यही तालीम-याफ्ता लोग ज्यादातर लड़कियों की पढ़ाई के लिए ही रुपए देते हैं तो सब उम्मीदें 'यास' में तब्दील हो जाती हैं और ये सब कुछ उस स्वार्थ की स्प्रिट का नतीजा है, क्योंकि सदियों की गुलामी ने हमारे गले मढ़ दिए हैं।

परमेश्वर भारत-निवासियों के हृदय को इस खुदगर्जी की जंजीर से छुड़ा दें।

[सद्धर्म प्रचारक, 7 फरवरी, 1901]

गुरुकुल प्रणाली की शिक्षा के लिए एक और दलील

जब मैं गुरुकुल के लिए भिक्षा करने के लिए जाता था तो अक्सर जगहों में मैंने इस मसले कि, यूनिवर्सिटी की तालीम से महरूम रखने से मुलाज़मत न मिलेगी और लड़के अपनी रोजी न पैदा कर सकेंगे, जवाब दिया था कि जब रोजी पैदा करके इससे लुत्फ़ उठाने के काबिल इन्सान न रहें तो ऐसी रोज़ी की फ़िक्र बेकार है। मेरा उस वक्त भी यही ख्याल था जिसे मैंने जाहिर किया था कि यूनिवर्सिटी सिस्टम की तालीम हमारे बच्चों को अन्धा और कमजोर कर देती है। इस वक्त मेरे ख्याल की तसदीक वाकता (वाकयात) की बिना पर हो रही है।

मद्रास के एक डॉक्टर स्वामी अयंगर हैं। उन्होंने मद्रास और कलकत्ते के स्कूलों और कालिज के विद्यार्थियों की आँखों को मुआयना किया है और उनकी राय है कि अगर यही हालत रही तो कुछ ही बरसों के अन्दर अन्धे विद्यार्थियों की एक बड़ी भारी तादाद हो जाएगी। उन्होंने कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कालिज के विद्यार्थियों की आँखों का मुआयने से यह नतीजा निकाला कि तेरह वर्ष की उम्र के ऊपर के लड़कों की आँखें बहुत ही ज्यादा खराब होती हैं। चुनांचे उनकी तहकीकात का नतीज़ा है कि कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कालिज के तलबा (विद्यार्थियों) में साढ़े तिरेसठ फीसदी तलबाओं की आँखें खराब हैं। प्यारे नाज़रीन (बन्धुओ) ! क्या आपने कभी सोचा है कि मिट्टी का तेल, तंग मकानात और बेहूदा तर्जे *मार्सत* (रहन-सहन), शुक्रसनी (बालविवाह) और मुलाजमत की गुलामी किस कदर विद्यार्थियों की बरबादी का वाइस हो रहे हैं। मेरी राय में इनमें से एक भी नुक्स दूर न होगा जब तक कि गुरुकुल के तरीका-तालीम देने की रिवाज़ शुरू न होगा। देश की दशा जबाने-हाल से गुरुकुल के लिए अपील कर रही है और आर्य प्रतिनिधि सभा है कि बावजूद काफी सरमाया (रुपया) जमा हो जाने के भी अभी तक अगर-मगर के चक्कर में पड़ी हुई है।

[सद्धर्म प्रचारक, 22 फरवरी, 1901]

आर्यसमाज और स्त्री शिक्षा

पुरुष शिक्षा के लिए जहाँ गवर्नमेन्ट की तरफ से बड़ा आला इन्तजाम था वहाँ कौमी अंजुमनों ने उसकी तरफ ज्यादातर तव्वज़ो दी। हाँ, स्त्री शिक्षा की तरफ आर्यसमाज ने कुछ तव्वज़ो दी थी और उस पर बहुत कुछ फिक्र भी किया था, लेकिन सवाल यह है कि जिस कदर हम ढींग मारते हैं उसके मुकाबले में आर्यसमाज ने कुछ किया है या नहीं। हाल के अखबारों से मालूम हुआ कि मद्रास की एक ईसाई बहन ने एम.ए. की डिग्री हासिल की है फिर अखबारवालों ने बंगाल की पाँच और लेडियों के नाम लिखवाए हैं, जिन्होंने कि एम.ए. की कोशिशों का आखिरी मरहरा (सीढ़ी) तय किया है। मैं नहीं कहता कि आर्यसमाज के कायम-कर्ता कन्या विद्यालय से एम.ए. पास कितनी निकलीं। क्योंकि मैं खुद इस तरीका-तालीम के सिर्फ स्त्रियों के लिए ही नहीं, बल्कि पुरुषों के भी बर-खिलाफ हूँ। लेकिन मैं पूछता हूँ कि क्या कन्या विद्यालय से कितनी देवियाँ चारों तो क्या, एक वेद पढ़कर ही निकली हैं। अगर नहीं निकली तो किसका कसूर है ? आप शायद कन्या विद्यालय के प्रबन्धकों का कसूर बताएँ, दीगर इन्तजाम के कामों में ख्वा कुछ यही हालत हो, लेकिन कौन कह सकता है कि वेद जानने वाली एक भी स्त्री पैदा करने का इल्जाम महाविद्यालय पर आयद (थोपा जाए) हो सकता है। क्या 20 हजार रुपयों में वेदों तक की तालीम का इन्तज़ाम हो सकता है ? क्या जिन इंस्टीट्यूशनों से पढ़कर मद्रास की लेडी ने एम.ए. पास किया है, उनका काम 20 हजार के रुपए से ही चल रहा है। आर्यसमाज के ऊपर ये बड़ा भारी *इल्जाम* है कि उसने पुराणों की पैरवी में स्त्रियों के हकों को अब तक नहीं समझा। अगर आर्यसमाज के अन्दर अब तक ये ख्याल नहीं गया था तो उसे लाना चाहिए कि जब तक कन्या महाविद्यालय के लिए हश्वे-अपील-अव्वल (पहली अपील) पर दो लाख रुपया नकद जमा नहीं हो जाता तब तक आर्यसमाज के सर पर पक्षपात रूपी कलंक का टीका बराबर लगा रहेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 29 मार्च, 1901]

वैदिक तालीम की बुजुर्गी माननी पड़ेगी

वेदों को वहशियाना जमाने की हसानीफ (रचनाएँ) जाहिर करके ख्वा यूरोप के विद्वान कितना ही शोर क्यों न मचाएँ, हम दावे से साबित करते हैं कि वेद की तालीम पर चले बिना गुजारा नहीं हो सकेगा। 16 मई, 1901 को मि. तेजी साहब बहादुर, चीफ जस्टिस इलाहाबाद (हाईकोर्ट) का देहान्त हो गया। उनकी वसीयत के मुताबिक उनकी लेडी साहिबा ने उनके शरीर का क्रियाकर्म करवाया, जिसमें एक सौ मन चन्दन की लकड़ी डाली गई और मुश्क (कस्तूरी), काफूर और घी भी डाला गया। गोया दो हजार बरस के ईसाई दफनाने के अमल को आखिरकार जहालत का निशान मानना पड़ा। ये सच है कि इस तरह की *तमसीरों* (उपमाओं) से ये माइने हरगिज नहीं है कि वेदों की *अजमत* (प्रतिष्ठा) के *मगरिबी* (यूरोपियन) विद्वान जल्द कायर हो जाएँगे। क्योंकि फाताह (जीतने वाली) कौमों के लिए *मखतूह* (प्राचीन पुस्तकों) के ख्यालात को सही मानना बड़ी भारी मानहानि का कारण हुआ करता है। ताहम (फिर भी) जब ख्यालात की फतह हो चली है तो इससे मतलब नहीं रखना चाहिए कि इन ख्यालात के मुजमे के लोग कायल होते हैं या नहीं। जब एक मर्तबा ख्यालात की बुजुर्गी के रू-ब-रू सिर झुका तो फिर वह जमाना दूर नहीं होता जबकि ख्यालात के मुजमे की शरण में ऐलानिया आना पड़ता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 7 जून, 1901]

नेशनल कांग्रेस का बेड़ा फिर खतरे में

कुछ दिनों से शोर मच रहा था कि विलायत इंग्लिस्तान में जो चन्द अंग्रेजों की जमात को लेकर मिस्टर नोर्वी और मिस्टर आर.सी. दत्त ने एक ब्रिटिश कांग्रेस कमेटी कायम की है उसका दिवाला निकलने वाला है और अब वो रुपए की कमी के वाइस बन्द हो जावेगी। इस पर मिस्टर नन्दी बैरिस्टर ने बाहर से रुपए के लिए दौरा शुरू किया है। और उम्मीद की जाती है कि चालीस-पचास हजार रुपया फिर लन्दनवालों की नजर करके ब्रिटिश कमेटी को एक साल के लिए जिन्दगी बख्श दी जाएगी। मुझे इन फसलवार कोशिशों पर हँसी आया करती है।

अगर सचमुच मुल्क का ख्याल कांग्रेस के साथ होता तो क्या मुमकिन था कि 40-50 हजार रुपया सालाना के लिए इस कदर हाथ-पाँव मारने पड़ते। मेरे ख्याल में जिस कदर अमीर आदमी कांग्रेस के हर सालाना जलसे में जमा होते हैं, अगर महज उनके जेब-खर्च का हिसाब लगाया जाए तो 5 लाख सालाना से कहीं बढ़कर होगा। और अगर उन सब साहेबान का शुमार किया जावे, जोकि हर साल जमा नहीं होते, लेकिन कांग्रेस में कहलाते हैं तो इन सबके पान-तम्बाकू के खर्च के बराबर रुपए से चालीस ब्रिटिश कमेटियाँ कायम हो सकती हैं। सब कांग्रेसी भाई अगर संजीदगी के साथ सोच-विचारकर संजीदगी से पूरा प्रोग्राम तैयार करके काम करते तो फिर देखते कैसे कांग्रेस क्या कुछ कर दिखाती है।

[सद्धर्म प्रचारक, 19 जुलाई, 1901]

नाम से मतलब नहीं उसूल से मतलब है

जब किसी अंग्रेजी पढ़े-लिखे के पास गुरुकुल का नाम लो तो नाक-भौं सिकोड़कर ओल्ड-फुल्ड कहकर टाल देता है। लेकिन हाल ही में इलाहाबाद में जो हिन्दुओं ने अपना अलहदा बोर्डिंग बनाना चाहा है उसके इब्तदाई जलसे पर लाट साहब ने जो तकरीर की उसके साथ तमाम अंग्रेजी पढ़े हिन्दुस्तानी तारीफ कर रहे हैं और इत्तेफाक कर रहे हैं। लाट साहब मौसूफ ने हिन्दुस्तानी कालिजों का बड़े शहरों में वाकई होना बहुत नुकसानदेह बयान किया और अपने उस्तादों के पास हर वक्त का रहना तालिब-हल्मों के लिए सेहतबख्श। ऐसी कालिजों की जरूरत जतलाई जिनमें तालिब-इल्म उस जगह पर रहे। खात्मे पर उन्होंने फरमाया—हम इस मामले में आगे जाना चाहते हैं, क्योंकि हम पूरे तौर पर मानते हैं कि स्कूल की कीमत खसूसन (विशेष) उस्ताद के चाल-चलन पर मुनहसिर (निर्भर) है। इससे बढ़कर गुरुकुल सिस्टम की और क्या ताइल हो सकती है। यही सब गुरुकुल सिस्टम की रूह है। लेकिन नाम से मतलब नहीं और हमें इसमें शुबहा नहीं कि गुरुकुल का उसूल मजबूरन हरेक इन्साफपसन्द इन्सान को मानना पड़ेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 19 जुलाई, 1901]

संस्कृत की उन्नति के लिए एक और दलील

आजकल जो तालीमी इसलाह के बारे में वायसराय से लेकर प्रोफसरों और स्कूल मास्टरों तक में तहरीक हो रही है, उसमें एक साहब ने बड़ी उम्दा बहस शुरू की है। उनका कौल है कि अंग्रेजी तालीम फिलहाल जरूरी है ताहम (फिर भी) जब तक हम देशी जुबानों के अन्दर तमाम तालीम खत्म करने का इन्तजाम नहीं करते तब तक हम वाकई इस देश के हरेक फर्द (आदमी) को तालीमयाफ्ता नहीं बना सकते। लेकिन तालिब-इल्म को देशी जुबानों का माहिर बनाने के लिए जरूरी है कि जिस प्राचीन भाषा से वो जुबानें निकली हैं उनकी तालीम का खातिर-ख्वाह बन्दोबस्त किया जावे। इस दावे का मतलब यह है कि अगर उर्दू जुबान को जरिया-तालीम करार दिया जावे तो फारसी और अरबी की तालीम लाजिमी करार दी जाए। पर 28 करोड़ में से अगर हम उन एक करोड़ से कम आदमियों को मिनाह कर (घटा) देवें जो उर्दू के जरिए से तालीम हासिल करना जरूरी कहेंगे, तो हिन्दी, बंगाली, मराठी, गुजराती, तेलुगु वगैरह जुबानों को जरिया-तालीम बनाने वाली 27 करोड़ रियाया के सरकार के तालीम पाने वाले हिस्से के लिए संस्कृत की तालीम लाजिमी हो जाती है। अगर इस तहरीक का वाकई कोई नतीजा निकला तो मेरी राय में आगे 50 बरसों तक गुरुकुल की तालीम को खत्म करने वाले विद्यार्थियों के लिए रोजी का मैदान खुला रहेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 20 सितम्बर, 1901]

तालीमे-निसवा का हनूज रोज़ अव्वल ही है

(अपनी तालीम अभी शुरू हुई है)

कलकत्ता, बम्बई और मद्रास, तीनों बड़े शहरों को अगर नजरअन्दाज कर दें तो तालीमे-निसवा के रास्ते में जो दिक्कतें पहले दिन नजर आती थीं, मौजूदा तालीमी कान्फ्रेंस में जो स्त्री-शिक्षा का थोड़ा-सा जिक्र लॉर्ड कर्जन ने किया, उसमें ही उन्हें इस मुकद्दम रुकावट का जिक्र करना पड़ा। जो इस दिक्कत को पूरी तौर पर जनाबे मन्दू लॉर्ड कर्जन ने ही महसूस नहीं किया और लॉर्ड कर्जन और दीगरों का ख्याल है कि इस मुल्क की रस्म-पर्दे की वजह से ही स्त्री-अध्यापिकाओं की जरूरत है। लेकिन मेरा ख्याल है कि जब नाज़ायज पर्दे की रस्म बिलकुल दूर हो जावेगी उस वक्त भी स्त्रियों की जरूरत होगी। यूरोप और अमेरिका में ही इस जरूरत को महसूस करके अब तक उन मदरसों में जो खसूसन (विशेषतः) स्त्रियों के लिए हैं, ज्यादातर स्त्रियाँ ही पढ़ाती हैं। मेरी राय है कि लोग लड़कों और लड़कियों को इकट्ठा पढ़ाने का तर्जुबा करने में लगे हुए हैं या आइन्दा लगने का इरादा करते हैं उन्हें बहुत जल्द आँखें खोलकर फिर उस उसूल पर वापिस आना पड़ेगा। खैर, इस जुमला-झगड़े को छोड़कर सवाल फिर वही सामने आता है कि क्या बगैर खास अध्यापिकाओं के पैदा किए स्त्री शिक्षा की गाड़ी आगे चल सकेगी। जवाब साफ है कि हरगिज नहीं। लेकिन अफसोस कि ये मुश्किल अब तक हलम हुई। पंजाब देश में इस दिक्कत को दूर करने के लिए कन्या सेवा-सुधार के कारकूनों ने बड़े-बड़े दावे किए थे, लेकिन आज दस बरसों के बाद जब बाहर से कोई खत आता है कि स्त्री अध्यापिका की जरूरत है तो यहाँ से यही जवाब जाता है कि खुद विद्यालय के लिए स्त्री अध्यापिका नहीं मिलती। इस वक्त चार अध्यापक और तीन स्त्रियाँ पढ़ाती हैं उनकी लियाकत ना-गुफ्तवे (न के बराबर) है। क्या इस तौर पर काम करने से पचास वर्षों तक यही दिक्कत दूर होगी। मेरी राय में यह एक बड़ा संजीदा सवाल है। जिस पर स्त्री-शिक्षा के हामियों को खास विचार करना चाहिए और इस सवाल के असली जवाब का पता लगाना चाहिए कि क्यों अब तक स्त्री अध्यापिकाएँ तैयार नहीं हो सकतीं।

[सद्धर्म प्रचारक, 4 अक्टूबर, 1901]

मुसलमान और इंडियन नेशनल कांग्रेस

इस वक्त मुसलमानों में इंडियन नेशनल कांग्रेस के मुताल्लिक फिर हलचल मच रही है। सबसे पहले प्रो. मॉरिस साहब ने अलीगढ़ कालिज से मुसलमानों की बेहूदगी के लिए दो मजाबीन 'पायोनियर' में लिखे हैं जिन्हें कांग्रेस से अलहदा रहने की हिदायत देते हुए मुसलमानों को यह नसीहत की कि उनके पास रुपया और मुनासिब आदमी नहीं है तो वह अपनी कोई अलहदा पोलिटिकल एसोसिएशन ही क्यों न बनवा दें। खात्मे की सलाह का लब्बेलुआब यह था कि मुसलमान अंग्रेजों की हिमायत करें और हिन्दुओं के हमेशा बर-खिलाफ रहें। खैर यह सुलहकुल (समझौते) की नसीहत थी। इस पर पंजाब 'आब्जर्वर' में मि. मॉरिस की सलाह से हख्तलाफ राय जाहिर की और बतलाया कि गैर आदमी दखल देकर खामख्वाह मुसलमानों का नुकसान कराते हैं। इसी समय में मौ. शाहदीन साहब बैरिस्टर लाहौर ने, जोकि पंजाब के नौजवान मुसलमान लीडरों में से एक गिने जाते हैं, इसी मजमून पर राय फरमाई और नतीजा यह निकाला कि मुसलमानों की एक अंजुमन अलहदा कायम की जानी चाहिए। जिसका फर्ज हो कि मुसलमानों के पोलिटिकल हकूक की हिफाजत करें। मि. शाहदीन साहब की राय है कि इस नई अंजुमन को ब्रिटिश गवर्नमेन्ट का फरमाबदार बना रहना चाहिए कि किसी मुसलमान को भी नेशनल कांग्रेस में दाखिल न होने दिया जावे। मुझे मि. मॉरिस की तजबीज (राय) और मि. शाहदीन के फैसले के कुछ फर्क नजर नहीं आता। जब मुसलमानों को किसी हालत में भी अफसरान गवर्नमेन्ट की मुखालफत नहीं करनी चाहिए तो फर्क सिर्फ इसी कदर है कि एक नई कमेटी चलाने की हिम्मत मुसलमानों में है या नहीं। मि. मॉरिस की राय है कि इनमें तहजीब और देशभक्ति का इस कदर माद्दा नहीं है और नौजवान मुसलमानों के लीडर कहते हैं कि उनके अन्दर काफी ताकत एसोसिएशन को चलाने की मौजूद है। चूँकि अपनी ताकत को इन्सान खुद ही जाना करता है इसलिए इस अमल पर तो मैं भी मि. शाहदीन की तजबीज़ पर 'हाँ' करता हूँ। लेकिन सवाल यह है कि जब पोलिटिकल तहरीकों में मुसलमानों ने दखल देना ही है तो क्यों न नेशनल कांग्रेस के साथ सम्मिलित होने की शर्तें सोच ली जावें।

इसके जवाब में कहा जाता है कि हिन्दू कसरतराय (बहुसंख्य मत) मुसलमानों की किल्लतराय (अल्पसंख्यक मत) की इज्जत नहीं करती। मिसाल के तौर पर हाल का ही मुकामे पटना का जलसा पेश किया जाता है। बाबू सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी ने उस जगह खास तकरीर की और बिला-दरयाफ्त मुसलमान बड़े आदमियों के उनके नाम कांग्रेस कमेटी में दर्ज कर दिए। गो मैं इस अमर के सख्त बर-खिलाफ हूँ कि जो लोग अपने अन्दर शामिल न हों उन्हें खामख्वाह अन्दर शामिल जाहिर किया जावे। चुनांचे इस बारे में अपनी राय का एलानिया-इज़हार करके कई मर्तबा *गैबत* (पीठ पीछे बुराई) में *सलवाते* (गालियाँ) भी कांग्रेसवालों से सुन चुका हूँ। लेकिन मेरे ख्याल में इस मौके पर कांग्रेसवालों का कोई कसूर नजर नहीं आता। एक तरफ तो मुसलमान शोर मचाते हैं कि कोई हमारी आवाज नहीं सुनता और जब उनकी तादाद के लिहाज से भी बढ़कर उनका मशवरा शामिल करने की कोशिश होती है तो वे इसकी मुखालफत करते हैं। उनको चाहिए कि एक मर्तबा बिला-लिहाज किसी बात के कांग्रेस में दिल खोलकर शामिल हों। अगर फिर उनकी आवाज को कोई न सुने और वाकात (घटनाओं) की बिना पर वह साबित कर सकें कि क्या ऐसी समूलियत मिलने से उन्हें नुकसान पहुँचने का इन्तमाल (अन्देशा) है तो वे हमेशा के लिए न सिर्फ खुद जुदे हो जाएँगे, बल्कि अपने हम-मजहबों को कांग्रेस से अलहदा रखने के लिए एक जबरदस्त दलील पैदा कर देंगे। लेकिन मेरी आवाज को सुनेगा कौन ? इस मुल्क में न नशे के भाव से काम करने वाले मौजूद हैं और न ही ऐसी तजबीज़ पर सुनवाई हो सकती है।

[सद्धर्म. प्रचारक, 11 अक्टूबर, 1901]

इल्म बेशक ताकत है, लेकिन कैसी ?

इल्म ताकत है—ये मुसल्लम-मसला (मानी हुई हकीकत) है, लेकिन कैसी ताकत ? ये ताकत को इस्तेमाल करने वाले की खासियत पर मुनहसिर (निर्भर) है। वही इल्म जो नेक आदमी के जेहनों में *लखोकाखल्के खुदा* (लाखों आदमियों का खुदा मालिक) के आराम का वाइस बनता है, एक बद-आदमी के जेहनों में करोड़ों की तबाही के सामान पैदा कर सकता है। बिजली कुदरत की कैसी जबरदस्त ताकत है और इसके उसूलों की वाकफियत ने इन्सानों को बाद-औकात कैसा आराम दिया है। लेकिन इस वक्त बाज-साइन्सदानों ने यह मालूम किया है कि अगर बिजली की रोशनी को समुद्र के अन्दर फैलाया जावे तो मछलियाँ भी बेअख्तियार इसके इर्द-गिर्द आ जाती हैं। इस इल्मे-कर्दा (शिक्षा को) मछलियों के पकड़ने के लिए इस्तेमाल करना चाहिए। और एक ऐसा जाल बनाया जावेगा जिसके साथ बिजली की रोशनी समुद्र के अन्दर दाखिल की जा सके। और जिस वक्त मछलियाँ उसके गिर्द आवेंगी फौरन जाल में फँस जावेंगी। यह ताकत का इस्तेमाल कैसा अफसोसनाक है और किस कदर इन्सान इससे मक्कारी का सबक सीखते हैं। जो लोग मछलियों को धोखाधड़ी में फँसाकर उन्हें खा जाने से नहीं घबराते, वे कभी भी इन्सानों पर जुल्म करने से डरेंगे। अगर उन्हें यकीन हो जावे कि दूसरे इन्सान उनसे बदला नहीं ले सकते, मगरबी (यूरोपियन) कौमों की इस किस्म की खूँखार स्प्रिट (भावना) के साथ जब जेफुले-एतकाद (अन्धविश्वास) हिन्दुओं का मुकाबला करना हो तो गो उन्हें बहुत-सी बातों में गिरा हुआ पाता हूँ। लेकिन संगदिली से उनमें कमाल नफरत देखता हूँ। वैदिक उसूलों को भूल जाने के बावजूद भी उनकी स्प्रिट कुछ-न-कुछ काम करती है। तोहमात (अन्ध विश्वास) में फँसकर हिन्दू जादू के तो कायल (माननेवाले) हो गए, लेकिन जादूगर को फिर भी बड़ा ही समझते हैं। चुनांचे यह मसला जबान-जोर आम है (बहुत चर्चा में है)।

जादू बरहक (माननेवाला) करने वाला काफिर। जहाँ मगरिबी कौमें साइन्स की मालूमात को खुलेजी (मारना-काटना) और मर्दा माजारी (आदमी को दुख पहुँचने) करने के लिए इस्तेमाल करने के पीछे लगी हुई है। वहीं क्यों न भारत निवासी इसी साइन्स की तालीम हासिल करके उससे इन्सानों की बेहतरी के लिए काम लें। लेकिन उस जगह पुरुषार्थ कहाँ ?

[सद्धर्म प्रचारक, 7 नवम्बर, 1901]

महर्षि दयानन्द की शिक्षा का भाव

वेदों और पुराणों पर लगाए हुए कलंकों में से एक *बिहारी* कलंक यह है कि वेदों में मांस भक्षण और पशु वध का विधान पाया जाता है। इससे कोई इनकार नहीं कर सकता कि वर्तमान समय में सबसे पहले स्वामी दयानन्द ने इस कलंक का निवारण किया, वरना पुराणों के पंडित अपनी अज्ञानता बजाय कलंक के इसको वेदों का लिखा हुआ मान रहे हैं। लेकिन खुशी की बात है कि महर्षि दयानन्द की शिक्षा के प्रभाव से अब पुराणकों की भी आँखें खुलने लगी हैं। आठ नंबर के 'मैकटोर' के समाचार में 'हिन्दुस्तान का गौ-मांस भक्षण' शीर्षक से एक लेख मुद्रित हुआ है जिसमें कि अखबार 'हिन्दुस्तान' के एक मांस-भक्षण विषय के मजमून पर नुक्ता-चीनी करते हुए यज्ञ में पशुबलि के मुतल्लिक इस पर कार-ख्यालात जाहिर किए गए हैं—हम इस बात को मानते हैं कि यज्ञ में पशु-बलि की *दूही* शास्त्र में पाई जाती है। परन्तु इसके साथ ही पशु-बलि का *नसीदा* भी कम नहीं है। आशुलाइन सुतर में लिखा है और महाभारत में वेदव्यास जी का वचन है जिसका अर्थ यह है कि हवन करने के मानस आदि की प्रवृत्तियाँ धूर्तों ने की है। वेद में उनकी *दूही* नहीं है। क्या हू-ब-हू वही ख्यालात नहीं है जो कि महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों से स्पष्ट रूप में पाए जाते हैं। अगरचे मैकटोर जी ने अपने हिन्दू भाइयों की वजह से साफ अल्फाज़ों में इकरार नहीं किया कि शास्त्रों में पशु वध और मांस भक्षण के मुताल्लिक वचन मिलते हैं। इसके साथ पशु बलि का नसीदा भी कम नहीं है और कुछ इसके सिवाय मायने नहीं रख सकते। या तो दोनों प्रकार के ख्यालात पर शास्त्रकारों का पंचमत लिया जाए। पंचमत यह है कि पशु-बलि विषयक वचन धूर्त और कपट की मिलावट है। लेकिन मैकटोर ने व्यास जी का जो प्रमाण पेश किया है उससे यह शंका ही नहीं रहती कि इसमें साफ बताया गया है कि यज्ञ में मांस आदि की प्रवृत्ति धूर्तों ने की है। वेद में इसकी दूही नहीं है। इन्हीं ख्यालात का इज़हार महर्षि दयानन्द ने किया है। गोया महर्षि दयानन्द और महर्षि वेदव्यास दोनों मुत्तफिकल (एकमत) राय हैं। कहाँ है वे लोग, जो कि इन ख्यालात को महर्षि दयानन्द के दिमाग की उपज कहा करते हैं। जरा आँख खोलकर महर्षि व्यास के अल्फाज़ मुत्तल्ला फरमाएँ (पढ़ें) और महर्षि दयानन्द

के अक्षरों से मिलाएँ कि महर्षि दयानन्द ने कहाँ इस किस्म का दावा नहीं किया कि जिन बातों की मैं तालीम देता हूँ वे मेरी अपनी हैं। बल्कि अपने ग्रन्थों में उन्होंने बतलाया है कि मैं जो कुछ बतलाता हूँ वह वेद आदि सत्य शास्त्रों और प्राचीन आर्य-ऋषियों-मुनियों की मानी हुई बातें हैं। ज्यों-ज्यों आन्दोलन हो रहा है महर्षि के कथन की तसदीक होती जाती है। वह जमाना दूर नहीं कि जब महर्षि दयानन्द के एक-एक वचन के सामने खड़े होकर मुखालफों को भी सिर झुकाना पड़ेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 22 नवम्बर, 1901]

नेशनल कांग्रेस ने फिर सालाना करवट बदल ली है

एक दिसम्बर से नेशनल कांग्रेस ने फिर सालाना करवट बदल ली है। एक दिसम्बर से यह तहरीक हर साल आँखें मलना शुरू कर देती है और 25 दिसम्बर को पूरी तौर से जागकर एक हफ्ते की बेदारी की जिन्दगी गुजारकर फिर ख्वाबे-गफ़लत में मुफ़तला (मगन) हो जाती है। चारों तरफ से शोर मच रहा था कि कांग्रेस ने अपना मकसद पूरा नहीं किया और न कोई अमली कार्रवाई की है। पहले कांग्रेस के हामी इस आवाज को बदनीयती की आवाज कहकर टाल देते थे, लेकिन अब खुद ही इस शोर-असर में शरीक हो गए हैं। जब देखा कि छुटकारा नहीं होता तो इस तरह टालने की कोशिश की है कि लो हम खुद इस कमजोरी को मायने देते हैं। अब तो जाने दो। अब की मर्तबा *सनतव-हरफ़त* की नुमाइश भी होगी। साथ ही कलकत्ता में तालिब इल्मों ने एक रुपया फ़ी वालेंटेयर टैक्स मंजूर करके सबूत दे दिया है कि कौमी तहरीक के साथ कौम की हमदर्दी है। लेकिन इस तरह की नुमायशी कोशिशें असलियत पर पर्दा नहीं डाल सकतीं। यह अमर वाका है कि किसी बड़े काम के लिए कष्ट सहन करने की शक्ति भारत निवासियों में इस वक्त नहीं है और जब तक यह स्प्रिट पैदा नहीं की जाती तब तक इस पर इंडियन कांग्रेस भी देश के दुख को दूर नहीं कर सकती।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 दिसम्बर, 1901]

नियतयार होना (रोज के झगड़े)

पार्लियामेन्ट के झगड़ों से हमारे नाजरीन (पाठकगण) अक्सर बाखबर रहते हैं। पिछले झगड़े अभी फर्द (खत्म) नहीं हुए थे कि एक और हो गया। लिबरल और कंजरवेटिव पार्टी आपस में सख्त मुखालफत रखती हैं। पिछले दिनों तो वोहरा भट्ट के बारे में बातचीत हुई। मेंबरान पार्लियामेन्ट में बड़ा झगड़ा हुआ। *हस्ती के डैम लायर* तक कहने की नौबत पहुँची। इसके एवज मि. विल्सन इत्तेफाक राय थे। पार्लियामेन्ट की मेंबरी से मुअत्तल किए गए। ताहम झगड़ों को दूर करने के वास्ते एक जुबान, एक मुल्क, एक रंग वगैरह की जरूरत नहीं है, बल्कि एक जैसे ख्याल की जरूरत है। यही आर्यसमाज का उपदेश है।

[सद्धर्म प्रचारक, 16 मई, 1902]

स्त्री शिक्षा में तब्दीली—बंगाल के अन्दर

बंगाल की रियाया ने तरक्की करनी शुरू की तो हरेक अमन में इन्होंने सरपट चाल अख्तियार की। चुनांचे जब स्त्री शिक्षा का सवाल सामने आया तो इसमें भी इन्होंने बिना सोचे-समझे अंग्रेजी तफलीद (देखा-देखी) में स्त्रियों को पुरुषों की तरह तालीम देकर डिग्रीयाफ्ता बनाना ही अपना फर्ज समझा। इस बेसुरी चाल का जो नतीजा हुआ वह मुझे बताने की जरूरत नहीं है। ब्रह्मसमाज मन्दिर अंग्रेजी गिरजों की तरह लेडी-स्कूल होने लगे। और इतवार में गिरजा की तरह स्त्री-पुरुष का एक दूसरे को विवाह के लिए पसन्द करने का जरिया बन गई। बकौल 'पायोनियर' एक नया विद्यालय कायम करने लगे हैं जिसमें अंग्रेजी, बंगाली और हिन्दुस्तानी के साथ संस्कृत की तालीम होगी और सीना-पिरोना, भोजन बनाना, बच्चों की खबरगीरी वगैरहा सब काम सिखलाए जाएँगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 जून, 1902]

गुलामी में फर्क ही करते हैं

जब कहीं जिक्र आता है हिन्दुस्तानियों को नौकरी की ख्याल छोड़कर तिजारत और सरवत-हरफत की तरफ तवज्जो करना चाहिए तो बाजगहरी पालिसी बाद जवाब दिया करते हैं। बा-जगह गवर्नमेन्ट-गैर के हिन्दुस्तानी लोग तिजारत में कामयाब नहीं हो सकते। लेकिन आए-दिन अखबारों में देखने में आता है कि जो चीज इंग्लिशस्तान में गवर्नमेन्ट हिन्द को सस्ती व बमौका नहीं दे सकते तो उसके लिए जर्मनी और अमरीका में गवर्नमेन्ट नहीं जाना चाहती। अगर हिन्दुस्तानी ब-मुकाबला अंग्रेजी कारखानों के सस्ती व उम्दा चीज दे तो क्यों न गवर्नमेन्ट उसकी ग्राहक बन जावे। हिन्दुस्तानियों से किफायतशारी की उम्मीद की जा सकती है। अगर वे दिल से हरफत और तिजारत में दिलचस्पी लें तो विलायतवालों को मात कर दें। लेकिन मुश्किल ये है कि इन कार्यों में जो आदमी कामयाबी हासिल कर सकते हैं वे इस तरफ ध्यान नहीं देते। उनके दिल तो जजी, कलेक्टरी और क्लर्की में फँसे हुए हैं। ऐसी हालत में गैर तालीमयाफ्ता जाहिलों के हाथ में उस जगह की तिजारत जाती है जिसका नतीजा मुल्क के लिए उलटा खराव साबित होता है। इससे कृषि वाले कम हो जाएँगे और देश में फहत (अकाल) पड़ेगा, हजारों जानें बर्बाद होंगी। उन्हें मतलब इससे है कि रानी के साथ गेहूँ का सौदा कर देने से उनके वारे-न्यारे हो जावें। ख्वा अगले साल इसकी बदौलत उनका दीवाला क्यों न निकले। मेरी राय में सदियों की गुलामी ने हिन्दुस्तानियों के लिए गुलामी को वाइसे-फर्क बना दिया है। गो पढ़े-लिखे जबानी बातें बहुत कुछ करते हैं और तिजारत व हरफत की बुजुर्गी पर धुआँधार लेक्चर भी दे जाते हैं। लेकिन उनका अमल जाहिर कर रहा है कि वह अब तक उन बुजुर्गों की सपूत औलाद हैं जिनकी नजरों में पाँच रुपए महावार का महसूर पाँच गाँव के जमींदार से ज्यादा मौअज्ज़िज समझा जाता था। इस वक्त बावजूद तालीम के आखिरी सीढ़ी पर फर्क करनेवाले यही बंगाली मर्द हैं। हिन्दुस्तानी की नजरों में एक डिप्टी कलेक्टर की नौकरी अच्छी समझी जाती है। जब तक गुलामी की इज्जत इस तरीके पर कायम रहेगी तब तक उम्मीद नहीं हो सकती कि यह देश अपनी नीच अवस्था को कभी भी छोड़ सकेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 18 जुलाई, 1902]

धर्म शिक्षा की कितनी जरूरत है

कलकत्ता में दो बोस भाइयों को छह-छह माह कैद सख़्त की सजा मिली। उन्होंने एक मुर्दे की अरथी को श्मशान भूमि ले जाते हुए उस वक्त तक रोके रखा था जब तक कि उनका *याफतनीफिरका* मुर्दे के बेटे ने रवाना न कर दिया। इस तरह के वाकात कभी-कभी मुल्क के रू-ब-रू आते हैं। संसार में हर बड़े शहर के अन्दर रोज इस किस्म की दर्जनों घटनाएँ गुजर जाती हैं जिन पर अगर मजमूनी तौर पर विचार किया जावे तो सख़्त-से-सख़्त हृदय काँप उठे। ये तो 'बोसों' की मिसाल है, अगर काम और औरों की करतूतों पर विचार करना पड़े तो कहीं नामोनिशान न दिखाई दें। ये हालत अफसोसजनक है। ऐसी हालत को बदलेने के लिए हमेशा से सन्त-पुरुष कोशिश करते आए हैं। बड़े-बड़े आदमियों ने अपने जीवन इन्हीं कोशिशों में कुर्बान कर दिए। लेकिन अफसोस कि हमारे देश में अब तक खातिरख्वा बरामद नहीं हुआ। बावजूद मुख़्तलिफ धार्मिक सोसाइटियों के अनगिनत प्रचारक काम कर रहे हैं। ऐसे इन्सानों की अफसोसजनक हालत में तब्दीली वाकई नहीं हुई। तब्दीली हुई क्योंकर जबकि खुद धर्म प्रचारक महज नुमाइशी जिन्दगी गुजार रहे हैं। धर्मप्रचारक खुद अहित करके गुलाम बन रहे हैं तो शामईन (शिष्यों) पर क्या असर पड़ सकता है। इसके लिए जीवन में पलटा आना चाहिए। जो बगैर संस्कारों की दुरुस्ती के नहीं हो सकता। इसलिए आर्यसमाज ने चौथाई सदी के तजुर्बे के बाद गुरुकुल की बुनियाद डाली है। ताकि बचपन ही से उम्दा संस्कारों में पलकर ब्रह्मचारी गृहस्थ आश्रम के अन्दर संस्कारों को बदलने की ताक में जा सकें। अगर भारत निवासियों ने इस पवित्र इंस्टीट्यूशन की काफी मदद न की तो मैं समझूँगा कि वे इस लायक नहीं हैं कि उनकी अवस्था में बेहतरी की तब्दीली वाकई हो।

[सद्धर्म प्रचारक, 25 जुलाई, 1902]

राजनीति के मजहब का क्या ताल्लुक ?

अब जबकि विलायत की खबरों से मालूम होता है शायद 11 या 15 अगस्त को रसूम-तख्त-नशीनी शहंशाह एडवर्ड हफतम (सप्तम) की अदा की जावें। मुमकिन नहीं है कि हिन्दुस्तानी राजे-महाराजे और रईस जल्द वापिस तशरीफ लावें। इसके मायने यह है कि जितने लाख रुपया खर्च किया गया है उसी कदर रुपया इसके लिए मँगा दें यानी देश के लिए मँगा दें। एशियाबुक सोसाइटी की जगह में जो जलसा उसकी शान में किया गया था, कहा जाता है कि मसरिकी ऐशा-असरत व शानो-शौकत का पूरा नमूना था। लेकिन सबसे बढ़कर जो कार्रवाई हिन्दुस्तानी हिन्दू राजाओं ने की वह मलिका-ए-मौउज्जमा की कब्र पर हुई। वह माला चढ़ाने की रस्म थी। इस अमल के लिए मैंने मजबूर नहीं किया। बल्कि उन्होंने खुद खुशामन्द ऐसा अमल किया। आज तक किसी हिन्दुस्तानी रियासत के अंग्रेज मुलाजिम ने हिन्दू राजा की तरफ से राम या कृष्ण या देवी की मूर्ति के आगे सिर झुकाया है। यह बात छोटी सी है, लेकिन ऐसी ही छोटी-छोटी बातें बतला रही हैं कि खुद-मुख्तार हुकूमत का जमाना हिन्दुस्तान ने अपनी सदियों पीछे कर दिया।

[सद्धर्म प्रचारक, 25 जुलाई, 1902]

यूनिवर्सिटी कमीशन की रिपोर्ट

'प्रचारक' के *नाजरीन* (पाठकगण) को याद होगा कि लॉर्ड कर्जन बहादुर ने मौजूदा तालीम और उसके तरीके के निसवत, खास तहकीकात करके मुनासिब नतीजे पर पहुँचने के लिए सरकारी बड़े-बड़े मौअज्जिज ओहदेदारों का एक कमीशन मुकर्रर किया था जिसमें हिन्दुस्तान के तमाम सूबेजात (प्रदेशों) में चक्कर लगाकर शाहजते-कलमबन्द (बयान) लिये थे, की थी। इस कमीशन की रिपोर्ट छपकर 93 सफों (पृष्ठों) में निकली है। मुझे इस रिपोर्ट के उन हिस्सेजात से कुछ मतलब नहीं है जिसमें कि तालीम की तरक्की को रोकने के लिए प्राइवेट स्कूलों और कालिजों पर किसी कदर जाहिरा सख्ती की गई है। मुझे मतलब सिर्फ इन हिस्सेजात से है जिनकी निसवत कि मैंने लॉर्ड कर्जन की इब्तदाई स्पीच (उद्घाटन भाषण) पर रिव्यू लिखते हुए ही इशारा किया था। इस कमीशन ने फैसला कर दिया है कि यूनिवर्सिटियों का काम महज इम्तहान लेना ही नहीं है, बल्कि तालीम का दायरा फराक (बढ़ना) करना उन्हीं का फर्ज है। आइन्दा नई यूनिवर्सिटियाँ बनाने का ख्याल नहीं है जिससे जाहिर होता है कि सर सैयद की यादगार में जो यूनिवर्सिटी हमारे मुसलमान भाई बनाना चाहते हैं उसको जल्द कामयाबी होना तो दरकिनार शायद कभी भी कामयाबी नसीब न हो। फीस ऐसी रखना चाहते हैं जिससे कि हर आदमी आला तामील न हासिल कर सके। इस उसूल के मुकाबले में गुरुकुल का उसूल काबिले-मुलाहिजा है कि तालिब-इल्म (विद्यार्थी) ब-लिहाज सेहत-जिस्मानी व दिगामी दाखिल (अच्छे) होने चाहिए, न कि ब-लिहाज दौलत वह अच्छी तालीम हासिल कर सकें।

हमारे उसूल बहुत अच्छे हैं। लेकिन सबसे बढ़कर एक उसूल माना गया है जो हमारे मुल्क की तव्वज़ो का मुस्तैक (योग्य) है। कमीशन ने रिपोर्ट की है कि तालिब-इल्मी या तो अपने वाल्देन (माँ-बाप) या वलियां (संरक्षकों) की निगरानी में रहें। या ऐसी जगहों में, जिनको यूनिवर्सिटी पसन्द करे। यह एक अधूरी-सी कोशिश है उन बुराइयों से बचाने के लिए जो मुल्क के तालिब-इल्मों को चारों तरफ से घेरे रहती है। अगर गौर की निगाह से देखा जावे तो मालूम होगा कि इस मुल्क में ढाई फीसदी से ज्यादा आदमी नहीं मिलेंगे जिनको वाकई तालीम-याफ्ता

कहा जावे। और उन तालीम-याफ्ताओं में से शायद पाँच फीसदी ऐसे हों जो अपने बच्चों की तरबियत (शिक्षा) की निगरानी करने के काबिल हों तो इस क़ायदे से कुछ ज्यादा फायदा नहीं हो सकता। मेरी राय में जब तक गुरुकुल के तरीका तालीम की पैरवी करते हुए योग्य अध्यापक और आचार्य इकट्ठे करके बच्चों को कुछ जमाना तालीम (ब्रह्मचर्य आश्रम) तक उनके दायरे अशर में नहीं रखा जाता तब तक कोई भी तरीका-तालीम मुकम्मल इन्सान पैदा करने में कामयाब नहीं हो सकती।

[सद्धर्म प्रचारक, 15 अगस्त, 1902]

राज्य और धर्म का गहरा संबंध है

हिन्दुस्तान में अंग्रेजी राज्य ने जहाँ बहुत सी *बेबहा* बरकतें *नाज़िल* की हैं वहाँ सबसे बढ़कर ये बरकत है कि ईसवीदीन को बचाओ और जो आदमी चाहे जिस धर्म की पैरवी करे कोई *मुजाहम* (हस्तक्षेप) नहीं होता। लेकिन मजहबी आजादी के ये मायने नहीं है कि मजहब के पेशवा (शासक) ख्वा कुछ ही कहें, कोई पुरसान-ए-हाल न होगा। बारहां देखने में आया है कि किसी मठ के महन्त ने कोई अड़ंगा लगाया तो उसे कैद की सजा दी गई। और जिस किसी मतवली (महन्त) ने किसी माल-वक्त पर दर-अन्दाजी की तो कानून के जरिए से उसके हाथ काटे गए। लेकिन अफसोस के साथ देखा जाता है कि इस उसूल ने बाज-खराबियाँ भी पैदा कर दी हैं। जिनका दफिया (रोकना) हक्काम-वक्त के लिए बहुत ही जरूरी है। जैसा कि जंगी पुलिस खर्च का इन्तजाम हिन्दुस्तान में मुख्तलफ मुजाहिब और खैरात के जो पेश्तरू (मालिक) हैं, जैसे कि एक मत के पैरू आगा खाँ साहब हैं, जिन्हें 'सर' का खिताब सरकारे-इंग्लैंड की तरफ से मिला हुआ है। ये अपने धर्म में कृष्ण का अवतार समझे जाते हैं और अलावा मुसलमानों के हजाराह हिन्दू-सुनार वगैरा, यहाँ तक कि खत्री और ब्राह्मण भी आपके पैरू (परोपकार) हैं और हिन्दुस्तान के मुख्तलफ हिस्सों के अन्दर पाए जाते हैं। इस 'शक्सी' मत के मानने वाले पीर साहब को अपनी मुक्ति का सामान समझकर इनकी पूजा करते हैं। ये लोग समझते होंगे कि पीर साहब हमारी निसवत ज्यादातर पाक और खुदापरस्त हैं। लेकिन जो समाने-उम्री (जीवनी) पीर साहब की हाल में अंग्रेजों के अखबारों में दी है, उससे मालूम होता है कि पीर जी न सिर्फ अंग्रेजों के हर काम में शरीक होकर उनकी सोसाइटी के सज्जन (मेम्बर) समझे जाते हैं, बल्कि उनकी तमाम दिलचस्पियों में खास दिलचस्पी लेते हैं। जिनमें से बाज कहीं साफ तौर पर कमारबाजी (लत) की तहरीफ में आ जाती हैं। और ये मानो कि गवर्नमेन्ट जिन शख्सों को अपने-अपने फिरकों में जबरदस्त देखती (पाती) है और साथ ही उन्हें गवर्नमेन्ट की जानिबदारी (पक्षपात) पर आमादा समझती है, उनकी इज्जत बढ़ाकर *अपनी सल्तनत* के ज्यादातर मुस्तैकुम (पक्षधर) बनाना चाहती है। लेकिन इससे ये लाजिम नहीं आता कि जिन लोगों ने इन्सानों को मजहबी यकीन दिलाया हो कि वह उनकी रहबरी

(रास्ता दिखाने) के काबिल हैं या नहीं। इस तरह पर मक्कारी से दो किस्म की जिन्दगियाँ बसर करने दिया जावे। अगर गवर्नमेन्ट अपनी मतलब-बरारी के लिए ऐसे आदमियों की इज्जत करना अपना फर्ज समझती है तो रियाया के इख्लाक की दुरुस्ती के लिए यही जरूरी है कि उनके चालो-चलन की मुनासिब निगरानी की जावे। मेरे बहुत से हिन्दुस्तानी भाई इस पर यह कह उठेंगे कि गवर्नमेन्ट का दखल ऐसी बातों में ठीक नहीं है। अगर यही बात है तो क्या कोई भी 'शक्सी' आगा खाँ अपने अख्तियारात से महरूम कर सकता है। क्या उनके हकूक दिलवाने के लिए गवर्नमेन्ट अपनी अदालतों से मदद नहीं दिलवाती। फिर जब उनका हक बजरिए-अदालत मिल सकता है तो उनके पैरूओं का हक भी बजरिए-अदातल मिलना कुछ नामुमकिन नहीं मालूम होता।

[सद्धर्म प्रचारक, 19 सितम्बर, 1902]

तालीमी कमीशन की रिपोर्ट की मुखालफत

मेरे नाजरीन इस तालीमी कमीशन का बहुत कुछ हाल पढ़ चुके हैं जोकि लॉर्ड कर्जन बहादुर ने हिन्दुस्तान की मौजूदा में इसलाह की गरज़ से कायम की थी, उसकी रिपोर्ट का यही मुख्तसर हाल में दर्ज कर चुका हूँ। उस कमीशन के मेम्बरों ने बाबा गुरुदास बैनर्जी, जो हाईकोर्ट कलकत्ता के जज हैं, की इत्तिफाकराय से इस किस्म की तजबीज़ पेश की है। जिनसे इन कालिजों को यकीनन नुकसान पहुँचने का इतमाल है, जोकि कौमी कालिजों के नाम से मशहूर है, जिसके कारकून को महज थोड़ी-सी फीस के लालच से लड़कों को इकट्ठे करके कम-हैसियत और कम-लियाकत प्रोफेसरों से उन्हें तालीम दिलवाते हैं। ये शोर मचाना तो आसान है कि विद्या का दान मिलना चाहिए वगैरहा-वगैरहा। लेकिन साथ भी उसके यह भी तो जरूरी है कि तालीम भी अच्छी हो। इस देश के प्राचीन ऋषियों के वक्त अगर तालीम मुफ्त दी जाती थी तो मोअल्लम ही आला दर्जे के आलम हुआ करते थे। मेरी राय में आला दर्जे की तालीम पाकर अगर थोड़े नौजवान भी निकलें तो बनिस्पत इन हजारों के जोकि अधूरी तालीम हासिल करके इन्सानी जमात के लिए मुजिर (नुकसानदेह) साबित हों। अगर सरदार जैलसिंह साहब के अतिया (ग्रान्ट) से कालिज खोला जाए और उसमें मुफ्त तालीम दी जाए तो कोई माकूल उज्र नहीं होना चाहिए। क्योंकि उस फंड के मुन्तिज्मान के पास इस कदर सरमाया होगा कि आला से आला तनख्वाहें देकर लायक प्रोफेसर मुकर्रर कर सकते हैं। मैं समझता हूँ कि कमीशन के बर-खिलाफ आवाज उठाने से पेश्तर मुखालफों को इस अमल पर गौर करना चाहिए। आया थोड़ी फीस लेकर वे लायक प्रोफेसर बहम (इन्तजाम) पहुँचा सकेंगे या नहीं। अंग्रेज अपनी अगराज़ (गर्ज) के लिए कालेज और यूनिवर्सिटी कायम करते हैं, फिर क्यों न अपनी अगराज़ को मद्देनजर रखकर उनके लिए कवायद (कानून) बना दें। अगर भारत निवासियों का कोई हिस्सा अपने खास अगराज़ को पूरा करने के लिए कोई तालीम-गाह खोलना चाहता है तो उसे गवर्नमेन्ट के कवायद से आजाद होकर अपना इन्तजाम करना चाहिए।

[सद्धर्म प्रचारक, 19 सितम्बर, 1902]

लार्ड कर्जन की तालिमी कमीशन के खिलाफ आवाज

कमीशन के बर-खिलाफ आवाज चारों तरफ से उठ रही है कि कमीशन की राय से जिन अमूर (माँगों) में बाबा गुरुदास बैनर्जी साहब, जज हाईकोर्ट कलकत्ता ने इख्तलाफ किया था उनकी बिना पर मुल्क के मुख्तलफ हिस्सों में जलसे होकर अजरदास्त (प्रार्थनापत्र) गवर्नमेन्ट हिन्द की खिदमत में भेजे जा रहे हैं। लेकिन क्या इस आवाज को कोई सुनेगा। मेरी राय है कि लॉर्ड कर्जन ने अपनी राय को बदलने की नीयत से इफ्तताही (उद्घाटन) तकरीर नहीं की थी। गैर-मुमालिक में हुकूमत करना कुछ हँसी-ठट्ठा नहीं है। हिन्दुस्तान में अंग्रेजों ने ये गुरु मन्त्र पढ़ लिया है कि अगर अपनी राय को बदलेंगे तो गवर्नमेन्ट कमजोर समझी जावेगी। मेरी राय में इससे बढ़कर और कोई गलत उसूल हो नहीं सकता। अगर बकौल अंग्रेजों के यह सच है जैसा कि मैं भी इसको सच मानता हूँ कि हिन्दुस्तानियों की नालायकी और आपस की फूट की वजह से अंग्रेजों की हुकूमत इस जगह लाज़िमी थी तो राय बदलने में कोई भी *हतख* (बेइज्जती) नहीं है और न ही रौब-दाब में फर्क आता है। वैदिक धर्म की तो खास हिदायत है कि सत्य को ग्रहण करने के लिए सदा उद्यत रहना चाहिए। लेकिन इस वक्त धर्म की आवाज को कौन सुनता है। मेरी राय में जब अमूर-सल्तनत के लिए सच्चा धर्म रहकर समझा जाता था। उस वक्त इन्सानों को अच्छा इन्साफ मिल सकता था। जब यह यकीनी अमर है कि जो कुछ वाइसराय या किसी गवर्नर के मुँह से निकल जावे उसका पूरा करना वह अपना फर्ज समझते हैं, तो ऐसे नतीजों को बदलने की कोशिश में वक्त जाया करना अक्लमन्दों का काम नहीं है।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 अक्टूबर, 1902]

लन्दन में हिन्दुस्तानी तालिब-इल्म

क्योंकि इंकलाब-जमाने की वजह से आजकल हिन्दुस्तान नरक बन रहा है और जिन आर्यों के बुजुर्गों से शिक्षा लाभ करने के लिए पूरी दुनिया के लोग यहीं आया करते थे, इस वक्त उन्हें भी दुनियावी कामयाबी के लिए शहर लन्दन की तरफ ही रुख करना पड़ता है। इससे दिन-ब-दिन इस बड़े शहर में हिन्दुस्तानी तलबा का तादाद बढ़ती जाती है। लेकिन चूँकि अमूमन तालिब-इल्म ऐसे जाते हैं जो हिन्दुस्तानी में आकर कामयाब रहते हैं, इसीलिए उनमें आवारगी ज्यादा होती है। वे बहुत जल्द लन्दन की तरकीबों का शिकार बन जाते हैं। अक्सर मामूली इख़लाक की औरतों से झगड़ लेते हैं। और खराब होने और ज्यादातर जाहिल औरतों और मर्दों की सोहबत में बर्बाद होते हैं। इस मुश्किल से इन तलबा को निकालने के लिए पहले भी कई तदबीर सोची गईं और अब भी मि. रिचर्ड्स साहब मेम्बर पार्लियामेन्ट से मालूम हुआ है कि अलीगढ़ के मुसलमान प्रोफेसर साहब ने, जो वक्त लन्दन में हैं, ऐसा आश्रम खोल भी दिया है जिसमें हिन्दू-मुसलमान वगैरहा सबको ही दावत है। मेरी राय में हिन्दुस्तानियों के अन्दर फूट ने जो घर कर रखा है उसके लिहाज से मुमकिन नहीं है कि किसी हिन्दुस्तानी का खोला हुआ आश्रम सबके लिए मुफीद हो सके। पश-बेहतर है कि रिर्चड्स को मदद देकर ही आश्रम खोलें। मुझे अफसोस है कि आर्यसमाज के पुराने सम्बन्धी पं. श्याम जी कृष्ण वर्मा लन्दन में अपना जीवन मेरी नजरों में मुफ्त जाया कर रहे हैं। अगर वो मि. चन्द्रदत्त वगैरहा हिन्दुस्तानी मुदब्बरों (प्रबन्धकों) के साथ मिलकर दादाभाई नौरोजी की सर-परस्ती में ऐसा आश्रम खोलें तो मुमकिन है कि उन्हें कामयाबी हो। और वे हिन्दुस्तानी नौजवानों को अलावा लन्दन की खराबियों से बचाने के उनकी आपस की फूट को भी दूर कर सकें।

[सद्धर्म प्रचारक, 7 नवम्बर, 1902]

तालीम पर टैक्स तहजीब के खिलाफ है

अमरीका की निसवत बयान किया जाता है कि वहाँ इब्दताए-तालीम (प्रारम्भिक शिक्षा) मुफ्त दी जाती है। पाँच बरस की उम्र से 16 बरस की उम्र तक मुफ्त तालीम देना अमरीकन गवर्नमेन्ट अपना फर्ज समझती है। बरखिलाफ इसके हिन्दुस्तानी प्राइमरी स्कूलों में भी फीस अदा करनी पड़ती है और कोई लड़का अलिफ-बे या क, ख, ग भी नहीं पढ़ सकता जब तक कि उनके वाल्दैन एक आना या चार आना माहवार फीस अदा न कर सकें। जिन पुराने आर्य राजाओं की जाँ-नशीन अब ब्रिटिश गवर्नमेन्ट है उन राजाओं का दस्तूरे-अमल यह था कि हरेक लड़के को 25 बरस की उम्र तक कम-अज-कम और हरेक लड़की को 16 बरस की उम्र तक कम-अज-कम मुफ्त तालीम देना राज्य की तरफ से फर्ज समझा जाता था। गुरु लोगों को ब्रह्मचारियों की परवरिश वगैरहा अपनी रोजी की कुछ भी फिकर न थी। खजाना पूर्ण रहता था। इसलिए विद्या की उज़रत लेना इस देश में पाप समझा जाता था और इसलिए वेदों को अपना रहबर मानने वाले उसको अपने ख्यालात के मुताबिक जब तक न बना लें उनसे कोई उम्मीद नहीं रख सकते। लेकिन जो लोग वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं उनका फर्ज है कि विद्या की उज़रत जो ली जाती है उसे अपने राज्य में बन्द कर दें। गुरुकुल इसी ख्याल को लेकर कायम किया गया था। अगर वैदिक धर्म के पैरू इसके कोष में काफी धन जमा कर दें, उस पर से 'उताना' दूर जावे जिनका उसे इस वक्त निशाना बनना पड़ता है। यानी यह कि गुरुकुल गरीबों के लिए नहीं है।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 मार्च, 1903]

स्त्री शिक्षा की अफसोसनाक हालत

बावजूद गवर्नमेन्ट रिपोर्टों के इस इज़हार कि स्त्री शिक्षा की उन्नति हो रही है, मैं इस अमर (विचार) को मानने के लिए तैयार नहीं हूँ कि हिन्दुस्तानी औरतों में बनिस्बत पेशतर जहालत कम है। और जब उनकी जहालत में तब्दीली वाकई नहीं हुई तो नामालूम ये कहना कहाँ तक दुरुस्त है कि तालीमे-निसवा (स्त्री शिक्षा) में तरक्की हो रही है। अगर एक फीसदी की जगह डेढ़ फीसदी हिन्दुस्तानी लड़कियाँ स्कूल जाने लग गईं तो क्या उसे तरक्की कह सकते हैं। और जो तरक्की हुई है, महज अलिबे या क, ख, ग की पढ़ाई में हुई है, तो इस तरक्की पर कौन खुश हो सकता है ? जिस कदर स्कूल या पाठशालाएँ खुलती है वे ज्यादातर यूरोपियन या ईसाई लड़कियों के लिए होती हैं। हाल ही में इलाहाबाद में एक ईसाइयों का गर्ल्स हाईस्कूल खुला है जिसके लिए अमरीका से मदद आती है। लाहौर में जो मदरसा कहलाता है, इससे ज्यादातर यूरोपियन या उनसे सम्बन्ध रखनेवाली लड़कियाँ ही फायदा उठा सकेंगी। लेकिन आर्य गिरोह, जिससे कि मुझे मतलब है, वैसे के वैसे बुद्ध बने रहेंगे। आर्यों की औरतें इस तरह अपने खाविन्दों और दीगर रिश्तेदारों के ख्यालात के बरखिलाफ चलकर उन्हें दहकी करती (चिढ़ातीं) रहेंगी। मेरी राय में स्त्री शिक्षा का मसला आर्यसमाज के बड़े भारी गौर का है। आज से 14 बरस बाद गुरुकुल से निकलने वाले ब्रह्मचारियों के लिए जब सम्बन्ध की तलाश होगी तो क्या जाहिल, नीम-तालीम-याफ्ता या नए फैशन की तालीम-याफ्ता लेडियों के साथ वे अपना जीवन आनन्द से गुजार सकेंगे ? आर्यसमाज के मुदब्बरों को इस मसले पर अभी से विचार करके इसका हल तलाश करने का काम शुरू करना चाहिए।

[सद्धर्म प्रचारक, 3 अप्रैल, 1903]

इखालाकी तालीम की जरूरत चारों तरफ है

कुछ भारतवर्ष में ही इखलाकी (व्यावहारिक) तालीम की अदब मौजूदगी का जाहिरा असर नहीं महसूस हो रहा है। बल्कि दुनिया के साइस्ता-से-साइस्ता (अच्छे-से-अच्छे) मुल्क के अन्दर भी यही पुकार सुनाई देती है। सच पूछिए तो भारतवर्ष में जो जद्दोजहद गवर्नमेन्ट-वक़्त और दीगरों की तरफ से इखलाकी तालीम को रिवाज देने के लिए महमे (कोशिश) चल रही है और वो यूरोप और अमरीका की दी हुई हरकत का ही नतीजा है, वरना हिन्दुस्तानियों के दिलोदिमाग तो ऐसे जबरदस्त फालिज (लकवे) ने निकम्मे कर दिए हैं कि उन्हें अपनी अफसोसनाक हालत का इल्म तक नहीं है। इंग्लिस्तान के मशहूर फिलॉसफर मि. वैलिस ने हाल में ही इखलाकी तालीम के बारे में बहुत-से मज़मीन (सम्पादकीय) दिए हैं और उनकी राय है कि उम्दा किताबों के जरिए से नौजवानों के इखलाक (व्यवहार) को सुधारना चाहिए। आया किताबें बगैर लायक और आमिल उस्तादों के नौजवानों को कुछ फायदा पहुँचा सकती हैं या नहीं, यह सवाल दीगर है। लेकिन इसमें शुबहा (सन्देह) नहीं है कि इंग्लिस्तान से भी नौजवानों की इखलाकी हालत की भी वही शिकायत सुनी जाती है जो इस जगह मौजूद है। मि. वैलिस लिखते हैं कि इंग्लिस्तान के नौजवानों के मजहबी ख्यालात के अन्दर उनके तालिब-इल्म (विद्याध्ययन) के जमाने का कुछ भी असर या उसका बकाया दिखाई नहीं देता था। उनका ख्याल है कि बावजूद अपने बुजुर्गों के मजहब की जाहिरा पाबन्दी की यही इंग्लिस्तान के नौजवान गहरे अन्धविश्वास के गार (गड्ढे) में गिरे हुए है। मि. वैलिस इंग्लिस्तान नौजवानों को यहाँ तक बुजदिल समझते हैं कि उनके ख्याल में इन लोगों के अन्दर नातिकपन (जो बोलने योग्य हो) के ख्यालात जाहिर करने का भी हौंसला नहीं हुआ। हासिल कलाम ये कि यूरोप के मुख्तलिफ मुमालिक के मुदब्बरान खुद अपने नौजवानों की हालत को मक्कारी से पूर्ण बतलाते हैं। यही हालत, अफसोस कि मानना पड़ता है कि हिन्दुस्तान के नौजवानों की है। बावजूद जाहिरदारी का लिहाज रखें। देवी-देवताओं के बुतों को पूजने, गिरजा-मन्दिर या मस्जिद में बिला नागा जाने के यही हिन्दुस्तान के निस्व (आधे) से ज्यादा तालीमयाफ्ता नौजवान अपने दिलों के अन्दर सख्त दर्जे के अन्धविश्वासी बन रहे हैं। ऐसी हालत में किताबें क्या दुरुस्ती

कर सकती हैं। इस किस्म के खतरनाक अन्धविश्वास को दूर करने के लिए सदाचारी आमिल विद्वानों की जरूरत है। पैट्रियट (देशभक्त) तो बहुतेरे हैं, लेक्चरों की भी कमी नहीं है और मुस्सनिफ (लेखक) तो बेशुमार हैं। अगर कमी है तो आमिलों की। और जब तक वे पैदा न हों भारत उद्धार एक वहमी ख्यालीपन रहेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 17 अप्रैल, 1903]

कांग्रेस का बोलबाला

ख्वा कितना ही छुपाया जावे कांग्रेस का बोलबाला हो चुका है। इस साल के दिसम्बर में कांग्रेस का इजलास मद्रास में होगा। इस्तकबालिया सब-कमेटी मुकर्रर करने के वक्त मालूम हुआ है कि म्युनिसपल कमेटी मैं मेम्बरी की जद्दोजहद की तरह काम होता रहा। जो मुद्दत से बेखबर बैठे थे वे प्रेसीडेंट और सेक्रेटरी बनने के लिए एक-दूसरे के बरखिलाफ काम करते रहे। ये तो हालात हैं अन्दरूनी जद्दोजहद की, बाकी रहा मुख्तलफ सूबों (राज्यों) की कांग्रेस कमेटियों का ताल्लुक। सो यह ताल्लुक कहीं मजबूत बना ही नहीं। न कोई इन्तजाम, न कोई तरतीब। न कोई तलवार, न कोई ढाल। यहाँ एक मर्तबा कवायद (कानून) बनाए गए। उनके मुतल्लिक एक अमली सब-कमेटी बनाई गई और उसका इजलास भी हुआ। शायद उस खास कमेटी में फसाद व बलागत (अच्छे विचार) से मौ-अस्सर बनाने की बजाय मेम्बरों ने अक्ल से काम किया। नतीजा ये हुआ कि आवाम के काबू करने वालों ने इस कमेटी का ही दम-बे-दम में खात्मा कर दिया। अब पंजाब अलहदा नाराज है। उसका कोई वकील कौमी कान्फ्रेंस में न जाएगा। इसी तरह के फिकरे इस्तेमाल होते हैं।

'नाजेबश कुनके खरीदारनस्त' वहाँ कोई पुरसाने-हाल नहीं, क्योंकि सिवाय शोहरतपसन्दी के अगर कोई खास मुद्दआ (बात) हो तो एक-एक भाई से पूछा जावे। यहाँ तो मामला ही दीगर है। जब तक हाँ में हाँ में मिलाते जाओ तब तक कौमी भाई, और अब अपना भी दख़ल देना हो तो फिर तुम्हारा दख़ल-माकूलात सुनने के लिए कौन तैयार हो सकता है। साल-ब-साल पंडाल तो बनता है, स्पीचों भी धुआँधार होती हैं और रेजोलेशन भी पास होते हैं। लेकिन य सब कठपुतलियों का तमाशा है। जो जिन्दगी इस तहरीक के अन्दर मि. हैवम के जमाने में थी, उसका अब नामोनिशान दिखाई नहीं देता। इसलिए मैं कहता हूँ कि कांग्रेस का बोलबाला हो चुका है। हाँ, नरक की हालत में भी इन्सान का इलाज करना जरूरी होता है। क्योंकि कौन जान सकता है कि किस वक्त करम पलटा खा जावे और मरता-मरता फिर से जिन्दा हो जावे। सच है, दुनिया-उम्मीद-कायम।

[सद्धर्म प्रचारक, 15 मई, 1903]

इखलाकी जुर्रात किसे कहते हैं ?

राजनीति हर समय स्वार्थसिद्धि का एकमात्र जरिया समझा जाता है। अपने मतलब के लिए दूसरों की हाँ में हाँ मिलाकर कानून-कुदरत की और अपनी आत्मा के बरखिलाफ अपने हम-जिन्सों (साथियों) को दुख पहुँचाकर कार्य में सफलता 'राजनीति' के नाम से पुकारी जाती है। इस देश में बस्वी, धर्मात्मा सत्य पर राजभगत होते हैं। हाँ, राजनीति को बड़े मक्कार और हमलावर तरीके से देखा जाता है। और राजनीतियों के भंग करने वालों को यहाँ अपराधी और देशशत्रु कहा जाता है। उस राज्य की विशेष चिन्ता होती है जहाँ राज-कर्मचारी स्वयं अपने बनाए हुए उसूलों की पाबन्दी सिर्फ दूसरों के लिए ही लाजिमी समझते हैं *और अपने आपको बावजूद अपराध करने के कानून के शिकंजे से बरी मानते हैं।* इंग्लिशस्तान का राज इसके ब-मुकाबले अच्छा माना जाता है और उसके ऐसे होने के चन्द कारण हैं। विद्या के प्रभाव से ईसाई मिशनरी पुरुष को अपने अधिकार बतला दिए हैं। कुली और ओछे पदवीवाले राज-कर्मचारी कानून की पाबन्दी में एक दृष्टि से देखे जाते हैं। इस समय के राज्यमन्त्री मि. विल्फोर तीन दफा आमतौर पर मोटरकार को तेज चलाने के कारण मुलजिम गरदाने (करार दिए) जा चुके हैं। 25 सितम्बर को 27 मील की रफ्तार से गाड़ी चलाने के कारण 6 पौंड जुर्माना हुआ था। 25 अप्रैल को 23 मील की रफ्तार से गाड़ी चलाने के अपराध में 5 पौंड का जुर्माना हुआ। पिछले 6 मई सन् 1903 को 32 मील की रफ्तार से गाड़ी आ रही थी तो पुलिस कान्स्टेबल ने पकड़ लिया और मुकद्दमा चलने पर 3 पौंड का जुर्माना हुआ। इस प्रकार से दो बार जुर्माना इस वास्ते जमा किया गया था कि गाँव के अन्दर इस कदर तेज रफ्तार गाड़ी चलाना अवाम के लिए खतरनाक बात है। इंग्लिशस्तान में यही तो गुण हैं जो राज्यों को सँभाले हुए हैं और दिनोंदिन उन्नति हो रही है। हमारे देश की गिरी अवस्था में देसी रियासतों को छोड़ दीजिए। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के यही चन्द मैजिस्ट्रेट गोरे और काले आदमी के मुकदमे में सबको बराबर न देखकर अपनी इखलाकी कमजोरी का आएदिन सबूत होते हैं। इस वास्ते कहा जाता है कि इंग्लिशस्तान के मजिस्ट्रेटों का बेडर राज्य के ऊँचे कर्मचारियों तक को अपराध के कारण गिरफ्तार कर लेना बड़ी भारी इखलाकी जुर्रात है।

[सद्धर्म प्रचारक, 12 जून, 1903]

तुम्हारा प्रोटेस्ट किस काम का ?

ब्रिटिश गवर्नमेन्ट जनूबी अफ्रीका ने कानून पास करवाया है कि हिन्दुस्तानी वाशिन्दे शहर से बाहर सकूतन न रखें (बाहर न बसें) और कोई जायदाद व जमीन वगैरहा खरीदने न पावें। उस पर जैम्बर्ग में हिन्दुस्तानियों का एक अजीमोशान जलसा *मुनकद* हुआ है जिसमें इस नाजायज कानून पर इजहार-नाराजगी किया गया। मि. अब्दुल गनी नामवर सौदागर मीर मजलिस थे। मीर मजलिस ने एक दर्दनाक तकरीर की और बतलाया कि गवर्नमेन्ट *जनूबी* अफ्रीका ने हिन्दुस्तानियों से ऐसा बुरा सलूक किया है जिसकी मिसाल तारीखे-दुनिया में मिलनी मुश्किल है। बोहरों के आदमियों के बारे में मि. चेंबरलेन लार्ड-लन्दन साहबान बार-बार तकरीरों में कहते थे कि जंग की वजह सिर्फ यह है कि हिन्दुस्तानी रियाया से बुरा सलूक करते थे। मगर ये कैसी रियाकारी (मक्कारी) है कि जब जंग खत्म हो गई और मतलब बरामद हो चुका तो हिन्दुस्तानियों को लातें मारी जाती हैं। इसके बाद मि. एच.ओ. अली साहब उठे और कहा कि हमें यह सलूक बर्दाश्त नहीं करना चाहिए। बल्कि बार-बार इसके लिए गवर्नमेन्ट से फरियाद करनी चाहिए। एक और साहब उठे। उन्होंने लार्ड मिल्स के इस फिकरे का हवाला देकर कि गोरों का माल हिन्दुस्तानियों के हाथ देने के लिए तैयार नहीं, आपने फरमाया कि अंग्रेज यूँ तो हिन्दुस्तानियों को वहशी लिखते हैं, मगर दिल में डरते हैं कि वहशी हमें मैदाने तिजारत में जिक़ (दुख) न दें। जलसे की नकलें सेक्रेटरी ऑफ स्टेट हिन्द के पास भेजी गई। नतीजा कुछ भी हो, मगर इन्साफ इस पर मुनहसिर है। क्या ऐसी बदसलूकी जायज समझी जाती है कि हिन्दुस्तानियों को इस देश में जाने का हुक्म न मिले तो भारत के आदमियों का कल्याण कैसे हो। हम ऐसी बातें कैसे बर्दाश्त करें। देशवासियों प्रोटेस्ट तुम्हारा किस काम का।

[सद्धर्म प्रचारक, 26 जून, 1903]

तालीम के इसलहा का आलमगीर ख्याल

इस वक्त सारी दुनिया में इस तालीम की *इसलाह* की निसबत महज हिन्दुस्तान ही ऐसी जगह नहीं है जहाँ पर कि यूनिवर्सिटी के फरऐज (फर्ज) की निसबत नए-नए ख्यालात पैदा हो रहे हैं बल्कि इन ख्यालात के असाद (छपने) से बेमुमालिक भी बरी नहीं हैं जहाँ पर कि यूनिवर्सिटी का काम महज इम्तहान लेना ही नहीं, बल्कि उनके फरऐज (कर्तव्यों) में आला तालीम भी शामिल है। हिन्दुस्तान की तालीमी कमीशन की तरह आयरलैंड में भी एक तालीमी कमीशन तहकीकात के लिए मुकर्रर हुआ था। इस कमीशन ने दो बरसों की तहकीकात कामिल के बाद राय दी है कि जो लोग यूनिवर्सिटी को ऐसा मालगोदाम समझते हैं जहाँ पर कि हर किस्म का माल महज परखने-लाने के लिए लाया जाता है, वे लोग बड़ी भारी गलती में है। यूनिवर्सिटी का दूसरा काम है कि एक तरफ उसका यह है कि नई सच्चाइयों को दरयाफ्त करें और दूसरी तरफ तलबा की जेहनी और दूसरी दीगर ताकतों को महरूक नुमादे (परवरिश) करे। यूरोप और अमरीका तरबियत का खात्मा कर रहे हैं, लेकिन इन्सान की बनावट में सबसे बड़ा अव्वर-अफजल (सबसे अच्छा) हिस्सा आत्मा है इसलिए जो तरीका तालीम आत्मा की तालीम को नजरअंदाज करता है, उसको मुकम्मल नहीं कह सकते। जिस तरीका-तालीम के लिए जबाने हाल से रूहे-जमीन (पूरी दुनिया) की मजहब-कुव्वतें बेहाल हो रही है, जिस तालीम को ऋषि दयानन्द ने *अज्सरेनों* ताजा करने के लिए परिश्रम किया, ऋषि की हिदायत पर अमल करते हुए आर्यसमाज ने इसी वक्त उसे अमली जामा पहनाया है। मेरी राय में अगर कोई यूनिवर्सिटी-विश्वविद्यालय तरबियत बेमुकम्मल फरऐज की अदायगी के काबिल हो सकती है तो वो गुरुकुल है। लेकिन कितने दिलेर आर्य पुरुष हैं जो कि स्वामी दयानन्द के लगाए हुए पौधे को सँभालने के लिए उस तरह से काम करेंगे जिस तरह कि सर सैयद अहमद के बाद उनके शुरू किए हुए कालिज यूनिवर्सिटी के दर्जे तक पहुँचाने के लिए नवाब मेंहदी अली काम कर रहे हैं।

[सद्धर्म प्रचारक, 14 अगस्त, 1903]

हिन्दुओं का शिक्षा सम्बन्धी विचार

हमअसर 'इंडियन मेल', इलाहाबाद *मतबुआ* 4 सितम्बर में भारत धर्म महामंडल हिन्दुओं के तालीमी विषय पर एक लेख साया हुआ था। जिसका एक महाशय ने उसी पत्र मतबुआ 25 सितम्बर का जवाब दिया है कि मुंतजमान (प्रबन्धक) भारत धर्म महामंडल की बजाय कोई नया विद्यालय खोलने की निसवत मौजूदा कालिजों में से ही किसी एक या दो को मदद देना ज्यादा मुनासिब होगा। आइज़बल राय निहालचन्द जी इस विषय पर. सम्बन्धी हिन्दू एजुकेशनल कान्फ्रेंस की तरबियत देने की फिक्र में हैं। हमअसर 'एडवोकेट' ने लिखा था कि गुरुकुल खोलने का ध्यान है। देखें हमारे भाई इस ख्याल को किस अमली सूरत में जगह देते हैं।

[सद्धर्म प्रचारक, 16 अक्टूबर, 1903]

ईसाई मजहब की सुलहकुल तालीम

चीन के जंगोजदल में अक्वाम चीन के बाँटने पर आमादा नहीं। कोरिया और मनचूरिया के बाँटने के लिए रूस और जापान में कशमकश चल रही है। मगरिबी अक्वाम (यूरोपियन कौमें) एशिया को आपस में बाँटने के लिए हर वक्त तैयार रहती हैं। यूरोप के मुमालिक में ईसाई सलादीन (बादशाहों) के बीच में सिर्फ एक टर्की की सल्तनत मुसलमान बादशाह के मातहत है। जिनकी जेरे साया बल्गारिया, सर्बिया, मकदूनिया, वगैरहा में ईसाई लोग आबाद हैं। अपने हमसाया ईसाई सलादीन को हमदर्द जानकर लोगों ने कुछ देर से शोरिश बरपा कर रखी है। यूरोप के मशहूर बादशाह ही नहीं, बल्कि अमरीका के से आजाद मुल्क ने मजलूम ईसाई टर्की रियाया के साथ इजहारे-हमदर्दी करते हुए सुल्तान टर्की को धमकाया और वही एशियाई बर्ताव होने लगा है। इंग्लिशस्तान से तजबीज पेश हुई है कि इलाका बाँट लिया जावे और ये कि टर्की में जहाँ-जहाँ ईसाई आबादी ज्यादा है वहाँ-वहाँ ईसाई गवर्नर इन सूबेजात में मुकर्रर होगा और इन सूबों को इन्तजां-ए-खुदमुख्तारी हासिल होगा। खौफे-जंग इस तजबीज पर कम हो गया है कि बल्गारिया और टर्की फौज इकट्ठी है। जिन लोगों के मकानात तबाह व बर्बाद हुए हैं उनके मुआवजा देने की तजबीज दर-पेश (प्रस्तुत) है। मकदूनिया और बल्कान के ईसाई जमात ने इस तस्दुद से आजादी हासिल करने की राह निकाल ली है। और जतला दिया है कि सुलहकुल ईसाई मजहब के पैरू गैर-अक्वाम (विदेशियों) के मातहत गुजर नहीं कर सकते।

[सद्धर्म प्रचारक, 23 अक्टूबर, 1903]

इस मौके को हाथ से मत जाने दो

गवर्नमेन्ट आफ इंडिया के हालिया तालीमी रेजोलेशन पर रिव्यू देते हुए हमअसर पायोनियर लिखता है कि एक अजनबी गवर्नमेन्ट के लिए मुमकिन नहीं है कि हिन्दुस्तानी जमातों की *जेहनी नशुदनुमा* (मानसिक शिक्षा) को खास सूरत अता कर सके। एक अरसे तक हिन्दुस्तानियों को ख्वाबे-गफलत (अँधेरे में रखकर) में सुलाकर आखिरकार साहेबान अंग्रेज ने उनकी आँखों से पर्दा उतार दिया है। गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया ने साफ अल्फ़ाज में बतला दिया है कि हमने तालीम अपनी अगराज़ (उद्देश्य, खुदगर्जी) को पूरा करने के लिए दी थी। ये कालिज और स्कूल इसलिए कायम किए थे कि हमारे मतलब के क्लर्क और प्रबन्धक अंग्रेजी जुबान और ख्यालात से वाकफ़ित रखने वाले कम कीमत पर मिल सकें। तुमने गलत समझा कि हमने महज तुम्हें आला इन्सान बनाने की नीयत से तालीम दी थी। यूनिवर्सिटी बिल अब कानून बन गया है। लॉर्ड कर्जन की तजवीज (राय) में ये सिर्फ पहली मंजिल है। कलम की एक चोट से न मालूम क्या का क्या बन जाए। यूनिवर्सिटी बिल की मन्जूरी और गवर्नमेन्ट हिन्द की तालीमी रेजोलेशन ने पढ़े-लिखों को संजीदगी से सोचने के लिए हिला दिया है। मेरे पास बहुत पत्र आए हैं जिसमें इसी बात का जिक्र है। बड़े-बड़े तजुर्बकार आदमियों ने मान लिया है कि इस वक्त उन तालीमी यूनिवर्सिटी इंस्टीट्यूशनों पर, जोकि किसी-न-किसी तरह गवर्नमेन्ट के दायरे अख्तियार के अन्दर हैं, भारत-सन्तान को गिरी हुई हालत से उठाने के लिए कुछ भी उम्मीद नहीं हो सकती। इसलिए अमूमन लोगों की नजर गुरुकुल की तरफ लग रही हैं। ये तो परमात्मा को ही मालूम है कि इसका अन्जाम क्या होगा ? लेकिन जहाँ तक तजुर्बे और दलील से नतीजा निकाल सकते हैं साफ मालूम है कि गुरुकुल के लिए बड़ा भारी काम का मैदान साफ हुआ है। कसर है तो सिर्फ ये कि इस मैदान में गुरुकुल को चलाने के लिए आदमी मिलेंगे या नहीं। एक मौअज्ज़िज, बेदार-मगज़ (जागरूक) पुराने आर्य लिखते हैं, ''मेरा ख्याल है कि अगले सालाना जलसा गुरुकुल तक कम-से-कम लाख-डेढ़ लाख रुपया जमा हो जाए। और दस साल में 15-20 लाख लाख रुपया जमा हो जावें तो बहुत अच्छा है। क्योंकि इसको गुरुकुल को तकमील (लक्ष्य) तक पहुँचाने की बड़ी सख्त जरूरत

अभी होती जाती है। यूनिवर्सिटी बिल आपको मालूम है कि पास हो गया है। प्राइवेट मदरसे बहुत से बन्द हो गए हैं, बहुत कालिज वगैरहा भी आइन्दा बन्द हो जावेंगे। आम लोगों के बच्चों को आला तालीम मिलनी करीब नामुमकिन हो जाएगी। ये कालिज अपना मिशन पूरा नहीं कर रहा है। अब आप ही के गुरुकुल की तरफ नजर डाली जाती है। मेरे पत्र छपवाकर तमाम हिन्दुस्तान के आर्यसमाजियों, सेक्रेटरियों, प्रतिनिधियों की सेवा में भेजे जावें। दस, बीस, तीस, चालीस, पचास किताबें कम-से-कम एक रुपया फंड की लेवें। सिर्फ एक साल, बल्कि सालाना उनकी तकसीम करने का इन्तजाम करें। इससे ज्यादा जो देवे उसकी मर्जी। हर शख्स को हर वक्त जिसको जो चाहे, देने का अधिकार है, मगर एक रुपया सालाना किसी को नागवार नहीं होना चाहिए। और बाहर के लोगों से जहाँ तक जिस-जिस की ताकत हो वह जुदा बदे तकसीम कुतब फंड की कोशिश में हो, ताकि आइन्दा जलसे तक में एक हजार रुपया जमा कर सकूँ। बीस किताबों के 500 रुपए तो जरूर मिल जावेंगे। इस खत पर मुझे हाथ से चढ़ाने की जरूरत नहीं है। फिल-हकीकत (वास्तव में) हरेक समझदार आर्य संस्था की निगाह इस वक्त गुरुकुल की तरफ लग रही है। जिनके स्कूलों, कालिजों की हस्ती महज महकमा तालीम के एक इशारे पर मुनहसिर है। इनसे अब किसी के मतलब बनाने की उम्मीद नहीं हो सकती। तिस पर इस किस्म की रुकावटें ? हर भारतीय व आर्यसमाजियों को द्वेष व स्वार्थ त्यागकर, सब भाई मिलकर एक मर्तबा ऐसा जोर लगावें कि गुरुकुल का सरमाया भारत सन्तान की किसी कदर उम्मीदों को पूरा करने के काबिल हो जावे। मैं समझता हूँ कि प्रचारक हरेक आर्यसमाज के मन्त्री और प्रधान के हाथ में पहुँचता है। अगर यह मेरा ख्याल सही है तो अलहदा पत्र भेजने की कोई जरूरत नहीं। सब भाइयों की कोशिश से यह गुरुकुल थोड़े अरसे में ही इस काबिल बन सकता है कि अपनी शाखाएँ चारों तरफ फैलाकर भारत सन्तान को अपने जन्मदाता के उद्धार का जरिया बना सकें। इसलिए ऐ आर्य भाइयो ! मौका हाथ आया है, इसे जाया मत करो। अगर इस वक्त तीन-चार काबिल कदर डिपुटेशन बाहर निकल जावें तो उम्मीद है कि रुपए की कुछ कमी न रहे।

[सद्धर्म प्रचारक, 12 अप्रैल, 1904]

यूरोपियन तालीम और मशरिकी तोहमत

गणित विद्या में प्रसिद्ध डॉ. गणेश प्रसाद यूरोप के विद्वानों में अपना नाम अंकित करा चुके हैं। जर्मनी के आला गणित विद्या के प्रोफेसरों ने डॉ. गणेश प्रसाद की प्रशंसा से भारत निवासियों को फक्र करने का मौका दिया है। गुज़िस्ता (पिछले) चार-पाँच माह से आदित्य डॉक्टर जी अपनी जन्मभूमि भारतवर्ष पधारे। अपने कायस्थ भाइयों से बड़ी-बड़ी आशाएँ रखकर उनमें सम्मिलित होने का इरादा किया। कई नौजवान, जोशीले और तालीमयाफ्ता अपनी बिरादरी की मुखालफत की परवाह न करते हुए आदित्य डॉक्टर जी के साथ सम्मिलित हुए। इस पर कायस्थ सभा ने बिरादरी से खारिज करने और सहूलियत अख्तियार करने वालों व सम्मिलित होने वालों को दंड देना चाहा। *जो इससे अमली सूरत* में कायस्थ सभा ने अपनी जात के लोगों को सामने रखा है। काशी के मशहूर अनामी पंडित शिवकुमार शास्त्री ने राय दी और निश्चित हुआ कि विलायत से लौटे हुए डॉ. गणेश प्रसाद के साथ कभी न खाना चाहिए। जिन कायस्थों ने आदित्य डाक्टर जी के साथ खान-पान का व्यवहार किया है उनको प्रायश्चित्त किए जाने पर बिरादरी में शामिल कर लें। तालीमी साहित्य और संस्कृत के विभूषित डॉ. गणेश प्रसाद के मन पर अपने बिरादरी के अनादर से क्या-क्या संस्कार उत्पन्न हुए होंगे। जिस भेदभाव और नफरत से अहले-बिरादरी ने डॉ. गणेश प्रसाद के साथ बर्ताव किया है उससे *अगलब* है कि डॉक्टर साहब कमजोर और नीच लोगों से मतलब न रखें। डॉक्टर साहब ने अपनी बिरादरी को खुश करने के लिए धार्मिक काम करने के बावजूद भी उनसे घृणित व्यवहार किया गया। इसके बाद डॉक्टर साहब इलाहाबाद के गवर्नमेन्ट कालिज में गणित के असिस्टेंट प्रोफेसर मुकर्रर हुए। अगर आला तालीम के साथ-साथ धार्मिक विद्या और संस्कार होते तो आदित्य डॉक्टर को अपनी आत्मा के विरुद्ध कार्य न करना पड़ता। वहाँ इस किस्म की अपनी बिरादरी के सलूक भी चन्द कीमत न रखता।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 जून, 1904]

तालीम की निसवत और इस वक्त का खास ख्याल

तालीम का ही हर जमाने में दुनिया की तरक्की और पतन में दारोमदार रहा है। इसलिए किसी खास वक्त में तालीम की बाबत जो खास ख्याल फैला वह हवाओं के जानने से मालूम हो सकता है कि उस समय की तालीम का नतीजा क्या होगा। जमाना मौजूदा में तालीम के मुताल्लिक हिन्दुस्तान में एक खास ख्याल जोर से फैल रहा है जिसे इन कॉलमों में कई बार जाहिर कर चुका हूँ। इस वक्त हिन्दुस्तान यूरोपियन और एंग्लो-इंडियन लोगों के बच्चों की तालीम का सवाल गवर्नमेन्ट के जेरेनजर है। कई बातें हुईं, उनकी हालत की सुधारी के लिए विचार हुआ और तजवीज हुई कि विलायत के तरीके पर यहाँ भी अंग्रेजी और यूरेशियन लोगों के लड़कों को तालीम दी जाए। लेकिन अंग्रेज अखबारनवीस लिख रहे हैं जो हालत पब्लिक स्कूलों की विलायत में है वह हिन्दुस्तान में नहीं। विलायत में तलबाओं (विद्यार्थियों) को अपने सब काम खुद करने पड़ते हैं। इसलिए वे मुस्तैद और चुस्त होते हैं, लेकिन हिन्दुस्तान में नौकर ऐसे सस्ते मिलते हैं कि पब्लिक स्कूलों के विद्यार्थी अपने काम खुद करने के आदी नहीं हैं। अंग्रेजों के खास स्कूलों के सवाल को अगर छोड़ दीजिए तब यही शिकायत सुनाई देगी कि तलबा (विद्यार्थी) बावजूद कालिज का कोर्स खत्म कर लेने के बाद भी अपना काम खुद करना नहीं सीखते, बल्कि सुस्त और ऐशपरस्त होते जाते हैं।

पायोनियर के एक नामानिगार ने गुज़िस्ता दिनों में एक मजमून लिखा था कि "यूरोप और अमरीका में निम्नलिखित अल्फाज बोले जाते हैं—करो, भेजो, ले जाओ वगैरहा। और हिन्दुस्तान में बोले जाते हैं—करवाओ, भिजवाओ, लिवा जाओ वगैरहा।" इस मजाक के अन्दर एक बड़ी गहरी सच्चाई है जो हिन्दुस्तानियों के संजीदा विचार की मुस्तैख़ (सही ख्याल) है। इस जगह अपने हाथ से काम करना बड़ा अजीब समझा जाता है। इस खराबी को देखकर मि. जान्स्टेन साहब ने शिकागो की नुमायश पर हिन्दुस्तान से क्लर्क वगैरहा भेजते वक्त उनसे कहा था कि अगर वे अपने हाथों से काम करना अपनी तौहीन समझते हैं, उन्हें अमरीका जाने का हौसला नहीं करना चाहिए। अपने हाथ से काम न करने का मर्ज यानी गुलामी

की सख्त बीमारी है। जो तालीम हिन्दुस्तानियों को इस मर्ज से निकाल सके वही उनके लिए मुफीद हो सकती है। इसलिए चारों तरफ से यही पुकार सुनाई देती है कि तलबा को मुस्तैद, काम करने वाला बनाना ही इस तालीम का दारोमदार है। वही इस जगह फैलनी चाहिए। इन्हीं ख्यालात के मद्देनजर रखकर तो आर्यसमाज ने गुरुकुल की बुनियाद रखी है। मुझे अच्छी तरह याद है शुरू-शुरू में गुरुकुल का एक अंग्रेजी तालीमयाफ्ता उस्ताद इस बात पर जोर दिया करता था कि अपनी खिदमत का कोई भी काम ब्रह्मचारियों से नहीं करवाना चाहिए। इस ख्यालात के प्रचार करने वाले का अपना कुछ कसूर न था। उन्होंने तालीम ही ऐसी पाई थी। मेरी राय में जब तक गुरुकुल की तरीके पर बच्चों की तरबियत न की जाएगी तब तक वे मुकम्मल इन्सान न बन सकेंगे। मेहनत की हज़मत को समझ नहीं सकेंगे। मौजूदा तालीम इन्सानों को नकली तहजीब का गुलाम बनाती है। दिखावे के लिए बच्चों को गड्ढे में गिराकर अपने फर्ज की अदायगी से मजबूर कर देता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 1 जुलाई, 1904]

जबरदस्त कासर-पर

तिब्वत का अब खात्मा ही हुआ चाहता है। गुजाहिरा तौर पर वलाती (लालच) *वदआतुल* का मालिक दिखाई देगा। सिवाय वासन पोलिटिकल एजेन्ट की रिहाइश के और कोई फर्क नहीं आएगा। लेकिन तिब्बत की मौजूदा हालत का खात्मा हो जाएगा। कर्नल यंग हिनर हैंड साहब ने ऐलान दे दिया है कि वह अब सीधे ल्हासा में पहुँचकर ही जो बातचीत करनी होगी, करेंगे। इस इश्तहार में तिब्बतियों पर यह इल्जाम लगाया गया है कि उन्होंने एक सुलहकुल (दोस्ताना) मिशन पर नाजायज हमला किया। लेकिन अंग्रेजों में से, बात इन्साफ पसन्द, ये फरमाते हैं कि तिब्बतियों ने पहले कोई हमला नहीं किया। हुआ कुछ भी हो, चाहे कुछ भी, इसमें शक नहीं कि तिब्बतियों ने अपनी गलतफहमी के वाइस अपने ऊपर एक बला दाखिल कर ली है और अव जबकि तिब्वत का घूँघट उठने वाला है और दलाईलामा भागने वाला है तिब्वती बाशिन्दों को खबरदार होकर काम करना चाहिए। एक मर्तबा पर्दा उठ जाने से इस काबिल तो तिब्वती रहेंगे नहीं कि खुद-मुख्तारी से सबको अपने इलाके में आने से बाहर रोक सकें। लेकिन फिर जब गुलामी का टोप पहनना है तो बजाए रूस से वहशी, संगदिल और जालिम और उनकी मातहती में आने के क्यों न अंग्रेजी कौम के साथ उनकी छत के नीचे न आ जावें। जहाँ से उनकी बराबर हिफाजत होती रहेगी। चीन के अमीन साहब तो कब से फरार हो गए होंगे और न ही चीन में मदद करने की ताकत मौजूद है। जो होना है वह होगा ही। तिब्वत की आमद-दरफ्त खुल जाएगी। लेकिन मुझे उम्मीद नहीं कि मेरे हिन्दुस्तानी भाई इस मौके से भी कुछ फायदा उठाएँ। ल्हासा के कुतुबखाने के बजाए ईसाईयों के आदि पुरुष ज्यादातर फायदा उठा सकते हैं। लेकिन जब आर्यावर्त निवासी आर्य स्प्रिट से सरासर बेबहरा (अनभिज्ञ) हों तब ऐसे मौकों से फायदा कौन उठावे ?

[सद्धर्म प्रचारक, 22 जुलाई, 1904]

मन दरचे ख्यालेम फलक दरचे ख्याल

जंग रूस व जापान में इस वक्त के जनरल क्रोटेप्केन किसी जमाने में हिन्दुस्तान की सरहद पर हुक्मरान रह चुके हैं। जिस जमाने का तैयार किया हुआ आपका एक नक्शा मिला है। जिसमें हिन्दुस्तान पर चढ़ाई करने के जुमले मरातिब (सीढ़ीदर) दर्ज किए गए थे। इस कागज की निसवत इस वक्त यह कहना मुश्किल है कि आया वाकई उसे जनरल क्रोटेप्कन ने तैयार किया था या नहीं। एक और खबर अखबारों में साया हुई है जिससे मालूम होता है कि हिन्दुस्तान पर चढ़ाई करने का ख्याल रूसी दिमागों को हमेशा चक्कर देता रहा है और अगर जापान से रूस का साबका न पड़ जाता तो शायद तो आइन्दा भी हमेशा चक्कर देता रह्ता। मुकाम ताशकन्द में मुद्दत से रूसी सरकार की तरफ से उर्दू सिखाने का इन्तजाम करने के लिए तैयारी हो रही थी। चुनांचे उस काम के लिए हिन्दुस्तान से भोपाल के अखबार 'अल रियाज' के एडीटर साहब हाजी रियाजुद्दीन बुलाए गए थे। लेकिन उनके इनकार पर अब उनके भाई खलीजुद्दीन भेजे गए हैं जो कि इस वक्त ताशकन्द में पहुँच गए होंगे। इस खबर का उस वक्त तक न जाहिर होना जब तक कि हाजी खलीजुद्दीन ताशकन्द न पहुँच गए होते, साफ जाहिर करता है कि रूसियों ने इस मामले को बहुत ही पोशीदा रखना चाहा था। इन खबरों से इस बात की तसदीक होती है कि अगर जापान से मुकाबला न आ पड़ता तो रूस बहुत जल्द हिन्दुस्तान का रुख करने वाला था। 'मन दरचे ख्यालेम फलक दरचा ख्याल' *कहाँ तो फतह मुमालिक गैर के लिए* लश्कर को हरकत देने का इरादा था और कहाँ उन मुमालिक से भी निकाले जा रहे हैं जिन पर कि मुद्दत से कब्जा था। इन्सान की तमाम दानिश और उसकी दूरअन्देशी परमात्मा के इन्तजाम के आगे बहकीकत हैं।

[सद्धर्म प्रचारक, 22 जुलाई, 1904]

हमारे असली हुक्मरानों की मौजूदा हालत

जिन लोगों को अंग्रेजी की आला तालीम नहीं मिली है और तालीमयाफ्तों में से ये जो पोलिटिकल मामलात में कोई दिलचस्पी नहीं हुई है वे अमूमन शहंशाह अलबई हफतम (सातवाँ) को ही अपना हाकिम आखिरी समझ बैठे हैं। लेकिन असल बात यह है कि हमारे वाकई हाकिम कोई और भी हैं। बादशाह सलामत शानो-शौकत से निकलते हैं उनके लिए तोपों की सलामी दागी जाती है। उनके रू-ब-रू बड़े-बड़े सिर झुकाते हैं। लेकिन बावजूद इन सब बातों के हमारे असली हाकिम नहीं हैं। विलायत इंग्लिशस्तान लन्दन शहर में एक खास कमेटी है जिसको पार्लियामेंट कहते हैं। उसके दो हिस्से हैं, एक का नाम हाउस ऑफ लार्ड्स है और दूसरे का नाम हाउस ऑफ कामन्स है। अव्वल इस जगह में पुराने और नए राजनीतिज्ञ बैठते हैं। जिन्हें इस काउंसिल में महज बलिहाज उनकी रियासत की जगह मिलती है लेकिन उनका अख्तियार भी अधूरा ही है। उनके लिए मुमकिन है, लेकिन नए कानून का बनाना आखिर उस जिगर (जगह) का ही काम है। बस, हमारा असली मालिक लन्दन का हाउस ऑफ कामन्स है। इस काउंसिल में इंग्लैंड, स्काटलैंड, आयरलैंड और वेल्स के वकील बैठते हैं। जिनका इन्तखाब (चुनाव) खास कवायद (कानून) पर मुमनी (सम्भव) है। इस काउंसिल में दो ख्यालात के आदमी बैठते हैं। एक लिबरल और दूसरे कंजरवेटिव। गोया इनमें भी कई भेद हैं, लेकिन असल दो ही हैं। गोया एक तो आगे चलने वाले, जिस तरह के हिन्दुस्तान की मजहबी दुनिया है—आर्य और ब्रह्म वगैरहा हैं। दूसरे सनातनी, जैसे पुराने ख्यालात के हिन्दू नामों से तो बेशक यही जाहिर होता है। लेकिन मैंने ताज्जुब से देखा है कि बाद ख्यालात में वेल्सवालों के ख्यालात और कंजरवेटिव के ख्यालात लिबरल हैं। ख्याल इस वक्त कंजरवेटिव पार्टी की वजारत (कबीना) है। क्योंकि उन्हीं की अक्सीरत (बहुमत) हाउस आफ कामन्स में हैं। लेकिन कुछ दिनों से उनके दरम्यान भी हिजरत के उसूलों पर कुछ झगड़ा होने पर कुछ आदमी अलहदा हुए हैं और हलचल मची हुई है और किसी मामले पर *किल्लतराय* हो जावे तो लाजिमी तौर पर उन्हें गवर्नमेन्ट से अलहदा होना पड़ेगा। लिबरलों के मौजूदा पेशवा सर हेनरी ने गवर्नमेन्ट की इजहार नाराजगी का रेजुलेशन एकमत से 1 अगस्त के लिए रखवाया है। अगर

ये रेजोलेशन पास हो गया तो कंजरवेटिव वजारत (कबीना) दूर होकर फौरन नए इन्तखाब (चुनाव) के लिए हलचल मचेगी। और उस वक्त में अगर लिबरल गवर्नमेन्ट हो गई तो हिन्दुस्तान की कुछ उम्मीदें बँध जाएँगी। क्योंकि कांग्रेस वगैरहा जमातों का ख्याल है कि लिबरल लोग हिन्दुस्तान के ज्यादा दोस्त हैं। उनको बारहां तजुर्बा हो चुका है कि लिबरलों ने ताकतवर होकर हिन्दुस्तान को कुछ फायदा नहीं पहुँचाया। इन लोगों की अन्दरूनी मुखालफत महज अपनी गवर्नमेन्ट की जिन्दा ताकत रखने के लिए है। वरना दूसरे के साथ दोनों का बर्ताव एक-सा है। हाल ही में लिबरल लोग तिब्बत मिशन के बरखिलाफ हैं। लेकिन ज्यूँ ही मालूम हुआ कि रूस इस जगह अपने कदम जमाना चाहता है उसी वक्त से ये लोग एकजुबान होकर कहने लग गए हैं कि ल्हासा की तरह मत ठहरना। गो *लम्बूसे सल्तनत शहानबदानन्द* लेकिन मामूली देखने वाले भी बाद-औकात नब्ज को उम्दा तरह से देख सकते हैं। हिन्दुस्तान की बेहतरी तब होगी जबकि लिबरल और कंजरवेटिव की तमीज दूर होकर दोनों फिर से समझ लेंगे कि 28 करोड़ आदमियों को सच्ची आजादी देने से बढ़कर फक्र-ओ-सल्तनत और कुछ हो नहीं सकता।

[सद्धर्म प्रचारक, 29 जुलाई, 1904]

दूसरों के महल देखकर अपनी झोपड़ी मत गिराओ

इस वक्त जापान की कामयाबी को देखकर हिन्दुस्तान की जुमला पोलिटिकल और सोशल सभाएँ अपने काम का तरीका बदलने के लिए तैयार हो रही हैं। नेशनल कांग्रेस अब नए एशिया के ख्वाब देख रही है और अखबारों में खामख्वाह की बहस से अपने हमवतनों को बदचलन करा रही है। सिर्फ यही नहीं, बल्कि धार्मिक सोसाइटियाँ भी अपने असली आदर्श को भूलकर मजहबी सोसाइटियों को ही हवाई किलों के बनाने में मसरूफ करना चाहती हैं। लेकिन अफसोस कि वे भूल जाते हैं कि जब दो कौमों की हालत एक-सी न हो तो इनका मुकाबला ही क्या। जापान में हमेशा से एक ही खानदान का राज्य रहा है। यहाँ अनगिनत खानदान राज्य कर रहे हैं। जापान को आज तक किसी ने फतह नहीं किया। हिन्दुस्तान को जिसकी मर्जी आई, फतह कर लिया। हजार-बारह सौ बरस से ये गेंद की तरह लुढ़कता फिरता है। जापान हमेशा आजाद है, हिन्दुस्तान जब से गुलाम। जापान में मेरे ख्याल से सब आदमी एक-दूसरे को भाई समझने वाले। यहाँ कोई भाई के खून का प्यासा। भला दोनों मुल्कों का आपस में मुकाबला ही क्या है ? मेरी राय में 'बेगाना छाछ, मूँछ मुड़ाने' की कहावत याद करनी चाहिए और जिन-जिन कमजोरियों की वाइस हिन्दुस्तानी इस काबिल हो गए हैं कि उनको हर किस्म-व-राकिस गुलाम बनाने चाहें, उनके दूर करने की तरफ तव्वजो होना चाहिए। बड़े-बड़े काम तो आत्मा और मन से ताल्लुक रखते हैं। अभी तक हमारे लिए नुमाइश खोखले ही हैं फिर दूसरों के महल देखकर अपनी झोंपड़ी को फूँकने के लिए तैयार होना क्या दनाई (अक्लमन्दी) है।

[सद्धर्म प्रचारक, 14 अक्टूबर, 1904]

लार्ड कर्जन की तालीमी कमीशन का असली मकसद

लॉर्ड कर्जन ने जो तालीमी कमीशन बिठाकर उसे खास नतीजे पर पहुँचाया था उसका असली मकसद बहुत कम आदमियों ने समझा है। लेकिन हाल ही में वायसराय-हिन्द की कौंसिल के साबिक (भूतपूर्व) मेम्बर सर टॉमिस्ट रेले साहब ने एक मजमून एक ईसाई मिशनरी अखबार के अन्दर छपवाया है जो कि इस मकसद को बिलकुल साफ कर देता है। इस मजमून में रेले साहब ने बड़ा जोर इस पर दिया है कि नए यूनिवर्सिटी एक्ट का नतीजा यह हरगिज नहीं होना चाहिए कि हिन्दुस्तानियों के खोले हुए प्राइवेट या इमदादी स्कूलों या कालिजों के साथ ईसाई मिशनरियों के खोले हुए स्कूल या कालिज ही बन्द हो जाएँ। साहब *मौसुक* का क्या ख्याल है कि मामूली हिन्दुस्तानी तो दरकिनार, जो तालीमयाफ्ता हिन्दुस्तान बाइबिल से मुनकर (न मानना) और उसकी कहानियों को साइन्स के हथियार से *कुन्द* करना सीख चुके हैं, उनके लिए खास तौर से ईसाईयत की तालीम पर जोर देना चाहिए। ईसाईयों के मुख्तलिफ फिरकाबन्दियों की कमजोरी और मजबूती दोनों का बयान करके साहब-बहादुर खात्मे पर इखलाकी (शिष्टाचार सम्बन्धी) तालीम पर जोर देते हैं और इस तहरीर के दौरान में लॉर्ड कर्जन के तालीमी कमीशन के असली मकसद को भी साफ कर जाते हैं। सर टामिस्ट रेले लिखते हैं कि नए कानून से जिन इखलाकी नतीजे की उम्मीद की जा सकती है उन पर मैं कुछ अलफाज कहना चाहता हूँ। मौजूदा हालात में हिन्दुस्तान का एक कामयाब कालिज महज पढ़ाई का कारखाना और उससे ज्यादा नहीं है। अंग्रेज प्रोफेसर अपने लेक्चर के कमरे के सिवा और कहीं नहीं मिलता है। कालिज के अफसरों को मालूम नहीं कि उनके आदमी कहाँ रहते हैं। और पढ़ाई के घंटों के अलावा उनके चलन की वे कोई जिम्मेदारी नहीं लेते हैं। इस जरूरी मजमून पर अपने हिन्दू रफीकी (मित्रों) के साथ बहस करते हुए मैंने बादऔकात इन्हें इस मामले पर रजामन्द नहीं पाया कि इंग्लिशस्तान की यूनिवर्सिटी का आदर्श हिन्दुस्तान कभी पूरा हो सकता है। वह अपनी रिवायतों पर ही फक्र किए बैठे हैं और वे अपने लड़कों की इख़लाकी तरबियत (शिक्षा) को अंग्रेजी व ईसाई हाथों में देने में तामील करते हिचकिचाते हैं; लेकिन इन आदमियों के साथ हमारा बहुत कुछ साझा है। जिस तरह कि हम देखते हैं वैसे ही महसूस करते हैं कि 'जुमला मजलिसी' तरक्की का नतीजा

हिन्दुओं की गिरफ्त में खास तब्दीली का पैदा करना होगा। मैं यकीन करता हूँ कि उनका असर अपने हमवतनों पर ज्यादा मजबूत हो जाएगा और मुफीद बनाया जा सकेगा। अगर यूनिवर्सिटी सिस्टम को इस तरह तब्दील किया जावे कि उनको उनके नौजवान की इखलाकी तरबियत में अंग्रेजों के साथ ज्यादातर नजदीकी रिश्ता दिया जाए। ये मज़मून मतलब को बाध्य करने के लिए काफी है। लॉर्ड कर्जन ने गहरी निगाह से देखा और इस नतीजे पर पहुँचे कि तलवार के दबाव से हिन्दुस्तान को काबू में रखना मुश्किल है। तालीम शुरू हो चुकी है इसके प्रभाव को कोई नहीं रोक सकता। अगर गवर्नमेन्ट अपने तमाम कालिज बन्द कर देवे तब भी इस वक्त हिन्दुस्तानियों के अन्दर तालीम का इस कदर शौक पैदा हो गया है कि ये सिलसिला आला तालीम का जारी रहेगा। जब ये हालत है तो सिवाय इसके और कोई सूरत ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के *हस्तकलाल* (पैर जमाने) के लिए नहीं हो सकती कि तालीमयाफ्तों के हालात को ही इंग्लिशस्तान ईसाईयत का गुलाम बनाया जाए। इस वक्त लॉर्ड कर्जन की कुल लियाकत पालिसी ने इमदादी स्कूल और कालिज तो दरकिनार जुमला प्राइवेट कालिज और स्कूल जो गवर्नमेन्ट से एक पाई की भी मदद नहीं लेते थे, यही अफसरान सर *रस्कातालीम* (शिक्षा विभाग) के गुलाम बना दिए हैं। और अगर कुछ अरसे बाद ये कानून पास हो जाए कि जो तालीम कम-अज-कम अंग्रेजी जुबान और फलसफा को पढ़ाने के लिए अंग्रेज प्रोफेसर न रखेगा उसका ताल्लुक यूनिवर्सिटी से नहीं रहेगा, तो कौन-सा कालिज होगा जो इस हुक्म की उदूली का हौसला कर सके। और अंग्रेज प्रोफेसर के कालिज में दाखिल होते ही क्या प्राइवेट कालिजों की काया ही पलट जाएगी। क्या किसी हिन्दुस्तानी प्रोफेसर या प्रिन्सिपल का दबाव अंग्रेज प्रोफेसर के बराबर हो सकेगा। जब दिमाग ईसाईयत के गुलाम बन गए तो फिर क्या आर्य सन्तान की कोई हस्ती रह सकेगी। इन वजूहात (विषय के) नतीजे पर मैंने मुद्दत से गौर किया हुआ है और इसीलिए अपने धर्म की हिफाजत करने के लिए जिस धर्म से बढ़कर एक आर्य की कोई भी जायदाद नहीं हो सकती है, अपने सनातन वैदिक धर्म की हिफाजत के लिए मुझे जरूरी मालूम हुआ था कि अपने प्राचीन तरीके पर विद्याध्ययन का स्थान नियत किया जाए। और मौजूदा तहजीब की चमक-दमक से अपने बच्चों को अलहदा रखकर उन्हें ऐसी सादगी में परवरिश किया जाए कि वे विद्या को महज विद्या के लिए हासिल करने के लायक बन जाएँ। मैं इसी अपील को शायद पचासों बार दोहराता हूँ कि जिन कूढ़मग्ज हिन्दुस्तानियों, जो खासतौर से आर्य सन्तानों को ये खतरा महसूस हो रहा है कि उनका फर्ज है कि गुरुकुल को बहुत जल्द ऐसी माली हालत में पहुँचा दें कि वादे-मुखलिफ (विरोधियों) के झोंकों की न परवाह करता हुआ अपने चलाने वालों की हिफाजत में उनके बच्चों को ठीक तरीके से तालीमी मदद दे सके।

[सद्धर्म प्रचारक, 18 नवम्बर, 1904]

हिन्दुस्तान का मुस्तकबिल क्या होना चाहिए ?

सदर हेनरी कार्टन, सदर अंजुमन नेशनल कांग्रेस ने अपनी प्रेसिडेंटल स्पीच में इस अहम सवाल का जवाब दिया है इसका लब्बेलुआब यह है कि अंग्रेजी राज का मौजूदा तरीका उन कौमी सैलाबों के पूरा होने के बाद कायम नहीं रह सकता जो खुद अंग्रेजी राज की वजह से पैदा हुए हैं। कुछ अरसा हुआ एक बहुत बड़े काबिल शख्स से कहा था, मेरे ख्याल में वह वक्त दूर नहीं है कि जब इंग्लिशस्तान को अपनी खुशी या मजबूरी से अपना हाथ हिन्दुस्तान के पालिटिकल मैदान से दफेतन (एकदम) खींच लेना होगा। लेकिन मेरा ख्याल हिन्दुस्तान के मुस्तकबिल के निसवत ऐसा नहीं। कोई माकूल शख्स इस बात की सलाह नहीं देगा कि इंग्लिशस्तान को अपना हाथ खींच लेना चाहिए। तामीर (बनाने) का काम आहिस्तगी के साथ हुआ करती है। कई साल गुजर जाएँगे जब हमें कभी उम्मीद करनी चाहिए कि तामीर का काम तकमील पर पहुँचेगा। यह ऐसी पालिसी है जिसे हम हर वक्त नजर के सामने रखेंगे। हिन्दुस्तान की मुहब्बिल (सच्चा) वतन एक जायज फक्र के साथ अपनी गुजिस्ता 7 तारीख (पिछले इतिहास) पर नजर डालते हैं और वो जानते हैं कि हिन्दुस्तान फिर एक एशियाई कौम की फेहरिस्त में अपना नाम दर्ज कराएगा। इसी *मयार* के लिए वह हाथ-पाँव मार रहे हैं और ये मयार (मंजिल) थोड़ी देर के बाद हासिल हो वा किसी कदर नामुकम्मल सूरत में, मगर हासिल जरूर होगी। बिलाशुबहा हम काफी यकीन के साथ इन ख्यालात से हेनरी कार्टन की बारीकबिनी (सूक्ष्मदृष्टि) और दूरन्देशी टपकती है। जिसकी तह को जाहिर फरस्त तरबियतें नहीं पहुँच सकतीं। जो लोग जाहिरी-इन्कलाबों और तब्दीलियों को देखकर नतीजा निकालने के आदी हैं, उनकी राय सर हेनरी कार्टन की राय से मुक्तफिक न हो। लेकिन बात की तह तक पहुँचने वाली तरबियतों के नजदीक वह दिन अभी बहुत दूर है जबकि हिन्दुस्तान को 'एडबिल' हासिल हो सके।

[सद्‌धर्म प्रचारक, 30 सितम्बर, 1904]

कालिज सभी बड़े शहरों में कायम होने चाहिए

इससे बढ़कर अपील गुरुकुल के लिए और क्या हो सकती है। लेकिन वाकयात इससे भी बढ़कर शहादत देते हैं कि बहुत जल्द गवर्नमेन्ट को किसी *कदर तरमीम (रद्दोबदल)* के साथ गुरुकुल के तरीका के साथ गुरुकुल के तरीका तालीम करनी पड़ेगी।

मद्रास में इस साल 51 उम्मीदवरान इंतखाबों (चुनावों) में बदचलनियों के लिए खारिज किए गए। एक एम.ए. कालिज के विद्यार्थी को एम.ए. इम्तहान से खारिज किया गया है। दो बी.ए. के विद्यार्थियों ने अपनी उम्र गलत लिखवाकर धोखा दिया, इसलिए दो बरसों के लिए इम्तहानों में शामिल होने से महरूम किए गए हैं। वे वाकता मौजूदा तरीका तालीम की निसवत ये इजहार जरूर करते हैं कि ये तालीम इखलाक को चाल-चलन को दुरुस्त करने में नाकवत (नाकाबिल) साबित हुई है। तकरीबन तीन बरसों के तजुर्बे ने मुझे यकीन दिला दिया है कि जब तक ब्रह्मचर्य के नियमों पर बाकायदा चलाकर बच्चों को तालीम नहीं दी जाती तब तक तालीम का असर राहतबख्श (तंदरुस्त बनाने वाली) उनकी हालत पर नहीं हो सकता। और जिस रुख से हवा चल रही है उससे यकीन होता है कि वह जमाना दूर नहीं है जब वह प्राचीन आर्य ऋषियों की अक्लमंदी (दाना) के आगे तरबियत और तालीम के पहलू में यही मंजबयूरोप (तरक्कीयाफ्ता यूरोप) को सर-तस्लीम खम करना पड़ेगा (सिर झुकाना पड़ेगा)।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 जनवरी, 1905]

डिक्टेटरशिप (तानाशाही) शख्सी हुकूमत ही मुफीद हो सकती है

एक शख्स बगैर ख्याल-लियाकत और अफशाक-हामिदा के महज खास खानदानों में जन्म लेने की वजह से लाखों आदमियों का हाकिम बन जाता है तो यह बिलकुल बेइन्साफी और खतरनाक है। लेकिन ऐसा अगर खुदमुख्तार हाकित दिल और फैल (चाल-चलन) का नेक हो तो इससे बढ़कर रियाया (जनता) के लिए और कोई नियामत नहीं हो सकती। मैंने 20 जनवरी के 'पायोनियर' में एक खास खबर पढ़ी कि रियासतनामा ने एक कानून इस मजमून का पास किया है कि कर्ज देने वाले (साहूकार) काश्तकारों से दस फीसदी माहवार वसूल न कर सकें। इस कानून का असर गुजिस्ता जमाने तक जाएगा। जिन जमींदारों ने मौजूदा महाराज के गद्दी पर बैठने के बाद बदरिया-डिग्री अदालत के दस से ज्यादा सूर अदा किया है उनको दरख्वास्त देने पर ज्यादा दिया हुआ सूद वापस मिलेगा। इस खबर को पढ़कर मुझे ताज्जुब नहीं हुआ क्योंकि मैं नाभा नरेश के हालात मुद्दत से सुनता रहा हूँ। जिस वक्त सादी गमी *इखराजात* (नियन्त्रण) में कमी लाजिमी करा दी थी उस वक्त महाराज साहब का यहाँ तक अमल था कि अगर कोई बारात नाच का सामान लेकर उनकी रियासत के अन्दर से गुजर जाए तब भी उससे जुर्माना वसूल किया जाता था। इस अमल को बिलाशुबहा (बिना सन्देह) अंग्रेजी तालीमयाफ्ता लोग सुकबाशाही (डिक्टेटरशिप) को बदनाम करेंगे। लेकिन दूसरी तरफ इस इजलास का ख्याल न करेंगे जो हजारों घरों को कर्ज से बचाने में कामयाब हुई। महाराजा साहब नाभा ने विधवा-विवाह को अपने राज्य में बहुत कुछ रिवाज दिया है। सुना गया है कि गरीबों के विवाह के लिए धन की मदद दी जाती है। ब्रह्मचर्य पर जिस कदर विश्वास नाभा नरेश को है, मोहताज-बयान नहीं है। गुरुकुल के हालात सुनकर महाराजा साहब हमेशा प्रसन्न होते थे। एक मौका था कि नाभा से बड़ी भारी मदद की उम्मीद थी, लेकिन जो लोग मदद लेने के लायक ही न हों उनको मदद कहाँ से मिल सकती है। मेरा विचार मुद्दत से हो रहा था। ऐसे शुद्ध, भले, सज्जन नरेश

के दर्शन करूँ और अपने विचारों को उनके सम्मुख रखूँ। लेकिन हालात ही ऐसे रहे कि मुझे मौका ही न मिला। राजा साहब नाभा की अकेली मिसाल नहीं है। आर्यसमाज के मिशन और गुरुकुल के मकसद के साथ नामालूम कितने नरेश हमदर्दी का ख्याल रखते हैं। हम लोगों के कर्मों (चाल-चलन) से निराश होकर बेपरवाह हो गए हैं। सच है जहाँ एक इन्सान को उनके कर्मों के फल मिलते हैं वहाँ एक जमात को उनके मेम्बरों के पूरे कर्मों का फल अवश्य मिलता है। और इसके लिए साबी होना ईश्वर से मुखालफत करना है।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 जनवरी 1905]

महज किताबी इल्म अजायबपरस्ती को दूर नहीं कर सकता

इस वक्त समझा जाता है कि अंग्रेजी तालीम ने हिन्दुस्तानियों की आँखें खोल दी हैं और वे नई रोशनी से मनुव्वर (परिचित) हो रहे हैं। लेकिन हरिद्वार के आस-पास तीन बरसों से रहते हुए मुझे तजुर्बा हो गया है कि अंग्रेजी तालीम से जो वाकई फायदा उठाना चाहिए था वह इस वक्त के तालीमयाफ्ता *असहाब* (विद्यार्थी) ने उठा लिया। अंग्रेजी लिटरेचर और अंग्रेजी ख्यालात से हिन्दुस्तानी अमूमन आर्य सन्तान अगर कोई खसूसन (खास) फायदा उठा सकते हैं तो वह इस कौम की मुस्तैदी, सादगी और तहकीक (खोज) का शौक है। लेकिन अफसोस कि बजाय अंग्रेजी की इन नेक *खसलतों* की पैरवी करने के हिन्दू तालीमयाफ्ता असहाब बजाय पुराने फैशन की अजायबपरस्ती के, नए किस्म की अजायबपरस्ती के पीछे पड़े हुए हैं। ये ख्यालात अब मेरे दिल में अखबार (पायोनियर) में छपे एक खास मजमून को पढ़कर खासतौर से पैदा हुए। जिसमें हिमालय के ऋषि के नाम देकर किसी हिन्दुस्तानी अंग्रेजी जानने वाले ने एक अजीब किस्सा बयान किया है। अपने आपको मद्रासी जाहिर करके बतलाया है कि किस तरह हरिद्वार में एक तालीमयाफ्ता मद्रासी पुजारी उन्हें मिला। किस तरह हिमालय में उसने ऋषियों का पता दिया और किस तरह हिन्दुस्तानी नामानिगार में तीन दीगर तालीमयाफ्ता मद्रासियों के साथ हिमालय के ऋषियों की तलाश में चले। किस तरह हरिद्वार से कनखल और वहाँ से गंगा के पुल पर और इसके बाद गंगा पार किस तरह चाँद की रोशनी में सारी रात चलते-चलते चार हजार फीट की बुलन्दी पर चार बजे सुबह के *एक बूढ़े* ऋषि को बेहस्व-हरकत (निश्चल) बर्फ में नंगे लेटे देखा। *दूसरा जवान* था, लेकिन उसी तरह लेटा हुआ था। और *तीसरा* हाथ और पाँव के बल उलटा मुँह को ऊपर की तरफ किए हैवान की शक्ल बन रहा था। तर्जे-तहरीर से पाया जाता है कि शायद लिखने वाले ने योग-सार का मजाक उड़ाने का मजमून लिखा है। हठ लोगों की क्रियाओं की हालत भी ऐसी है। लेकिन अगर एक शख्स ने वाकई जाहिर करने की नियत से लिखा है तो उसने पब्लिक को धोखा दिया है। क्योंकि कनखल से इस पार आने का पुल चंडी के पास है या गुरुकुल के पास। अब वहाँ से जो तराई का जंगल है, उसका हाल विस्तार से मुझे मालूम है। यह तहरीर ख्वाब, मजाक

हो या सच, लेकिन इसमें शक़ नहीं कि इस किस्म के सफेदों (जादूओं) की तलाश में अक्सर अंग्रेजी के तालीमयाफ्ता इस तरफ आया करते हैं। ऋषिकेश या तपोवन वगैरहा की तरफ जाते हुए जो उत्साह दिखाते हैं, लौटते हुए उसी कदर उन स्थानों की बुराई करते हैं। लेकिन ताज्जुब है कि फिर भी कोई अच्छा सबक नहीं सीखते। चंडी के पहाड़ के नीचे कालकानन्द राममार्गी का मकान है। बीसों ग्रेजुएट और सरकारी आला ओहदेदार, छोटे विभाग के लोग आते हैं और इन्सानी खोपड़ी में खाने वाले के साथ शराबनोशी में शरीक होते हैं और राममार्गी के रसूल (रिवाज) अदा करते हैं। पिछले कुम्भ पर मैंने लिखा था कि महाराज साहब दरभंगा प्रधान श्री भारतधर्म महामंडल श्री कालकानन्द के ही मेहमान बने और अब भी कई मर्तबा मालूम हुआ है कि हिन्दू राजे तक कालकानन्द के यहाँ ठहरकर भैंसे और बकरे वगैरहा बलिदान कराते हैं और भैरवी चक्र की पूजा करके हजारों रुपया कार्यक्रम के दान में देते हैं। मैंने एक दिन कालकानन्द के यहाँ रहने वाले एक साधु को रामकिशन चन्द दुकान पर कनखल में देखा, वह नंगा था। सिर्फ एक चोला पहने था जो मालूम हुआ कि चंडी पर जाकर उतार देता है। एक शख्स से पत्र पढ़वा रहा था। अमृतसर की किसी भींगती का खत था जिसमें बड़ी श्रद्धा का इजहार था। उस वक्त भी शराब पिए था। उसी वक्त एक जवान भंगिन आई और उससे मजाक हुआ। मालूम हुआ कि आमतौर पर लोग इसको बदचलन जानते हैं। लेकिन सख्त नफरत आमील मर्द उसे मिले। लेकिन तामीलयाफ्ता आदमी सब उसकी इज्जत करते हैं। हिन्दुओं के अन्दर शिया-सूफी की बदौलत बावजूद आला तालीमयाफ्ता के यही एक झूठा यकीन जेफुलयतकादी (भ्रम) और झूठी कहानियों को सच मान लेना और गन्दी कहानी को इन्कार साबित करने का मर्ज ऐसी जगह पकड़ गया है कि इस वक्त मुफ्तखोरी और बदचलन साधुओं को महज तालीमयाफ्ता साहब अपनी आदत को किसी कदर बदल देवें तो मुफ्तखोरी की बहुत-सी मक्कारी का खात्मा हो जावे और इन आफतों से पनाह मिल जाए।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 फरवरी, 1905]

वैदिक तालीम का जबर्दस्त असर

ईसाइयों का एक छोटा सा अखबार 'दि एप्पी फैनी' है। उसमें किसी ईसाई ने दावा किया था कि ईसाइयों की प्रार्थना के मुकाबले में दुनिया में कोई प्रार्थना नहीं ठहर सकती। इस पर एक माकूल पसन्द वैदिक धर्मी ने जाहिर किया है कि जिस प्रार्थना में रोज की रोटी माँगी गई हो उसका मुकाबला वैदिक प्रार्थना से करना, जिसमें बुद्धि का शुभ कार्यों में प्रेरणा करने की प्रार्थना हो, ठीक नहीं। इस पर जवाब की ताब न लाते हुए ईसाई एडीटर ने बतलाया है कि रोज की रोटी से मुराद-*मादी* रोटी नहीं, बल्कि मुराद-*रूहगअलकदस* है। जब तक कि योरोपियन संस्कृत जानने वालों के लिए सर विलियम जॉन्स ने वेद का पता नहीं लगाया था तब तक रोटी के मायने रूहगअलकदस नहीं समझे जाते हैं और न ही ऐसा समझने की जरूरत थी। क्योंकि ईसाईयत के मुकाबले में कोई आधुनिक तालीम मौजूद न थी। लेकिन उपनिषदों के प्रकाश ने ईसाईयत के दर्जे को ही तब्दील कर दिया और तब जरूरत हुई कि मादी ख्यालात से पूर्व अफसरों पर रूहानियत का ख्याल चढ़ाया जावे। मसीह के जिस्म समेत आसमान पर उड़ जाने के मायने अब कुछ और किए जाते हैं। और ईसाईयों की तो बात ही क्या है ? मौहम्मदी मत के बाद मौलवी खुदा के फरिश्तों और तख्त वगैरहा से मुनकर (मानना) हो रहे हैं, लेकिन असल-असल ही है और नकल-नकल। कुरान और बाइबिल, दोनों के अन्दर परमेश्वर को हर जगह मौजूद बतलाया है। यानी इस ख्यालात के इजहार के लिए अलफाज इस्तेमाल किए हैं। लेकिन सर्वव्यापक परमात्मा को याकूब से कुश्ती लड़वाने में जरा भी तामील नहीं किया गया और न खुदा को खास आसमान का बाशिन्दा बतलाने में जरा भी दरेग (हिचहिचाहट) किया गया। लेकिन जिस वेद से ये सर्वव्यापक का ख्याल पहले गया, उसमें हर ख्याल उसके मुताबिक ही जाहिर किया गया है। वैदिक तालीम ने दुनिया को हरकत तो दे दी है। अब इस हरकत से ठीक नतीजा पैदा कराना वैदिक-धर्मियों का काम है, जिसके लिए अफसोस है कि मुनासिब कोशिश नहीं की जाती।

[सद्धर्म प्रचारक, 7 अप्रैल, 1905]

यह तुम्हारी आजमाइश का वक्त है

मसरिकी (पूर्वी) बंगाल से अफसोसनाक और दर्दनाक समाचार आया है कि बारे-साल प्रिवींसल कान्फ्रेंस के मुतल्लिक जो जुलूस निकाला गया था उसमें शामिल डेलीगेटों पर पुलिस ने वहशियाना और बुदजिलाना हमला किया और जुलूस के लीडर भारत के भूषण आइबेल सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को डिस्ट्रिक्ट सुपरिंटेंडेंट पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और मजिस्ट्रेट ने मुकदमे की नकल उतारकर उन पर 400 रुपए का जुर्माना किया। फिर जबरदस्ती कांग्रेस का इज़लास रोक दिया। चंडीगढ़ डेलीगेट साहिबान ने गिरफ्तारी के लिए अपने आपको पेश किया तो उनको बतलाया गया कि हुक्म सिर्फ यही है कि बाबू सुरेन्द्रनाथ को गिरफ्तार किया जाए। इन सब डेलीगेटों का कसूर सिर्फ यह था कि इन्होंने बावजूद पुलिस के हुक्म के वन्देमातरम् के नारे बुलन्द किए थे। और जब हम यह सोचते हैं कि एक साबिक (भू.पू.) एडवोकेट जनरल फैसला कर चुका है कि वन्देमातरम् के नारे बुलन्द करना कोई जुर्म नहीं है तो बारे-साल के हाकिमों का अपनी बेरहमाना और सरंगेज कार्रवाई के लिए यह जवाब एक मामूली और कमीनापन से बढ़कर वकियत (अर्थ) नहीं रखता। लेकिन क्योंकि गवर्नमेन्ट हमारे कोई हकूक नहीं समझती इसलिए ऊपर के फर्ज को छोड़कर हम उसकी तरफ अपना कोई फर्ज नहीं समझते। हम आज से फकीरों की पालिसी छोड़ते हैं क्योंकि भीख हमको मिलती नहीं और जब हम भूख से व्याकुल होकर अपने दिल का बुखार निकालना चाहते हैं तो हमारे लीडरों को गिरफ्तार किया जाता है और हमारे प्रतिनिधियों की लाठियों के साथ आवभगत की जाती है। हाय ! हमारा दिल फटता है जब हम सोचते हैं कि भारतमाता को प्रणाम करने के जुर्म में उसके मासूम बच्चे को घायल अगर किसी ने किया है तो वह उसी का एक दूसरा पुत्र था। कब तक हमारे अन्दर देशभक्ति की भावना नहीं आती और कब तक हम अपने ही आदमी की मदद से गवर्नमेन्ट को यह जुल्मोसितम जारी रखने देंगे। परमात्मा हमारे बंगाली भाइयों को शक्ति प्रदान करें कि वह अपनी मुसीबतों को इसी पर विश्वास रखते हुए मर्दानगी से बरदाश्त करें और भारत की इज्जत से कायम रख सकें।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 अप्रैल, 1906]

ऐसों ने ही भारत देश को गारत कर दिया है

सारे भारतवर्ष में तो बंगाल के साथ हमदर्दी की चर्चा हो रही है। भारतवर्ष में कौन ही इल्मी-आफ्ता (पढ़ा-लिखा) होगा जिसको बंगाल की नई-नई, भारतवर्ष के पोलिटिकल लीडरों की जो बेइज्जती हुई है उसके लिए दिलेरंज (शोक) न हो। लेकिन बंगाल से ही एक शख्स ने कौमी लीडरों की बेइज्जती पर तौहीन-आजिम इजरत पर लिखा हुआ एक लेख–अखबार पायोनियर में छपवाया है। गवर्नमेन्ट तो कौमी लीडरों की फरियाद सुनती ही नहीं, अब लोग ऐसे समय में परमात्मा की शरण न ढूँढ़े तो और क्या करें ? मालूम होता है कि बंगाल के किसी अखबार ने अपने मजहबी (धार्मिक) अकीदे के मुताबिक दुर्गा देवी से प्रार्थना की है, इस पर 'पायोनियर' का खुशामदीद संवाददाता लिखता है कि उसने दुर्गा के नाम एक खुली चिट्ठी भेजी है, हम नहीं समझते कि एक मुसीबतजदा कौम के मजहबी अकीदों (विचारों) पर मजाक उड़ाना कौन सी शराफत या इन्सानियत है। लेकिन हम भूल गए एक कमीने खुशामदीद से अपने फायदे की खातिर अपने देशवासियों के जज़बात को कुचलने के लिए एक विदेशी अखबार की शरण लेता है और क्या आशा हो सकती है ? लेकिन पायोनियर के लायक एडीटर को जानना चाहिए कि जो शख्त रुपए के लालच से अपने देशवासियों के विरोध में उसकी शरण लेता है वह कल को स्वार्थवश होकर उसको डसने से भी बाज न आएगा। इस देश के शत्रुओं को भी जानना चाहिए कि अगरचे इस वक्त उसको रायबहादुरी का खिताब मिलना मुमकिन है, लेकिन भारत की पोलिटिकल आजादी के इतिहास में उसका मुख सदा काला ही रहेगा। जयचन्द ने स्वार्थवश अपने भाई पृथ्वीराज का साथ छोड़कर कुछ देर के लिए मुहम्मद गौरी की मदद की थी, लेकिन मुसलमान इतिहासकार तक उसके खिलाफ लेख लिखते हैं। सच तो यह है कि ऐसे देशविरोधी लोग कुत्तों से बदतर होते हैं। क्योंकि कुत्ते उस हाथ को नहीं काटते जिसने उन्हें खाना दिया हो। लेकिन 'ट्रेटर' उसी माता को रंज पहुँचाते हैं जिसकी खाक़ से उनका जन्म हुआ होता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 4 मई, 1906]

ये मुंतक अजीब है

पंजाब यूनिवर्सिटी के इम्तहानात का नतीजा इस साल खासतौर पर खराब रहा है। लेकिन इंट्रेंस (बारहवीं) का नतीजा निहायत ही खराब है। कुल 34 फीसदी उम्मीदवार कामयाब हुए। दो हजार तीन सौ उम्मीदवार सिर्फ हिस्ट्री और ज्योग्राफी के पर्चों में फेल हुए हैं। अखबारों में इस परीक्षाफल के मुताल्लिक जोशोखरोश से लिखे हुए नोट्स साया (प्रकाशित) हो रहे हैं। नाकामयाब तलाबानों के साथ हमें भी गहरी हमदर्दी है। क्योंकि उनका एक साल मारा गया है। और इस गरीब मुल्क में बाज (कुछ) लोगों को अपनी औलाद को इंट्रेंस तक तालीम देने के लिए जेरेबार (भार) पड़ता है। लेकिन एक बात हमको समझ में नहीं आती और वो यह है कि कुछ अखबारों ने, जो निष्पक्ष होने का दावा करते हैं, इस नतीजे पर भी गवर्नमेन्ट को ही कोसना शुरू कर दिया है। हम नहीं जानते कि इसमें गवर्नमेन्ट का क्या दोष है। क्या इन अखबारों के एडीटर साहबान कोई ऐसा गवर्नमेन्ट सर्कुलर पेश कर सकते हैं जिसमें शिक्षा अधिकारियों को यह हिदायत है कि इस साल तलबाओं को ज्यादा फेल करना चाहिए क्योंकि गवर्नमेन्ट दफ्तरों में बहुत थोड़ी वेकेंसी हैं। क्या सारे-के-सारे शिक्षा अधिकारी, जिनमें से ज्यादा तादाद में देसी ग्रेजुएट हैं, आत्मसम्मान से इतने गिर गए हैं कि उन्होंने अपनी राय की आजादी को गवर्नमेन्ट के रौब में आकर छोड़ दिया ? क्या इन एडीटरों को मालूम नहीं है कि जिस पर्चे में तलबा की एक बड़ी तादाद फेल हुई है, उसे बनाने वाले लाहौर के कौमी कालिज के लायक प्रिंसिपल हैं, जिन पर हर्गिज ये इल्जाम नहीं लगाया जा सकता कि वे गवर्नमेन्ट के हाथ में पुतली की तरह नाचते हैं ? हो सकता है कि पर्चे को बनाने में साहब मौसूफ़ के गैरमामूली सख्ती से काम लिया हो। ज्यादा यकीन यह है कि लायक शिक्षा अधिकारी ने इस साल इरादा कर लिया होगा कि वह क्लासों में घोंटा लगवाकर लड़कों को ज्यादा तादाद में पास करवाने वाले उस्तादों को इस साल शिक्षा दी जाए। हो सकता है कि ये तमाम खराबी पंजाब यूनिवर्सिटी में *मॉडरेटर* न होने की वजह से वाकई में आई हों। लेकिन चाहे हम किसी नुक्ता-ख्याल से इस मामले पर विचार करें, हमें इसमें गवर्नमेन्ट का कोई दोष नहीं नजर आता। जिम्मेदार अखबारों को गैरजिम्मेदार नुक्ताचीनियों की तरह

किसी राय का इजहार नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से संजीदा और निष्पक्ष आदमियों की राय में प्रेस की विश्वसनीयता कम होती है। यदि हम इसी तरह मौका-बेमौका बिना किसी माकूल वजह से गवर्नमेन्ट को कोसते जाएँगे और साथ ही यह उम्मीद रखेंगे कि गवर्नमेन्ट हमारी शिकायत की तरफ तवज्जो (ध्यान दें) हो तो नतीजा सिवाय जगत-हँसाई के और क्या हो सकता है !

[सद्धर्म प्रचारक, 11 मई, 1906]

बात तो माकूल है

तेरह मई को अखबार 'पायोनियर' में एक माकूल नोट छपा है जिसमें लिखा है कि बंगाली लीडरों को एजीटेशन (जलसों, प्रदर्शनों) की जरूरत के लिए विद्यार्थियों की जड़ नहीं काटनी चाहिए। कौमी कालिज तो जब बनेंगे तभी बनेंगे, लेकिन विद्यार्थियों को अपने स्कूलों से खारिज करवा के आवारागर्द बनाना कोई अक्लमन्दी नहीं है। एजीटेशन उमरराशिदा (बुजुर्ग) आदमियों को करनी चाहिए, न कि स्कूल के विद्यार्थियों को। ये तो ईश्वर ही जानता है कि किस भाव से प्रेरित होकर 'पायोनियर' के एडीटर ने यह नोट लिखा है, लेकिन इसमें कुछ शक नहीं कि इस नोट में जो नसीहत दर्ज है वह निहायत ही माकूल है। जहाँ हम इन इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल्स की कार्रवाई को नफरत की निगाह से देखते हैं जो विद्यार्थियों को वन्दे मातरम् कहने के जुर्म में जुर्माने करते हैं और पाँच-पाँच बरस के निहत्थे बालकों को स्वदेशी जलसे में शरीक होने के लिए सजा देते हैं वहीं हम इन लीडरों की कार्रवाई को भी अच्छी निगाह से नहीं देखते जो विद्यार्थियों को, जिनका काम यह है कि मुताल्ले (पढ़ाई) में अपना वक्त खर्च करें, तरगीब (सलाह) देते हैं कि वह पोलिटिकल जुलूसों में शामिल हों और पोलिटिकल जुलूसों के कराने में अपना वक्त जाया करें। अगर गरज यह है कि लड़कों को पोलिटिकल तालीम दी जाए तो इसके कई बेहतर तरीके हो सकते हैं। इनके वाल्दैन (माँ-बाप) इनको घर में सच्ची देशभक्ति सिखला सकते हैं। वो अपने स्कूल और कालिज में पोलिटिकल *महजबीन* बहस कर सकते हैं जैसे कि इंग्लिशस्तान के विद्यार्थी करते हैं। *लेकिन इनको पब्लिक तौर पर पोलिटिकल एजीटेशन में हिस्सा लेने की तरकीब देना महापाप है।* हमारे शास्त्र हमको यह बतलाते हैं कि ब्रह्मचारियों को अपना समय विद्या और गुरु सेवा में ही खर्च करना है। जिस कौम में लीडरों और पोलिटिकल मैदान में काम करने वालों की इतनी न्यूनता है कि पोलिटिकल जंग लड़ने के लिए विद्यार्थियों की मदद लेने की जरूरत पड़ती है, वह कौम कभी भी अपने आदर्शों की पूर्ति में कामयाब नहीं हो सकती। जो विद्यार्थी अपना वक्त इन कामों में खर्च करते हैं वह शिक्षा ग्रहण करने की तरफ ज्यादा तवज्जो ही नहीं दे सकते। और अगर स्कूल अफसरान से लड़कर इन्होंने कालिज भी छोड़ दिया तो समझ लेना चाहिए कि इनकी तालीम

का अंत हो गया। यह भी याद रखना चाहिए कि जिन विद्यार्थियों को आज ये आदत डाली जाती है कि सरकारी स्कूलों के हेड मास्टरों और गवर्नमेन्ट कालेजों के प्रोफेसरों की बेइज्जती करें, अगर वे कल स्वदेशी कालिजों के स्वदेशी प्रोफेसरों की बेइज्जती करने लग जाएँ तो इसमें हैरानी ही क्या है !

[सद्धर्म प्रचारक, 18 मई, 1906]

लहर हमेशा अन्धा कर देती है

इस वक्त कौन सा भारत निवासी है जो सोशलिज्म के गुण गाता हुआ अपने में *मस्त* नहीं है। वन्देमातरम् के नारों ने आसमान को गुँजा दिया है। सर फतर जैसे नाअकबत-अन्देश (अदूरदर्शी) हाकिमों ने इन नारों को कागज की चाहरदीवारों के अन्दर दबाने की कोशिश करके इन्हें ज्यादातर जो हासिल करने का मौका दिया। आखिरकार कागजी दीवारें फट गईं और वन्देमातरम् की गूँज दुगुने जोर से कानों के पर्दों का छेदन करने लगीं। उस वक्त जिस भारत निवासी की बाँह पकड़कर समझाना चाहो वही झटका दे देता है और संजीदा, ठंडी गुफ्तगू सुनने के लिए तैयार नहीं होता।

'बिश्नोद बिलफौदमन्द गुफ्तगू-ए-महकदम'। प्यारे नाजनीन, आओ जरा शान्ति से विचार करें। आई.आई.ए. सोशलिज्म की लहर कहीं हमें मंजिलेमकसूद से अलहदा-से-अलहदा तो नहीं ले जा रही। मसरिकी (पूर्वी) बंगाल के एक हिस्सा जिले में एक मुख्तार ने किसी सोशलिज्मवाले का मुकदमा ले लिया। बाकी कुल मुख्तारों ने उसके साथ बोलचाल बन्द कर दी। सब-डिविजनल ऑफिसर ने मुख्तारों का सर्टीफिकेट छापने का इरादा कर लिया। हाईकोर्ट ने करार दिया कि डिविजनल ऑफिसर को ऐसा करने का कोई अख्तियार नहीं। सरकार-अंग्रेजी की रियाया आजाद है। किसी के साथ जबर्दस्ती बर्ताव नहीं कराया जा सकता। मैं इस मामले पर कोई राय नहीं देता। लेकिन दूसरी तरफ एक कायस्थ राजा साहब मसरिकी लेजिसलेटिव कौंसिल के मेंबर होना चाहते हैं। बंगाल के देशभक्तों का डेपुटेशन उनको इस इरादे से हटाने के लिए गया। अब एक तरफ कौंसिल का स्वर्गधाम, दूसरी तरफ *कहरे खुशमना मुल्जिमों की मिन्नत-समज्जत*। राजा साहब के लिए फैसला मुश्किल न था। डिग्री स्वर्गधाम के हक़ में हुई। जिस पर मायूसी कौमी लीडरों ने बिरादरी खरिज कर फतवा दे दिया। मैं सोशलिज्म के मायने समझता था। प्राचीन आर्यावर्त की तरफ चलना यहाँ वैदिक टाइम के शाही जमाने छोड़कर जात-पाँत के बन्धनों के खौफ से काम लिया जाता है। अब बम्बई से एक नया समाचार आया है कि विल्सन कालिज के तालिबों ने अपने प्रिंसिपल से एकादशी का 'ताहतिल' अवकाश कराना चाहा। प्रिंसिपल साहब ने लड़कों का कहा न माना।

दूसरे दिन ढाई सौ हिन्दू तालिबी गैरहाजिर हो गए और ग्रांट रोड और चर्च रोड में से वन्देभारतम् के नारे बुलन्द करते हुए निकले। तीसरे दिन फिर स्कूल में हाजिर हुए। प्रिंसिपल साहब ने *तहरीरी* माफी माँगी। लड़के कुछ बागी नजर आए। अकलमन्दी से महज जबानी अफसोस का इजहार करके ये इल्म उठा लिया गया। इस वाकिये के असली नतीजे तक शायद बहुत कम हिन्दुस्तानी पहुँचेंगे। इन ढाई सौ तलबा में से एक ने भी एकादशी का व्रत नहीं किया। फिर एकादशी की ताहतिल (छुट्टी) न देने के साथ वन्देमातरम् का क्या ताल्लुक है। अगर प्रिंसिपल ने इस मर्तबा ताहतिल नहीं की थी और लड़के जरूरी समझते थे तो अपने वाल्दैन की तरफ से जोर दिला सकते थे। क्या प्राचीन काल में विद्यार्थी अपने गुरुओं के साथ ऐसा ही बर्ताव करते थे। कहा जा सकता है कि उस वक्त स्वदेशी गुरु थे, और अब विदेशी उस्ताद हैं। अगर आप लोग विदेशियों को गुरु मानने को तैयार नहीं तो अपने लड़कों को उनसे तालीम हासिल करने के लिए क्यों भेजते हैं। मेरी राय में इस तरह की आदत भारत की आइन्दा सन्तान को आवारा बना देगी। मैं खुद चाहता हूँ कि भारत सन्तान के एक-एक गुरु, एक-एक अंग के अन्दर देशभक्ति की बिजली घूम जावे। लेकिन अपनी सन्तान को आवारा बनाकर देशभक्ति की नुमाइश के मैं बिल्कुल बरखिलाफ हूँ। काश कि इस किस्म के झगड़ों को सहन करके हम हर कदम पर अपना नफा-नुकसान समझ लिया करें।

[सद्धर्म प्रचारक, 13 जुलाई, 1906]

क्या भारत में कोई कौमी यूनिवर्सिटी कायम हो सकती है ?

यह सवाल बहुत पुराना है जब सबसे पहले सर सैयद अहमद के दिल में मुसलमानों की तालीम का खास इन्तजाम करने का ख्याल पैदा हुआ तो उन्होंने भी एक यूनिवर्सिटी कायम करने का ही ख्याल सबसे पहले उठाया था। लेकिन दोस्त-अलूम का ख्याल जमाते-जमाते खात्मा मदरस-तुल-अलूम पर करना पड़ा। इससे मुतल्लिक अल्ताफ हुसैन हाली के मुसन्निफा 'सर सैयद की लाइफ' की खास इबारत बड़ी मायना-खेज है। ये जिक्र करके कि सर सैयद ने जो स्कीम गवर्नमेन्ट में भेजी थी इसमें लफ्ज-यूनिवर्सिटी का ही लिखा गया था। क्योंकि उनके लैक-साथी सैयद महमूद साहब ने स्कीम बनाते वक्त भी जरूरत समझी थी। हाली साहब तहरीर फरमाते हैं, लोकल गवर्नमेन्ट से इसका जवाब आया कि अगर कमेटी मौहम्मडन यूनिवर्सिटी कायम करना चाहती है तो गवर्नमेन्ट उसमें ग्रांट (एड) नहीं देने की। बावजूद इसके सर सैयद का इरादा भी था कि यूनिवर्सिटी कायम की जाए। उनको यकीन था कि जब तक मौजूदा यूनिवर्सिटी की तालीम से कतह-नजर न की जाएगी (नजर न फेरी जाएगी) और मुसलमानों की तालीम के लिए उनकी जरूरतों के मुआफिक तालीमी-तरबइत का अपने तौर पर इन्तजाम न किया जावेगा। तब तक अच्छी लियाकत कौम के बच्चों में हर्गिज पैदा न होगी। वह चाहते थे कि दारुल-उलूम में कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के माफिक 'फैलो-सिस्टम' जारी किया जाए। जो तालीमी-इल्म फारिगुल तहसील (पढ़ाई पूरी करके) हो जावे उसको किसी खास इल्म में, जिससे वह खास मुनासत रखता है, और मसरूफ रहने और उसमें कमाल हासिल करने के लिए फैलोशिप दी जाया करे। और इस तरह एक गिरवा (गिरोह) आलीमों और मेहनतियों का कौम में जावे जो तमाम कौम में इल्मो-कमाल पहुँचाने के लिए बमंजिला आले के हों। लेकिन कतह-नजर इसके ऐसी यूनिवर्सिटी सिर्फ कौम के भरोसे पर कायम करना कोई आसान काम न था। न विद्यार्थी और न उनके मुरब्बी (गार्जियन-संरक्षक) कोई इस बात पर रजामन्द होने वाला था कि यूनिवर्सिटी की डिग्रियों से, जो गवर्नमेन्ट की नौकरी का जरिया है, कतह-नजर की जावे। और फिल-हकीकत मुसलमानों की हालत इस बात की काबिल नहीं थी कि सिर्फ मौजूदा यूनिवर्सिटी की डिग्रियाँ हासिल करने को ही फर्जे-अजीज समझा जावे। अल-गरज सर सैयद को अपना मन्सूबा पूरा करने से

बिलकुल मायूसी हो गई। यूनिवर्सिटी कायम करने का ख्याल उन्होंने बिलकुल छोड़ दिया। और मदरसे-तुल-अलूम वही कोरस इख्तियार करना पड़ा जो मौजूदा यूनिवर्सिटी तजबीज करे। उन्होंने अपने दिल को यह कहकर तसल्ली दे ली, शायर हैं—

न हो ताब परवाना अगर आसमां तक।
तो वहाँ तक गिर पड़े हो रसाई (पहुँच) जहाँ तक।

ये इबारत इसलिए पेश की है, ताकि अमल साफ हो जाए कि मौत्सिब से मौत्सिब और तंग-से-तंग दायरे में काम करने वालों को इस सच्चाई को मानना पड़ता है कि जब तक गवर्नमेन्ट के दायरे-असर से तालीम का काम नहीं निकलता तब तक मुमकिन नहीं है कि तालीम और तरबियत का असली मुद्दआ (मकसद) पूरा हो सके। सर सैयद की तकलीद में हम आर्यों ने पंजाब की तालीम का काम अपने हाथों में लेने का सोचा। शुरू में जब गवर्नमेन्ट की तरफ से खुद-ब-खुद वायदा हुआ तो लाला साईदास जी ने मुतब्बरों (पढ़े-लिखों) की सलाह से उस मदद से शुक्रिया के साथ इन्कार किया गया। लेकिन तरीका-तालीम वही सरकारी यूनिवर्सिटी का-सा रखा गया। नतीजा ये हुआ कि रफ्ता-रफ्ता गवर्नमेन्ट के डाले हुए जंजीर घेरा डालने लगे। यहाँ तक कि आज डी.ए.वी. कालेज (लाहौर) आम गवर्नमेन्ट कालेजों से सिवाय इसके तमीज नहीं कर सकते कि जहाँ गवर्नमेन्ट कालेजों में साइंस की तालीम का अलग इन्तजाम है वहाँ डी.ए.वी. कालेज में साइन्स का सामान गवर्नमेन्ट के बाद हाई स्कूलों के मुकाबलों में भी कम हैं। एक वक्त आया था कि लाला लाजपत राय गवर्नमेन्ट की इस गुलामी से घबराते थे और इंग्लिशस्तान जाने से पहले इन्होंने दावा किया था कि वो अपने कालिज को सरकारी यूनिवर्सिटी की गुलामी से आजाद करा लेंगे। लेकिन उनकी आवाज न सुनी गई। हाँ, दयानन्द कालेज के मुकाबले पर मिसेज एनी बेसेंट ने आलीशान सेंट्रल हिन्दू कालेज की बुनियाद डाली थी। लेकिन इसकी भी हालत वही है। दयानन्द कालेज में तो शायद संध्या वगैरह पर कुछ जोर भी दिया जाता है, हिन्दू कालेज के एक प्रोफेसर मुझे बतला गए हैं कि वहाँ धर्म-शिक्षा और संध्या का अक्सर तालिबी मखौल करते हैं। दयानन्द कालेज लाहौर की तलबा (विद्यार्थी) की निसवत, जैसा ख्याल है कि उस कालेज से ज्यादातर *'लस्मदब'* होकर निकलते हैं, यही शिकायत सेंट्रल हिन्दू कालेज, बनारस के निसवत भी सुनी जाती है। मिसेज एनी बेसेन्ट ने अपने कलकत्ता वाले लेक्चर में बयान किया था कि हिन्दुओं का यूनिवर्सिटी अलहदा होना चाहिए। उनके कालेजों का ताल्लुक सरकारी यूनिवर्सिटी से नहीं होना चाहिए। लेकिन साथ ही अपनी निसवत मिसेज साहिबा ने बयान दिया है कि जब हिन्दुओं की आलीशान कमेटी इसलिए कायम न हो कि इस महजूदा यूनिवर्सिटी के पार्षदों को मुलाजमत देगी तो मौजूदा तरीका (प्रणाली) को छोड़ नहीं सकती।

[सद्धर्म प्रचारक, 20 जुलाई, 1906]

अब वाकई बंगाल सारे हिन्द का लीडर हो सकता है

जब तक कौमी जोश की बागडोर महज जोशदार लेक्चररों के हाथ में थी तब तक बावजूद बंगालियों की खास नुमाइश की कामयाबियों के भी मुझे उनकी बाकी कामयाबियों पर भरोसा न था। लेकिन बंगाल नेशनल कौंसिल ऑफ एजुकेशन की रिपोर्ट पढ़कर मुझे यकीन हो गया था कि बंगाल वाकई सारे हिन्द की रहनुमाई कर सकता है। मिस्टर गोखले को मैं अब तक इस मुल्क की पोलिटिकल रहबरी के लायक समझता हूँ। लेकिन जब डॉ. रासबिहारी बोस, डॉ. सर गुरुदास बनर्जी-से गम्भीर और संजीदा सज्जन, जो अब तक पब्लिक तहरीकों से बचने के आदी थे, सोच-समझकर अपने सूबे के ही नहीं, बल्कि सारे हिन्दुस्तान की तालीम का मसला हल करने के लिए आगे होते हैं तो समझना चाहिए कि तालीम का मसला भी हिले हुए बगैर नहीं रहेगा। बंगाल के बुजुर्ग अखबारनवीस बाबू नगेन्द्र नाथ सेन तक जिन विद्वानों के गम्भीर भाव के कायल हैं उनके मैदान में आने की ये मायने हैं कि सारा बंगाल उनकी पैरवी करे। नेशनल यूनिवर्सिटी की मुतल्लिक जो नेशनल कालिज और स्कूल खोला गया है उसमें अलावा बंगाल के दीगर प्रदेशों के भी तालिबे-इल्म आए हैं। इस कौमी यूनिवर्सिटी का मकसद श्रीमान डॉ. सर गुरुदास बनर्जी ने बड़ी वजाहत और खूबी से बयान किए। उन्होंने अव्वल-वजह इस यूनिवर्सिटी की जरूरत के दिए हैं कि अंग्रेजी को जरिया-तालीम कौम और साइन्स पढ़ाने से इस मुल्क के लोगों पर बड़ा भारी बोझ पड़ता है।

मौजूदा यूनिवर्सिटियों से ताल्लुक हटाने से बहुत से नौजवान सरकारी मुलाजमत से महरूम हो जाएँगे, लेकिन क्या उनको यकीन है कि उनका ताल्लुक इसी तरह इज्जत के साथ मौजूदा यूनिवर्सिटियों से बना रहेगा। इस वक्त यूनिवर्सिटी के कानून ऐसे सख्त हो गए हैं कि कोई आला अफसर गवर्नमेन्ट का बिगड़ जावे तो बात-बात में दखल डालकर सख्त बेइज्जती से प्राइवेट इंस्टीट्यूशनों के ताल्लुक को तुड़वा सकता है। हर जगह के हुक्मरान सर फुलर की-सी अक्ल ही नहीं रखते कि ताल्लुक न टूट सके। बस मेरी राय में प्राइवेट स्कूलों की अक्लमंदी इसी में है कि अब से ही अपना ताल्लुक नेशनल यूनिवर्सिटी के साथ कायम करके अपने कालिजों के तालिबों को सरकारी नौकरी के ख्याल से हटाकर इस मुल्क के लिए

दीगर और तरीकों को मुफीद बनाने की कोशिश करें। तीसरी बड़ी भारी कमी जो ये यूनिवर्सिटी पूरी करेगी वह मजहबी तालीम है। इसके अलावा दीगर वजाहत भी दिए हैं जिनके यहाँ दर्ज करने की जरूरत नहीं।

गवर्नमेन्ट की आला मुलाजमत महज थोड़े से आला ग्रेजुएटों को मिल सकती है और शायद ये सबके लिए मुफीद साबित हो कि आइन्दा नस्लों की ख्वाइशें और ताकतें किसी दूसरी तरफ मोड़ी जा सकें। अगर हमारे तालिबा के लिए ये दो पुराने रास्ते बन्द हो जाएँगे तो और नए रास्ते खुल जाएँगे जिनके लिए जमाना माफिक है। *जरात, हरफत* और *तिजारत* ऐसे मैदान हैं जिस तरफ हमारे तलबा की तव्वजो होनी चाहिए और जो पाठ विधायी कौंसिल ने बनाई है उसमें इन मैदानों में काम करने के लिए तलबा की तैयारी का काफी इन्तजाम किया गया है। खात्मे पर तालीम के तैयार करने पर भी जोर दिया है। इन ख्यालात को एक ऐसे आला दिमाग से निकलते देखकर मुझे खुशी हुई। इन ख्यालात को लेकर 6 साल हुए मैं गुरुकुल के लिए धन एकत्रित करने के लिए निकला था। खात्मे पर सर गुरुदास ने जो नसीहत विद्यार्थियों को दी है कि हर विद्यार्थी को बड़े कलम से लिखकर अपने मुताल्ले (पढ़ने) के कमरे में लगाना चाहिए–'चूँकि ये हिन्दुस्तानी विद्यार्थी हैं इसलिए इनको भारतवर्ष के विद्यार्थी जीवन की रिवायतों के मुताबिक चलना चाहिए। जो कि प्राचीन समय में ब्रह्मचर्य का जीवन था। उनकी जिन्दगी तप की सादगी से पूर्ण, बे-ऐब (शुद्ध) जिन्दगी होनी चाहिए। उन्हें बुजुर्गों के आज्ञापालन, अपने कर्तव्यपालन का अभ्यास करना चाहिए।'

[सद्धर्म प्रचारक, 31 अगस्त, 1906]

अफगानिस्तान में तालीम

डॉ. अब्दुलगनी साहब ने, जो कि कुछ अरसा हुआ इस्लामिया कालेज, लाहौर के प्रिंसिपल थे, अमीर काबुल के सामने तालीम की स्कीम पेश की है। स्कीम यह है कि जमाना हाल के तरीके के मुताबिक स्कूल और कालेज कायम किए जावें। डॉ. गनी साहब महकमा-तालीम अफगानिस्तान के डायरेक्टर मुकर्रर हुए। और प्रिंस रसुल्लाखान साहब डायरेक्टर जनरल मुकर्रर किए गए। पहले खास काबुल में एक नया स्कूल जारी किया जाएगा। इसको आहिस्ता-आहिस्ता कालेज के दर्जे तक पहुँचाया जाएगा। अमीर साहब ने इस स्कूल के लिए पाँच साल के वास्ते एक लाख रुपया सालाना की इमदाद मन्जूर की है। जब तक स्कूल की इमारत नहीं बनेगी तब तक सरकारी मेहमानखाने में स्कूल रहेगा। अमीर साहब को तालीम का इतना शौक है कि आपने हुक्म दे दिया है कि जिस कदर मस्जिदें हैं, सबको मदरसे में तब्दील कर दो और ज-बज़ा प्राइमरी स्कूल खोल दिए जावें। जापान में भी जब पहले-पहल तालीम का जोर-शोर हुआ तो वहाँ के तमाम मन्दिर, प्राइमरी स्कूलों में तब्दील कर दिए गए थे। अगर अफगानिस्तान में तालीम का यह हाल रहा जिसका कि अब आगाज (शुरुआत) हो रहा है तो अजब नहीं कि एशिया में अफगानिस्तान भी एक और जापान बन जावे। तालीम के फैसले से अगर और कुछ नहीं तो कम-से-कम इतना तो जरूर हो जाएगा कि पठानों में जहालत की जगह महजबी तास्सुब (बैर) और आजादी (युद्ध का) जोश काम कर रहा है, वह बहुत कुछ दूर हो जाएगा। मगर ऐसी सूरत में अफगानिस्तान हिन्दुस्तान की बजाय रूस के लिए एक अलग खतरा हो जाएगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 28 दिसम्बर, 1906]

पंजाब में पोलिटिकल हलचल

गत सप्ताह में पंजाब में बड़ा कोलाहल रहा। अंग्रेजी अखबार 'पंजाबी' के स्वामी म. यशवन्तराय एम.ए. को दो वर्ष की सख्त कैद तथा म. अथवेल एडीटर को छः मास की कैदे-सख्त के सिवाय जुरमाना भी हुआ। जिसने यह समाचार सुना उसको ही क्लेश हुआ। मजिस्ट्रेट ने सम्भव है कि इस निर्दयता से कब समझा होगा कि हिन्दुस्तानी राजनीतिक काम करने वालों पर दबाव पड़ जाएगा, किन्तु मैंने देखा कि इसका परिणाम उलटा निकला। जिस प्रकार बड़ों का दबाव सुपात्र बच्चों पर तब तक ही रहता है जब तक कि दंड का केवल भय मात्र हो, इसी प्रकार गवर्नमेन्ट का दबाव भी उसी समय तक अपनी आज्ञाकारिणी प्रजा पर रहता है जब तक कि दंड संग्रह केवल पुस्तकाकार ही हो। किन्तु दंड देते ही जैसा बच्चा निर्लज्ज हो जाता है इसी प्रकार प्रजा भी निर्भय हो जाती है। मैं 'पंजाबी' के स्वामी तथा संपादक को धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने सम्पादकों की पुरानी प्रथा को बदलकर अपनी निर्भयता का प्रमाण दिया। सजा में कमी हो वा न हो, सेशन जज का चीफ कोई क्षमा करें वा न करें, जो आग आज सुलग चुकी है उसका बुझाना गवर्नमेन्ट को कठिन हो जाएगा। इस पर पण्डित गोपाल कृष्ण गोखले की सम्मति भी आदरणीय है। मुझसे बातचीत कर उन्होंने कहा 'मैं गवर्नमेन्ट को कई बार कह चुका हूँ कि ऐसी कार्यवाहियों से गवर्नमेन्ट का प्रभाव दूर होता जाता है।' मैंने मिस्टर शब्द के स्थान में पण्डित का प्रयोग किया है। लोग पूछेंगे 'जब सब मिस्टर गोखले कहते हैं तो तुम पण्डित क्यों कहते हो।' मेरा उत्तर स्पष्ट है—

'आत्मवत् सर्व भूतेषु यः पश्यति स पण्डितः।'

इस एक शब्द में मैंने महाशय गोखले के गत सारे दौरे का सारांश लिख दिया है। यही कारण था कि न केवल लखनऊ और अलीगढ़ में ही प्रत्युत जो लाहौर मुसलमान शक्ति का गढ़ समझा जाता है वहाँ पर भी गोखले ने मुसलमानों के मित्रों को आकर्षित कर लिया था। जालन्धर में जब राजा सर हरनाम सिंह से गम्भीर तथा जोश से भरे पुरुषों को गोखले की प्रशंसा करते मैंने गद्गद देखा

तो मेरे मुँह से स्वभावतः यह शब्द निकले कि 'यदि इस समय राजनीतिक संशोधन तथा राजनीतिक अधिकार भारत निवासियों को दिलाने का कोई साधन है तो वह यह कि सारे भारत पुत्र अपना पोलिटिकल लीडर पण्डित गोपाल कृष्ण गोखले को बनाएँ।

(सद्धर्म प्रचारक, 8 मार्च, 1907)

राजविध्वंसकों (निहिलिस्टों) की उत्पत्ति और उनके उत्पात

मनुस्मृति के पढ़ने से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में भाँति-भाँति की शिक्षाएँ ग्रहण करने को पृथ्वी के सब भागों के मनुष्य भारत में आया करते थे तथा अन्यान्य आर्य ग्रन्थों के अवलोकन से बोध होता है कि आत्रेय, अग्निवेश, व्यास शुकादि महर्षि विदेशों में भी धर्म प्रचारार्थ भ्रमण किया करते थे। जब से सच्चे ब्राह्मणों का विदेशों की ओर जाना बन्द हुआ (ब्राह्मण दर्शनेन च) तभी से चीनादि विदेशी जातियाँ पतित होने लगीं। विदेशों में ब्राह्मणों का जाना इस कारण बन्द हुआ कि महाभारत युद्ध से भारत में अविद्या की घनघोर घटा छा गई इस देश में ही क्रमशः सच्चे ब्राह्मणों की संख्या अत्यल्प हो गई जिस कारण भारत में वैदिक धर्म का प्रचार घट गया। यह आवश्यक नहीं कि पिता विद्वान् हो तो पुत्र भी बिना पढ़े विद्वान् हो जाए। इसी प्रकार यद्यपि हमारे प्राचीन पुरुष सर्व विद्या व्युत्पन्न थे, परन्तु उनकी पिछली सन्तानों को जब शिक्षा न मिली तो वे मूर्ख हो गए। यह दशा जब गुरु भारत की हुई तो विदेशी शिष्यों की दुर्दशा का पता ही कौन लगाता। बौद्धों की जागृति से विदेशों में पुनः प्रचार हुआ। इन की शिक्षा नाना रूप धारण करती हुई तथा वह अल्प आर्य शिक्षा जो मिस्र, यूनान और रोम में बच गई थी, क्रमशः सारे यूरोप में फैल गई। इस प्रकार येन-केन-प्रकारेण विद्या के पुनः प्रचार से यूरोप क्रमशः जाग तो उठा, पर अधूरी शिक्षा के कारण शोक कि ब्रह्म की ओर ध्यान ले जाने की अपेक्षा अधिक यूरोपीय प्रकृति पूजा में फँस गए जिस कारण सांसारिक सुख भोगों की ओर यूरोपीय झुकने लगे। कुछ लोग बड़े-बड़े श्रीमान् होकर विपुल धन एकत्रित कर जब विशेष सांसारिक सुख भोगने लगे और अधिकतर लोग दरिद्र होने के कारण जब सांसारिक सुखों से वंचित रहे तो अनेक दरिद्रियों के हृदयों में क्षोभ उत्पन्न हुआ वे श्रीमानों को घृणा की दृष्टि से देखने लगे और अपने आंतरिक भावों का प्रकाश भी करने लगे। जिस प्रकार प्राचीन भारत में कोई भी आर्य तब तक भोजन नहीं कर सकता था जब तक कि वह अपने यहाँ आए अतिथि को भोजन न करा ले तथा जब तक वह भूत यज्ञ करके पक्षी-कीटादि को भी भोजन न दे ले। उसी प्रकार यदि यूरोप में भी अतिथि सेवा तथा भूत यज्ञ की प्रथा चलती रहती तो कोई भी दरिद्री भूख से पीड़ित न होता और न वह श्रीमानों से विद्वेष

करने पर उद्यत होता। अस्तु। जब यूरोपीय दरिद्रों में विशेष असन्तोष फैला तो उन्हीं में से यूरोपीय श्रीमानों को नष्ट करने की इच्छा से एक राजविध्वंसक दल उत्पन्न हुआ। क्रमशः इस दल के सिद्धान्तों को कई यूरोपीय विद्वान् भी अच्छा मानने लगे और गुप्त समाचार पत्रों तथा गुप्त व्याख्यानों द्वारा इस दल का सिद्धान्त यूरोप के प्रायः सभी पढ़े-लिखे मनुष्यों के कानों तक पहुँच गया जिसका परिणाम यह हुआ कि राजविध्वंसक दल का हौसला बढ़ गया और हठी राजविध्वंसकों ने जिनका नाम निहिलिस्ट, अनार्किस्ट तथा फेनिवनादि है, बड़े प्रतापशाली रूस के सम्राट् अलेकजण्डर सेकण्ड को मार डाला, आस्ट्रिया की एक महारानी का वध किया, फ्रांस राज सभा के प्रधान प्रेसीडेंट फारी को मारा, अमरीकन राजसभा के पुराने प्रधान गाफील्ड तथा पिछले प्रधान मैक किनली का भी वध किया, इटली के सम्राट् हम्बर्ट और पुर्तगाल के महाराज डान कार्लस को मार डाला। इन सब दुर्घटनाओं ने यूरोपीय सम्राटों को भी कम्पायमान कर दिया और बड़े-बड़े राजनीतिक राजविध्वंसक दलों को नष्ट करने की चेष्टा में प्रवृत्त हुए। परन्तु राजविध्वंसकों दल सर्वथा नष्ट नहीं हुआ। रूस जहाँ की राज व्यवस्था इतनी कड़ी है, वहाँ भी राजविध्वंसकों ने पिछले वर्ष तथा वर्तमान वर्ष के गत मासों में घोर उत्पात किए हैं, वर्तमान रूस सम्राट् के भाई तथा अन्यान्य सरकारी अफसरों को मार डाला है। यूरोप इन राजविध्वंसकों के उत्पातों से घबरा रहा है, परन्तु अभी तक राज विध्वंसकों के सिद्धान्तों को समूल नष्ट करने का उपाय यूरोप निकाल न सका। यूरोप में क्रिश्चियन धर्म शक्तिशाली नहीं है। वास्तव में वहाँ प्रकृति पूजकों, नास्तिकों की अधिकता है। इस कारण वर्णाश्रम धर्म का सांगोपांग प्रचार वहाँ नहीं है और इसी कारण राजकीय शक्तियाँ रखते हुए भी वहाँ के बड़े-बड़े सम्राट् सशंकित रहते हैं, अन्यों की तो कथा ही क्या कहनी है।

जो यूरोप विविध शिक्षाओं के लिए प्राचीन भारत का ऋणी है, वह आज सुशिक्षिताभिमानी होने पर प्रत्युपकार के नाम से यदि वर्तमान अधःपतित भारत के लाभ के लिए कुछ उपयोगी शिक्षा देता तो भला होता। परन्तु यूरोप ने भारत के लक्षों नवयुवकों को सिखलाया ईश्वरोपासना के बदले प्रकृति की पूजा। जिसका परिणाम भी वही हुआ जो यूरोप में दिखाई दे रहा है अर्थात् भारतीय स्कूल और कालिजों के वे विद्यार्थी, जिन्होंने अपने घरों में धर्म की शिक्षा नहीं पाई, प्रायः नास्तिक होने लगे, यह तो हो कुछ हुआ सो हुआ। यूरोप के राजविध्वंसकों (निहिलिस्टों) की शिक्षा भी भारत में आई और–

बंगाल के अनेक नवयुवक यूरोपीय राजविध्वंसकों के अनुयायी बन गए। ऋषि-मुनियों की भूमि भारत, जहाँ एक समय कोई भी पुरुष धार्मिक नहीं बन सकता था जब तक वह अहिंसा व्रत को धारण न कर ले, जहाँ रणक्षेत्र में शस्त्र विहीन योद्धा का भी मारना क्षात्र धर्म विरुद्ध समझा जाता था, वहाँ शोक कि आज विद्वेषी

राजविध्वंसकों (निहिलिस्टों) की शिक्षा भी कहीं-कहीं सुनाई देने लगी और यूरोपीय निहिलिस्टों के चेले गुपचुप अँधियारी में भी बम के गोले चलाकर राजा और प्रजा को भ्रमित करने लगे। भारत में निहिलिस्टों का पता कैसे लगा अब उस वृतान्त को श्रवण कीजिए।

बंगाल-बिहार प्रान्त में मुजफ्फरपुर नामक एक नगर है। कलकत्ता के प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट मिस्टर किंग्सफोर्ड, जिन्होंने कलकत्ता के कई समाचार पत्रों के अभियोगों में निष्पति (फैसला) देकर सहस्रों बंगालियों को अप्रसन्न कर दिया था, सेशन जज बनकर यहाँ आए थे। इन्हें वश में करने की इच्छा से खुदीराम बोस तथा दिनेशचन्द्र राय, नामक दो बंगाली नवयुवक तीन रिवाल्वर तथा एक बम का गोला लेकर मुजफ्फरपुर आए। कई दिनों तक मिस्टर किंग्सफोर्ड के गमनागमन तथा उनकी गाड़ी का रंग-रूप पहचानते रहे, अन्त को तारीख 30 अप्रैल को रात्रि समय, जबकि एक गाड़ी मार्ग में चली आती थी जिसका आकार उसी प्रकार का था जैसा कि मिस्टर किंग्सफोर्ड की गाड़ी का था, उक्त दोनों नवयुवक उस गाड़ी को मिस्टर किंग्सफोर्ड की गाड़ी समझ उसकी ओर बढ़े और निकट पहुँचकर उसके भीतर बम का गोला फेंक दिया। गोले के फटने से उस गाड़ी के भीतर मिस्टर कैनेडी की स्त्री और उनकी पुत्री, जो बैठी हुई थीं, दोनों घायल हो गईं (मिस्टर किंग्सफोर्ड इस गाड़ी में नहीं बैठे थे)। पुत्री तो उसी समय मर गई, परन्तु उसकी माता दूसरे दिन तक जीती रही। इस भयानक उत्पात का समाचार आग की लहर की भाँति सारे नगर में रातोंरात फैल गया। पुलिस ने ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो कोई घातक को पकड़ेगा उसे 'छः सहस्र' रुपए इनाम मिलेंगे। रात-भर बड़ी खोज की गई, परन्तु घातकों का कहीं भी पता न लगा। प्रातःकाल होते ही इन अबलाओं के घृणित वध पर शोक प्रकाशित करते हुए सैकड़ों हिन्दू-मुसलमान और अंग्रेज मिस्टर कैनेडी के बँगले पर पहुँचे। मिस्टर कैनेडी पूर्णिया गए हुए थे और उनकी धर्मपत्नी अनेक संरक्षकों की रक्षा में पड़ी हुई व्यग्र हो रही थीं। 31 मार्च को आधी रात के समय अनेक हिन्दू-मुसलमान और अंग्रेजों को शोक में डाल यह निरपराध नारी परलोकवासिनी हो गई। मिस्टर कैनेडी पहली मई को प्रातःकाल मुजफ्फरपुर पहुँचे और अपनी धर्मपत्नी के शव को सैकड़ों हिन्दू-मुसलमान और अंग्रेजों के साथ कब्रिस्तान को ले गए और पृथ्वी की गोद में शव को समर्पण कर दिया। इनकी पुत्री के शव को भी गत दिवस मुजफ्फरपुर के हिन्दू-मुसलमान रईसों तथा अंग्रेजों ने इसी प्रकार दफनाया था। मिस्टर कैनेडी बड़े दुखी हैं। हम भी परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह उनके आत्मा को शान्ति दे।

घातक पकड़े गए

जिस रात को मिस्टर किंग्सफोर्ड के बदले मिस्टर कैनेडी की धर्मपत्नी तथा उनकी

पुत्री पर बम का गोला चलाया गया उसी रात मुजफ्फरपुर की पुलिस ने कलकत्ता की पुलिस तथा अन्य पुलिसों को तो तार दिया और अपने सिपाहियों को चारों ओर दौड़ाया। पहली मई को दोपहर के समय मुजफ्फरपुर से 24 मील की दूरी पर वयनी रेलवे स्टेशन पर बम का गोला चलाने वाला खुदीराम बोस पकड़ा गया। इसके पास दो रिवाल्वर और कुछ गोलियाँ भी थीं। जब यह मुजफ्फरपुर के मजिस्ट्रेट मिस्टर उडमैन के सन्मुख प्रस्तुत किया गया तो पूछने पर इसने बयान किया कि मेरी उमर प्रायः 18 वर्ष की होगी, मेरा घर मिदनापुर है। मैं अपने एक मित्र निदेशचन्द्र राय के साथ मिस्टर किंग्सफोर्ड को मारने के लिए कलकत्ता से यहाँ आया था, मुझे अपने पकड़ने वाले पुलिस से यह ज्ञात कर शोक हुआ कि मिस्टर किंग्सफोर्ड के बदले दो अबलाएँ मेरे गोले से मारी गईं, रिवाल्वर मेरे पास इसलिए थे कि कदाचित् बम का गोला काम न करता तो गोलियों से मैं अपना काम करता। मजिस्ट्रेट ने घातक को दस दिनों के लिए जेल में रखने की आज्ञा दी।

2 मई को दोपहर के समय घातक खुदीराम बोस का मित्र दिनेशचन्द्र राय मोकामा रेलवे स्टेशन पर पहुँचा था। मुजफ्फरपुर का एक पुलिस सिपाही भी वहाँ पहुँच गया। दिनेश पर उसको कुछ सन्देह हुआ और उसने दिनेश को पकड़ लिया। दिनेश उक्त सिपाही के हाथ से बलपूर्वक निकल गया और दूर खड़ा होकर उस पर अपने रिवाल्वर से गोली चलाई, गोली सिपाही को न लगी। तब दिनेश ने दूसरी गोली अपने शरीर में लगा ली और वहीं गिरकर मर गया। लाश मुजफ्फरपुर पहुँचाई गई और खुदीराम बोस के सामने रखी गई। खुदीराम ने अपने मित्र की लाश पहचान ली और कहा कि यह शरीर दिनेशचन्द्र राय का ही है। तब लाश के धड़ से सिर काटा गया और मदिरा में रखकर कलकत्ता को अधिक पहचान के लिए भेजा गया।

मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि 30 अप्रैल की रात को ही जबकि मुजफ्फरपुर में बम का गोला चला वहाँ की पुलिस ने इस दुर्घटना का समाचार कलकत्ता पुलिस को दिया। वहाँ के पुलिस कमिश्नर ने तार पाते ही अपने पुराने जासूसों तथा अपने महकमे के अफसरों को इकट्ठा किया और थोड़ी देर बाद परस्पर विचार कर एक वृहत् पुलिस दल को आठ भागों में विभक्त कर उन्हें एक बंगाली के बतलाए हुए पते के अनुसार कलकत्ता के विविध स्थानों की ओर रवाना किया। इन आठ दलों में से तीन दलों ने तीन स्थानों में राजविध्वंसकों का पता लगाया।

एक दल रातोरात नं. 134, हैरिसन रोड के मकान पर पहुँचा। यह चौमंजिला मकान था, इसमें घुसने का द्वार एक ही था जो कि बन्द था। प्रातःकाल होते ही जब एक बंगाली निद्रा त्याग आँख मींजता हुआ द्वार खोलने लगा तभी दो अंग्रेज पुलिस अफसर गोलियों से भरे हुए रिवाल्वर लिये हुए मकान में घुस गए। पुलिस दल बाहर खड़ा रहा। क्रमशः कुछ और पुलिस के लोग भी भीतर घुसे और उस मकान के भीतर रहने वाले पाँच बंगालियों को पकड़ लिया। घर की जाँच जब

की गई तो इंग्लिशस्तान के ग्लैसगो नगर के रहने वाले जान नोबुल के बनाए हुए बम के गोले सन्दूकों में से निकले। कुछ बड़े-बड़े बम के गोले मिले और कुछ छोटे-छोटे गोले कई दर्जन गोलियाँ, एक बन्दूक, एक रिवाल्वर एक भुजाली और बम के गोले बनाने के बहुत से सामान पिकरिक ऐसिड आदि भी मिले। इनके अलावा यूरोपीय राजविध्वंसकों (निहिलिस्टों) ने स्पेन के महाराज और महारानी को मार डालने का जो प्रबन्ध किया था—तत्सम्बन्धी भी कई प्रकार की बातें बक्सों में पड़े लेखों और नक्शों से विदित हुईं। भेष बदलने के लिए दाढ़ी-मूँछादि तथा रबर के जूते भी पाए गए।

पुलिस के दूसरे दल ने, जिसमें 70 सिपाही थे, रातोरात माणिकतल्ला मुहल्ले के एक बाग को जो घेरा। यह उजाड़ बाग था, इसमें कई गन्दे तालाब थे जिनका पानी दुर्गन्ध और गंदला हो रहा था। इसमें मकान था जिसमें बहुत से पुरुष सोए हुए थे। प्रातः होते ही पुलिस के लोग इस मकान में घुसे और जो लोग सोए हुए थे वा जागते थे उन सब को पकड़ लिया। प्रायः 17 बंगाली यहाँ पकड़े गए। घर की जब परीक्षा की गई और बाग को कई जगह से खोदा गया तो बम के गोले, बम बनाने का बहुत सा सामान मिला। जमीन के भीतर से एक लोहे का तालाब निकला जिसमें दो नाली बन्दूकें, रिवाल्वर और बम के गोले बनाने के बहुत से सामान पड़े हुए थे। इन सामानों को कई गाड़ियों पर पुलिस ने लाद लिया। मकान के भीतर से बहुत सी अंग्रेजी पुस्तकें ऐसी मिलीं जिनमें बम के गोले, गोली, बारूद अस्त्र-शस्त्र बनाने की विधियाँ लिखी हुई थीं, जिनमें युद्ध करने की विधियाँ भी वर्णित थीं।

इसी प्रकार तीसरे स्थान से भी बम के गोले बनाने के सामान तथा कुछ शस्त्र मिले और कुछ आदमी भी पकड़े गए। पुलिस को पता लगा कि कलकत्ता के राजविध्वंसक दल में कम-से-कम 'साठ' पुरुष सम्मिलित हैं। इनमें से 30 अभी तक पकड़े गए हैं जिनमें कई अच्छे-अच्छे रसायनज्ञ हैं, इनमें से एक फ्रांस देश से गोला बनाने की विद्या सीख आया है। जो पुस्तकें और पत्र इन राजविध्वंसकों के स्थानों से निकले हैं ,उनसे पता लगता है कि यूरोप के राजविध्वंसकों (निहिलिस्टों) के साथ भी इनका कुछ सम्बन्ध है, निहिलिस्टों के पुस्तकों तथा इटली के भूषण मैजिनी के जीवन तथा जापान की जागृति को भी इन्होंने पढ़ा है। ये गोले बनाकर बड़े-बड़े अंग्रेजों को मारना चाहते थे और डाइनामाइट के गोलों से कई मकानों को भी ढहाना चाहते थे। अब मैं कतिपय उन पकड़े हुए राजविध्वंसकों की बातें लिखता हूँ ज़ो उन्होंने कलकत्ता के पुलिस कमिश्नर तथा मजिस्ट्रेटादि के सन्मुख कथन की हैं।

उल्लासकर दत्त ने बयान किया कि मेरे पिता शिवपुर इन्जिनियरिंग कालेज में प्रोफेसर हैं, मैंने बम का गोला बनाने का बहुत सा सामान बाल्डी ऐंडको की

दूकान से खरीदा था और माणिकतल्ला के बाग में बम के गोले बनाता था। चन्द्रनगर के फ्रांसीसी मेयर को मारने के लिए जो गोला फेंका गया था उसे मैंने ही बनाया था, इत्यादि।

इन्दुभूषणराय ने बयान किया कि हमने चन्द्रनगर के फ्रांसीसी मेयर को मरने के लिए उसके घर में बम का गोला फेंका था, कारण यह था कि वह हमारी सभाएँ चन्द्रनगर में होने नहीं देता था इत्यादि।

उपेन्द्रनाथ बैनर्जी ने बयान किया कि मेरा घर चन्द्रनगर में है। मैं बम के गोले बनाना जानता हूँ परन्तु मेरा विशेष कार्य यह था कि माणिकतला के बाग में रहने वाले विद्यार्थियों को मैं फिलासफी (विज्ञान शास्त्र) पढ़ाया करूँ। मेरे दल के मुखिया वीरेन्द्रकृष्ण घोष हैं। मैं भारत के अनेक स्थानों में भ्रमण कर चुका हूँ। हम लोग राज विद्रोह के लिए पूरा यत्न कर रहे थे, यदि हम लोग पकड़े नहीं जाते तो थोड़े ही दिनों में घोर दुर्घटनाएँ लोगों को दिखाई देतीं। मैं जानता हूँ कि कुछ लोग हमारे सहमत थे और चाहते थे कि दुर्घटनाएँ उपस्थित हों, इत्यादि।

वीरेन्द्रकृष्ण घोष ने अलीपुर में मजिस्ट्रेट के सन्मुख बयान किया कि बंगाल के दो टुकड़े हो जाने पर जब बायकाट (बहिष्कार) की शिक्षा प्रचारित होने लगी तब मैंने इन सब विद्यार्थियों को इकट्ठा किया जो इस समय पकड़े गए हैं और उनको धर्म और राजनीति की शिक्षाएँ देने लगा। अपने दो मित्रों की सहायता से मैंने 'युगान्तर' पत्र को प्रकाशित किया और क्रमशः रिवाल्वर-पिस्तौल इकट्ठा करने लगा। 1907 ईस्वी के आरम्भ में कैलाश विलास नाम डाक्टर मेरे साथी बने तब मैंने माणिकतल्ला के बाग में बम के गोले बनाने का कारखाना जारी किया। जब समाचार पत्रों के अनेक सम्पादकादि को हाकिम लोग कठिन दण्ड देने लगे तब मैंने बम के गोलों को चलाना उपयुक्त समझा, जहाँ-जहाँ रुपए की सहायता के लिए हम गए वहाँ-वहाँ भी बम के गोलों का उपयोग अच्छा बतलाया गया, तब हमने समझा कि हमारी जाति कह रही है कि बम के गोले अब अवश्य ही चलाने चाहिए। अतएव पहला-पहल हमारा यत्न बंगाल के लाट साहब की रेलगाड़ी को चन्द्रनगर के निकट उड़ा देने का हुआ जबकि वह कलकत्ता से राँची जा रहे थे। परन्तु चूँकि डाइनामाइट नाम बारूद को कैलासदत्त ठीक-ठीक न रख सका इस कारण यह यत्न सफल नहीं हुआ। फिर हम अपने दो साथी प्रफुल्लचन्द्र चाकी और विभूतिभूषण सरकार के साथ मिदनापुर में उत्पात करने गए। पुनः प्रफुल्लचन्द्र ने मिस्टर किंग्सफोर्ड को मार डालने का विचार प्रस्तुत किया क्योंकि इन्होंने ही नेशनलिस्टों के विरुद्ध अभियोगों पर फैसला दिया था। इस कार्य की सिद्धि के लिए हेमचन्द्र और उल्लासदत्त ने बम का गोला तैयार किया। मैंने उपेन्द्रनाथ की सम्मति लेकर निश्चित किया कि प्रफुल्ल गोला लेकर रवाना हो, हेमचन्द्र ने खुदीराम बोस को भी इस कार्य के लिए उपयुक्त बतलाया और उस भी जाने की आज्ञा

मिली। हमने इन लोगों को दो रिवाल्वर दिए इसलिए कि ये लोग पकड़े जाने पर अपने को मार डालना चाहते थे। खुदीराम बोस बाहर का आदमी है उसको हमारे कार्यों का पूरा भेद ज्ञात नहीं है। हमारे 15 पक्के शिष्य हैं जिन्हें मैं और उपेन्द्रनाथ बैनर्जी शिक्षाएँ देते थे। हम लोगों ने भारत के बड़े लाट तथा प्रधान सेनापति को भी मार डालने के विषय में कुछ विचार किया था। यह सब कार्य जो हम लोग कर रहे थे उसके दो प्रधान कारण हैं एक तो यह कि हम लोग समझते थे कि प्रजा ऐसे कार्यों को चाहती है और दूसरा यह कि हम लोग ऐसे कार्यों से प्रजा को साहसी और मरने के लिए तैयार बनाना चाहते थे, इत्यादि।

उपेन्द्रनाथ बैनर्जी ने पुनः कहा कि हम पहले 'वन्देमारतम्' कार्यालय में नौकर थे। गत सितम्बर मास में हम वीरेन्द्र का साथ दे रहे हैं और भारत के भिन्न-भिन्न भागों में भ्रमण कर साधुओं को इकट्ठा करने का यत्न कर रहे हैं। मैं विद्यार्थियों को अर्थशास्त्र (पोलिटिकल एकानामी) की शिक्षा देता हूँ इसलिए कि वह अपने भारत की दशा को समझें और स्वतन्त्रता की आवश्यकताओं को अनुभव करते हुए गुप्त सभाओं को तमाम भारत में स्थापित करें, हमारे विचारों को फैलाएँ, अस्त्र-शस्त्रों को इकट्ठा करें और उचित समय उपस्थित होने पर राज विद्रोह करने पर उद्यत हो जावें, इत्यादि।

उल्लासकर दत्त ने पुनः इंग्लिश मैन पत्र के एक प्रतिनिधि के पूछने पर कहा कि हम जो यह सब कार्य कर रहे हैं उनका उद्देश्य यह है कि हमारी मातृभूमि स्वतन्त्र हो जावे, हमारा अनुमान है कि पाँच वा दस वा बीस वा पचास वर्षों के भीतर भारत की प्रजा अवश्य उठ खड़ी होगी। उक्त प्रतिनिधि ने जब यह पूछा कि अब तुम अपने कृत्यों पर शोक करते हो या नहीं, यदि तुम छोड़ दिए जाओ तो फिर क्या करोगे ! तब उल्लासकर दत्त ने उत्तर दिया मैं अपने कृत्यों पर किंचित् भी शोक नहीं करता, यदि मैं छोड़ दिया जाऊँ तो भी वही कर्म करूँगा जिस कर्म के लिए कि मैं पकड़ा गया हूँ। जब उक्त प्रतिनिधि ने यह पूछा कि क्या अब भी तुम्हारे दल के लोग कुछ कर सकेंगे ? तो उल्लास ने उत्तर दिया जो कुछ होगा सो तुम देखोगे, इत्यादि।

कलकत्ता का सहयोगी 'एम्पायर' लिखता है कि ये सब विद्रोही इन दिनों अलीपुर के बन्दी गृह में रखे गए हैं और पुलिस यत्न कर रही है कि ये लोग उन लोगों के विषय में भी कुछ कहें जो अभी तक इनके साथ पकड़े नहीं गए हैं। परन्तु ये लोग अपने से भिन्न औरों का पता नहीं देते और न अपनी वर्तमान दशा में भावी कठिन दण्डों का स्मरण करते हुए विशेष दुखी हैं। प्रत्युत ऐसा समझते हैं कि वे अपमानित किए जा रहे हैं तथापि अपने देश के कल्याण के लिए बलिदान होने वाले हैं।

पुलिस के एक बड़े अफसर ने, जो विद्रोहियों के पकड़ने में अभी तक संलग्न

हैं, कलकत्ता के सहयोगी 'एम्पायर' के एक प्रतिनिधि के पूछने पर बताया था कि विद्रोहियों का सम्पूर्ण दल अभी तक नहीं पकड़ा गया और न सबों के पकड़े जाने की सम्भावना है क्योंकि विद्रोही दल भारत के अनेक भागों में स्थापित हो चुका है। सम्भव है कि वर्तमान अभियोग के दण्डों से विद्रोही लोग कुछ दिनों के लिए शान्त हो जावें, परन्तु मुझे भय है कि यह शान्ति अधिक दिनों तक बनी न रह सकेगी।

लंदन का 'टाइम्स' नामक पत्र, जो कंजरवेटिवों का मुख समझा जाता है, लिखता है कि बंगाल के आन्दोलनकारियों ने अपने इंग्लिशस्तान के मित्रों की कृपा से घोर विद्रोह की जो शिक्षाएँ दी हैं उनका प्रत्यक्ष फल प्रकट हो रहा है। इन विद्रोहियों को दमन करने के लिए जो कठिन नियम बनेंगे उसका कारण कोई अन्य न होगा, प्रत्युत यही विद्रोही मंडल। हम नहीं कह सकते कि ये नियम केवल भारतवासियों के ही लिए होंगे वा अन्यों के लिए भी।

अंग्रेज कृषक जो बड़े धनी और बलवान हैं और जो बिहार देश में चाय, इत्यादि की खेती करते हैं, गत शनिवार को मुजफ्फरपुर में एकत्रित होकर भारत गवर्नमेन्ट की सेवा में निवेदन किया है कि गवर्नमेन्ट सरकारी अंग्रेज अफसरों के प्राणों की रक्षा के लिए कोई विशेष प्रबन्ध शीघ्र करे।

आर्यों का कर्त्तव्य उक्त दुर्घटनाओं के संघटित होने से पता लगता है कि भारत में यूरोपीय राज विध्वंसकों की शिक्षा फैल रही है जिससे राज पुरुष और प्रजा वर्ग, दोनों त्रसित दिखाई देते हैं। आर्यसमाज को चाहिए कि पूर्वापेक्षा अधिकतर तत्परता के साथ वैदिक धर्म का प्रचार भारत तथा यूरोप में भी करे जिसमें प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्य को भ्रातृभाव से देखे, द्वेषभाव दूर होवे, शान्ति तथा सुख की विस्तृति भूमण्डल में हो और पृथ्वी अपने सच्चे नाम स्वर्गभूमि से पुनरपि पुकारी जाए। कार्य तो बड़ा कठिन है—परन्तु असम्भव नहीं। असम्भव हो ही कैसे सकता है जबकि भ्रातृ स्नेह के संचार की आज्ञा स्वयं जगत् पिता दे रहे हैं।

युद्ध की घटा भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर उमड़ रही है। जका खेलों को सामान्य शिक्षा देकर जब से अंग्रेजों की सेना अपनी सीमा के भीतर आ गई है तभी से मोहमन्द जाति के मुसलमान यह समझने लगे हैं कि अंग्रेजों की सेना भयभीत हो जका खेलों के मुल्क से निकल गई है और इसी कारण मोहमन्द भी अंग्रेजों से लड़ने की तैयारियाँ कर रहे हैं। उनके दस सहस्र सिपाही स्वात नदी के आस-पास एकत्रित हो गए हैं। पेशावर के चीफ कमिश्नर लिखते हैं कि सूफी मुल्ला का बेटा तीन हजार आदमियों के साथ गन्दा बनल्ला तक पहुँच गया है। तेग मुल्ला कई हजार काबुलियों के साथ ढाका की ओर से मोहमन्दों की सहायता को आ रहा है। कुँवर नदी से लेकर झंडोल तक के देशों में मुल्ला लोग अंग्रेजों के विरुद्ध जेहाद यानी मजहबी लड़ाई की वक्तृाएँ दे रहे हैं। अधिक सोचनीय इस

बार यह है कि अफगानिस्तान से लड़ाई के सामान और आदमी मोहमन्द देश की ओर आ रहे हैं और काबुली अफसर इस कार्रवाई को नहीं रोकते। जो कुछ हो, अंग्रेज लोग शंका करने लगे हैं कि मोहमन्दों के इस उमाड़ में अफगानों का भी कुछ-न-कुछ हाथ है। इसमें सन्देह नहीं कि काबुल में तिजारत करने के विषय में अंग्रेज और रूसियों ने जब से सन्धि करनी चाही है तब से अमीर काबुल कुछ अप्रसन्न से दिखाई देते हैं क्योंकि अमीर ने उन लोगों की सन्धि सम्बन्धी इस बात को अभी तक स्वीकार नहीं किया। अतएव अंग्रेज सेनापतियों को भी मोहमन्दों की इन साधारण उमाड़ में दूर-दूर की बातें सूझ रही हैं। और इस कारण वे यत्किंचित चिंतित से भी हैं। अस्तु अंग्रेजी राज्य के कटजई गाँव को शत्रुओं ने लूट लिया है। स्वात नदी के आस-पास से शत्रुओं की गोलियाँ आया करती हैं। अंग्रेजी सेना के 65 सिपाही मारे गए तथा घायल हो चुके हैं। शवकदर और पेशावर के बीच की तार लाइन को शत्रुओं ने काट दिया था, परन्तु वह फिर जोड़ दी गई। तद्द्वारा जो समाचार आया है उससे ज्ञात होता है कि अदीजुई के पुल पर तथा मट्टा स्थान पर भी शत्रुओं ने आक्रमण किया था। जिसमें अंग्रेजों के दो सवार मारे गए। गढ़ी की लड़ाई में शत्रुओं के चार सिपाही मारे गए तथा सात घायल हुए। अब तक शत्रुओं के कुल 200 सिपाही मारे गए तथा अनेक घायल हुए शत्रुओं के आक्रमणों को रोकने के लिए जनरल विल्काक ने नई सेनाएँ मोहम्मद देश की सीमाओं पर भेजना आरम्भ कर दिया है। इस मोहम्मद सीमा पर भारत सरकार के प्रायः दस हजार सिपाही तथा बारह तोपें पहुँच गई हैं। सुना जाता है कि मोहमन्दों के भी 25000 सिपाही इकट्ठे हो गए हैं और कई हजार अफगानिस्तानवासी भी मोहमन्दों की सहायता के लिए आ रहे हैं।

प्रयाग में कांग्रेस विषयक विशेष विचार

सूरत में माडरेट (नर्म) दल के अग्रणियों (अगुओं) के मन्त्रणानुसार जो यह विचार निश्चित हुआ था कि कांग्रेस के नियम निर्धारण के लिए कांग्रेस के मुखियों की एक सभा प्रयाग में हो। तद्नुसार ही गत 18 तथा 19 अप्रैल को वहाँ के म्यो हॉल में नर्म दल के 54 मुखिया भारत के भिन्न भागों में एकत्रित हुए थे। डाक्टर रासबिहारी घोष, बाबू सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी आदि बंगाल से, लाला हरकृष्णलाल तथा लाला लाजपतराय आदि पंजाब से, महाशय वाचा तथा सरभालचन्द्रादि बम्बई से, पंडित मदनमोहन मालवीय आदि युक्त प्रान्त से एवं मद्रास तथा मध्य भारत से भी लोग पधारे थे। सर्व समयानुसार डॉक्टर घोष ने सभापति का आसन ग्रहण किया। तदनन्तर इस अभिप्राय के प्रस्ताव पास हुए कि जिस प्रकार अंग्रेजी साम्राज्य की रक्षा में कनेडा, केपकालनी, नेटला आदि देशों के प्रजा प्रतिनिधि गण अपने-अपने देशों में स्वमतानुसार राज्य नियम बनाते हैं तद्नुसार ही भारतीय प्रजा के प्रतिनिधि

गण स्वमतानुसार राज्य नियम निर्धारण करें और तदनुसार ही प्रजा का शासन हो। इसी का नाम स्वशासन (सेल्फ गवर्नमेन्ट) रखा जाए। जो लोग इस नियम को न मानें और स्वराज्य वा स्वशासन का अर्थ अन्य समझें वह कांग्रेस में भर्ती न होने पावें। ऐसे मन्तव्य रखनेवालों का कांग्रेस, प्रान्तीय कांग्रेस कमीटियों से सम्मति लेकर इस सभा के प्रधान तथा मन्त्री आगामी दिसम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में बुलाएँ। महाशय गोखले कांग्रेस का काम इंग्लिस्तान में चलाने के लिए छः मास के वास्ते वहाँ जाएँ इत्यादि।

नर्म दल के इन प्रस्तावों पर गरम दल के समाचार पत्र भाँति-भाँति की सम्मतियाँ प्रकाशित कर रहे हैं। कोई नर्म दलवालों को कायर और कोई स्वदेशीद्रोही बतलाता है। नर्म दल की कार्यवाही और गरम दल की टिप्पणियों से इतना तो अवश्य ज्ञात होता है कि इन दोनों दलों के लोग मिलकर कार्य नहीं कर सकते। इंग्लिशस्तान में जिस प्रकार लिबरल और कंजर्वेटिवों की भिन्न-भिन्न अनेक सभाएँ हैं उसी प्रकार नर्म और गरम दलों की सभाएँ भी अनेक भिन्न-भिन्न होतीं तो वैसी हानि नहीं होती। परन्तु विलायत की पार्लियामेंट की तरह नेशनल कांग्रेस एक ही होना चाहिए था। अब नर्म और गर्म दलवाले अपना-अपना कांग्रेस जो अलग-अलग करेंगे उनमें से एक भी नेशनल अर्थात् सर्वजातीय कहलाने का अधिकारी न होगा। शोक है कि जिस फूट ने भारत का नाश किया वह अब तक एतद्देशियों का पीछा नहीं छोड़ती।

[सद्धर्म प्रचारक, 13 मई, 1908]

महमन्दों के साथ युद्ध

गत 16 मई को अंग्रेज जनरल विल्काक महमन्दों की खापक घाटी पर चढ़ गए। महमन्दों की सेना भारतीय सेना को देखते ही भाग गई। तब जनरल विल्काक ने महमन्दों के आस-पास के गाँवों की बुर्जियों को गिरवा दिया।

परन्तु रात्रि समय जबकि घनघोर घटा छा गई, बिजली कड़कने लगी और आंधी भी बड़े जोर से आई तब महमन्दों ने भारतीय सेनाओं पर आक्रमण किया। बाईसवीं पंजाब पल्टन पर इनका आक्रमण बड़ा ही भयानक हुआं तब जनरल एंडर्सन ने अन्य सेनाओं को भेजकर बाईसवीं पंजाब पल्टन की रक्षा की। प्रायः ढाई बजे रात तक घोर युद्ध होता रहा तब महमन्द सेना पीछे हटी। इस युद्ध में महमन्दों के कितने आदमी मारे गए सो तो ज्ञात न हुआ, परन्तु भारतीय सेना के 9 योद्धा मारे गए तथा 29 जख्मी हुए।

बम के गोले से नई दुर्घटनाएँ

यद्यपि बम के गोले बनाने वालों की खोज पुलिस बड़े यत्न से कर रही है, परन्तु उनकी पूरी संख्या तथा उनकी पूर्ण शक्ति का पता अभी तक ठीक-ठीक ज्ञात न हुआ। गत 15 मई को प्रातः काल साढ़े पाँच बजे जबकि कलकत्ता के बड़तल्ले मंडल में, जहाँ कि देशियों की बस्ती है, एक कूड़ा-करकट ढोने वाली म्युनिसिपैलिटी की गाड़ी चली जाती थी उसकी ठोकर एकाएक बम गोले के साथ लगी, बम का गोला घोर शब्द के साथ फटा जिससे सारे मुहल्ले के लोग चौंक पड़े और बहुत से लोग उस स्थान की ओर दौड़े जहाँ से गोले की आवाज आई थी। उस स्थान पर पहुँचने से लोगों को ज्ञात हुआ कि इस गोले के टुकड़ों ने पास के मकान के बाहर सोने वाले एक हिन्दू को तथा सड़क पर के दो मनुष्यों को घायल कर दिया है। तीनों घायल अस्पताल पहुँचाए गए।

अभी तक कुछ भी पता न लगा कि यह बम का गोला यहाँ किस प्रकार आया। सम्भव नहीं कि बम के गोले के बनाने में घोर परिश्रम करने वाले उपद्रवियों ने अपने प्रिय वस्तु को यों ही सड़क पर फेंक दिया हो। यह भी सम्भव नहीं कि किसी मनुष्य-विशेष को मारने के विचार से इस गोले को सड़क पर रख दिया हो

क्योंकि मनुष्य विशेष रात्रि के समय उसी मार्ग से आकर बम के गोले से ठोकर खाता ऐसा सम्भव नहीं हो सकता। अतएव सिद्ध होता है कि बम के गोले बनाने वाले अपने सामानों को एक स्थान से दूसरे स्थान को लिये जाते थे और मार्ग में यह गोला किसी प्रकार उनके हाथों से निकल गया। परन्तु फिर भी सन्देह होता है कि यह गोला हाथ से अकस्मात् भूमि पर आने से फूट क्यों न गया ? यह भी सुना जाता है कि उपद्रवी लोग अंग्रेज अफसरों की ही बात करना चाहते हैं अन्यों की नहीं और यह गोला हिन्दू मुहल्ले की सड़क पर पाया गया। अतएव इस गोले के विषय में कुछ भी ठीक-ठीक निश्चित नहीं होता। परन्तु इसका परिणाम यह हुआ है कि कलकत्ता के अनेक मनुष्य अब रात्रि समय देख-भालकर सड़कों पर पैर रखते हैं।

बम गोला सम्बन्धी अभियोग

कलकत्ता के अलीपुर पुलिस कोर्ट में नियमपूर्वक गत 18 मई से आरम्भ हो गया। विद्रोहियों को देखने तथा उनके कथनों को श्रवण करने के लिए सैकड़ों मनुष्य कोर्ट के मार्गों तथा कचहरी के भीतर ग्यारह बजे दिन से ही एकत्रित होने लगे। और शस्त्रधारी पुलिस दल का पहरा चारों ओर लग गया। प्रायः सवा बजे जबकि विद्रोही दल पुलिस शस्त्रधारियों की संरक्षा में कचहरी की ओर आने लगा तब दर्शकों के बीच विद्रोहियों को देखने के लिए खलबली मच गई। परन्तु पुलिस के कड़े प्रबन्ध के सन्मुख कुछ भी गोलमाल न हो सका। व्रिदोही लोग जब गाड़ियों से उतरकर कचहरी के द्वार में प्रवेश करने लगे तो दीख पड़ा कि न वह शोकाकुल हैं और न चिन्तित; प्रत्युत परस्पर में प्रफुल्लवदन हो बातें करते और हँसते हैं। उन्होंने अपना पहला इजहार किया कि वह जान-बूझकर देश को स्वतन्त्र करने के लिए अंग्रेजों के विरुद्ध यह सब कार्य कर रहे थे जबकि लाल बाजार की कचहरी में लिखवाया था उस समय भी वह इतने प्रसन्न नहीं थे जितने प्रसन्न कि वह इस समय दिखाई पड़ते थे। केवल इनमें से एक पुरुष अरविन्द घोष चिन्तित दीख पड़ता था। अस्तु अपराधियों की ओर से अभियोग की पैरवी करने को कई वकील कोर्ट में उपस्थित हो गए और गवर्नमेन्ट की ओर से सुप्रसिद्ध बैरिस्टर मिस्टर अर्डली नार्टन आ पहुँचे। बैरिस्टर ने कहा कि अपराधी भारतीय दण्ड संग्रह की धारा 143, 150, 157, 121, 121ए, 122, 123 तथा 124 तथा आर्म्स एक्ट की धारा 19 तथा 20 के अनुसार अपराधी सिद्ध किए जाएँगे। आन इंसपेक्टर फ्रिजोनी का इजहार हुआ और अपराधियों को जमानत पर छोड़ने के लिए कई प्रार्थना पत्र भी प्रस्तुत किए गए, परन्तु न्यायाधिपति (हाकिम) ने किसी भी प्रार्थना पत्र को स्वीकार नहीं किया।

महमन्दों में पुनः युद्ध

गत 18 मई को जब भारतीय सेना महमन्दों के बोहाई दाग स्थान पर चढ़ाई कर रही थी प्रायः 2000 महमन्द उनसे लड़ने को पहुँच गए। इस लड़ाई में महमन्दों का जुझाऊ बाजा बज रहा था और मुल्ला लोग मजहबी लड़ाई की जोशीली बातें सुना रहे थे जिनसे प्रेरित होकर बारह गाजी एकाएक नं. 54 पायोनियर सेना पर टूट पड़े और तीन सिपाहियों को मार और दो को घायल कर सिपाहियों की संगीन से मारे गए। इस लड़ाई में पाँच भारतीय सिपाही मारे गए तथा तेरह घायल हुए और तीन अंग्रेज भी घायल हुए। सुना जाता है कि महमन्दों के भी साठ पुरुष मारे गए।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 मई, 1908]

संसार की गति अद्‌भुत है

जिन अंग्रेज और फ्रांसीसियों के बीच घोड़े-भैंस का बैर प्रायः उस समय से चला आता था जिस समय से कि उक्त दोनों यूरोपीय जातियों के लोगों ने भारतभूमि पर पग रखा, आश्चर्य है कि वे अब एक-दूसरे के साथ प्रेमपूर्वक मिल रहे हैं। फ्रांस राजसभा के प्रधान फैलियारिज के लंदन पधारने पर आजकल अंग्रेजों के घर-घर बधाई हो रही है।

वाटरलू के घोर संग्राम में जबकि फ्रांस देश के शासक जगत् विख्यात विजयी नैपोलियन बोनापार्ट को अंग्रेजों ने बन्दी बना लिया उस समय से फ्रांसीसिय़ों के हृदय में अंग्रेजों के विरुद्ध घोर विद्वेषाग्नि जलने लगी, परन्तु फ्रांसीसियों से कुछ बन न पड़ा। इस घोर अपमान का बदला लेने के अभिप्राय से ही फ्रांसीसियों ने रूसियों से सन्धि की, परन्तु इस सन्धि के अनन्तर भी सूडान से फ्रांसीसी प्रभाव को दूर करने के लिए जबकि अंग्रेजों ने फ्रांसीसी सेनापति आर्चेड को फशोडा से हटा दिया तथा रूसियों ने उस समय फ्रांसीसियों को सहायता देने के लिए भी लिख भेजा तो भी फ्रांसीसियों से कुछ बन न पड़ा। पुनः बोअर संग्राम के समय जबकि बोअर राजसभा के प्रधान क्रूजर फ्रांस की राजधानी पेरिस में आए और फ्रांसीसियों से अंग्रेजों के विरुद्ध सहायता माँगने लगे तो भी फ्रांसीसी अंग्रेजों से लड़ने को तैयार न हुए। पिछली दो बातें चाहे फ्रांसीसियों की निर्बलता की ही हों परन्तु प्रसिद्ध यह हुआ कि फ्रांसीसी शान्तिप्रिय हैं और बोअर युद्ध के बाद ही अंग्रेज राजनीतिज्ञ फ्रांसीसियों के साथ मेलजोल बढ़ाने का यत्न करने लगे। जब देखा गया कि फ्रांसीसी मिलने-जुलने में कुछ-कुछ सहमत दिखलाई देते हैं तब राजनीति विशारद इंग्लिश्तान के सम्राट् एडवर्ड सप्तम सैर की इच्छा से फ्रांस में पहुँच गए। फ्रांस की प्रजा ने सम्राट् की इस यात्रा को बहुत अच्छा समझा। पुनः अनेक अंग्रेज राजनीतिज्ञों का दल फ्रांस में और अनेक फ्रांसीसी राजनीतिज्ञों का दल इंग्लिश्तान में गया और परस्पर का प्रेम बढ़ता गया जिसका परिणाम यह हुआ है कि गत 25 मई को फ्रांसीसी मद्राज सभा के वर्तमान 'प्रधान' फैलियारिज अपने अनेक मन्त्रियों तथा अन्यान्य राज पुरुषों सहित इंग्लिश्तान में पधारे हैं। रंग-बिरंगी झंडियों से सुसज्जित अंग्रेजी रणपोतों ने अपनी तोपों की घोर गर्जना से डोवर बन्दर

के निकट प्रधान महाशय की सलामी उतारी थी। डोवर से जब आप विक्टोरिया स्टेशन पर पहुँचे तो स्वयं सम्राट् एडवर्ड ने अपने पुत्र, पौत्र तथा राजमंत्रियों सहित आपका स्वागत किया। जिन मार्गों से प्रधान महाशय सम्राट् एडवर्ड सहित बकिंघम के राजमहल की ओर पधारे उन मार्गों के दोनों पार्श्व अंग्रेज दर्शकों से भरे हुए थे जिन्होंने अपनी हर्षध्वनि से प्रधान महाशय के आगमन पर अपने आन्तरिक हर्ष को प्रकट किया। बकिंघम के राजमहल में प्रधान महाशय को भोज दिया गया जिसमें सम्राट् एडवर्ड ने प्रधान महाशय के पधारने पर बड़ा हर्ष प्रकट किया और कहा कि शान्ति संस्थापिनी जो सन्धि इंगलिश्तान और फ्रांस के बीच हो चुकी है वह आशा है कि सदा बनी रहेगी। प्रधान महाशय ने कहा कि मेरे यहाँ आने पर इंग्लिश्तान के लोगों ने जितनी प्रसन्नता प्रकट की है उससे आनन्द के मारे मेरा हृदय भर गया है।

समाचार प्रकाशित हुआ है कि फ्रांस देश के प्रधान जब इंग्लिश्तान से चले जाएँगे तो सम्राट् एडवर्ड रूस देश को पधारेंगे। अतः वहाँ के जार को भी प्रशंसित सम्राट् से प्रेम करना पड़ेगा। अनेक राजनीतिज्ञ ऐसा भी कहते हैं कि यूरोप में क्रमशः पूर्ण शान्ति संस्थापित हो जाएगी और अंग्रेजों के आन्तरिक शत्रु जर्मनी वाले भी उनसे मिल जाएँगे।

परन्तु इस शान्ति का प्रभाव जहाँ तक अनुमान किया जाता है एशिया और अफ्रीका के उन जातियों पर, जो यूरोपियनों के आधीन हैं, कठिन पड़ेगा। पिछला इतिहास बतला रहा है कि जब यूरोपवाले परस्पर में वैमनस्य रखते थे तब वे अपने अधीनस्थ अन्यान्य मनुष्य जातियों को प्रसन्न रखने की चेष्टा किया करते हैं, परन्तु जब वे परस्पर के मेल से निर्भय हो जाते हैं तो प्रायः अपने अधीनस्थ मनुष्य जातियों के साथ कठिन बर्ताव करने लगते हैं। यूरोप की जो यह प्रवृत्ति है उसका मुख्य कारण यह है कि पापमय स्वार्थ की शिक्षा वहाँ अधिक फैल चुकी है। डारविन ने यूरोपवालों को भ्रमा दिया है उसने सिखलाया है कि बलवान को चाहिए कि अपने को बनाए रखे चाहे अपने को बनाए रखने में निर्बलों का नाश हो जाए तो भी उनकी परवाह नहीं करनी चाहिए। परन्तु यूरोप के इस आचार्य को ज्ञात न था कि यह सिद्धान्त मनुष्य जातियों में देर तक नहीं चल सकता। इस सिद्धान्त के कारण जब अमीर गरीब पर अत्याचार करने लगते हैं तो घोर विद्रोह फैलता है और बड़े-बड़े सम्राटों को भी अपने प्राणों का भय हो जाता है। यूरोप में डारविन का मत चल रहा है और इसी कारण वह विद्रोह भी अन्दर-ही-अन्दर बढ़ता जाता है। जब तक डारविन का मत यूरोप में चलता रहेगा सच्ची शान्ति वहाँ की प्रजा को मिल नहीं सकती। अतः यूरोपवालों को यदि शान्ति अपेक्षित हो तो उन्हें चाहिए कि ऋषि सिद्धान्त की ओर अपना ध्यान ले आए जो डारविन के कथनों के ठीक विपरीत शिक्षा देते हैं। जो बतलाते हैं कि सबसे प्रथम रक्षा उनकी होनी चाहिए

जो मनुष्यों में धार्मिक हैं (धार्मिक वे हैं जो परोपकार ही को स्वार्थ समझा करते हैं) चाहे ये धार्मिक पुरुष शरीर से बहुत निर्बल हों, बिलकुल धनहीन हो, गुणों से अलंकृत न हों तथापि इन धार्मिक पुरुषों की रक्षा के लिए अन्यों को चाहिए कि अपना शरीर भी अर्पण कर दें। यदि यह शिक्षा चले, मनुष्य का प्रधान पदाधर्म ही परोपकार ही माना जाए तो आजकल के धनी, पापी, शरीर बलवाले पापी, पढ़े-लिखे पापी भी सुधर जाएँगे और किसी पर अत्याचार न होगा। परोपकार धर्म समझा जाएगा तो कोई भी पुरुष किसी से द्वेष क्यों करेगा, और जब किसी को किसी से द्वेष न होगा तो कोई भी दूसरे से न डरेगा और भगवान से यह निम्नलिखित प्रार्थना की जाती है वह सफल हो जाएगी–

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवीउभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु। (अथर्ववेद)

हे परमात्मन् ! हमारे लिए अन्तरिक्ष, द्युलोक, पृथ्वीलोक सर्वत्र अभय बना रहे हमारे आगे-पीछे ऊपर और नीचे सर्वत्र अभय रहे।

परमात्मा कृपाकर सब मनुष्यों को सुबुद्धि दे, ताकि वे परोपकार ही को सर्वोपरि समझें, अपने में जो पतित हैं उन्हें गिरी हुई अवस्था से उठाकर छाती से लगाएँ और उन्हें अपना सच्चा बन्धु बनावें।

[सद्धर्म प्रचारक, 3 जून, 1908]

महमन्दों का युद्ध

महमंदों का युद्ध समाप्त हुआ, उनका निवेदन पत्र अमीर काबुल की सेवा में जो इस अभिप्राय का गया था कि आपके सरहदी अफसरों ने ही हम लोगों को लड़ने के लिए उभाड़ा था अब आप मदद दें इत्यादि, उसका उत्तर उन्हें कुछ न मिला। अंग्रेज सरकार को महमन्दों ने जुरमाने की तरह कुछ नकद रुपया और बन्दूकें देना स्वीकार कर लिया। अतः जनरल विल्काक की सेना विजयी बनकर अब महमन्द देश से पेशावर की ओर आ रही है। भारत के बड़े लाट साहब ने जनरल विल्काक के पास धन्यवाद का तार भेजा है। परन्तु प्रजा की आँखों में यह युद्ध तभी सफल माना जा सकता है जबकि सीमावर्ती भारतीय प्रजा पर महमन्दादि पहाड़ी मुसलमान पुनः अत्याचार न करें।

वोदका

ऐसे तो मदिरा का पान यूरोप के प्रायः सभी देशों में है, परन्तु वोदका नाम रूसी मदिरा का पान रूस की साधारण प्रजा में बहुत हैं। कुछ दिनों से रूसी प्रजा मदिरा में मस्त हो जब अपनी कर्तव्यता से अधिक विमुख होने लगी तो रूस की डूमा नाम प्रतिनिधि सभा को विशेष सोच हुआ और उसने एक कमीशन द्वारा इस बात की जाँच कराई कि इस मदिरा से क्या-क्या हानियाँ होती हैं और इसकी ब्रिकी किस प्रकार रोकी जाए। कमीशन ने रिपोर्ट की है कि वोदका के बोतलों पर जो राजचिह्न छपता है वह सर्वथा हटा दिया जाए और उसके स्थान में मुर्दे मनुष्य की खोपड़ी और कतिपय हड्डियों का चिह्न लगाया जाए, ताकि वोदका पीनेवालों को घृणा हो और इस मदिरा की बिक्री क्रमशः बन्द होवे। मदिरापान से भारतीय प्रजा की जो दुर्दशा हो रही है उसकी जाँच भी राजा वा शिक्षित प्रजा की कोई सभा उपयुक्त समझती है ? यदि इस ओर राजा वा किसी सुशिक्षित प्रजा सभा का समुचित ध्यान होता तो जितनी शीघ्रता से मदिरा की बिक्री भारत में बढ़ रही है, उतनी न बढ़ती।

सम्राट् एडवर्ड सप्तम

सम्राट् एडवर्ड सप्तम रूस के जार से भेंट करने के लिए रूस जाने वाले हैं–यह समाचार तो पहले प्रकाशित हो ही चुका है। इस सम्बन्ध में जो नूतन समाचार आए हैं उनसे ज्ञात होता है कि इंग्लिश्तान के बहुत से अंग्रेज भी सम्राट् की भावी रूस यात्रा से इस कारण अप्रसन्न हैं कि रूस के जार अपनी प्रजा पर घोर अत्याचार करते हैं, अतः ऐसे जार से सम्राट् को मिलना उचित नहीं। इसी प्रकार रूस के भी अनेक लोग कहते हैं कि जार जुल्म करते हैं अतः उनसे सम्राट् एडवर्ड को मिलना उचित नहीं। रूस के कुछ लोगों ने इस सम्बन्ध में जार रूस की कठिन समालोचना की थी जिसका परिणाम यह हुआ है कि गत 31 मई को 8 रूसी मारे गए तथा 16 रूसियों को प्राणदण्ड की आज्ञा मिली है। प्रथा तो यह सुनते आते हैं कि जब राजा लोग किसी स्थान को पधारते हैं तो इस हर्ष में अनेक बन्दियों को छुटकारा मिलता है उससे ठीक उलटा इस पधारने के समाचार ने ही इतनों का प्राण ले लिया। न मालूम सम्राट् जब रूस पधारेंगे तो और भी कितने उत्पात होंगे।

बम गोला सम्बन्धी दुर्घटना

बम गोला संबंधी दुर्घटना के कारण इंगलिश्तान में भी लोग भारत के विषय में इन दिनों अधिक वार्त्तालाप करते और समाचार पत्रों में लेख लिख रहे हैं। ये लेखक प्रायः दो भागों में विभक्त किए जा सकते हैं। एक भाग के लोग जो कुछ कहते हैं उसका आशय यह है कि भारतवासियों में से जो लोग अंग्रेजी शासन से असन्तुष्ट हो गए हैं उनकी असन्तुष्टता के कारण अवश्य हैं, उन कारणों की जाँच करनी चाहिए और यदि वह असन्तुष्टता यथोचित हो तो उसको दूर करने की चेष्टा करनी चाहिए। दूसरे भाग के अनेक लेखक तथा समाचार पत्र लिखते हैं कि भारत में देशी भाषा में निकलने वाले समाचार पत्रों को यथासम्भव दबा दिया जाए और तीक्ष्ण कटाक्ष वाले व्याख्यान बन्द किए जाएँ, सरकारी महकमों में अब की अपेक्षा अधिक अंग्रेज नौकर रखे जाएँ इत्यादि। फ्रांसीसियों का पेरिस टाइम्स नामक पत्र लिखता है कि अभी भारत में जो दुर्घटना अंग्रेजी राज्य में हुई है वैसी दुर्घटना फ्रांसीसियों के अल्जीरिया राज्य में हो चुकी है। हम लोगों ने अल्जीरिया के असन्तोष को उदारपूर्ण नीतियों से दूर किया था। यदि अंग्रेज लोग भी हमारे इस तर्जुबे से लाभ उठाएँ तो उत्तम हो, इत्यादि।

अमेरिका में भारतवासी और जासूस

'रायटर' का भेजा हुआ लंदन का तार जो 'एम्पायर' में छपा है उसके अवलोकन

से विदित होता है कि अंग्रेज जासूस इन दिनों अमरीका के न्यूयार्क नगर में पहुँचकर इस बात की जाँच कर रहे हैं कि न्यूयार्क में बसने वाले भारतवासियों में से कौन-कौन अंग्रेजी राज से विद्वेष रखने वाले हैं। सच या झूठ ऐसा कहा जाता है कि इन भारतवासियों में से कई क्लैनाजल नाम सभा से सम्बन्ध रखते हैं जो सभा कि आयरलैंड के कठिन राजविद्रोहियों की समझी जाती है।

अफगानों की चढ़ाई–लंदन से 'रायटर' का तार जो भारत में आया है उस के पढ़ने से ज्ञात होता है अफगान सीमा से थोड़ी दूर पर फारस राज्य के कारमां प्रदेश में जो शाह फारस का रीगन नाम नगर है उस पर अस्त्र-शस्त्रों से सज्जित सात सौ अफगान योद्धाओं ने चढ़ाई कर अपने आधीन कर लिया है। यदि यह समाचार सत्य है तो फारस तथा अफगानिस्तानी, दोनों को कठिन आपत्तियों का सामना करना पड़ेगा।

फारस में अभी तक गड़बड़ बना हुआ है, शाह फारस की अज्ञता के कारण राज्य प्रबन्ध ऐसा बिगड़ चुका है कि कोई भी राजमन्त्री जो फारसी पार्लियामेंट के परामर्शानुसार कार्य करने लगता है वह प्रबन्ध सम्बन्धी कठिनाइयों के कारण घबरा जाता और उसे अपना पद परित्याग करना पड़ता है। न्याय विभाग के मन्त्री ने तो अपना पद परित्याग कर ही दिया था अब विदेश विभाग के मन्त्री ने भी अपना पद त्याग दिया है।

यूरोपियनों को सम्मति–प्रोफेसर बम्बरी एक प्रसिद्ध यूरोपीय राजनीतिक हैं। यह 'इंडियन रिव्यू' नामक पत्र में फारस के विषय में यूरोपियनों को सम्मति देते हुए लिखते हैं कि अब एशिया पुराना एशिया न रहा, यहाँ के लोग जैसे ढीले पहले थे वैसे अब ढीले नहीं हैं। अपनी उन्नति के लिए जिन विधियों को अवलम्बन करना वह पहले बुरा समझते थे अब उन विधियों को धारण करते जाते हैं। अतः यूरोपियनों का जो यह विचार है कि सम्पूर्ण एशिया को अपने वश में कर लें उस विचार को अब परित्याग कर देना चाहिए। यदि इस विचार को यूरोपीय स्वयं न छोड़ेंगे तो उन्हें विवश होकर परित्याग करना पड़ेगा।

'युगान्तर' पत्र का प्रकाशक–फणीन्द्रनाथ मित्र, जिसने बम गोला सम्बन्धी विद्रोहियों के पकड़े जाने पर अंग्रेजों के विरुद्ध एक अति कठोर लेख प्रकाशित किया था और जिसका अभियोग कलकत्ता पुलिस कोर्ट के न्यायाधीश मिस्टर पार्न हिल के सम्मुख चल रहा था। उसे एक वर्ष ग्यारह मास कठिन करागार का दण्ड मिला और साथ ही एक हजार रुपए जुर्माना देने की भी आज्ञा हुई। यदि जुर्माना न देगा तो छह महीने कारागार का दण्ड उसे और भी भोगना पड़ेगा।

पूना में गोले–पूना के सांवर पीठ, भदवर चौक तथा दारूवाले पुल पर गत 2 जून को तीन गोलों के फटने का घोर शब्द हुआ। मानों इन गोलों ने सूचना दी कि पूना में भी अशान्ति फैल रही है। पुलिस ने सार्वजनिक सड़कों पर गोले

रखने वालों की विशेष खोज की परन्तु पता कुछ न लगा।

अंग्रेजों के शत्रु–जब से अंग्रेजों ने फ्रांसीसियों के साथ मेल कर लिया है, और जब से फ्रांसीसियों के मित्र रूसियों के साथ अंग्रेजों ने परस्पर झगड़े के प्रधान कारण फारस तथा अफगानिस्तान के विषय में बुझौती कर ली है तब से समझा जाता है कि यूरोप में सिवाय जर्मनीवालों के अंग्रेजों के शत्रु कोई अन्य नहीं हैं जर्मन सम्राट् अंग्रेजी जंगी जहाजों के विरुद्ध जिस बृहद् व्यय के साथ अपने जंगी जहाजों को बढ़ा रहे हैं, जिस युक्ति से जर्मनीवालों ने फारस में अपने बैंक संस्थापित कर लिये हैं, जर्मनी के विज्ञानविद् वणिक रसायन क्रिया से नाना प्रकार के पदार्थों को कम व्यय में बनाकर एवं सस्ते दामों में बेचकर अंग्रेजी वाणिज्य को पृथ्वी के कई भागों में जो धक्का दे रहे हैं (जैसे कि कृतृमनील बनाकर जर्मनीवालों ने उन अंग्रेजों के वाणिज्य को बिलकुल नष्ट कर दिया है जो भारत में नील की खेतीकर के लाखों रुपए साल कमा लेते थे) इससे अंग्रेज भीतर-भीतर जर्मनी से प्रसन्न नहीं हैं और उन्हें अपना शत्रु समझते हैं। जर्मन सम्राट् कूटनीति विशारद भी हैं, अब तक यद्यपि वह खुल्लमखुल्ला अंग्रेजों से लड़ने को उद्यत नहीं हुए, परन्तु अंग्रेजों के शत्रुओं को वह कई बार उत्साहित कर चुके हैं। जिस समय अंग्रेजी सेना पर बोअर सेना पहले-पहल विशेष रूप से विजयी हुई थी उस समय जर्मन सम्राट् ने बोअरों के शासक प्रेसिडेंट क्रूजर को बधाई का तार भेजा था। वलगेरिया के मामले में सुल्तान रूम को दवाने के लिए अंग्रेजों ने कई बार उद्योग किया, परन्तु जर्मन सम्राट् ने अंग्रेजों का सब उद्योग निष्फल कर दिया। जर्मनीवाले स्वयं तथा सुल्तान रूम को सहायता देकर कृष्णसागर (ब्लैकसी) की पूर्व दिशा से आरम्भ कर फारस के दक्षिण भाग तक जो रेल बनाना चाहते और जिसके एक भाग को वह बना तथा बनवा रहे हैं, राजनीतिक उद्देश्यों से शून्य नहीं हैं। अंग्रेज समुद्री युद्ध में क्योंकि सर्वोपरि हैं इस कारण उनका कोई भी शत्रु समुद्र के मार्ग से कोई सेना भारत की ओर नहीं भेज सकता, परन्तु इस रेल लाइन के बन जाने पर यदि अंग्रेज और जर्मन खुल्लमखुल्ला लड़ने लगेंगे तो सम्भव है कि जर्मनी इस रेल लाइन से बहुत कुछ लाभ उठाए और अपनी सेनाओं को इस मार्ग से भारत की ओर भी भेजने का यत्न करे। जर्मन सम्राट् जिस प्रकार इन दिनों सुल्तान रूम की रक्षा कर रहे हैं यदि इसी प्रकार की रक्षा बनी रही और अंग्रेज जिस प्रकार सुल्तान रूम से अप्रसन्न हो रहे हैं उसी प्रकार अप्रसन्न बने रहे तो वलगेरिया या मैसीडोनिया के किसी-न-किसी मामले पर अंग्रेज और तुर्कों का बिगाड़ हो सकता है और उस दशा में यदि जर्मनीवालों ने खुल्लमखुल्ला सुल्तान रूम का साथ दिया तो यूरोपीय सम्राटों के बीच पुनः घोर संग्राम हो जाएगा। यूरोप के बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ कहते हैं कि यूरोप में वैसे तो शान्ति भंग का कोई लक्षण इस समय प्रकट नहीं है, परन्तु वलगेरिया का मामला यदि ठीक निवृत्त न हुआ और वलगेरियनों

का पक्ष लेकर किसी यूरोपीय सम्राट् ने सुल्तान रूम से छेड़छाड़ की तो यूरोप की शान्ति भंग की सम्भावना हो सकती है। परमात्मा कृपा करें कि अन्याय का भाव जगत् से उठे और न्याय एवं दयापूर्वक सब एक-दूसरे के साथ व्यवहार करें जिसमें मनुष्य नाशक युद्धों की दुर्घटनाएँ पुनः संघटित न होवें।

विद्रोहियों की ओर से धमकियाँ–बम गोला सम्बन्धी विद्रोहियों के साथी, जो अभी तक पकड़े नहीं जा सके, लिखकर तथा छापकर चिट्ठियाँ अभी तक अनेक अंग्रेजों के पास इस अभिप्राय की भेज रहे हैं कि अत्याचार बन्द करो नहीं तो मारे जाओगे। इस प्रकार की एक छपी हुई तथा एक लिखी हुई चिट्ठी कलकत्ता के 'एम्पायर पत्र' के अंग्रेज सम्पादक को भी मिली है। आश्चर्य है कि विद्रोही लोग अपनी गुप्त चिट्ठियाँ छापने का प्रेस भी रखते हैं, परन्तु पुलिस उनका पता नहीं लगा सकती।

यूनान और सुल्तान रूम की अनबन–क्रीट द्वीप के विषय में सुल्तान रूम और यूनानियों की अनबन बहुत दिनों से चली आती है वहाँ क्रिश्चियन और मुसलमान प्रजा बसती है, परन्तु यूरोपियनों के दबाव के कारण सुल्तान रूम को वहाँ क्रिश्चियन शासक (गवर्नर) रखना पड़ता है। हाल में समाचार आया है कि सामोस स्थान की प्रजा ने व्रिदोही बनकर अपने गवर्नर के दुर्ग को घेर लिया है। विद्रोही दल और गवर्नर की सेना में युद्ध भी हुआ है और दोनों ओर के बहुत से लोग मारे गए हैं। इस समाचार को पाकर शान्ति संस्थापन के लिए तुर्की जंगी जहाज सामोस के किनारे पहुँच गए हैं। अब यूनानी यह कहते हैं कि यूरोपियनों को चाहिए कि सामोस में अपने जंगी जहाज भेज दें, ताकि तुर्क मनवांछित काम न कर सकें।

कोरिया के स्वदेश प्रेमी–अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए अब भी यत्न कर रहे हैं, यद्यपि उन्हें परतन्त्र बनाने के लिए जापानी शृंखला (जंजीर) उनके पैरों में डाली जा चुकी है, परन्तु अभी तक वह इस भ्रम में हैं कि यह जंजीर शीघ्र ही टूट सकती है, इसी अभिप्राय से कोरिया के कुछ पुरुष जापानियों से युद्ध कर रहे हैं। लगभग तिरेपन युद्ध उक्त कोरियन और जापानियों के अब तक हो चुके हैं जिनमें 59 कोरियन तथा 30 जापानी मारे गए हैं। इस दृश्य के देखने से बोध होता है कि कोरिया के स्वदेश प्रेमी स्वतन्त्रता को अपने शरीर से भी अधिक प्रिय समझ रहे हैं। परन्तु जब ये थोड़े-से कोरियन मारे जा चुकेंगे तो जापान बड़ी निर्भयता से शासन करने लगेगा और कोरियन क्रमशः उसको सुशासन भी समझने लगेंगे और जब तक जापान कोई अत्याचार पुनः न करेगा तब तक वहाँ की प्रजा जाग न सकेगी और न उन स्वदेश प्रेमियों का नाम उन्हें याद आएगा जो आज कोरिया की स्वतन्त्रता के लिए कट रहे हैं।

रूस के हृदय में फिर अद्भुत दया उत्पन्न होने लगी है क्योंकि रूस के

राजदूत, जो चीन की राजधानी पिकिंग में रहते हैं उन्होंने चीनियों से कहा है कि इसमें सन्देह नहीं कि चीनी प्रजा अब जागने लगी है। और चीन की शक्ति बढ़ती जाती है, परन्तु पूर्णोन्नति के पूर्व चीन को जो-जो संशोधन करना होगा उसमें प्रजा के बीच खलबली मचा करेगी और चूँकि अनेक विदेशी इस प्रकार की खलबली को बढ़ाने की चेष्टा करते हैं। अतः चीन को चाहिए कि पुरानी रूसी मैत्री को याद करे और रूस के साथ अपना मेलजोल बढ़ाता जाए। कूट राजनीति वाले भी कैसे झूठे होते हैं जो रूस चीन मंचूरिया प्रदेश को रूस जापान युद्ध के पहले छीनना चाहता था वह रूस चीन को अपनी पुरानी मैत्री का स्मरण दिलाकर चीन को अपनाना चाहता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 जून, 1908]

चक्र किधर चल रहा है

भारतवर्ष की सीमा पर असभ्य जंगली महमन्दों ने ही महमन्द पशु भाव का परिचय नहीं दिया प्रत्युत उन देशों में भी जिन्हें इस समय सभ्यता का सरताज समझा जाता है, अब तक यही पुराना भद्रकाली का चक्र चल रहा है। फ़ारस देश पर घोर घमासान के बादल छा रहे हैं। राजा प्रजा एक-दूसरे की जान के प्यासे दिखाई देते हैं और दोनों को खबर नहीं कि उनके देश को रूस तथा इंग्लैंड ने आपस में बाँट छोड़ा है। रूम (Turkoy) की दशा बराबर शोचनीच चली जाती है, किन्तु साथ-के-साथ रक्त की नदियाँ बहाने के समान भी उन्नत ही होते जाते हैं। हाँ ! संसार के सम्राट् आपस में मिल-जुलकर यह सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि मसीह का बतलाया हुआ स्वर्गीय राज्य पृथ्वी पर आया ही चाहता है। सम्राट् एडवर्ड का जर्मनी के अधिराज से मिलने के पश्चात् रूस की जान और माल के मालिक से मिलने का दृश्य और भी भड़कदार हो जाता है जबकि हम फ्रांस देश के प्रधान को इंग्लैंड का अभ्यागत देखते हैं। किन्तु क्या सूक्ष्मदर्शियों की इस विचित्र नाटक से कुछ भी तसल्ली होती है ? इस मक्कारी के ढोल का पोल तत्काल ही खुल जाता है जबकि थोड़ा सा स्वार्थ भी बड़े-बड़े श्रीमानों को प्रतिज्ञा भंग करने के लिए युक्तियों की तलाश में हेत्वाभास के घने जंगल में चक्कर लगवाता है। केनेडादि गोरों की जागीरों से तो भारत निवासियों को जवाब मिलना कुछ बड़ी बात न थी किन्तु अफ्रीका के जंगलों से भी उनको जिस धोखे से निकाला गया है उसका दृष्टान्त किसी सभ्यताभिमानी देश के इतिहास में भी नहीं मिल सकेगा। ऊपर की टीप-टाप के नीचे वही ढाक के तीन पात दिखाई देते हैं। पता लगता है कि यूरोप में आज भी वही राक्षसी स्पिरिट काम कर रही है जो आज से दस-बारह सौ वर्ष पहले काम कर रही थी। इसका प्रमाण ढूँढ़ने के लिए किसी दीर्घकाल में पहले जाने की आवश्यकता नहीं। समाचार पत्रों में यह खबर बड़े वेग से घूम रही है कि फ्रांस के प्रसिद्ध सम्राट् नैपोलियन की बहन के पड़पोते ने एक तकरार पर दो रूसी सेनाध्यक्षों को द्वन्द्व युद्ध में तलवार से घायल किया। यह चक्र इसी प्रकार चलेगा और सभ्यता की आड़ में संसार बराबर हाहाकार मचाएगा, जब तक कि स्वार्थ का नाश संसार से न किया जाएगा।

स्वदेश में हलचल

बम के गोले चले। बीसियों अपराधी पकड़े गए। खुदीराम बोस को फाँसी का दंड मिला जो मिलना ही चाहिए था। जिनके पास से बम के गोले निकले उन पर अभियोग चल ही रहा है, किन्तु यह मेरी समझ में नहीं आया कि हिन्दू, मुसलमान सबके सब क्यों धड़ाधड़ जलसे कर रहे हैं। क्या कानों पर हाथ रखने से एंग्लो-इंडियन महाशय विश्वास कर लेंगे कि जो तुम कह रहे हो वह ठीक है ? एक गोराशाही अखबार ने लिखा था कि जब तक कोई हिन्दुस्तानी राजभक्त होने का प्रमाण पेश न करे तब तक उसे राजविद्रोही समझना चाहिए। यद्यपि गवर्नमेन्ट के अधिकारी पुरुष ऐसी ऊटपटांग हाँक लगाने से बचे रहते हैं तथापि इस समय उनके अन्तरीय भाव भी कुछ ऐसे ही हो रहे हैं। किन्तु क्या उनका विचार ठीक नहीं। मेरी सम्मति में तो उनका विचार ठीक ही है। 'चोर की दाढ़ी में तिनका' वाली कहावत किसने नहीं सुनी। इस समय जो अत्याचार कुछ एक गोरों की ओर से कालों पर हो रहे हैं वह उन गोरों के अन्दर खलबली मचा रहा है। भारतवर्ष के करोड़ों सर्वसाधारण बेखबर सो रहे हैं। वह जानते भी नहीं कि राजनीति, स्वराज्य और पोलिटिकल अधिकार किस चिड़िया का नाम है; किन्तु उनके गोरे हाकिमों को उनकी गुप्त सभाओं के स्वप्न आते और सुख की नींद सोने नहीं देते।

और इस समय कितने अनर्थ और अधर्म हो रहे हैं। बंगाल के लाट साहब की ट्रेन उड़ाने का अपराध तो कुछ कुलियों पर मढ़ा गया जिनको दस-दस से पाँच-पाँच वर्ष तक की कैद की सजा भी हो गई, किन्तु अब पता लगा कि वहाँ बम का गोला रखने वाले कोई अन्य ही नास्तिक पुरुष थे। अब उन व्यर्थ फँसे हुए पुरुषों की ओर से हाईकोर्ट में अपील दाखिल हो गया है। इन निरपराध पुरुषों को कष्ट भोगने का पाप न जाने किस पर वज्र की तरह टूट पड़ेगा। मेरी सम्मति में जिन पापात्माओं ने गीता तथा उपनिषद् से पवित्र धर्मग्रन्थों के नाम पर प्राणघातक गोले चलाए, इस समय के सारे अत्याचार के वे ही उत्तरदाता हैं।

आर्यसमाज और पालिटिक्स

एक समय मुसलमान एक ओर आर्यसमाज को एक पोलिटिकलवादी सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं और दूसरी ओर आपापन्थी हिन्दू (Aguostic) दल आर्यसमाज के लीडरों को (जो मुझे नहीं दीखते क्योंकि यहाँ प्रत्येक मनुष्य अपने आप में लीडर है) डाँट बतलाता है कि वह आर्य पब्लिक को क्यूँ पोलिटिक्स से जुदा रहने की प्रेरणा करते हैं। इन सबके उत्तर में आर्य सामाजिक लेखक यह सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि आर्यसमाज पोलिटिकलवादी नहीं। हिन्दू आपापन्थियों को मेरी ओर से यह उत्तर है कि आर्यसमाज जो कुछ है सो है। जो सच्चे आर्य हैं वह इस बात की परवाह नहीं करते कि ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के विशेष कर्मचारी उनके

विषय में क्या सम्मति रखते है। मरना एक बार ही है, फिर धर्म का पालन करते हुए मरने से बढ़कर और कौन सी मौत हो सकती है। किन्तु आपापन्थी हिन्दुओं का खिलौना बनना उन आर्यों को स्वीकार नहीं है। 'भिन्न-भिन्न भाषा पृथक्-पृथक् शिक्षा तथा अलग-अलग व्यवहार' को सार्वभौम वैदिक धर्म के प्रचार से हटाकर ऐक्य मत कराना जो ऋषि दयानन्द ने उनका परम उद्देश्य बतलाया है कि उसके लिए सर्व प्रकार के कष्ट सहन करने को उद्यत हैं। हाँ, नर्म-गर्म वा किसी अन्य दल का साधन (Tool) बनाना उन्हें मंजूर नहीं है। आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य धार्मिक, श्रेष्ठ आदर्श पुरुष उत्पन्न करने का है। यदि इन मनुष्यों के संस्कार करण रूपी काम को मुसलमान वा ईसाई आदि अपने विरुद्ध समझते हैं वा राजकर्मचारी आर्यसमाज के इस उद्देश्य को अपनी स्थिति के विरुद्ध समझकर उसके शत्रु बनते हैं तो एक सच्चे आर्य का यही उत्तर हो सकता है कि :

अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।।

[सद्धर्म प्रचारक, 24 जून, 1908]

हवा का रुख देखो

राजपूत खुशामद के मारे अपने अंग्रेज मालिकों को ईश्वर का अवतार बतलाया करते थे, किन्तु राजपूत कालेज पर ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के पूरा अधिकार जमाते ही राजपूत भी चमक उठे हैं और अपना नया स्वतन्त्र कालिज बनाने के लिए हृदयवेधक अपीलें कर रहे हैं। खालसा कालिज भी गवर्नमेन्ट ने सोलहों आना अपने वश में कर लिया, जिस पर वह खालसा बहादुर, जो सिक्खों की पलटनों का गुरु गोविन्द सिंह की ओर से केवल अंग्रेजों की सहायता के लिए तैयार करना बतलाते थे, अब चौंक उठे हैं और शेर की गरज से अपने भाइयों को एक नया स्वतन्त्र कालेज खड़ा करने की प्रेरणा करते हैं। तीन वर्षों की चुप के पश्चात् अब लाला लाजपतराय जी भी 'आर्य गज़ट' के कालमों में स्पष्ट वक्तृत्व पर उतर आए हैं और दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज को गवर्नमेन्ट के पंजे से निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं। यह सर्व घटनाएँ हवा का रुख दिखा रही हैं। क्या इस समय गुरुकुल के स्थापन करने वालों की बुद्धिमत्ता को वे सर्वमतवादी स्वीकार करने को तैयार होंगे जो आरम्भ में इन्हीं लोगों को बुद्धू का पद अर्पण करते थे। क्या हवा का रुख यह नहीं बतला रहा कि वर्तमान इतिहास बनाने वाला आर्यसमाज ही है; फिर यदि गवर्नमेन्ट के कर्मचारी व्याकुल होकर आर्यसमाज पर झूठे दोषारोपण करें तो आश्चर्य क्या है।

मानवी सृष्टि सब जगह एक सी है

पश्चिमी यूरोप देश निवासी एशियावालों को मनुष्य ही नहीं समझते। उनके लेखों में पूर्वीय मनुष्य समाजों की पशुओं से ही उपमा दी गई है। परन्तु दीर्घ दृष्टि से देखने पर ज्ञात होता है कि भेद केवल साधनों का है, नहीं तो मानवी भाव दोनों (पश्चिमीय तथा पूर्वीय) में एक-सा है। फ़ारस के भूत सम्राट् मुज़्फ़्फ़रूद्दीन ने जापान का अनुकरण करने की चेष्टा में फ़ारस की प्रजा को भी अपने प्रतिनिधियों द्वारा राजप्रबन्ध कराने का अधिकार दिया था। उनकी मृत्यु पर उनके पुत्र की अपने देश की पार्लियामेन्ट से बिगड़नी शुरू हुई। इस समय अवस्था यह है कि फ़ारस के शाह क़ज़्ज़ाक़ों (सरहदी लुटेरों) को साथ लिये न केवल समाचार पत्रों के सम्पादकों को फाँसी पर चढ़वा चुके हैं, न केवल सैकड़ों को गोली मरवाने के अतिरिक्त शहरों को लुटवा चुके हैं, प्रत्युत पार्लियामेन्ट के मन्दिर को भी जड़ से खुदवा रहे हैं। इस पर अंग्रेज़ों की लेखनी तथा वाणी एक स्वर में चिल्ला उठेगी—''एशिया से और कुछ आशा नहीं हो सकती थी एशिया वाले स्वराज्य के अधिकारी नहीं इसलिए एशियाई सम्राट् भी अपनी प्रजा को प्रसन्नता से स्वराज्य नहीं देते।'' किन्तु क्या यूरोप के सम्राट प्रसन्नतापूर्वक प्रजा के अधिकार देने को तैयार हैं। फ़ारस के शाह ने 'सूरुल असराफ़ील' तथा अन्य पत्रों के सम्पादकों को फाँसी चढ़ाया। इस पर सारा यूरोप हाहाकार मचाएगा। किन्तु भारतवर्ष में बीसियों सम्पादक न केवल सख्त कैद ही भुगत चुके तथा भुगत रहे हैं प्रत्युत कई इस प्रकार के आक्रमणों से बरबाद होकर मर गए ! फिर भी इनके दुखों पर कोई आहसर्द तक भरने वाला क्यूँ नहीं मिलता ? शाह के क़ज़्ज़ाकों को प्रजा पर छोड़ना दूषित समझा जाता है, किन्तु गुरखों और मुसलमानों द्वारा हिन्दू प्रजा का नाश कराने की ओर क्यों कोई उँगली नहीं उठा सकता ? इसमें केवल साधन भेद है। अंग्रेजी गवर्नमेन्ट जो कुछ करती है प्रजा की भलाई के लिए ही करने का दावा करती है। अंग्रेजों ने भारतवर्ष का राज किसी लालच से नहीं लिया। हिन्दुओं पर अत्याचार होता देखकर उन्होंने हिन्दुस्तानियों पर प्रेम का हाथ फैला दिया। किन्तु शाह फ़ारस स्पष्ट शब्दों में कहता है कि अपने बाप-दादा की मीरास वह बिना तलवार चलाए छोड़ने को तैयार नहीं (यद्यपि अधिकार प्राप्ति का हौसला प्रजा को उसके बाप

ने ही दिया था) वह बिना किसी कपट के कहकर लुटेरों का प्रजा पर छोड़ता है। क्या यह पशुवृत्ति एशिया से कुछ सम्बन्ध रखती है ? कदापि नहीं। एशिया का शिष्टाचार देखने के लिए पुराने आर्यों और उनके शिष्यों पारसियों, चीनियों तथा जापानियों के इतिहासों का अवलोकन करना चाहिए। जिस राक्षसी वृत्ति का प्रत्यक्ष फ़ारस में हो रहा है उसका मूलाधार खोजने के लिए अफ्रीका की 'मरदुमख़ोर' पिशाच भूमि में जाने की आवश्यकता है। इस पिशाचत्व का प्रवेश अफ्रीका से अरब में और वहाँ से लुटेरों द्वारा एशिया तथा यूरोप में हुआ। किन्तु प्रश्न यह है कि यदि विविध सभ्यताओं का पर्दा ऊपर से उतार दिया जावे तो आदमी आदमी में कुछ भेद नहीं प्रतीत होता। यह शिक्षा भेद का कारण है कि 'कोई हीरा कोई कंकर' दिखाई दे रहा है।

अब भी चेतो समय है

बम का अभियोग चला। मिस्टर नार्टन को गवर्नमेन्ट ने कर लिया—बंगालियों के लिए यह पहला आश्चर्य था। मिस्टर नार्टन ने बैरिस्टरी के सर्वउत्तम नियमों पर लात मारकर अपने पुराने कांग्रेसी मित्रों पर वार शुरू किए तथा बंगाली बैरिस्टरों को गाली देना आरम्भ किया—बंगालियों को उससे भी बढ़कर आश्चर्य हुआ, किन्तु मुझे तनिक भी आश्चर्य नहीं हुआ। जिस समय नार्टन ने विश्वासघात करके एक मित्र की अर्धांगिनी को भ्रष्ट किया था उस समय इसी नार्टन को कांग्रेस वाले सिर पर लेकर नाचते थे। एक धार्मिक देवी Miss Muller ने जब इस पर घृणा प्रकट की थी और कांग्रेस पंडाल से उठकर चली थी; उस समय जो बर्ताव कांग्रेस के अग्रणियों ने उसके साथ किया था उसका फल इन्हें तथा इनकी सन्तानों को मिलना ही चाहिए था। किन्तु आश्चर्यजनक घटनाओं की अभी समाप्ति नहीं हुई। गरमागरम राजनीतिक बमवालों के बयानों पर फूले नहीं समाते थे। उनकी ऐक्यता तथा देशभक्ति को आदर्श बतलाते थे। किन्तु अचानक सुनने में आया कि गुसाईं नरेन्द्रनाथ ने सारा भंडा फोड़ दिया। इस पर न केवल पकड़े हुए बमवालों को प्रत्युत सारे भारतवर्ष के राजनीतिकों को आश्चर्य हुआ। मेरी समझ में फिर नहीं आता कि इसमें आश्चर्य की क्या बात है। यह बात तो इस समय तय नहीं हो सकती कि गुसाईं का बयान सचमुच ठीक है वा अरविन्द तथा अन्य बंगाली राजनीतिक सभ्यों को फँसाने और उनको विधवाओं तथा स्वदेशी श्रीमानों को लुटेरा साबित कर उन्हें अपने स्वदेशी भाइयों की दृष्टि में गिराने के लिए किसी-न-किसी धमकी वा लालच से उसके द्वारा झूठ बकवाया है क्योंकि अभी तक यह विषय न्यायाधीश के विचाराधीन है। किन्तु इसमें किसे सन्देह हो सकता है कि गोसाईं महाअधम विश्वासघातक निकला। क्या गुसाईं का बयान यह सिद्ध नहीं करता कि अधर्म का सम्बन्ध सर्व सम्बन्धियों को इकट्ठे करके डुबा देता है। जब देश में सदाचार

का अभाव है जब मनुष्य इन्द्रियों को वश में करने की शक्ति नहीं रखते, जब धर्म की सत्यता पर काम करने वालों को विश्वास नहीं; तब वे कैसे स्वराज्य-सी शुद्ध सम्पत्ति के लिए यत्न कर सकते हैं। मेरा विचार है और यह जानते हुए भी कि राजनीतिक गरमदल वाले मुझे इस लेख के लिए 'क़ौम का दुश्मन' बतलाएँगे, मैं इस विचार को प्रकट करने से नहीं रोक सकता—कि बम के मामले में जिन-जिन पागल युवकों ने अपना अपराध माना है उनके मनों को प्रेरणा करने वाला सत्य न था, बल्कि लोक में प्रसिद्धि की उत्कट इच्छा थी। भारतवासियों में जो भी कुछ लिखने तथा बोलने की शक्ति रखता है उसे इस समय युवकों के चंचल हृदयों को लोकैष्णा से हटाकर सदाचार में दृढ़ बनने की ओर झुकाना चाहिए। अब भी समय है, नहीं तो अब के चूके सँभलना कठिन होगा।

यह गवर्नमेन्ट की भूल है

श्रीमान् बालगंगाधर तिलक भी राजविद्रोह फैलाने तथा जाति को जाति के साथ लड़ाने के अभियोग में पकड़े गए हैं। तिलक महाराज के लेख कैसे हैं और उनका क्या अर्थ है, इसका निबटारा तो न्यायालय में होगा, किन्तु इस समय उन पर अभियोग चलाने में गवर्नमेन्ट की बड़ी भूल है। प्रतीत होता है कि ब्रिटिश आधिराज्य में अब राजनीतिक धुरीणता की इतिश्री ही हो गई है। क्या तिलक को कैद करने से गवर्नमेन्ट का प्रभाव अत्याचारों को दबा लेगा ? सच्ची राजनीति प्रजा के सामने नित नए अशान्ति के कारण आरोपण करने में नहीं प्रत्युत उनके हिले हुए हृदयों को शान्त करने में।

[सद्धर्म प्रचारक, 1 जुलाई, 1908]

लाख तोते को पढ़ाया पर वो हैवाँ ही रहा

कहते हैं कि पश्चिमी शिक्षा के फैलने से असभ्यता इस देश से दूर हो गई है। इस कथन में जहाँ एक रत्ती भर दिखलावे का सत्य है वहाँ शेष सब झूठ-ही-झूठ है। कोढ़ी के बदन पर सुन्दर रेशमी कपड़े डालकर जैसे उसकी रोग निवृत्ति का उत्सव मना सकते हैं, उसी प्रकार असभ्यता के नाश पर भारतनिवासियों को बधाई दे लीजिए। किन्तु दीर्घ दृष्टि से देखने पर पता लगेगा कि हिन्दुस्तानी सभ्यता विषय में वैसे ही कोरे-के-कोरे हैं। 25 वर्ष व्यतीत हुए जब पहले-पहल मुसलमानों ने उर्दू में उपन्यास (Novels) लिखने शुरू किए। वह सदा मुसलमान के इश्क में ही हिन्दुनिओं को फँसाते और इस प्रकार अपने दुश्मनों से बदला लेते रहे। सदाचारी बुद्धिमान ऐसे लेखकों के नीच भाव पर शोक ही करते, क्योंकि इससे यह सिद्ध होता था कि मुहम्मदियों में से विषयी, लम्पट होने का बीज नाश नहीं हुआ। हिन्दुओं को इस पर शर्म आई और उनके अन्दर उस भयानक भाव ने हलचल डाली जिससे प्रेरित होकर राजपूत बाप अपनी निरपराध पुत्रियों को जन्मते ही गला घोंट दिया करते थे। परिणाम यह हुआ कि 'जवाब तुर्की ब तुर्की' की धुन समाई और हक़ीक़तराय पर काज़ी की लड़की को ही मोहित नहीं कराया गया, प्रत्युत औरंगजेब की लड़की का विवाह संस्कार तक शिवाजी मरहठे से करा दिया गया। मैं निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि यह गाथाएँ सर्वथा ही निर्मूल हैं, किन्तु मेरी सम्मति में उपन्यासों में इनका आना ग्रन्थकर्ताओं के किसी उच्चभाव को प्रकट नहीं करता। अस्तु ! मैंने समझा था कि मुहम्मदी भाइयों ने अंग्रेजों के सत्संग और शिक्षा की उन्नति से कुछ उपदेश लिया होगा और शत्रुओं को 'गालियों से पीप्पू बनाने' का अभ्यास छोड़ दिया होगा, किन्तु मैं शोक से देखता हूँ कि मुंशी महबूब-ए-आलम से निरपेक्ष मुसलमान भी ऐसे उपन्यासों को अपने समाचार पत्र द्वारा छाप रहे हैं जिनमें हिन्दूनियों का पापमय सम्बन्ध मुहम्मदी बदमाशों से दिखलाया गया है। मेरी सम्मति में इससे न हिन्दुओं की कुछ हानि होगी, न मुसलमानों की, केवल ग्रन्थकर्ता के नीच भाव का परिचय मिलेगा और उसी का आत्मा गिरेगा। क्या हिन्दू-मुसलमान इस एक नेक काम के लिए मिलकर ऐसे घृणित ग्रन्थों को 'बाई काट' न करेंगे। यदि हिन्दू मुसलमान सभ्य प्रण कर लें कि जिस ग्रन्थ में ऐसे नीच भाव दर्ज हों उसको न खरीदेंगे तो आवारागर्दों

को भी होश ठिकाने करनी पड़ेगी।

मोहरा आखिर मोहरा ही रहेगा

शतरंज जिन्होंने स्वयं खेला है वा दूसरों को खेलते देखा है, वे जानते हैं कि दोनों ओर के खिलाड़ी यद्यपि मोहरों को इधर-उधर चलाते हुए विरोधी के मोहरों को मारते और शिकस्त देते तथा अपने मोहरों को आगे बढ़ाते हैं तथापि खेल समाप्त होने पर न केवल मोहरे ही अचल होकर लेट जाते हैं प्रत्युत खिलाड़ियों के दिलों में उनकी हस्ती का भी कुछ ख्याल नहीं रहता। यही हालत इस समय ब्रिटिश पार्लियामेन्ट में हिन्दुस्तानियों की है। लिबरल तथा कंजरवेटिव, दोनों दलों के हाथ में हिन्दुस्तानी मोहरों की तरह हैं। जब आपस का ऊपरी युद्ध हो चुका तो दोनों दल बेचारे हिन्दुस्तानियों को भुला देते हैं। लॉर्ड कर्जन ने जो प्रश्न हिन्दुस्तान की वर्तमान अशान्ति के विषय में हाउस ऑफ कामन्स (पार्लियामेन्ट का ऊपरी विभाग) में उठाया था उसके सम्बन्ध की वक्तृताओं का सारांश तार द्वारा आया है। लॉर्ड कर्जन तो सारा दोष लिबरल पार्टी की अयोग्यता के सिर थोपते थे, उन्होंने बंग विच्छेद की असलियत बतलाकर और अपने उस कारनामों को युक्ति तथा प्रमाण द्वारा सिद्ध करके, सर थेम्फ़ाइड फूलर के पदत्याग के प्रार्थना पत्र को स्वीकार करना बड़े लाट साहब की भूल बतलाया और कहा—"अब भी कुछ लोग यह विश्वास कर रहे हैं कि यदि काफी दबाव डाला जावे तो गवर्नमेन्ट (बंग) विच्छेद को उलट देगी।"

इस आक्षेप के उत्तर में लॉर्ड मोर्ले (राजमन्त्री आर्यावर्त) ने कहा—"ज्ञात होता है कि यह निरर्थक विवाद लॉर्ड कर्जन ने मुख्यतः बंग-विच्छेद विषयक आक्षेपों का उत्तर देने के लिए उठाया है।" उन्होंने अपना विचार यह प्रकट किया कि (बंग) विच्छेद की रीति भ्रान्ति-मूलक थी—यदि उस समय श्रोतागण में कोई हिन्दुस्तानी भी होंगे तो उनके कान खड़े हो गए होंगे और वह लॉर्ड मोर्ले के शेष पदों की प्रतीक्षा बड़ी आशा भरी कान्ति से करते होंगे—किन्तु लॉर्ड मोर्ले ने यह कहकर उनकी आशाएँ ख़ाक में मिला दीं कि "किन्तु यह निर्णीत तथ्य है।" फूलर साहब के पद त्याग विषय को लेकर, लॉर्ड कर्जन पर गुप्त कटाक्ष करते हुए लॉर्ड मोर्ले ने कहा कि जब तक उनका भारतीय शासन के साथ सम्बन्ध है उस समय तक यदि कोई इस आधार पर पद त्याग की धमकी देगा कि उसको अपनी इच्छानुसार काम करने दिया जावे तो पदलाभ पत्र तत्काल स्वीकार किया जाएगा।"

यह नोंक-झोंक बहुत अच्छी हुई किन्तु क्या भारत निवासियों के किसी दुख के दूर होने की भी कोई आशा बँधी ? मैं जानता हूँ कि लॉर्ड मोर्ले हिन्दुस्तानियों के साथ न केवल न्याय प्रत्युत उन पर कृपा भी करना चाहते हैं। इसी वक्तृता से उन्होंने अपनी निज की सम्मति का वर्णन करते हुए कहा कि वह उस (बंग

विच्छेद) को कुछ स्वतः प्रमाण नहीं समझते—यहाँ तक तो शुद्ध भाव युक्त मोर्ले बोलता है। किन्तु—हाँ ! यदि यह किन्तु न होता तो संसार में निर्बल, कष्टादि चौथा हिस्सा भी न रहते। हाँ मिस्टर मोर्ले ने कहा—"किन्तु यह इसलिए ऐसा हो गया कि यह एक कसौटी बनाया गया है और वह इस कसौटी पर चढ़ने को तैयार है।"—किसी की जान गई आपकी अदा ठहरी—लॉर्ड मोर्ले, यह विश्वास करते हुए भी कि बंग-विच्छेद की नीति ठीक न थी और कि उसे स्वतः मान्यता भी प्राप्त नहीं, केवल अपने भाइयों और वह ऐसे भाइयों की खातिर, जो उनकी सम्मति में बहुत भूलें कर चुके हैं, बंगालियों को असन्तुष्ट रखकर अपनी भारत प्रजा को पागल बना रहे हैं। किन्तु मैं भूल गया। मोहरे केवल खेलने के लिए होते हैं, न कि इनाम-इकराम देने के लिए।

यह अच्छे चिह्न नहीं

अरविन्द घोष की योग्यता तथा त्यागवृत्ति में किसी को भी सन्देह नहीं। अरविन्द के विचार चाहे बुत दिमागों की दृष्टि में बहके हुए हों, किन्तु इसमें किसको वक्तव्य हो सकता है कि आत्मसमर्पण की शक्ति अरविन्द में उत्तम कक्ष की है। अरविन्द यदि बम से सहमत होता तो कभी भी सच बोलने से न चूकता यह उसके स्वदेशी भाइयों का विश्वास है। अरविन्द की भगिनी ने उसके लिए वकील करने के निमित्त धन की अपील की। कलकत्ता के 'एम्पायर' नामी दैनिक में यह पढ़कर मुझे खेद हुआ कि जिन लोगों ने चन्दा भेजा है उन्होंने अपने नाम प्रकट करने की आज्ञा नहीं दी। 'एम्पायर' की सम्मति है कि इन लोगों ने अंग्रेजों के डर के मारे नाम नहीं दिए। उनको डर है कि मालूम होने पर अंग्रेज उनसे शत्रुता करेंगे। यह चिह्न अच्छे नहीं। जब अंग्रेजों के नाम पर विश्वास उठ गया तो क्या बमवालों को चिढ़ न मचेगी और फिर क्या हम लोग धार्मिक तथा सामाजिक संशोधन कर सकेंगे जिसके बिना भारतवर्ष के पोलिटिकल सुधार का अवसर आना ही कठिन होगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 8 जुलाई, 1908]

तिलक महाराज राजनीतिकों के भी तिलक ही निकले

प्राचीन आर्य राजनीति के साथ भी धर्म का गहरा सम्बन्ध समझते थे। उनके मत में वे पुरुष ही राजशासन विषय में सम्मति देने योग्य समझे जाते थे जिन्होंने यम-नियम पालनपूर्वक ब्रह्मचर्याश्रम का सेवन करने के पश्चात् गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया हो। आजकल प्राचीन संस्था प्रचलित है नहीं, इसलिए उसकी कोई परवाह नहीं करता। इस समय जो पोलिटिकल काम हो रहा है उसका आर्यावर्त की प्राचीन सभ्यता में कोई भी सम्बन्ध नहीं है। तिलक महाराज ने यदि कुछ ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के विरुद्ध लिखा है तो उसका आर्य आदर्शों के साथ कोई सम्बन्ध नहीं। और यदि अब वह एक इंग्लिश ज्यूरी से न्याय तथा स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए अपील कर रहे हैं तो उससे भी प्राचीन आर्य सभ्यता का कुछ वास्ता नहीं। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के कर्मचारी भारत निवासियों को बम-गोले का नाम लेते दूषित ठहराते हैं, किन्तु लन्दन नगर में जो ब्रिटिश जाति की स्त्रियाँ अपने अधिकार माँग रही हैं वह वहाँ के राज महामन्त्री पर बम का गोला फेंकने की धमकी दे रही हैं। यह धमकी केवल समाचार पत्रों द्वारा नहीं दी जाती प्रत्युत न्यायाधीशों के सामने इसका पुनर्वचन किया जाता है। एक औरत इस अपराध में पकड़ी गई कि राज महामन्त्री मिस्टर एस्क्विथ (Asquith) के मकान पर उसने पत्थर चलाया था। न्यायाधीश के पूछने पर उसने उत्तर दिया—"अगली बार बम का गोला चलाऊँगी।" दंड यह दिया गया कि 2 मास तक कारागार में रहे। यह स्पष्ट है कि बम का गोला चलाना भारत निवासियों को यूरोपियन नीतिमानों ने ही सिखाया है। अहिंसा को परम धर्म समझने वाले आर्यों के लिए बैठे-बैठाए आदमी की जान लेना तथा रण में सामने आए शत्रु को पीठ दिखाना पाप समझा जाता था। तभी गुसाईं तुलसीदास ने कहा है।

क्षत्रिय तनुधर समर सकाना।
कुल कलंक तेहि पामर जाना।।

आज स्वराज्य के याचक एक ओर तो अंग्रेजों से सम्बन्ध रखना पाप बतलाते हैं और उनके विरोध को राजविद्रोह नहीं समझते और दूसरी ओर जब राजविद्रोह में पकड़े जाएँ तो अपने आपको ब्रिटिश प्रजा बतलाकर उसके न्याय नियम की

सहायता की याचना करते हैं। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट को याद रखना चाहिए कि जब तक भारत निवासियों पर यूरोप की सभ्यता का दबाव डालने का प्रयत्न करते रहेंगे तब तक वह निश्चिन्त होकर नहीं बैठ सकेंगे। एक शताब्दी के राजशासन के पश्चात् भी यदि एक साधारण राजनीतिक देशभक्त के पकड़े जाने पर सेना तथा पुलिस को असाधारण कष्ट देना पड़ता है तो क्या गवर्नमेन्ट को सोचना नहीं चाहिए कि उनके प्रबन्ध की कौन सी कल ढीली हो रही है। क्या ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के प्रबन्ध पर यह धब्बा नहीं कि एक व्यक्ति-विशेष का मुक़द्दमा जब तक समाप्त न हो ले तब तक बम्बई में सामाजिक तथा धार्मिक संशोधन के भी सारे काम बन्द कर दिए जाएँ। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के कर्मचारी एक ओर हमारे स्वदेशी गरमागरम नीतिमान दूसरी ओर इस समय छल-कपट तथा कुटिल नीतियों से काम ले रहे हैं। यदि एक कुटिल नीति दूसरी को काट डालेगी तब भी परिणाम शून्य ही निकलेगा। ऐसी अवस्था में आर्यसमाज का बड़ा भारी कर्तव्य था जिसे (शोक के साथ देखा जाता है) उन्होंने सर्वथा भुला रखा है। जिस वैदिक धर्म के निर्मल स्रोत से ज्ञान की गंगा सबसे पहले निकली थी उसकी स्वच्छ शक्ति से शक्तिमान होकर इस समय राजा तथा प्रजा, दोनों को उनका धर्म समझाने की आवश्यकता है। मैं जानता हूँ कि नीतिमान मेरे इस लेख पर हँसेंगे और पागल कहकर टालेंगे, किन्तु मुझे विश्वास है कि यदि अग्नि और खड्ग की धार पर चलने वाले पागल आर्य दस भी निकल आवें तो राजा और प्रजा दोनों को होश में ला सकते हैं। किन्तु हमारी वही दशा है जैसे–

बैनतेय बलि जिमि चह कागू। जिमि सस चहइ नाग-अरि-भागू।।
जिमि चह कुसल अकारन कोही। सब सम्पदा चहइ शिव द्रोही।।
लोभी लोलुप कीरति चहई। अकलंकताकि कामी लहई।।

भगवन् ! आर्यसमाजियों की आँखें न जाने कब खुलेंगी ?

क्यों विदेश में अपमान कराएँ

ट्रांसवाल ने जो बर्ताव भारत निवासियों के साथ किया वह प्रसिद्ध ही है। 'केनेडा' में जो हुआ वह किससे छिपा है। अब 'नेटाल' में यह प्रयत्न हो रहा है कि भारत निवासी वहाँ से सर्वथा निकाल दिए जाएँ। यह सत्य है कि इन अंग्रेजी इलाकों में से एशिया की सर्वजातियों को ही निकाला जा रहा है, किन्तु चीनी, जापानी आदि स्वतन्त्र मनुष्य समाज अपनी सुध आप ले सकते हैं। भारत निवासी अपने देश में भी पराए से ही हैं फिर अपने देश से बाहर तो उनको पूछ ही कौन सकता है ? हमारी अवस्था ठीक उस कुत्ते की-सी है 'जो न घर का है और न घाट का'। जब यह हाल है तो हमारी सम्मति में भारत निवासियों को बाहर जाना सर्वथा

बन्द कर देना चाहिए। गत वर्ष मैंने एक बार यह विचार प्रकट किया था कि यदि अपने धर्म पर चलना भारतवर्ष में वैदिक-धर्मियों के लिए कठिन हो जावे तो उनको किसी अन्य राज्यशासन का आश्रय लेना चाहिए; किन्तु आज मेरी सम्मति सर्वथा बदल गई है। मेरी सम्मति में दुख, सुख सब इसी स्थान में सहन करने चाहिए। इसी जन्मभूमि के लिए कष्ट सहना, इसी की सेवा में सारा पुरुषार्थ लगाना और इसी पर सर्वस्व न्योछावर करना यदि एक-एक भारत निवासी अपना धर्म समझ ले तो परमात्मा की भी उन पर असीम कृपा हो जाए। किन्तु यहाँ यही तो कमी है। जो लोग बाहर टके के लिए जाते हैं उनका स्वदेश में भी टका धर्म ही रहता है, फिर उनसे किसी उच्च विचार की आशा रखना व्यर्थ है। धर्म के बिना प्राकृतिक पदार्थों की चमक से बचने का और कोई साधन नहीं है। किन्तु—हाँ ! सच्चे धर्म के प्रचारक कहाँ है ! सचाई की वेदी पर विश्वास से सिर रखने वाले कहाँ दिखाई देते हैं ! क्या आर्यावर्त की पवित्र भूमि धर्मवीरों से शून्य ही हो गई है ! सहस्रों वर्ष व्यतीत हुए राजा जनक के रचे मंडप में जब कोई राजा भी शम्भु-धनुष को न हिला सका तो उसने भुजा उठाकर कहा था :

बीर बिहीन माही मैं जानी।

इस कठोर वचन को वीर यतिराज लक्ष्मण न सहन कर सके। उनकी उस समय की वक्तृता वीर रस का स्वरूप ही है, जिससे प्रेरित हो श्री रामचन्द्र जी ने धनुष को दो टूक करके इस पवित्र भूमि का कलंक काट दिया था। क्या आज किसी ओर से लक्ष्मण का सिंहनाद न सुनाई देगा ? किन्तु यदि कोई बनावटी लक्ष्मण किसी ओर से बोल भी उठे तो हर्ष और शोक से रहित सहज स्वभाव से कौन सा राम आर्य कुल को कलंक से बचाने के लिए उठ खड़ा होगा !

[सद्धर्म प्रचारक, 22 जुलाई, 1908]

भारतवर्ष के लिए

राजा तथा प्रजा—दोनों के लिए प्रबल गति चक्र सामने है। तिलक महाराज को (बुरा था या भला था, सीधा वा टेढ़ा जो कुछ भी था; किन्तु सहस्रों पढ़ों और लक्षों अनपढ़ों के लिए शूरों में तिलक ही था) 6 वर्ष के लिए काले पानी (न जाने किस काले पानी) भेजा गया। मैं यह नहीं कह सकता कि तिलक ने जो राजनीतिक उद्देश्य अपने वर्णन किए हैं, वह पहले थे वा वही उन दोनों लेखों के लिखते समय थे जिनके कारण वह आज किसी गुमनाम गढ़ में घिरे पड़े हैं। मैं यह भी नहीं कहता कि उनकी सारी वक्तृता सरल हृदय से ही निकली हुई थी; किन्तु पारसी जज दावर महाशय के वक्तृता की जो रिपोर्ट पहुँची है उससे ज्ञात होता है कि संक्षिप्त शब्दों में उन्होंने ज्यूरी (Jury) से यह कहा कि तिलक को छोड़ना नहीं। तिलक ने कहा था कि उसने उत्तर जोश में दिया, जज साहब की सम्मति में बम के गोला चलने से बारह दिनों बाद लिखने जाने से वह लेख अकस्मात लिखा नहीं समझा जा सकता। जज ने यह भुला दिया कि तिलक ने यह लेख उस समय लिखा जब पायोनियर आदि के लेखों से उसका दिल जल रहा था। मैं नहीं कहता कि तिलक का अपराध न था, किन्तु यदि उसको इस मुक़दमे ने ही Extremist (गरम) से Moderate (नरम) बना दिया था तो गवर्नमेन्ट को और चाहिए ही क्या था।

यदि इस मुक़दमे में भी ज्यूरी की ओर से दया के लिए प्रार्थना होती और यदि छह साल के काले पानी के स्थान में यहाँ भी एक या डेढ़ वर्ष की सजा मिलती तो आज तिलक के लिए वह जोश न फैलता जो फैल चुका और जिसके अधिकतः फैलने की सम्भावना है। किस देशभक्त का मन उस अशान्ति को देखकर दुखी नहीं होता जो चारों ओर फैल रही है और मैं तो धर्म भक्ति पर देशभक्ति को भी न्योछावर करने वालों में से हूँ। किन्तु क्या कुछ शान्तिप्रिय पुरुषों की मंगल कामना का परिणाम तत्काल निकल सकता है। जज दावर के अधीन था कि वह इस समय अशान्ति ने फैलने देते। उनको कोई धमकी धमका नहीं सकती थी। क्या यह भी आवश्यक था कि अपील का अवसर भी न देते हुए रात के दस बजे अन्तिम आज्ञा सुनाकर तिलक को चोरी के माल की तरह गायब कर दिया जावे। माना कि कुछ काल के लिए वह कुछ अंग्रेजों की नजरों में काँटों की तरह

खटकने लगते, किन्तु जास्टिस मित्र के समान अन्त को उनका मान ही होता। किन्तु अब लिखने से क्या तात्पर्य सिद्ध होगा। अशान्त पुरुष अशान्ति का दृश्य दिखलाएँगे ही और गवर्नमेन्ट अपना काम करेगी ही। होगा वही जो कर्मों का फल है, किन्तु मेरी सम्मति में ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के उन कर्मचारियों को अवश्य शोक होगा जिन्होंने अशान्ति को रोकने की शक्ति हाथ में रखते हुए उससे काम न लिया।

[सद्धर्म प्रचारक, 29 जुलाई, 1908]

स्वतन्त्रता की प्रबल लहर

स्वतन्त्रता की प्रबल लहर इस समय वेग से उठ रही है। सारे वायुमंडल के होते भी समुद्र शान्त रहता है इसलिए कि वायु फैला हुआ है, किन्तु जहाँ कहीं तेज थोड़ी सी वायु को भी हिला देती है वहाँ से ही वायु के थपेड़े लहर को ऊँचा ले जाते हैं और वह पहली गति अनन्त गति को उत्पन्न करने वाली होती है। इसी प्रकार मनुष्यों के अन्दर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का प्रेम होते हुए भी जब कभी किसी एक हृदय को भी ज्ञान रूपी सूर्य की प्रेरणा होती है तो मनुष्य समाज में एक विशेष गति उत्पन्न होती है जिससे प्रेरित होकर सारे संसार में स्वतन्त्रता की लहर चक्कर काट जाती है। एक अकेले जापानी मिकाडो ने जहाँ जापान को स्वतन्त्र कर दिया वहाँ एशिया के अन्य मनुष्य समाज के हृदयों में भी स्वतन्त्रता के लिए प्रबल इच्छा रूपी अग्नि को उत्तेजित कर दिया। फ़ारस देश को स्वतन्त्रता मिल चुकी और यद्यपि नए शाह ने फिर कुछ अत्याचार किया और पार्लियामेन्ट को समाप्त कर दिया फिर भी स्वतन्त्रता का वृक्ष वहाँ ऐसा दृढ़ हो गया है कि उसको जड़ से काटना कठिन है। सुल्तान रूम (Turkey) ने भी स्वयं पार्लियामेन्ट बनाने का विज्ञापन दे दिया। अब फ़ारस की प्रजा भी धमकी देती है कि यदि शाह ने दुष्ट 'क़ज़्ज़ाक़ों' (cossacks) का भूत उनके सामने रखा तो वे सुल्तान रूम की प्रजा बन जावेंगे। चीन में भी जागृत अवस्था का आविर्भाव हो रहा है, किन्तु जिस देश को गिरने में शताब्दियाँ लगी हों उसको उठने में भी उससे बढ़कर नहीं तो उतना ही समय अवश्य लगता है। किन्तु इन सबके जागते हुए भी भारत गहरी नींद में मस्त पड़ा हुआ था। कुछ हाथ-पैर मारने लगा है, किन्तु आँखें ठीक प्रकार खुली नहीं और नींद का आलस्य दूर हुआ नहीं। यही कारण है कि अपने चरित्र सुधारने तथा सदाचार की दृढ़ बुनियाद स्थिर करने के स्थान में कुछ भारत निवासी पागल बम के गोले बनाने और मनुष्यों के वध को ही गीता तथा उपनिषदों की आज्ञा का पालन समझते हैं। खुदीराम बोस को फाँसी मिल गई। उसका अन्त्येष्ठि संस्कार भी हो चुका। कुछ भूले से उसे भी देवता बनाना चाहते हैं और पुरानी राजपूत रानियों से उसे उपमा देकर उसकी मूर्ति मन्दिरों में स्थापन कराना चाहते हैं, किन्तु वे भूल जाते हैं कि जिसके मुँह से ऐसे प्रगल्भ शब्द कहाए जाते हैं उसने जान

बचाने के लिए कितना झूठ लिखवाया वा बोला था। खुदीराम बोस फाँसी चढ़ गया और वरेन्द्रादि बर्मा से शायद जन्म भर के लिए काला पानी भेजे जावें, किन्तु क्या उनकी पिशाच लीला के ऊपर खोल चढ़ाने से गीता तथा उपनिषदों पर कलंक लग सकेगा ? अंग्रेजों से सीखी हुई शस्त्र विद्या लिये उन्हीं के ग्रन्थों में से साक्षी ढूँढ़नी चाहिए; अपने सत्य शास्त्रों को, जो इस समय भी करोड़ों को शान्ति दे रहे हैं, इस प्रकार बदनाम करके करोड़ों को अपाहिज न बनाना चाहिए।

सूरत में भेड़िया धसान

तिलक महाराज के पहले विचार चाहे कुछ ही थे और उनके पहले बर्ताव से भी चाहे नर्म दलवाले असन्तुष्ट थे, किन्तु इस समय उनकी पुरानी सब भूलें धोई गईं और यह दूसरी बात है कि यदि कोई नर्म दलवाला लीडर इस प्रकार फँसता तो तिलक महाराज उसके साथ कैसा बर्ताव करते। इस समय तिलक महाराज के साथ बड़ी हमदर्दी की गई, किन्तु क्या जो दंगा बम्बई में हुआ वह भी आवश्यक था। मेरी सम्मति में प्रजा के इस प्रकार उठने का एक ही समय कभी आया करता है—जब तक वह समय न आवे तब तक जो अग्रगणी टट्टी की आड़ में शिकार खेलते हुए सर्वसाधारण को बन्दूक का शिकार बनवाते हैं वे मनुष्य समाज के देनदार बड़े पापी समझे जाने चाहिए। दूसरा भाग भी विचित्र है। लाला हरदयाल माथुर लाहौर में बैठें कुछ लेख अख़बारों में बिखेर रहे थे। जो अख़बार अपनी प्रकाशन संख्या बढ़ाना चाहता था वही उनके लेख छापता था, क्योंकि उनकी विचित्र युक्तियाँ सर्वसाधारण न सोचने वालों के दिलों को अपनी ओर खींच लेती हैं। किन्तु जब सरकारी डंडे ने धमकाया तो सब रोटी कमाने वाले घबराकर लाला हरदयाल के साथ विचित्र बर्ताव करने लग गए।

अख़बार 'हिन्दुस्तान' ने अपनी समझ में राजा जनक का अनुकरण किया। उस राजर्षि के विषय में प्रसिद्ध है कि आधे अंग से भोग विलास करते हुए दूसरे अंग को आग में रखकर भी उसे हर्ष शोक कुछ नहीं होता था। इसी प्रकार हिन्दुस्तान अख़बार में भी एक ओर अंग्रेजों की सब बातों से घृणा सिखलाने वाले लेख और दूसरी ओर गिरे हुए लल्लो-चप्पो वाले लेख प्रकट करते हुए सम्पादक को तनिक भी हर्ष-शोक नहीं होता। 'पंजाबी' (इंग्लिश भाषा का) अख़बार भी अपनी ग्राहक संख्या बढ़ाने के लिए लाला हरदयाल के लेख देता रहा, किन्तु जब देखा युवक का जोश कहीं फँसवा न दे तो अपने छुटकारे के लिए लाला हरदयाल को पागल तक लिख मारा। अब सुना है कि 'पंजाबी' के चलाने वालों ने लाला हरदयाल को यूरोप की सैर के लिए भेज दिया। अपनी गरदन बचाने के लिए एक सच्चे हृदय से काम करने वाले विद्वान् को देश निकाला दिलवाना न जाने मुनष्यपन के किस पद का कार्य है। लार्ड मिंटो तो न मालूम केवल धमकी ही देते थे यहाँ सचमुच

का देश निकाला हो गया। लाला हरदयाल जी के चले जाने का समाचार यदि ठीक है तो उनकी तुलना भगौड़े श्यामजी कृष्ण के साथ ही बहुत से लोग किया करेंगे। यदि मुझे इस समय लाला हरदयाल मिलते तो मैं उन्हें निश्चय करा देता कि जो स्वार्थी अपनी जान बचाने के लिए उन्हें भागने की सम्मति देते हैं वे उनसे अपने देश का अहित करा रहे हैं।

झूठी लज्जा ने नाश कर दिया

मैं सदैव लिखता रहा हूँ कि जो दुराचारी साधु वेष में इंग्लैंड-अमरीका जाकर हमें बदनाम कराते हैं उनका पोल तत्काल ही खोल देना चाहिए, किन्तु राजनीतिक भारत के नक्कारखाने में तूती की आवाज़ कौन सुनता है। अगम्य गुरु परमहंस मुझे भी एक बार मिला था। वह लट्ठबाज़ कुवाच्य बोलने वाला लम्पट आदमी था। उसके श्वास बन्द करने वाले इन्द्रजाल की प्रशंसा करने वाले राजनीतिक अब बतलावें कि दुराचार के कारण जो दो महीने की सज़ा उसे लन्दन में हुई उसका प्रभाव संसार पर क्या पड़ेगा। अब समाचार पत्रों में शंकरानन्द की प्रशंसा छप रही है। यह शंकरदास जालन्धरी है। आर्यसमाज के सारे फ़िसाद की बुनियाद यह था। गो मांस तक की आज्ञा वेदों से यह मानता है। इसके आचरणों का हाल बहुत से आर्य सामाजिक तथा अन्य पुरुष जानते हैं। इस समय सब इसकी प्रशंसा को 'शीर-ए-मादर' की तरह पी जाएँगे। किन्तु जब इसकी कोई धूर्तता प्रकट हुई तो कोई भी यह न सोचेगा कि अपने देश को बदनाम करने के कारण भी वे ही हैं। मेरी सम्मति में सर्वसम्मति से ऐसे दुराचारियों को बाइकाट करना प्रत्येक देशभक्त का कर्तव्य है।

आर्यसमाज और राजनीति

ज्ञात होता है कि अब तक आर्यसमाज पर राज कर्मचारियों की क्रूर दृष्टि है। जिस से बहुत स्थानों के आर्यसमाजी घबरा जाते हैं। सोचने पर मैंने तो यह परिणाम निकाला है कि सरकारी नौकर प्रायः आर्यसमाज की निर्बलता के कारण सिद्ध होते हैं। एक मिनट जान बचाने के लिए अपने आफिसरों के सामने कुछ-का-कुछ कह आते हैं। जो सरकारी नौकर वैदिक धर्म के गौरव को नहीं समझते उनको अपनी निर्बलता मानकर आर्यसमाज के प्रबन्ध से जुदा हो जाना चाहिए। जहाँ वेद और 'भारत दंड संग्रह' का परस्पर विरोध हो वहाँ श्रुति को धर्म का मूल मानना तथा जहाँ परमात्मा की आज्ञा का सांसारिक राजा की आज्ञा से खट-पट हो वहाँ परमात्मा की शरण लेना यदि अभीष्ट न हो तो फिर आर्यसमाज में रहकर भी क्या लाभ होगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 19 अगस्त, 1908]

आर्यसमाज के पुराने भाव

यद्यपि प्रेयमार्ग पहले पहल प्यारा लगता है और यद्यपि असत्य की झूठी चमक दूर से मन को मोहित कर लेती है तथापि प्रेयमार्ग में बिछे हुए काँटों से जब पैर छिद जाते हैं और असत्य की झूठी चमक दूर हो जाती है तब निराश पथिक, श्रेयमार्ग पर ही चलने से शान्ति प्राप्त कर सकता है और सत्य का सच्चा प्रकाश ही उसकी आत्मा को तृप्त कर सकता है।

उस समय को गुजरे अभी देर नहीं हुई जब यूरोप नास्किता के लहर में बहा जा रहा था। ईश्वर पर, धर्म पर तथा सदाचार पर अविश्वास रखना तथा उनकी हँसी उड़ाना स्वतन्त्रता का एक अंग समझा जाता था। प्राचीन ऋषियों के बताए हुए यम-नियमों को जंगलीपन बताया जाता था और योग को धोखे की टट्टी तथा भ्रममूलक विश्वासों पर अवस्थित समझा जाता था। किन्तु अब समय ने पलटा खाया है। नास्तिकता के हृदयदाही ज्वर से अब वहाँ की आत्माएँ उत्तप्त हो गई हैं। यथेच्छाचार तथा उच्छृंखलता (Licentiosness) से अब वहाँ के लोग घबरा उठे हैं। सदाचार तथा यम-नियमों के महत्त्व को अब कई यूरोप की उच्च आत्माओं ने समझ लिया हैं। जेम्स एलन के विषय में पहले भी एक बार इसी पत्र में लिखा जा चुका है कि वे कितना वैदिक सिद्धान्तों के समीप आ रहे हैं। उनकी प्रत्येक पुस्तक ऋषियों के भावों की विजय को सिद्ध कर रही है। उनका प्रत्येक उपदेश यम-नियमों पर अवलम्बित प्रतीत होता है। एलन ने अपनी हर एक पुस्तक में अन्तर्ध्यान का महत्त्व बतलाया है। उन्होंने अब एक समाज स्थापित किया है जिसे वे School of virtue कहते हैं। हम उसे 'सदाचार समाज' कह सकते हैं। उस समाज के अधिवेशन भिन्न-भिन्न सभासदों के घर पर होते हैं। उसमें जेम्स एलन की बनाई पुस्तकों में से कोई अंध्याय पढ़ा जाता है और फिर सब लोग चुपचाप उस पर विचार करते हैं और अपने कर्मों पर एक दृष्टि डालते हैं। भारतवर्ष में दोनों काल सन्ध्या करने की तथा प्रातः और सायं अपने कृत्यों पर विचार करने की प्रणाली प्राचीन काल से चली आ रही है, किन्तु यूरोप के लिए यह भाव सर्वथा ही नया है। जिस समय यूरोप हमारे प्राचीन आदर्शों की ओर आ रहा है उस समय अपने देश को नास्तिकता तथा प्रकृतिपूजा की लहर में बहते देखकर किसे दुख

न होता होगा। ऐसे समय में आर्यसमाज का काम है कि देश को इस भयानक गढ़े से बचाने के लिए तैयार हो जावे। परन्तु उसकी तो अपनी ही शोचनीय दशा हो रही है। आर्य लोगों में से अब वह पुराना धर्म और श्रद्धा का भाव उड़ता जा रहा है। प्रेम की लहर के स्थान में झगड़ों का जंजाल फैल रहा है। लोग धार्मिक विषय पर व्याख्यान सुनना नहीं चाहते, उपनिषदों की कथा भी सुनना नहीं चाहते, किन्तु झगड़े के व्याख्यानों को सुनने के लिए लोगों के यूथ-के-यूथ चले आते हैं। आर्यसमाज के बड़े-बड़े लोग भी सन्ध्या को व्यक्तिगत कार्य बताते हुए सार्वजनिक कामों (झगड़े के काम) पर न्योछावर करने की सम्मति देते हैं। रात्रि को बारी-बारी से आर्यों के घर पर कथा करने की प्रणाली अब उड़ गई है। समाजों में हवन का काम एक उपदेशक पर छोड़ दिया जाता है। इस समय आवश्यकता है कि इन दोषों को समाज से निकाला जावे और पुरानी प्रणालियाँ फिर से प्रचलित की जावें।

राजनैतिक नेताओं में भाजड़

गवर्नमेन्ट अपनी धर-पकड़ का दौरा प्रायः पूर्व से दक्षिण और फिर दक्षिण से उत्तर की ओर को लाया करती है। बंगाल में पत्र सम्पादकों तथा जोशीले वक्ताओं को पकड़कर गवर्नमेन्ट अपना मुख बम्बई प्रान्त और मद्रास प्रान्त की ओर मोड़ा करती है और फिर पंजाब की बारी आती है। अब के बम के सम्बन्ध में गवर्नमेन्ट ने जो धर-पकड़ शुरू की हैं उसमें बंगाल तथा बम्बई प्रान्त की बारी हो चुकी है। मध्यप्रदेश में 'हिन्दी केसरी' तथा 'देश सेवक' के सम्पादक पकड़े गए हैं। मद्रास प्रान्त में 'हिन्दू' पत्र के भूतपूर्व सम्पादक सुब्रह्मण्यम ऐय्यर भी अपने मित्रों सहित पकड़े जाकर अदालत की सैर कर रहे हैं। इधर अब तक चुपचाप बैठी हुई रियासतों की भी जागृति हुई है। कोल्हापुर स्टेट की ओर से मराठी के 'विश्ववृत्त' पत्र के सम्पादक बीजापुरकर एम.ए. और जोशी एम.ए. और पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जिनका 'वैदिक प्रार्थना की तेजस्विता' इस शीर्षक का लेख उस पत्र में छपा था, इन तीनों पर वारंट जारी हुआ है। अब इनके पीछे पंजाब की ही बारी थी। परन्तु बड़े सौभाग्य (?) की बात है कि पंजाब के सभी राजनीतिक लीडर ठीक समय पर विलायत की हवा खाने चले जा रहे हैं। म. हरदयाल जी तो सबसे पहले ही विलायत में Politics अनुशीलन करने चले गए थे, उनके पीछे पं. रामभजदत्त चौधरी ने भी सप्तम एडवर्ड के साथ मुलाकात करने के लिए विलायत प्रयाण किया है अभी शायद चौधरी जी बम्बई के बन्दर में ही होंगे कि एक और राजनीतिक नेता ने भी उनका अनुगमन करने की सूचना दे दी। हमने उस दिन 'पंजाबी' में पढ़ा कि अब लाला लाजपतराय भी हिन्दुस्तान के सब अन्दरूनी कर्तव्यों को पूरा कर के इंग्लैंड के निवासियों के साथ भारत की दशा के विषय में बातचीत करने को

चल दिए हैं। मराठे लोग प्रायः पंजाबी लोगों को अक्खड़ तथा राजनीति से अनभिज्ञ कहा करते हैं, उन्हें अब देखना चाहिए कि पंजाब कैसे गवर्नमेन्ट को अँगूठा दिखा गया है। आगे पंजाबी केवल वीर ही कहाते थे परन्तु अब पंजाबी 'चतुरचूड़ामणि' भी कहाया करेंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 2 सितम्बर, 1908]

आर्यसमाज पर संकट

इस समय आर्यसमाज पर अन्तरीय और बाह्य—नए संकटों के समुद्र उमड़े चले आ रहे हैं। अन्दर के स्वार्थी और नीच शत्रु आर्यसमाज की सांघातिक शक्ति का नाश करना चाहते हैं। नीच लोग अपने अधर्मों और निर्बलताओं पर पश्चाताप नहीं करते; वे उन कारणों का विचार नहीं करते जिन्होंने उनको इस दशा में पहुँचा दिया है, किन्तु लोगों की आँखों में धूल डालकर वे सचाई को झूठ से जीतना चाहते हैं, प्रकाश को अँधेरे से छिपाना चाहते हैं। वे अपने किए हुए कर्मों पर लज्जित होने के स्थान पर सारे प्रबन्ध को तोड़कर नई प्रतिनिधि सभा बनाने की धमकी दे रहे हैं। वे समझते हैं कि यदि एक नई प्रतिनिधि सभा खड़ी करके और शोर मचाकर कुछ समय के लिए कुछ मूर्ख लोगों को धोखे में डाल देंगे (जिसे भी वर्तमान अवस्था को देखकर हम असम्भव समझते हैं) तो अपने पापों के घोर फल से हम बच जावेंगे। वे संसार को धोखा देकर, सर्वव्यापक परमात्मा को भी धोखा देना चाहते हैं।

इसी प्रकार, आर्यसमाज के बाहरी शत्रु भी आर्यसमाज को दबाने का प्रयत्न कर रहे हैं। आर्यों को आर्यसमाज में सम्मिलित होने से रोका जाता है और उन्हें समझाया जाता है कि आर्यसमाज में सम्मिलित होना राजविद्रोह है। प्रकाश और अप्रकाश रूप से समाज पर नीच से नीच आक्रमण किए जाते हैं। ऐसे संकट के समय हम आर्यों से यह ही कह सकते हैं कि आर्यत्व को धारण करो। संसार को दिखला दो कि आर्य सचाई के मित्र और झूठ के शत्रु हैं। घबराना और निराश होना परमात्मा के न्याय में सन्देह करना है। परमात्मा के न्यायालय में जाति, रंग या विशेष व्यक्ति का लिहाज नहीं किया जाता। उसके न्यायालय में अधर्म का पराजय और धर्म का विजय होता है। "परमात्मा के इस संसार में मनुष्य और देश अन्याय से नष्ट होते हुए प्रतीत होते हैं; झूठी बात के न्याय में देरी होती हुई प्रतीत होती है। परन्तु इससे क्या तू समझता है कि इस संसार में न्याय नहीं है ? मूर्ख मनुष्य अपने हृदय में ऐसा ही समझता है। परन्तु बुद्धिमान लोगों की यह ही बुद्धिमत्ता है कि वे इस मत पर कभी भी विश्वास नहीं रखते। मैं तुझे फिर बतलाता हूँ कि इस संसार में न्याय को छोड़कर और कुछ नहीं है। सबसे

प्रबल बात जो मैं संसार में देखता हूँ वह यह है : संसार में सब जगह न्याय है, संसार में सत्य की ही विजय होती है।" परन्तु इस शत्रु के पास असीम सांसारिक शक्ति है इसके पास बहुत बड़ी सेना है; वह जब चाहे तभी हमें कुचल सकता है। छिः ! क्या कभी सांसारिक शक्ति ने और असीम सेना से सत्य पर, धर्म पर और परमात्मा के न्याय पर विजय पाई है ? मत घबराओ ! यह झूठ की चमक बहुत थोड़ी देर की है। दिव्य परमात्मा ने ये संकट इसलिए भेजे हैं क्योंकि वह खरे सोने से मल को पृथक् करना चाहता है। सत्य हमारा आधार है, धर्म हमारा शस्त्र है, परमात्मा पर हमें विश्वास है, फिर झूठ कितनी देर तक ठहर सकता है ? धर्म और अधर्म के युद्ध में धर्म का विजय होगा; प्रकाश और अँधेरे में प्रकाश ही जीतेगा।

देशसेवा धर्म

आजकल, जब कि राजनीति का बड़ा जोर हो रहा है और गिरे हुए आत्मा अपनी कमजोरी को छुपाने के लिए राजनीति का धर्म से सम्बन्ध तोड़ने का यत्न कर रहे हैं, तब सब बातों का राजनीति में लीन हो जाना कोई असम्भव बात नहीं। देशसेवा एक मनुष्य का विशुद्ध धर्म है। जैसे मनुष्य का पितृसेवा करना धर्म है वैसी देशसेवा करना भी। यदि देशसेवक भाटों की 'सुजलां सुफलां' आदि युक्तियों को कोई मनुष्य वास्तविक देशसेवा के पक्ष में युक्तिएँ न भी माने तो भी इसे इस न्याय से देशसेवा प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक माननी पड़ेगी कि संसार की व्यवस्था मनुष्यों की वर्तमान अवस्था में बिना प्रत्येक देशवासी के देशसेवक होने के चल नहीं सकती। मनुष्यों में स्वार्थ बहुत है इसलिए प्रायः प्रत्येक देश दूसरे देशों पर धावा करते रहते हैं इन सब अत्याचारों तथा मनुष्य जाति के उपकारार्थ यह आवश्यक है कि देशसेवा को भी धर्म स्वीकार किया जावे। परन्तु आजकल देशसेवा तथा झूठी राजनीति को लोगों ने यहाँ तक परस्पर एक कर दिया है कि इंग्लैंड के प्रसिद्ध लेखक डाक्टर जौनसन ने देशसेवा को निराश्रय लुटेरे लोगों का आश्रय बताकर एक अत्याज्य धर्म की निन्दा की है। हम डॉक्टर जौनसन को कदापि इस कथन के लिए दोष नहीं दे सकते, क्योंकि आजकल वस्तुतः देशसेवा, झूठी राजनीति से मिलकर संसार में महा अशान्ति फैला रही है। वस्तुतः देशसेवा प्रत्येक मनुष्य का अंग है। जब हम यह कहते हैं कि ऋषियों को देश विशेष का पक्षपात नहीं होता तब उसका यह अभिप्राय होता है—कि वे किसी एक देश के बाह्य लाभार्थ द्वितीय देश की हानि करने की कामना नहीं करते, परन्तु यह ठीक नहीं कि वे ईश्वरीय नियम को भूलकर स्वदेश सेवा ही छोड़ देते हैं। देखिए, वसिष्ठ ऋषि थे, परन्तु वे दशरथ के मुख्यमन्त्री थे। इसी प्रकार अनेक ऋषिगण देश के प्रबन्ध का कार्य करते रहे हैं। इसलिए धर्म-दृष्ट्या देशसेवा आर्यों का परमकर्तव्य है कुटिल

राजनीतिक दृष्ट्या कदापि नहीं। जो मनुष्य देशसेवा से विमुख है, वह मनुष्य उतना ही अपराधी है जितना कि वह मनुष्य जोकि अपने माता-पिता की सेवा नहीं करता।

देशसेवा : धर्म और राजनीति के वेश में

हम ऊपर के नोट में बता आए हैं कि देशसेवा धर्म है, छल या कपट मिश्रित राजनींति का अंग वह नहीं है। परन्तु संसार में हम दोनों प्रकार की देशसेवा के दृष्टान्त पाते हैं। भेद इतना है कि जिन महापुरुषों ने देशसेवा की व्रत इसलिए धारण किया है कि वह धर्म है वे मनुष्य कदापि देशसेवा के बहाने छल-कपट नहीं कर सकते। देशसेवा में बड़े दुख होते हैं, जो धर्मार्थ थे उन्हें सहन कर सकता है, वह उसी कष्ट से बचने के लिए सत्य भाषणरूपी धर्म को कैसे छोड़ सकता है। इसलिए जो मनुष्य देशसेवा के नाम से छल-कपट करते हैं। समझना चाहिए कि वे देशसेवा को धर्म नहीं समझते, किन्तु एक आत्मोदय का उपाय समझते हैं। राणा प्रताप, मेजिनी, ब्रूस आदि वीर देशसेवा को धर्म समझते थे, इन महापुरुषों के कार्यों में छल-कपट का नाम नहीं। जहाँ छल है, वहाँ देशसेवा डाकूपने का स्थान लेती है। सच्ची देशसेवा यह है कि सच्चे दिल से सच्चे मार्ग से और सच्चे प्रकारों से अपने देश की सेवा की जावे। देशसेवा धर्म है, देशवासियों की सेवा धर्म है। ये सब धर्म के अंग हैं इसलिए सबसे बढ़कर अंगी—धर्म की सेवा धर्म ही नहीं, किन्तु तप है।

[सद्धर्म प्रचारक, 9 सितम्बर, 1908]

बाहर क्या हो रहा है

प्राचीन सभ्यता की हँसी उड़ाने वाले और आर्यों के स्वर्ण युग को घृणा की दृष्टि से देखने वाले अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग भी अब प्राचीन सभ्यता को अपना रहे हैं और अपने गोरे विरोधियों के वचनबाणों और 'टाइम्स' की नोक-झोंक से तंग आकर अब यह सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि पूर्वीय देशों में प्राचीन काल से ही 'स्वराज्य' की प्रणाली चली आ रही है। किन्तु हम समझते हैं कि ऐसा कहना मात्र ही उनको स्वराज्य के शीतल किनारे पर नहीं ला बिठाता ! स्वराज्य पाने के लिए धीरता-वीरतादि गुण और नस-नस में भरी हुई सर्वतोमुख स्वतन्त्रता की उत्कट इच्छा चाहिए। जिस समय किसी देश में यह सर्वतोमुख स्वतन्त्रता की लहर बह निकलती है, उस समय 'नीरो' के समान राक्षसप्राय राजा भी अपने अत्याचार रूपी बन्धों से इसे नहीं रोक सकते। एशिया की वर्तमान राजनीतिक अवस्था इसी मत को सिद्ध कर रही है। शताब्दियों से प्रचलित जुल्मी राज्य पद्धति का नायक फ़ारस का शाह, कज़्ज़ाकों की तीखी तलवारों की नोकों से भी फ़ारस प्रजा के मानवीय अधिकारों को रोक नहीं सकता है। शाह ने पार्लियामेन्ट तोड़ डाली, किन्तु इससे लोगों की स्वातन्त्र्येच्छा नष्ट नहीं हुई, किन्तु वह और भी भड़क उठी। कज़्ज़ाकों ने देश में जुल्म फैला दिया है, इसलिए लोग प्रार्थना-पत्र भेज रहे हैं कि 'शान्ति करो' 'शान्ति करो'। अब अंग्रेजी तथा रूसी व्यापारियों ने भी अपने माल की हानि दिखाकर शाह को शान्ति करने के लिए दबाया है। इस पर शाह ने झटपट चुनाव करवाने तथा नवम्बर में पार्लियामेन्ट बुलाने की प्रतिज्ञा की है। टर्की के सुल्तान को भी अन्त में लोगों की इच्छा के सामने सिर झुकाना पड़ा है। अपनी इच्छा के विरुद्ध भी उसे लोगों को पार्लियामेन्ट देनी पड़ी है। अब एक और देश भी नींद के झोकों से जाग रहा है। चीन की गवर्नमेन्ट ने देश को पार्लियामेन्ट देने का पक्का निश्चय कर लिया है और स्थूल रूप से सब नियमों को प्रकाशित भी कर दिया है। चीन जाग चुका है, टर्की ने पार्लियामेन्ट प्राप्त कर ली है, फ़ारस की प्रजा जुल्मी राज्य को हटाने के लिए हलचल मचा रही है, लोग पूछते हैं कि 'अपरिवर्तनीय पूर्व' में अब किस देश में परिवर्तन की बारी है !

देश में क्या हो रहा है

बाहर के देश जब ऐसी हलचल की अवस्था में हैं उस समय अपना देश शान्ति से कैसे रह सकता है। अपने देश में क्या हो रहा है ? देश में हिमालय से लेकर रासकुमारी तक और कलकत्ता से लेकर बम्बई तक अशान्ति फैल रही है। लोग गवर्नमेन्ट से अधिकार माँगने जाते हैं, किन्तु हमारी 'दयालु' गवर्नमेन्ट उन्हें चुन-चुनकर दूसरे देशों की हवा खिला रही है। 'हिन्द स्वराज्य' के सम्पादक को 3 वर्ष की कड़ी कैद मिली, 'हिन्दी केसरी' तथा 'देशसेवक' का मुकदमा चल रहा है, मद्रासी 'इंडिया' के सम्पादक श्रीयुत अय्यंगर के भाग्य का भी झटपट ही निश्चय हो जावेगा। मराठी 'विश्ववृत्त' का मुकदमा अभी अधर में ही लटक रहा है। देश में और क्या हो रहा है ? गवर्नमेन्ट के मुखिया अशान्ति को दबाने के लिए लोगों के नेताओं की सहायता माँग रहे हैं। संयुक्त प्रान्त तथा बम्बई के गवर्नर स्पष्टरूप से ही सभाएँ करके लोगों के, अगुवों को सहायता देने के लिए समझा रहे हैं, और गवर्नमेन्ट भले लोगों को बम फेंकने वालों तथा अशान्ति फैलाने वालों के विरुद्ध आघोषणा देने के लिए प्रेरित कर रही है। कई अतिराजभक्त सभाएँ भी अपनी राजभक्ति दिखलाने के लिए गवर्नमेन्ट के पास दौड़ी-दौड़ी जा रही हैं। 'टाइम्स ऑफ इंडिया' और अन्य ऐंग्लो इंडियन पत्र नरमों को धमकी दे रहे हैं कि यदि तुम अब भी प्रकाशित रूप से अपने आपको राजविद्रोहियों से अलग नहीं करोगे तो तुम भी राजविद्रोही समझे जावोगे और काँच की तरह तुम्हारा भंगुर मान, एक बार टूट जाने से फिर जुड़ नहीं सकेगा। किन्तु इन सबसे बढ़कर जो देश में बात हो रही है वह यह है कि इस भयानक अवस्था में, यहाँ की गरमी को न सहन करते हुए देश के मुखिया विदेशों की हवा खाने जा रहे हैं और उसके साथ-ही-साथ एक दल के कई नेताओं की सम्मतियाँ भी बदल रही हैं। लाला लाजपतराय ने अपने 'देशनिकाले की कहानी' में लिखा है कि गवर्नमेन्ट की प्रार्थना से हमारी उन्नति नहीं होगी, किन्तु हमारी उन्नति का मूलमन्त्र स्वावलम्बन है। हम नहीं कह सकते कि उनकी सम्मति बदली है या नहीं, किन्तु बंगाल के एक 'स्वावलम्बी' की सम्मति बदल गई है। बाबू विपिनचन्द्रपाल ने जेल से निकलकर ही देश में Sociology समाजशास्त्र के प्रचार का विचार कर लिया था, किन्तु विलायत जाने के समय एक संवाददाता से भेंट करते हुए उन्होंने कहा कि अब उनकी स्वालम्बन के विषय में सम्मति सर्वथा बदल गई है। अब उनकी सम्मति है कि अंग्रेजी प्रजा से प्रार्थना किए बिना काम नहीं चलेगा, इसीलिए वे राजनीतिक हलचल मचाने और इंग्लैंड के लोगों को देश की वास्तविक दशा बताने विलायत जा रहे हैं। आज तक लोगों को स्वावलम्बन की शिक्षा देते हुए और नरमों को 'भिक्षुकदल' बताकर उन्हें कोसते हुए विपिन बाबू ने आज झटपट सम्मति बदल ली हैं। हम फिर विपिन बाबू की प्रशंसा ही करेंगे, क्योंकि उन्होंने अपनी बदली हुई सम्मति प्रकाशित तो कर दी

है, किन्तु इनके गुरु तो बिना बताए ही मेहता, गोखले और बाचा का सहकारी अपने आपको बतला दिया है।

एक और प्रमाण

साहित्य की डोर जिस समाज के हाथ में होती है, उस समाज के सिद्धान्त बड़ी आसानी से सर्वसाधारण में फैल जाते हैं। जिस प्रकार के विचारों को रखने वाले लोग साहित्य को धनी बनाने का प्रयत्न करते हैं, उन्हीं के विचार सदा प्रसृत हुआ करते हैं। खेद से लिखना पड़ता है कि आर्यसमाज ने अभी साहित्य की शक्ति को नहीं समझा है। इतनी हानि उठाने पर भी अभी आर्य लोग नहीं जागे हैं। बम्बई में स्वामीजी ने सबसे पहले आर्यसमाज स्थापित किया, किन्तु आज तक भी वहाँ के आर्यसमाज ने क्यों बल नहीं पकड़ा ? महाराष्ट्र भाषा के साहित्य की साधारण आलोचना इसके रहस्य को प्रकट कर देती है। विष्णु शास्त्री चिपट्ठूणकर मराठी का ओजस्वी लेखक हो गया है। वह मराठी साहित्य का पिता समझा जाता है, और उसके निबन्धों का इतना आदर है कि उनको पढ़े बिना कोई महाराष्ट्रभाषा-भाषी सुशिक्षित नहीं समझा जाता। उसने अपने निबन्धों में आर्यसमाज के विरुद्ध हृदय खोलकर ज़हर उगला है और समाज पर झूठे-सच्चे दोष लगाए हैं। इन्हीं निबन्धों को पढ़कर वहाँ के सुशिक्षित लोग आर्यसमाज को घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं। इसीलिए हम कई बार आर्य लोगों को ख़बरदार करते हैं कि यदि वे आसानी से अपने सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहते हैं तो उन्हें नागरी साहित्य की डोर को अपने हाथ में लेना चाहिए। पादरी लोग इस रहस्य को जानते हैं और वे इससे लाभ उठाते हैं, किन्तु आर्यसमाजी कानों में उँगलियाँ दिए बैठे हैं। अभी तक नागरी साहित्य का मैदान खाली था, आर्यसमाजियों को पूरा अवसर था किन्तु अब इसमें आर्यमतों और वेदों के विरुद्ध ज़हर फैलाया जाने लगा है। इसी मास की 'सरस्वती' को पढ़िए, उसमें वेदों को ऋषिकृत तथा प्राचीन आर्यों को जंगली सिद्ध करने के लिए दो लम्बे-लम्बे लेख छपे हैं। क्या यह बिना उत्तर के फैलाया हुआ ज़हर आर्यसमाज को हानि नहीं पहुँचाएगा। परन्तु आर्यसमाज के पास ऐसा साधन ही नहीं हैं जिसके द्वारा इनका उत्तर दिया जावे। आर्यसमाज में अभी नाम लेने योग्य कोई मासिक पुस्तक ही नहीं है। अंग्रेजी में 'प्रतिनिधि' ने 'वैदिक मैग़जीन' निकाल दी, इससे जो लाभ हो रहा है और होगा, वह आर्यों से छिपा हुआ नहीं है। किन्तु नागरी में 'सरस्वती' के जोड़ का कौन-सा मासिक पुस्तक 'समाज' ने निकाला है, जिसे सर्वसाधारण रुचि से पढ़े। हम आशा करते हैं कि पंजाब की प्रतिनिधिसभा इस विषय को विचाराधीन बनावेगी और नागरी में एक उत्कृष्ट मासिक पुस्तक को निकालने का प्रबन्ध करेगी।

बंगालियों की वीरता में अब किसे सन्देह है ?

यह प्रायः कहा जाता है कि बंगाल में शिक्षा का, भारत के अन्य प्रान्तों की अपेक्षा अधिक प्रचार हो रहा है। यह शिक्षा सम्भवतः पाश्चात्य शिक्षा ही समझनी चाहिए। पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से एक दिन था, जब सारा बंगाल ऐसी अवस्था में आ गया था कि यही उपयुक्त प्रतीत होता था कि उसे बूढ़े शान्त भारतवर्ष से उखाड़कर यूरोप के किसी खाली पड़े जंगल में जाकर रख दिया जावे। आज यद्यपि वह अवस्था तो बदल गई है, तथापि बंगालियों में कई पश्चिमदेशीय सभ्यता के अंश बाकी रह गए हैं। उनमें से एक पाश्चात्य वीरता भी है। पश्चिम में से भी इंग्लैंड की वीरता सबसे अधिक बंगालियों में अपनी छाया छोड़ गई है। भारत वर्ष की वीरता अपने सामने प्रकट होती है, परन्तु पाश्चात्य वीरता का यह भी एक अंग है कि वह वीरता छुप-छुपकर किसी और बहाने से की गई हो। यदि पाश्चात्य देशों की सेनाएँ चीन में लड़ती हैं तो इसलिए नहीं कि वह चीन को दबाना चाहती हैं, किन्तु इसलिए कि चीनवालों में उसके धर्माचार्यों को सताया था। दूसरा पाश्चात्य वीरता का आदर्श अनार्किस्ट तथा निहिलिस्ट लोग हैं, जोकि पहले तो छुपकर दूसरे को मार देते हैं और पीछे से सामने आते हैं। इन्हीं पाश्चात्य वीरताओं के आदर्शों पर बंगालियों ने चलना शुरू किया है। बम का फेंकना अनार्किस्टों की नकल थी, परन्तु गोसाईं का मारा जाना पहले प्रकार की वीरता में शामिल है। पहले मारने वालों ने उसे इस बहाने से अपने पास बुलाया कि वे उसके सामने अपना दोष स्वीकार करेंगे, परन्तु पीछे से उसे तमन्चे गोलियों से छेद मारा। दूसरा कारण, जिससे कि बंगाली वीरों की वीरता इस प्रकार की हो रही है वह बंगालियों की उपन्यासप्रियता है। बंगाली लोग उपन्यास बहुत पढ़ते हैं। उनका प्रभाव बंगालियों पर यह पड़ता है कि जैसे उपन्यासों में कई निराश की अवस्थाएँ सोचे समझे बिना आत्महत्या या परहत्या करने को उद्यत हो जाते हैं इसी तरह इनकी वीरता भी निराशापूर्वक होती है।

[सद्धर्म प्रचारक, 16 सितम्बर, 1908]

पंजाब की राजनीतिक दशा

पंजाब की राजनीतिक दशा बड़ी स्थिर अवस्था में है। जैसे प्रचंड तूफान के पीछे समुद्र का जल गम्भीरता को धारण कर लेता है, उसी प्रकार पहले वर्ष की हलचल के अनन्तर अब पंजाब शान्त अवस्था को प्राप्त हो गया है। परन्तु यह कोई नहीं कह सकता कि यह शान्ति वस्तुतः शान्ति है या स्तब्धता है। जब मनुष्य के शरीर को प्राण छोड़ जाते हैं तब वह भी स्थिर अवस्था को प्राप्त हो जाता है, परन्तु उस शरीर की अवस्था को शान्ति नहीं कहते, किन्तु वह अवस्था स्तब्ध कहाती है। परन्तु इन दोनों अवस्थाओं से भी भिन्न एक और हालत है, और उसे मूर्च्छित अवस्था कह सकते हैं। यह अवस्था न मृत अवस्था ही है, न ही यह अवस्था शान्ति है। शान्ति की अवस्था वह अवस्था कहाती है जिसमें कि मनुष्य या मनुष्य-समाज की कामनाएँ विह्वल हो जावें। परन्तु मूर्च्छित हालत इससे सर्वथा भिन्न है। पंजाब की वर्तमान हालत मूर्च्छित कही जा सकती है।

प्रशान्त सागर में खलबली

मूर्च्छा से प्रशान्त अवस्था को प्राप्त हुए पंजाब के प्रशान्त महासागर में फिर एक छोटी सी लहर उठती दिखाई दी थी। सम्भव था कि फिर वह लहर पंजाब भर में व्याप्त हो जाती, परन्तु लाहौर के नेताओं ने बुद्धिमत्ता से उस लहर को उठने से प्रथम ही दबा दिया। पंजाब के राजनीतिक नेता चाहे किसी प्रयोजन से अपने देश को छोड़कर बाहर गए हों, इसमें सन्देह नहीं कि उनके इस कार्य से पंजाब में उठने वाली हलचल कुछ देर के लिए शान्त हो गई है। म. हरदयाल ने अपना देश छोड़ने का कोई प्रयोजन प्रकट नहीं किया। पं. रामभजदत्त चौधरी ने इंग्लैंड जाने का यह प्रयोजन बताया है कि वे अंग्रेजों को तथा राजराजेश्वर एडवर्ड (सप्तम) को भारत की वास्तविक दशा से अनभिज्ञ कर दें। लाला लाजपतराय जी ने भारत को छोड़ते हुए 'पंजाबी' के मालिक लाला यसवन्तराय एम.ए. को एक लम्बी-चौड़ी चिट्ठी लिखी है जोकि 'पंजाबी' में प्रकाशित हो गई है। उस चिट्ठी से लाला लाजपतराय का भारत वर्ष छोड़ने का कारण तथा लाहौर की राजनीतिक हवा के रुख का भी अच्छी प्रकार पता लग जाता है।

लालाजी की चिट्ठी से पता लगता है कि आपने पंजाब से बड़े दुख भरे दिल से बिछोड़ा किया है। आप अपने दुख का मुख्य कारण यह बताते हैं कि हमारे देश में ऐसे राजनीतिक कार्यकर्ता वर्तमान हैं जोकि केवल टके के लिए डिटेक्टिव का काम भी करने को तैयार हो जाते हैं। आप कहते हैं कि ऐसे ऐसे विश्वासघाती लोगों से तंग आकर ही आप पंजाब छोड़ने को बाधित हुए हैं। लाला जी कहते हैं कि वे अपने प्रिय देश को छोड़कर विदेश में इसलिए जा रहे हैं कि वे कुछ देर के विश्राम से अपने चित्त को स्थिर करके फिर से कार्य करने के योग्य बना लावें। आपकी सम्मति में देश की जरूरतों को वे युवा पुरुष ही पूरा कर सकते हैं जोकि प्रथम इसके कि वे लीडर बनें, पहले लीडरों के पीछे चलने को तैयार हों और साथ ही देशसेवा के लिए ऐसे प्रौढ़ पुरुषों की आवश्यकता है जो खतरे के समय धन आदि की कुछ परवाह न करें।

इसमें सन्देह नहीं कि लाला जी के ये सारे कथन ठीक है, परन्तु विचारणीय यह है कि लाला जी के खेद के कारण कौन है ? हम दिल से चाहते थे कि लाला जी ये सब बातें आज से कुछ दिन पूर्व समझ लेते। प्रचारक बरसों से चिल्ला रहा है कि अभी देश राजनीतिक चेष्टा के योग्य नहीं हुआ। अभी लोगों में इतना आत्मसंयम नहीं कि वे लोभरहित होकर देशसेवा कर सकें। प्रचारक सदा से विद्यार्थियों के राजनीति में क्रियात्मक भाग लेने के विरुद्ध रहा है। जिस बात को प्रचारक बरसों से कह रहा है कि वह लाला जी को आज सूझी, शोक का मुख्य कारण यही है। जब विद्यार्थी लोग पहले से ही राजनीतिक सभाओं में क्रियात्मक भाग लेंगे तथा अपने अध्यापकों को धमकियाँ देने के आदी हो जाएँगे तो उनसे यह आशा, रखना वृथा है कि वे कदापि लीडरों के पीछे चलना पसन्द करें।

प्रचारक की फिर भी अपने सहकारियों से यही प्रार्थना रहेगा कि अभी समय नहीं कि भारतवर्ष में व्यर्थ अशान्ति फैलाई जावे। अभी भारतवासियों को कठिन राजनीतिक परीक्षाओं में डालना उनसे शक्ति से अधिक काम लेने की आशा करना है। पहले देश में शिक्षा का प्रचार कीजिए। अन्तस्थ सामाजिक कुरीतियों को रोकने का प्रयत्न कीजिए, तब आप देशवासियों को किसी शंका के बिना कठिन से कठिन परीक्षा में डाल सकेंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 23 सितम्बर, 1908]

क्या सभ्यता किसी विशेष देश वा जाति की मीरास है ?

रात की ट्रेन से मैं मुलतान जा रहा था। मेरे कमरे में दो मुसलमान सभ्य तथा एक अंग्रेज का लड़का सफर कर रहे थे। रेल की सड़क बिगड़ने के कारण ट्रेन खानेवाल के रेलवे स्टेशन पर पौने छह के स्थान नौ बजे के बाद पहुँची। एक अधेड़ अंग्रेज भी हमारे कमरे में आ बैठा। आते ही मुलतान के खूनवाले मुक़दमे की बातचीत करने लगा। अंग्रेज लड़का मुलतान का ही रहने वाला था। उसने उत्तर दिया कि घातक 'शोलढम' और 'मलिन्ज़' पकड़े गए हैं। अधेड़ अंग्रेज ने पूछा—"क्या वे यूरोपियन हैं वा यूरेशियन (Eurasian)" यह उत्तर मिलने पर कि दोनों यूरेशियन हैं अधेड़ बोला—"अहा ! मैंने पहले ही यह समझा था। कोई भी यूरोपियन किसी लेडी (सभ्य स्त्री) का तिरस्कार नहीं कर सकता।" मुझे साहब बहादुर की यह निश्चित सम्मति सुनकर कुछ आश्चर्य नहीं हुआ। मुझे अपने ग्राम की एक पुरानी कहानी याद आई। खत्रियों के दो बड़े विभाग 'सरीन' और 'वुजाही' हैं। एक 'सरीन' से किसी 'वुजाही' की अनबन थी। मैं उस 'सरीन' की प्रार्थना पर उसका एक कार्य करने लगा था, जिस पर 'वुजाही' देवता बोलो 'सरीन' तो कदे वफा नहीं अर्थात् 'सरीन' कभी विश्वासपात्र नहीं हो सकता। कुछ दिनों के पश्चात् मैं एक सरीने की पंचायत में गया। वहाँ एक वुजाही का जिक्र आते ही सब बोल उठे—"वुजाही ते वफा नहीं।" क्या इन देहातियों से कुछ भी बढ़कर उन अंग्रेजों के विचार हैं जो यूरोपियनों को देवता समझते हैं। मैंने मुलतान से लौटते ही, 'पंजाबी' आदि समाचार पत्रों में पढ़ा कि एक यूरोपियन गार्ड एक हिन्दुस्तानी डिप्टी की धर्मपत्नी को दूसरे दर्जे में अकेला देख चलती गाड़ी में चढ़ गया और दुष्टभाव से आक्रमण करना चाहता था जिससे उस देवी के धैर्य ने उसे बचाया। देवी ने यूरोपियन के क्षमा प्रार्थी होने पर उत्तर दिया कि तुझसे दुष्ट को क्षमा करके मैं अपनी अन्य बहनों को विपत्ति में नहीं डालना चाहती। अभी इस मामले की चर्चा मिटी नहीं थी कि निम्नलिखित समाचार पढ़ा गया—"कलकत्ते के एक प्रसिद्ध पादरी साहब की भतीजी एक यूरोपियन लेडी 30 सितम्बर को स्त्रियों के दूसरे दर्जे के कमरे में कलकत्ता से उस रेलगाड़ी में जा रही थी जो स्थान धनवाद पर शाम को पहुँचती है। इस स्थान से गाड़ी चलने ही लगी थी कि पायदान पर से एक

यूरोपियन अन्दर आ गया और ऐसी बातें करने लगा कि लेडी के होश उड़ गए। लेडी ने त्रयास की घंटी बजाई और रेलगाड़ी खड़ी हो गई, किन्तु लोगों के आने से पहले ही अपराधी चल दिया'' इसी पत्र में बम्बई के पास एक मुसलमान देवी पर एक यूरोपियन के आक्रमण का जिक्र है। अब कौन कह सकता है कि यूरेशियन ही पिशाच होते हैं, यूरोपियन नहीं। अब 15 अक्तूबर के पायोनियर में पढ़ा गया है कि कलकत्ता में एक मुसलमान ने एक यूरोपियन देवी को छेड़ा। और हम आएदिन हिन्दू, मुसलमान, एशियाई तथा यूरेशियनों के ऐसे कुकर्मों को पढ़ते रहते हैं। तब एक मनुष्य समाज के समाज को ही दूषित करने का जिन्हें अभ्यास है, वे कैसी भूल के मार्ग में चल रहे हैं।

अपने मतलब की ही मत निकालो

बम्बई के गवर्नर बड़े दयालु नीतिमान प्रसिद्ध हो चुके हैं। अच्छा होता यदि अपनी उपलब्ध की हुई प्रशंसा पर ही वह सन्तुष्ट रहते। किन्तु साधारण मनुष्य जितनी सफलता प्राप्त करता है, उतना ही मद उसमें बढ़ता है। कविवर तुलसीदास ने ठीक कहा है :

असनर कोऊ दीखत जग नाहीं।
प्रभुता पाय जाहि मद नाहीं।।

गवर्नर क्लार्क ने भी समझ लिया कि उनकी प्रतिष्ठा के कारण विश्वास से अन्धे हुए हिन्दुस्तानी उनका सब लिखा हुआ माँ की दूध की तरह पी जाएँगे। आपने सरक्यूलर जारी किया है जिसमें उत्तम शिक्षा के लिए सरकारी दान का निहोरा देते हुए प्राचीन गुरु-शिष्य के सम्बन्ध की ओर दृष्टि दिलाई है। क्या सरजार्ज क्लार्क ने कभी यह भी देखा है कि पुराने गुरु कैसा आदर चाहते हैं ? यदि नहीं तो तैत्तिरीय उपनिषद् को खोलकर देखिए। वे शिष्यों से कहते थे—''सत्यंवद। धर्मञ्चर'' क्या आजकल के प्रोफेसर तथा टीचर अपने आचरणों से 'सत्य' तथा 'धर्म' का उपेदश देते हैं ? फिर वे ही गुरु कैसी सरलता से कहते थे ''यान्यनवद्यानि कर्म्माणि तानि सेवितव्यानि नोइतराणि। यान्यस्माकथ्ठ सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानिनोइतराणि।'' क्या आजकल के 'जौ फ़रोश गन्दुमनुमा' उस्तादों की तुलना आप प्राचीन गुरुओं से करते हैं ? प्राचीन गुरु अपने शिष्यों के पालन-पोषण करने तक का ताना नहीं देते थे। यदि आपको सचमुच प्राचीन प्रणाली का कुछ दृश्य देखना है तो युक्त प्रान्त के लाट साहब को साथ लेकर गुरुकुल में आइए। तब आप देख सकेंगे कि ब्रह्मचारियों के विनय तथा शील की रक्षा कैसे हो सकती है।

यह देवासुर संग्राम कब समाप्त होगा

कुछ भारतवर्ष में ही धर-पकड़ नहीं हो रही। ट्रांसवाल (दक्षिण अफ्रीका) में भी हिन्दुस्तानियों की दुर्गति हो रही है। महाशय गांधी से विद्वान् सदाचारी भी पचासों अपने स्वदेशी भाइयों सहित इसलिए जेल में भेजे गए कि वह अपने आप अधर्म स्वीकार कर लेने को तैयार नहीं। रूम देश में अलग हलचल, फ़ारस में जुदी, किन्तु यूरोपियन भी तो इस कष्ट से मुक्त नहीं है। इंग्लिश्तान के लाखों भूखे रोटी माँगते हैं जिनके स्थान में उन्हें गोली और जेलखाना मिलता है। इंग्लैंड में स्त्रियाँ राजकर्म में प्रवेश चाहती हैं जिसके बदले उनको बन्दीग्रह में भेजा जाता है। इस गड़बड़ में गद्दी से उतारे हुए हुलकर की 49 वर्ष की आयु में मौत भी उसके लिए अमृतवत् ही सिद्ध हुई होगी।

दक्षिण हैदराबाद की विपत्ति में सहायता

गतांक में थोड़ा सा ही इस विषय में लिखा गया था। मेरी सम्मति में वही बहुत था मैंने अपने आर्यभाइयों को तार दिया है। अब तक कोई उत्तर नहीं आया। गुरुकुल में चन्दा इकट्ठा हो रहा है। इस समय मतभेद का विचार करके काम करने का समय नहीं। मैंने पत्रों तथा तारों द्वारा कुछ समाचार प्राप्त किया है। आवश्यक है कि सर्व आर्यसामाजिक भाई ऋषि दयानन्द के मुक्त होने के दिन जहाँ चार आना फंड वेदप्रचार के लिए इकट्ठा करें वहाँ दक्षिण हैदराबाद के भाइयों की सहायतार्थ भी धन एकत्र करके शीघ्र मेरे पास भेज दें। जैसा वैदिक धर्म सार्वभौम है इस समय वैसे ही पक्षपातहीन होकर सहायता प्रदान होनी चाहिए, किन्तु जो महाशय यह चाहेंगे कि केवल आर्यसमाजियों की सहायता में ही उनका दान किया धन लगाया जाए तो ऐसा ही किया जाएगा। रसीद प्रचारक द्वारा छपेगी। सब धन मेरे नाम आना चाहिए और स्पष्ट लिखना चाहिए कि किस कार्य के लिए है।

[सद्धर्म प्रचारक, 21 अक्टूबर, 1908]

भारत किस चक्र पर घूम रहा है

महाशय बिहारी लाल गुप्त हिन्दुओं में से पहले पुरुष हैं जो भारतीय राजमहामन्त्री की सभा के सभासद बनाए गए हैं। यह मुसलमान मेम्बर सैयद हसन की तरह 'ओछे दिल के इन्सान' नहीं, बल्कि बड़े गम्भीर समुद्र का-सा हृदय रखने वाले हैं। आपने हाल में ही लन्दन की शिल्प वर्द्धिनी सभा में भारतीय विभाग में व्याख्यान देते हुए कहा कि जात-पात के बन्धनों ने पीछे चाहे कितना ही काम दिया हो किन्तु इस समय जब तक जात-पात के बन्धनों की जड़ नहीं काटी जाती तब तक कौम बनाने (nation building) के काम में कामयाबी न होगी। महाशय गुप्तजी का यह कथन कैसा सत्य है—बतलाने की आवश्यकता नहीं। उसी अधिवेशन में शायद देवी बसन्ती के सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के प्रिंसिपल के कोई सम्बन्धी Sir A.T. Arundel भी विद्यमान थे। उन्होंने सेन्ट्रल हिन्दू कालेज की इसलिए प्रशंसा की कि उसने भारतवर्ष के युवकों को ईसाई मत के समझने का मौका दिया हैं। देखें श्री देवी बसन्ती को इस पर क्या वक्तव्य है। हिन्दुस्तानियों को धीरे-धीरे बड़े अधिकार मिलने तो लगे। आनरेबल रायबहादुर सुन्दरलाल वकील हाईकोर्ट प्रयाग को अवध का द्वितीय सहकारी जुडीशल कमिश्नर बनाया गया है। अन्धे दुर्बलेन्द्रिय को जोश भी आवेगा तो घर के ही बरतन फोड़ेगा। अवध में भी क़ौमी जोश फैलने लगा है। हरदोई से लखनऊ का सफर करते हुए कुछ वकीलों की गाड़ी पर पत्थर फेंके गए जिससे एक वकील के सिर से बड़ा खून निकला। क़ौमी पहलवानी की शिक्षा का आरम्भ खूब है। हमारे कुछ भाई भी मुसलमान छबड़ीवालों को लड़कों से लुटवाकर उन्हें जोश का सबक देते थे जिसका परिणाम जो हुआ वह दो वर्ष हुए प्रत्यक्ष दिखाई दिया था। इस प्रकार के आपापन्थ को रोकने का प्रयत्न प्रत्येक सभ्य पुरुष को करना चाहिए।

राय बहादुर लालचन्द्र के चीफकोर्ट की जजी स्वीकार करने का निश्चय समझ लाहौर के प्रकाश ने उन पर आत्मसम्मान की शून्यता का दोष लगाया है। अब पता लगा कि गवर्नमेन्ट ने रा.ब. लालचन्द्र जी से पूछे बिना ही उन्हें स्थानापन्न जज कर दिया है। यद्यपि प्रकट यह किया गया है कि उक्त राय बहादुर काम की अधिकता के कारण जजी स्वीकार नहीं करते तथा यह स्पष्ट विदित है कि

इस आँख पुछउअल में फँसने से अपनी मानहानि समझकर ही उन्होंने इस पद का तिरस्कार किया है। राय बहादुर लालचन्द्र ने इस त्याग के भाव से अपने आपको सचमुच 'मनुष्य' सिद्ध किया है जिनका इस समय बहुत अभाव है। वर्षा इस वर्ष अब तक हो रही है। शिमला में मूसलाधार बारिश हुई। आँधियाँ भी कई स्थानों में बेतहाशा आ चुकी हैं, किन्तु इस अनियमित वर्षा से कहीं-कहीं घास हरा होकर पशुओं के लिए लाभ भी हुआ है। वृद्ध भारतभूषण दादाभाई नौरोजी की धर्मपत्नी का 80 वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। मिस्टर मेकालिफ ने सिक्खों के ग्रन्थ का अनुवाद इंग्लिश में कर दिया। कहते हैं यह प्रामाणिक होगा। हिन्दुस्तान में भी तोपें बनने लग गईं। काशीपुर (मध्यप्रदेश) की बनी हुई एक तोप जबलपुर के कारखाने की एक गाड़ी पर रखकर इंग्लैंड भेजी गई थी। वहाँ के युद्ध प्रवीण पुरुषों ने उसकी बहुत ही प्रशंसा की है इसलिए अब लड़ाई के लिए तोपें भारतवर्ष में बननी आरम्भ हो गई हैं।

कुर्मिओं की भी कान्फ्रेंस हुआ करती है। चौथा सालाना जलसा इखलासपुर जिला शाहाबाद में बैठा। पहली बात तो वहाँ के निश्चयों से यह प्रतीत हुई कि कुर्मिओं की संख्या 1 करोड़ 22 लाख हैं। कुर्मी महाशय अब अपने आप को कूर्मवंशीय क्षत्रिय कहते हैं। यदि अपना पुरखा कूर्मावतारी भगवान् विष्णु को समझते हैं तब तो बने बनाए क्षत्रिय हैं ही। इस अधिवेशन में भी वही रेजोल्यूशन पास हुए जो अन्य जातीय सभाओं में हुआ करते हैं—हाँ विवाह की आयु लड़के के लिए 15 तथा लड़की के लिए 12 वर्ष की (कम-से-कम) नियत हुई।

फिर आर्यसमाजियों को उनके धार्मिक कर्तव्य से क्यूँ रोका जाता है

कुछ दिन हुए यह समाचार छपा था कि सारे संसार में ईसाई मिशनरियों का जो वृहदधिवेशन आगरा नगर में होगा उसके लिए श्री लॉर्ड मिन्टो की गवर्नमेन्ट का सामान देंगे। अब 17 मई के पायोनियर में लिखा है कि मुक्ति फ़ौज की बनाई वस्तुओं की विक्रय का काम शिमला टाउन हाल में लेडी मिन्टो खोलेंगी। क्या इस प्रकार एक विशेष मत का नाजायज दबाव नहीं पड़ता ? यदि नहीं (और मैं भी जानता हूँ कि नहीं पड़ता) तो आर्यसामाजिक पुरुषों को केवल सरकारी नौकर होने के कारण क्यों अपने धर्म की सेवा करने से रोका जाता है।

अहिल्याबाई की स्पिरिट मर नहीं गई

भारतरमणियाँ अपने जीवनों से सिद्ध कर चुकी हैं कि उनके अन्दर भी वही शक्तियाँ काम करती हैं जो केवल मर्दों के अन्दर काम करती हुई समझी जाती हैं। चाँदबीबी और अहिल्याबाई की बहादुरी के हाल इतिहास के प्रेमी पढ़ चुके हैं। अब समाचार पत्रों में यह समाचार छप रहा है कि बड़ौदा की श्री महारानी जी ने सोनगढ़ के

जंगल में एक शेर मारा। इस समय की राजपूत रमणियों की शिरोमणि देवी का यह साहस स्त्री-समाज के भविष्यत् सुधार के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध होगा।

महाजनाः येन गतः स पन्थः

पंजाब में मसल मशहूर है कि जब घर में लड़की पैदा होती है तो बड़े से बड़ा बाँका भी पगड़ी सीधी कर लेता है। मेरी सम्मति में लड़की या लड़का पैदा होने पर भी प्रत्येक मनुष्य को अपनी पगड़ी सीधी कर लेनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि पहली सन्तान उत्पन्न हो, उसी समय माता-पिता दोनों को अपने आचार-व्यवहार को अपने कर्तव्य के विचार से बड़ा ही उत्तम बनाना चाहिए। कारण यह है कि बच्चे की दृष्टि में उसके माता-पिता ही सबसे बड़े अर्थात् 'माहाजन' हैं और जिस रास्ते पर बड़े चलें, छोटे बिना प्रयास ही उस मार्ग पर चल पड़ते हैं। गीता में भी लिखा है कि श्रेष्ठ पुरुषों के चले हुए मार्ग पर ही सर्वसाधारण अपना रास्ता बनाते हैं।

ऊपर के विचार मेरे हृदय में खंडन का एक समाचार पढ़कर उत्पन्न हुए। लिखा है कि 30 सहस्र मुद्रा (2 सहस्र गिन्नी) की जो शर्त घुड़दौड़ पर लगी थी वह सम्राट् एडवर्ड ने अपने तैयार किए घोड़े मिनौरू नामी द्वारा जीत ली। जब हमारे सम्राट् केवल युवराज थे उस समय भी इस घुड़दौड़ के जुए में उनका सम्मिलित होना भारत निवासियों को अखरता था। किन्तु जबकि वह तिहाई संसार की जनसंख्या के मालिक हो गए हैं, आशा की गई कि यह व्यसन उन्होंने छोड़ दिया होगा। क्या ब्रिटिश राज्य में एक भी ऐसा योग्य सदाचारी पुरुष नहीं है जिसकी पहुँच हमारे सम्राट् तक हो और वह उनकी आँखें खोले और बताए कि उनके पीछे चलकर न जाने कितने गरीब तबाह हो रहे हैं।

क्या श्यामजी कृष्ण वर्मा ने सारी चालें ऐसे ही सभ्यों से नहीं सीखीं

श्यामजीकृष्ण को बैरिस्टरी से तो उन्हें पास करने वाली सभा से खारिज कर दिया था, उनकी यूनिवर्सिटी (ऑक्सफोर्ड) ने भी यह निश्चय किया था कि जो एक सहस्र पाउंड उन्होंने हवर्ट स्पेन्सर के नाम से इसलिए जमा किए थे कि उसके सूद से विशेष लेक्चर कराए जाएँ, वह उनको लौटा दिया जाए। क्योंकि प्रत्येक दानी के लिए यूनिवर्सिटी में खुदा से दुआ माँगी जाती है और ऐसे नास्तिक के लिए दुआ माँगना पाप है। किन्तु वकीलों की सम्मति है कि नियमानुसार कोई दान भी लौटाया नहीं जा सकता। हाँ, वकील यह लिखते हैं कि यूनिवर्सिटी का मतलब इस प्रकार सिद्ध हो सकता है कि कोई बड़े प्रसिद्ध आदमी लेक्चर देना ही स्वीकार न करें। ऐसे ही नीतिमानों से श्यामजी महाराज ने नीति की शिक्षा ली दिखती है।

संस्कृत का प्रचार खूब हो रहा है

पूर्वी बंगाल में संस्कृत के विविध विषयों की परीक्षा देने के लिए इस वर्ष 600 प्रार्थना पत्र पहुँचे। यह 31वीं वार्षिक परीक्षा है। मद्रास आदि से नए संस्कृत विद्यालयों की स्थापना से समाचार आ रहे हैं। ऐसे समय पंजाब यूनिवर्सिटी का यह विचार कि ओरियंटल कालेज बन्द कर दिया जाए, कुछ समझ में नहीं आता। जब पंजाबी लोग ओरियंटल कालेज के विरुद्ध थे और अंग्रेजी को ही पापमोचनी, गंगा समझकर उस पर सब कुछ न्योछावर करने को तैयार थे, तब तो गवर्नमेन्ट ने अरबी-फारसी, गुरुमुखी आदि के साथ संस्कृत की रक्षा की। अब न जाने इन पूर्वीय भाषाओं से क्या हानि समझी है ?

गुण जहाँ से मिले ग्रहण करो

लॉर्ड राबर्ट्स ने पार्लियामेन्ट में यह कानून स्वीकृति के लिए पेश किया है कि 18 से 30 वर्ष की आयु के प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक हो कि वह फौज में अवश्य काम करे। मतलब इस बिल का यह है कि जब कभी कोई शत्रु आक्रमण करे तो देश सब युवा अवस्था सम्पन्न पुरुष उसका मुँह तोड़ने को तैयार रहें। आर्यसमाज के कितने सभासद हैं जो यह जानते हों कि उनके धर्मग्रन्थों में क्या लिखा हुआ है ? सत्यार्थ प्रकाश तथा भूमिका की परीक्षा नियत हुई थी, उसमें भी सम्मिलित होने को पुरुष नहीं मिलते। क्या कोई ऐसा प्रबन्ध नहीं करना चाहिए जिससे आर्यसमाज के सब सभासद अपने मन्तव्यों को अवश्य जान लें, ताकि अपने विश्वास की बाह्य आक्रमणों से रक्षा कर सकें।

वैदिक सच्चाइयाँ अपने बल से फैल रही हैं

इंग्लैंड के प्रसिद्ध उपन्यास लेखक 'की ज्यार्ज मैरिडि' का देहान्त हो गया। उनकी इच्छानुसार उनके मृत शरीर का दाहकर्म किया गया। जिस समाचार में यह छपा था उसी में लिखा था कि "उटाकामुंड (मद्रास) के बड़े पुराने निवारी जनरल मारगन साहब का कल देहान्त हुआ। उनका मृत शरीर जलाया गया।" वेद का वाक्य 'भस्मान्तं शरीरम्' अब चारों ओर अपना सिक्का जमा रहा है।

अविद्या सब स्थानों में एक ही रूप धारण करती है

डॉक्टर वियर एक ईसाई उपदेशक हैं जो कोरिया में काम कर चुके हैं। उन्होंने अपने एक व्याख्यान में कहा कि कोरिया में औरतों का प्रायः कोई नाम नहीं होता। उनका वर्णन करना हो तो 'इधर देखो' कहकर उनकी ओर इशारा करते हैं। मुसलमानों के भारतवर्ष में आने से पहले यहाँ स्त्रियों के बराबर नाम होते थे, किन्तु इनके आने पर आर्यों की औरतों के नाम भी न हुए से ही हो गए। अब जिस

कायस्थ के यहाँ जाओ वह अपनी औरतों का जिक्र करते हुए 'मर्दुमान-ए-खाना' या 'अन्दरून-ए-खाना' कह देगा। मामूली खत्री और अनिए-बनिए भी 'घर के लोग' कहेंगे और राजपूत लोग तो जो कुछ पूछना हो महलों से ही पुछवाते हैं, जैसे महलों के पत्थर और चूना कुछ उत्तर दे सकते हों।

[सद्धर्म प्रचारक, 2 जून, 1909]

भारत विभिन्न देशों में क्या हो रहा है

अमरीका के विषय में पहले शोर मचा था कि कुछ भारत निवासी युवक ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के विरुद्ध ख्यालात फैला रहे हैं। फिर समाचार पत्रों द्वारा यह प्रसिद्ध हुआ कि वहाँ की गवर्नमेन्ट ने उन्हें छिन्न-भिन्न कर दिया। अब पायोनियर का संवाददाता फिर लिखता है कि यह लोग एक 'फ्री हिन्दुस्तान' नामी पर्चा निकालते हैं जिसमें ब्रिटिश राज्य पर असह्य आक्रमण होते हैं। यह पर्चा भारतवर्ष में आता है शायद कुछ युवकों को कुपंथ में लगाता हो। ऐसे पर्चे निकालने वाली सत्य और धर्म को सर्वथा जवाब दे दिया करते हैं इसलिए इनकी विषयुक्त शिक्षा से नवयुवकों को बचाना बुद्धिमानों का काम है।

शान्ति की आड़ में सदा संसार में अत्याचार होते रहे हैं। जर्मनी ने एशिया और इटली के साथ मिलकर जो पुराना याराना स्थिर किया और बहुत से नए जंगी जहाज बनवाने का विचार किया तो ब्रिटिश क़ौम में भी कोहराम मच गया। यहाँ न केवल बहुत से नए (11 वा 15) ज़बरदस्त जंगी जहाज ही बनेंगे, बल्कि 18 से 30 वर्ष की आयुवाले कुल आदमियों को फ़ौज का काम्म सिखाना होगा और यदि इंग्लैंड की स्त्रियों ने सम अधिकार लेने की ठानी तो उनकी भी खासी फौज तैयार हो जाएगी। यह सब कुछ संसार में शान्ति फैलाने के नाम पर हो रहा है। इस पर अमरीका के पूर्व प्रधान रूजवेल्ट सलाह देते हैं कि जहाज़ी फ़ौज उन्हें भी बहुत बढ़ानी चाहिए, ताकि समय पर दोस्त-दुश्मन सबसे भुगतने का सामान तैयार रहे। हमारे शासकों ने अपने देश में प्रत्येक आदमी की मौत पर उसकी जायदाद सँभालनेवाले पर भारी रक़म वसूल करने का प्रबन्ध किया है। इस नए टैक्स के विरुद्ध बड़े-बड़े धनाढ्यों ने आवाज़ उठाई है जो योग्य ही था। दक्षिण अफ्रीका (Transvaal) में अब तक हिन्दुस्तानियों पर जो अत्याचार हो रहे हैं, मिस्टर गांधी को क़ैद कर दिया था जिनके छूटने पर हजारों हिन्दुस्तानियों ने अगुवाई की और उन पर श्रद्धा का भाव प्रकट किया। विदेश में भारत निवासी वीर बन जाते हैं।

फ्रांस देश में स्वतन्त्रता तथा समाधिकार लेने का स्त्रियाँ अन्य स्थानों पर बढ़कर प्रयत्न कर रही हैं। दो औरतें रात को एक कमरे में पकड़ी गईं जिनके पास एक कटार, एक भरा हुआ रिवाल्वर, एक कुंजियों का गुच्छा, कुछ सेंध लगाने

के हथियार, एक दूरबीन और दो सोने की घड़ियाँ बरामद हुईं। न जाने यह स्वतन्त्रता का पागलपन यूरोप को कहाँ पहुँचाएगा जिसने देवियों को डाकिनियों में परिवर्तित कर दिया है।

रूम के तख्त से उतारे हुए सुल्तान अब्दुल हमीद को शाही महल से किसी और जगह ले गए हैं। इस विपत्ति के समय में यह बड़ा ही कायर सिद्ध हुआ है। अरबों रुपया इसने ख़जाने से जुदाकर छोड़ा था जो पार्लियामेन्ट ने ज़ब्त कर लिया है। अब्दुल हमीद बड़ा ही स्वार्थी मनुष्य प्रतीत होता है। अन्तिम पाप उसने यह किया कि एक काकेशियन स्त्री को इस सन्देह में मार डाला कि वह उसके पीछे दूसरे से विवाह न कर ले, किन्तु हिन्दुस्तानी मुसलमान, जो एक बार रूम (Turkey) में हो आए हैं, इसके साथ अच्छा बर्ताव चाहते हैं। कारण यह मालूम होता है कि जो जत्था इसलाम को दुनिया में फिर फैलाने के लिए यूरोप में बना था उसकी साज़िशें सब अब्दुल हमीद के महल में पका करती थीं। अस्तु अब अब्दुल हमीद सदा के लिए गए और टर्की ने यूरोप के ताजदारों की बराबरी में सिर उठाया है। परमात्मा उस देश को स्वतन्त्रता का फल खाने के योग्य बनावे।

उत्तम दान

बाई अवाबाई पेटिट पारसी देवी ने जो 12 लाख दान किया था उससे पारसी कन्या अनाथालय खोलने का प्रबन्ध हो रहा है। प्रबन्धकृर्त सभा में बड़े-बड़े योग्य पुरुष सम्मिलित हुए हैं और उचित स्थान के करने का प्रबन्ध हो रहा है। पारसि को यदि कमाना आता है तो साथ ही व्यय करना भी आता है। कलकत्ता के बाबू गोविन्दचन्द्र धर ने चार लाख रुपया 'फ्री हिन्दू' स्कूल खोलने तथा अन्य कामों के लिए दान दे दिया है। ऐसे दृष्टान्तों से सिद्ध होता है कि दान-प्रणाली भारतवर्ष में अब सुधर रही है। यदि अच्छे काम की आवश्यकता जतलाने वाले हों तो देने वालों की कमी नहीं है।

एक बहादुर बंगाली

आज बंगालियों की बहादुरी की धूम मच रही है। किन्तु 15 वर्ष पहले यह बड़े कायर समझे जाते थे। उस समय सुरेश विश्वास नामी एक बंगाली ने न केवल शेरों पर काबू करके, बल्कि अमरीका के ब्राजील (Brazil) राज्य में सेनापति बनकर अपनी वीरता का परिचय दिया था और बंगालियों के सिर से कलंक का टीका उतारा था। अब बड़े शोक के सुना गया है कि कर्नल के दर्जे तक पहुँचकर उनका देहान्त हो चुका है। ऐसे प्रसिद्ध पुरुष का जीवनचरित्र पहले छप चुका है, किन्तु आवश्यकता है कि कोई योग्य पुरुष ब्राजील में जाकर आन्दोलन करे और कर्नल सुरेशचन्द्र विश्वास का प्रामाणिक जीवनचरित्र भारत निवासियों को भेंट करे।

कांगड़े के जिले में भी प्लेग का कुछ आरम्भ हुआ है। अब तक पहाड़ी स्थान इस महामारी से बचे हुए थे। यदि यहाँ यह बीमारी शुरू हो गई तो पहाड़ी गन्दे आदमियों को बचाना कठिन हो जाएगा। इसलिए प्लेग का वहाँ से पहले ही गला घोंटना चाहिए। पूना में जो जैन कान्फ्रेंस हुई उसमें जहाँ बालविवाह तथा लड़कियाँ बेचने के विरुद्ध रेजोल्यूशन पास हुए, वहीं यह भी निश्चय हुआ कि भारतवर्ष की यूनिवर्सिटी से प्रार्थना की जावे कि अपनी पाठ विधि में जनमत के साहित्य को भी स्थान देवें। धन्य हो दयानन्द, जिन्होंने सर्व मतों के बन्दीगृहों के ताले तोड़ दिए, कहाँ वह जैनी जो दूसरे को अपनी पुस्तकों के दर्शन कराना पाप समझते थे, कहाँ अब वही अपने साहित्य को उन महाशयों के हवाले करने को तैयार हैं जिनको छूना तक पाप समझते थे। बंगाल से डकैतियों के वैसे ही भयानक समाचार आ रहे हैं और अन्य प्रान्तों में भी यह रोग फैलने लगा है। गवर्नमेन्ट की ऐसी बद्दुआबी से प्रजा को ही हानि पहुँचती है और बदमाशों की चाँदी होती है। दूसरी ओर लखनऊ में मुसलमानों का बड़ा जलसा हुआ जिनमें पटना के मिस्टर अली इमाम के इस कथन पर कि "गवर्नमेन्ट के प्रतिज्ञा पूर्ण न करने का जो परिणाम होगा उसको सोचकर वह काँपते हैं।" और कि "मुसलमान हिन्दुस्तान में एक बड़ी डाइनामाइट की-सी ताकत है।" बड़ी करतालिका ध्वनि हुई। इसका यह मतलब तो हो ही नहीं सकता कि मुसलमान ब्रिटिश गवर्नमेन्ट का कुछ बिगाड़ सकें। एक पंजाबी लोकोक्ति है–'माड़ीधाड़ चमारड़ी' अर्थात् कमजोरों का डाका चमारों के घर पर ही पड़ता है। इसके अनुसार शायद मियाँ अली इमाम और प्रसिद्ध बागवान पुरा के मियाँ लोगों के वकील मियाँ महम्मदशफी का यह मतलब है कि महम्मदी जाहिल लशकर हिन्दुओं पर पूर्वी बंगाल की तरह का आक्रमण करेगा। तब क्या चिन्ता है, हिन्दू सदा से ही ऐसे आक्रमणों को सहन करते आए हैं। एक ओर से पड़ेगी तो दूसरी ओर कपड़ा फाड़ डालेंगे। गवर्नमेन्ट जब अधिकार देने को उद्यत हुई है तो भिखमंगों की क्या कमी है ? भला मुसलमान तो जो कुछ माँगते हैं अपने डंडे के बल पर माँगते हैं और साथ-ही-साथ गुर्राते भी जाते हैं। किन्तु जैनी केवल इस विचार से हिन्दुओं से जुदे होकर अधिकार माँगते हैं कि उनके विचार में गवर्नमेन्ट अपने को निर्बल बताने वालों से ही प्रसंन्न होती है। अब बौद्ध कहते हैं कि यद्यपि उनकी संख्या 45,879 ही है तथापि सब उनके विरुद्ध होंगे इसलिए उनका जुदा प्रतिनिधि होना चाहिए। मुझे कई मुसलमान तथा सिक्ख भाइयों ने कहा कि मैं भी अपने सहधर्मियों को जुदा प्रतिनिधि भेजने का अधिकार माँगने की प्रेरणा दूँ। मैं तो धर्मसभाओं का इस मामले से कुछ सम्बन्ध ही नहीं समझता। किन्तु यदि मेरे भाइयों का ऐसा विचार हो भी तो मैं उन्हें आगे बढ़ने से मना करूँ।

भला 50 से अधिक कौंसिलरों में एक आर्य की कौन सुनेगा ? वर्तमान अवस्था में यह तो सम्भव है कि हम लोगों का कोई वाली-वारिस न देखकर कुछ कौंसिलरों के दिलों में दया आ जतावे। किन्तु आर्य समाज को तो अपनी याचना ही किसी ऊँची दरगाह में ले जानी है, तब व्यर्थ पुरुषार्थ गँवाने से क्या लाभ ?

[सद्धर्म प्रचारक, 9 जून, 1909]

वर्तमान भारत व्याघात का गढ़ बन रहा है

किसी समय इस देश में व्याघात दोष का अभाव-सा था, किन्तु इस समय व्याघात का स्वतन्त्र राज्य केवल इसी देश पर दिखता है। एक ओर तो यह समाचार सुनकर हृदय गद्‌गद होता है कि देवता तुल्य श्री बहरामजी मालाबरी ने धर्मपुर के पर्वत पर गवर्नमेन्ट से कुछ जंगल लेकर क्षय रोग ग्रस्तों के लिए स्थान बनाने का विचार स्थिर किया है जिसमें उन्हें साधु वृत्ति रखने वाले दीवान दयाराम गिदूमल सहायता देंगे और जिसकी धन से ऐसी सहायता आरम्भ हुई है कि 35000 रुपया अकेले ग्वालियर नरेश ने देने की प्रतिज्ञा की है; और दूसरी ओर से यह हृदय-विदारक समाचार आता है कि गोरखपुर में बनिए और अहीर के दो लड़कों ने महादेव को सिद्ध करने के लिए न केवल नदी के किनारे मन्त्र ही पढ़े प्रत्युत अपने गलों पर तलवार रखकर भी अपने आपको जख्मी कर लिया। बनिए का लड़का तो डर के मारे नदी में कूदकर डूब गया, किन्तु अहीरवाले ने पुलिस में रिपोर्ट कर दी। क्या आकाश और पाताल का अन्तर, दोनों समाचारों में नहीं है ? धार्मिक सभाओं के लिए तो अभी इतना काम है कि उन्हें आगामी शताब्दी तक सिर खुजलाने का भी समय न मिले और यह सब आपस में ही लड़ मरते हैं।

भारतीय गवर्नमेन्ट की असली प्रजा कौन है ?

इंग्लैंड में एक हम्फ्रीज साहब (Mr. A.E. Humphries) हैं जो हिन्दुस्तानी गेहूँ की पहिचान में उस्ताद हैं। उनके पास भारतीय गवर्नमेन्ट ने इस देश की गेहूँ के सर्व नमूने भेजे थे जिनमें से हम्फ्रीज साहब ने वह श्वेत गेहूँ सबसे उत्तम ठहराया है जिसे पूसा कालेज वालों ने नम्बर छः का गेहूँ नियत किया है। यदि भारतीय गवर्नमेन्ट यह आन्दोलन इसलिए करती कि हिन्दुस्तानी किसानों को एतद्देश निवासियों के हित के लिए उत्तम गेहूँ पैदा करने की प्रेरणा की जाए तो वह कार्य पितृवत् ही समझा जाता, किन्तु इस गवर्नमेन्ट यह आन्दोलन इसलिए किया है कि जो गेहूँ इंग्लैंडवालों के खाने योग्य हो उसे अधिक पैदा करने की प्रेरणा भारतीय किसानों को की जावे। गवर्नमेन्ट यहाँ तक विश्वास दिलाने को तैयार है कि जितनी नम्बर छः की गेहूँ पैदा होगी वह कई वर्षों तक एक धनाढ्य अंग्रेज चक्कीवाला

वर्तमान भाव से मँहगा खरीद करने को तैयार है। यह आश्चर्य की बात है कि ज़िन हमारे शासकों ने भारत प्रजा को अपना पुत्र बनाया वे ही उस प्रजा को भूखों मारने के सामान पैदा कर रहे हैं। क्या इसका मतलब यह नहीं है कि दिनोदिन गेहूँ का भाव महँगा होता जाए ? भाइयों के लिए कोई भी पिता पुत्रों की बलि नहीं दिया करता। क्या इंग्लैंड के चक्कीवाले के मुकाबले के दस ऐसे धनाढ्य मनुष्य भारतवर्ष में नहीं हैं जो यहाँ की सारी गेहूँ दस वर्षों तक खरीदने की प्रतिज्ञा कर लें और अपने देश का पेट भर लिया करें उस के पश्चात् शेष गेहूँ अन्य देशों में जाने दिया करें ? किन्तु ऐसा होना असम्भव है। एक पंजाबी मसल है–'मुगंली होवे ते टब्बर क्यूँ उंधलाए।' यदि मूगंरी हो तो परिवार क्यों ऊँघे। यदि ऐसी ही दृढ़ता की शक्ति होती तो हमारी इतनी दुर्दशा क्यों हो गई होती। तब स्वयम् तो भारत निवासी कुछ कर नहीं सकते; फिर क्या वे अपनी पितृवत् गवर्नमेन्ट की सहायता माँगें ? हिन्दुस्तानियों के कौसिंल में जाने का फल अब निकलना चाहिए।

संशयात्मक विनश्यति

राजा का राजसभा का काम प्रजा की रक्षा है। आन्तरिक अथवा बाह्य शत्रुओं से प्रजा के एक-एक व्यक्ति को बचाना ही राज कर्मचारियों का मुख्य धर्म होना चाहिए। यह तब हो सकता है जबकि राजा को अपने कर्तव्य का ही निश्वासर ध्यान रहे। किन्तु जहाँ अपने और पराये सबसे ही मनुष्य संशयात्मक अवस्था में रहे, वह अपने कर्तव्य का क्या पालन करेगा ? आज से पाँच वर्ष पहले डाकों और आघातों के इतने समाचार नहीं सुनाई देते थे जो आज सुनाई देते हैं। भले मनुष्यों के पीछे लगकर उनको तंग करने में तो आजकल की पुलिस बहुत ही निपुण प्रतीत होती है। किन्तु जो भयंकर डाके बंगाल तथा अन्य प्रान्तों में खुल्लमखुल्ला पड़ रहे हैं उनका पता लगाने में पुलिस सर्वथा अशक्त प्रतीत होती है। राजनीतिक कारणों से जहाँ आठ-दस से बढ़कर खून नहीं हुए, वहाँ अन्य कारणों से सैकड़ों खून सुनने में आते हैं। बरेली के कोतवाल का अपने दस वर्ष की आयु के पुत्र सहित कोतवाली में मारा जाना बड़ा ही भयंकर दृश्य है। इस समय घातकों में बहुधा ऐसे मनुष्य हैं जिनकी समझ में नहीं आ सकता कि राजनीति किस चिड़िया का नाम है। किन्तु जब वे देखते हैं कि पुलिस, मजिस्ट्रेट तथा सरकारी सेना की पूर्ण दृष्टि राजनीतिक पुरुषों पर ही पड़ रही है तो घातक और डाकू लोग समय को अपने अनुकूल समझकर अपना मतलब सिद्ध कर रहे हैं। मेरा यह मतलब नहीं है कि सरकार गुप्तचरों से काम न ले, किन्तु गुप्तचर भी तो हों। मुलतान रेलवे स्टेशन पर अपनी शाखा गुरुकुल के ब्रह्मचारी लौटकर उतरे। गुप्तचर (डिटेक्टिव) ने रूट कागज पेंसिल सँभाली और नाम लिखने की तैयारी की कि महाशय मदनलाल जी ने कागज लेकर फाड़ डाला और पेंसिल लेकर उलटा गुप्तचर का नाम पूछना आरम्भ किया। गुप्तचर

जी लोगों से फरियाद करने लगे। देखो जी, हम खुफिया पुलिस हैं और यह हमें तंग करते हैं। क्या कहते हैं। कैसी उत्तम खुफिया पुलिस है जो अपना खुफियापन आप ही प्रकट करती फिरती है। मेरे लौटते समय मेरे साथ के नौकरोंवाले कमरों में एक महाशय घुसने लगे। मेरे नौकरों ने यह कहकर मना किया कि कमरा नौकरों का है। उत्तर मिला—"मैं खुफिया पुलिस में हूँ।" सभ्य पुरुषों को तो ऐसी पुलिस तंग कर सकती है, किन्तु डाकुओं और घातकों तक इनकी रसाई कहाँ ? क्या ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के कर्मचारी अब भी कुछ होश सँभालेंगे जबकि सरकारी नौकरों की जानें तक सन्देह में पड़ी हुई हैं।

भारतवर्ष की दशा बाहर और अन्दर

लन्दन की प्रेस कान्फ्रेस में सुरेन्द्र बाबू गरज रहे हैं। इनके उक्त कान्फ्रेस में सम्मिलित होने से भारतवर्ष को कुछ लाभ होगा या नहीं इसका पता तो पीछे लगेगा, किन्तु यह तो उपस्थितों एवं विद्वानों को विदित हो जाएगा कि भारत निवासी सब कामों में निपुण हो सकते हैं। सुरेन्द्र बाबू का यह कथन बड़ा ही प्रभावशाली था कि अत्याचार को उत्पन्न करने वाला पूर्व नहीं, अपितु पश्चिम ही है। हमें आशा रखनी चाहिए कि सुरेन्द्र बाबू अपने देश का गौरव पुनः स्थापित करके आएँगे।

मद्रास प्रान्त में अब तक आक्रमणों का बड़ा जुलूस होता है। राजा मन्दरी कालेज में कुल 147 संस्कृत के विद्यार्थी हैं जिनमें से 137 ब्राह्मण हैं। जब तक जन्म के अब्राह्मण संस्कृत भाषा की शिक्षा लाभ करके स्वयं वेद शास्त्रों को नहीं विचारेंगे तब तक यथेष्ट उन्नति न होगी। पंजाब में इसीलिए अविद्या कम है कि यहाँ सर्व वर्गों के लोग संस्कृत भाषा के अभ्यास में परिश्रम करते हैं।

समाचार पत्रों से ज्ञात होता है कि गंगा नहर की एक शाखा हाथरस की ओर निकलेगी तो एक लाख एकड़ भूमि को सींचेगी। इस शाखा पर 17 लाख से अधिक रुपया खर्च होगा। अन्य प्रान्तों में भी लहरें फलती जाती हैं। क्या गवर्नमेन्ट के इस लाभदायक काम से हम कुछ शिक्षा नहीं ले सकते ? जिनकी जमींदारियों के पास नदियाँ बहती हैं उन्हें अपनी बारानी जमीनों को चाही बनाने में कुछ भी कष्ट नहीं होना चाहिए। चिनाब की नहर के किनारे वाले स्थानों में इस साल गेहूँ की पैदावार अधिक हुई है, किन्तु जब इस गेहूँ का बड़ा भाग अन्य देशों को जा रहा है जैसा कि मैंने झोटे से लौटते हुए स्टेशनों पर देखा तो पृथ्वी की इस असाधारण उपजाऊ शक्ति से भी हमारी रक्षा नहीं हो सकेगी।

[सद्धर्म प्रचारक, 16 जून, 1909]

तिब्बत का रहस्य सारा खुल गया

जहाँ लॉर्ड कर्जन के समय अंग्रेजी सेना के ल्हासा (तिब्बत की राजधानी) पहुँचने पर थियासोफिस्टों का महात्मा कूटहूमी लालसिंहवाला ढकोसला निरर्थक सिद्ध हुआ था, उसी प्रकार आज दलाई लामा का पोल भी खुल गया है। जब अंग्रेजों ने दबाया तो लामा गुरु चीन में भाग गए थे, किन्तु अब जबकि चीन में ठहरने को स्थान नहीं तो ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की शरण में आ रहे हैं। वहाँ सम्राट् चीन का हुकुम जारी हुआ है कि इस मनुष्य को दलाई लामा पद से गिरा दिया जाए और लोगों को हिदायत मिली है कि कोई और लड़का तलाश किया जाए जिसमें पुराने लामों का आत्मा काम करता हो; उस लड़के को सम्राट् चीन दलाई लामा का अधिकार देंगे। संसार में अब तक इतना अन्धकार है कि ईश्वरावतार का निर्णय भी लाठीवाला ही करता है जब तक धर्म विषय में पूरी स्वतन्त्रता का प्रचार संसार में नहीं होता स्वार्थ मनुष्यों को सताता ही रहेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 20 अप्रैल, 1910]

शिक्षा की ओर भारत सन्तान की दृष्टि सन्तोषजनक है

बड़ौदा नरेश ने तो उन्नति का मर्म समझ लिया है। शिक्षा ! शिक्षा !! शिक्षा !!! उनके मन वाणी तथा कर्म से तो यही रश्मियाँ निकल रही हैं। इस समय बड़ौदा में एक (Science Institute) पदार्थ विद्यालय खोलने का विचार दृढ़ होकर मकानादि के नक्शे बन गए हैं। आशा की जाती है कि यही विद्यालय कभी पदार्थ विद्या का विश्वविद्यालय बन जाएगा। सरदार दयालसिंह का स्मारक कालेज खुलने ही वाला है। इसमें आने वाले प्रोफेसरों के नाम पढ़कर ही विश्वास होता है कि वर्तमान कालेजों को यह थोड़े दिनों में मात कर देगा। तीन मई को कालेज खोलने का जलसा होगा, जिसके प्रधान पद पर पंजाब के श्रीलाट महोदय सुशोभित होंगे। धर्म शिक्षा के विषय में ट्रीब्यून लिखता है कि संसारस्थ सर्वमतों की धर्म पुस्तकों से पाठ पढ़ाए जाया करेंगे। क्या इनमें आर्यसमाज की धर्म पुस्तक को भी कोई स्थान मिलेगा। सुना है कि श्री सरदार दयालसिंह की वसीयत के अनुसार कोई आर्यसमाजी कभी भी इस कालेज की प्रबन्धकर्ती सभा का सभासद् नहीं हो सकेगा। क्या इसका असर धर्म पुस्तकों तक भी पहुँचेगा ? सब कुछ वर्तमान कार्यकर्ताओं पर निर्भर है। चाहे कुछ ही हो इस कालेज के खुलने से भी विद्या प्रचार में अधिक उन्नति होगी।

यह तो बड़ों की बातें हुईं। अँधेरे-से-अँधेरे कोने से भी शिक्षा ! शिक्षा !! की ही ध्वनि सुनाई देती है। बिहार देश में सारन का जिला है। उसमें हथवा की एक छोटी सी रियासत है। वहाँ जिले में एक ही हाई स्कूल है जिसमें पढ़कर राजकुमार इंट्रेन्स की परीक्षा में उत्तीर्ण हो गए। अब जिले के लोग शोर मचा रहे हैं कि जिस स्कूल में से राजकुमार पास हुए हैं उसी को कालेज बनाकर राजकुमार को पढ़ाया जाए। बीस वर्ष पहले राजकुमार के पास होने पर शायद तवायफों के नाच की दरखास्त होती। समय के प्रवाह से काम लेना बुद्धिमानों का काम है।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 अप्रैल, 1910]

काम से मतलब न कि नाम से

गुरुकुल के खोलने का जब विचार उत्पन्न हुआ था, उस समय इसके स्कीम पर हँसी हुआ करती थी। आज उसी गुरुकुल का अनुकरण नाम बदलकर हो रहा है। हमारे पौराणिक आर्य भाइयों ने तो नाम मात्र ही संज्ञा भेद रखा है और ईसाईयों ने वह भी नहीं रखा। किन्तु अब जो एक महाशय ने लाहौर के ट्रिब्यून द्वारा रेजिडेन्शिल स्कूल के लिए हिन्दू सभा से अपील की है वह क्या है। जैसे सोलन की पहाड़ी पर यह रेजिडेन्शल स्कूल (अर्थात् ऐसा स्कूल जिसके विद्यार्थी आश्रम में ही रहा करें) खोजने की तैयारी कर रहे हैं, गुरुकुल के अनुकरण में ताजपुर के कुमार शिवनाथ सिंह जी भी ईसाईयों के लिए ऐसे स्कूल की आवश्यकता कई बार जतला चुके हैं। दयानन्द ऐंग्लो-वैदिक कालेज के सम्बन्ध में भी दयानन्द ब्रह्मचारी आश्रम खुल चुका है जो लाला रामप्रसाद बी.ए. के अलग हो जाने के कारण हाल में ही बन्द हुआ है। इन सब नई संस्थाओं के नेता एक बात भूल जाते हैं। पहले तो 35 रुपए से 45 रुपए मासिक तक फीस देने वाले कितने निकलेंगे, फिर क्या ऐसों के लड़कों के एक स्थान में रहने से मुसलमानों का-सा जत्था बन सकेगा। मेरी सम्मति में जत्थे ऐसे प्रयत्न में नहीं बना करते। उसके सामान ही कुछ और होते हैं, मुसलमानों का-सा जत्थे आर्य सन्तान में उत्पन्न करने के लिए यदि धर्म के नियमों को किसी अंग में भी शिथिल करना पड़े तो मैं ऐसे जत्थे को आर्य सन्तान के लिए हानिकारक समझूँगा। संसार का सारा ऐश्वर्य एक ओर और आत्मा एक ओर हो तो एक आर्य पुरुष किसकी परवाह करेगा ? यदि आर्य सन्तान के अन्दर सच्ची एकता का कभी प्रचार होगा तो ऋषि दयानन्द के उपदेशों के आगे सिर झुकाने से।

अन्य अंशों में भी आर्यसमाज का अनुकरण हो रहा है। आर्यसमाज में कब का यह प्रश्न उठ चुका कि जात-पाँत के बन्धनों को तोड़कर विवाह करने वालों के लिए नया कानून बनवाया जाए। आर्य पुरुषों ने सिंहवत् लीहे-लीहे छोड़ा, उपजातियों को तो कहना ही क्या है, जाति बन्धन तोड़कर ईश्वर के आश्रय पर विवाह करने वालों की कोई विशेष वीरता ही समझी नहीं जाती। यहाँ यह हाल है और उधर भारत के बड़े-बड़े आगे बढ़े हुए संशोधक अभी यह विचार कर रह

हैं कि यदि कानून बन जाए तो उपजातियों के बन्धन तोड़ डालें। भारत निवासी नव शिक्षितो ! तुम एक-एक बात में ऋषि दयानन्द की शिक्षानुसार ही अमल करोगे, किन्तु दयानन्द का नाम भूल के भी न लोगे। किन्तु इसमें हानि क्या ? हमें काम से मतलब है न कि नाम से।

पलड़ा कभी इधर झुक गया कभी उधर

कोई समय था जब आर्यसमाज की वेद प्रचार या गुरुकुल पार्टी राजनीतिक बातों से कोसों दूर और केवल धार्मिक काम करने वाली समझी जाती थी। उस समय हमारे कालेजवाले भाइयों को राजनीति से परिपूर्ण समझा जाता था। अब यह सुनकर कैसी प्रसन्नता होती है कि जालन्धर के डिप्टी कमिश्नर साहब ने साईदास ऐंग्लो-संस्कृत स्कूल को देखकर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और उस स्कूल के आनरेरी प्रिंसिपिल पण्डित मेहरचन्द्र जी अपना मित्र बतलाकर जो उत्तम काम वह युवकों के लिए कर रहे हैं उसकी अत्यन्त प्रशंसा की। सेवा को मेवा मिलना ही चाहिए और उस स्कूल का परिणाम उत्तम रहने तथा पण्डित मेहरचन्द्र जी के साहब बहादुर से अधिक मिलने का यह परिणाम ठीक ही है। किन्तु सुना गया है कि इसके कुछ दिनों पहले साहब बहादुर ने पुलिस की रिपोर्ट पर दुआवा हाई स्कूल के विद्यार्थियों की क्लब को राजविद्रोह का गढ़ समझकर मिस्टर भक्तराम बैरिस्टर से शिकायत की। क्या आर्यसमाज को एक-न-एक दल को राजविद्रोही समझना आवश्यक ही है ? क्या ऐसी अवस्था में किसी भी आत्मसम्मान का भाव रखने वाले मनुष्य को हमारे अंग्रेज हाकिमों से मिलने का हौसला हो सकता है।

क्या यह काम राजविद्रोही पुरुषों का हो सकता है ?

समाचार पत्रों में यह पढ़कर बड़ा हर्ष हुआ कि दयानन्द कालेज, लाहौर का परिणाम एफ.ए. की परीक्षा में भी सर्वोत्तम निकला। इस कालेज में 67 पास हुए जिस अवस्था में कि गवर्नमेन्ट कालेज से 28 और मिशन कालेज से केवल 26 ही पास हुए हैं। छात्रवृत्तियाँ भी इस कालेज ने तीन ली हैं और शेष चार कालेजों ने एक-एक। इस समय जब यह समझा जाता है कि सरदार दयालसिंह का कालेज दयानन्द कालेज को हानि पहुँचाएगा, यह परिणाम स्पष्ट बतला रहा है कि दयानन्द कालेज का मुकाबला बड़ी टेढ़ी खीर है। इस स्थान में गवर्नमेन्ट के सोचने के योग्य एक बात है। क्या वे लोग जो चाहते हैं कि अंग्रेजी राज दूर हो जाए, इस प्रकार का परिश्रम अंग्रेजी शिक्षा के फैलाने में कर सकते हैं ? मैं फिर कहूँगा कि आर्यसमाज-सी जीती-जागती और ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की हितचिन्तक सोसाइटी का तिरस्कार करना बुद्धिमता का काम नहीं। मुझे यह सुनकर प्रसन्नता हुई है कि श्री महाशय हंसराज जी के पुरुषार्थ में दयानन्द कालेज के विषय में सरकारी

कर्मचारियों की सम्मति बहुत अच्छी हो गई है। ईश्वर हमारे हाकिमों के हृदयों को प्रेरित करे कि वे आर्यसमाज की प्रत्येक संस्था के विषय में ठीक सम्मति स्थिर करना सीखें।

[सद्धर्म प्रचारक, 11 मई, 1910]

पंजाब हिन्दू सभा का दूसरा सम्मेलन

एक सप्ताह पूरा न होगा कि मुलतान में पंजाब हिन्दू सभा का वृहदधिवेशन आरम्भ हो जाएगा और अभी इस विषय पर ही विवाद हो रहा है कि हिन्दू सभा क्या है ? और उसके उद्देश्य क्या होने चाहिए। तख्त खालसा जी तो यही समझ बैठे हैं कि आर्य जाति से जुदे होकर वह भी मुहम्मदियों की तरह विशेष अधिकार ग्रहण कर लेंगे और इस धुन में ऐसे मसत हैं कि अपने हाकिमों का प्रत्यक्ष इशारा भी उन्हें सचेत नहीं करता। वजीराबाद की म्युनिसिपेलिटी के नियम बदले, हिन्दुओं की दो मेम्बरियों के मुकाबिल मुहम्मदिओं को चार स्थान मिले। क्या तखत जी के भी कुछ हाथ आया ? नहीं, सिक्ख हिन्दुओं का एक भाग ही समझे गए; किन्तु बाबा गुरुबख्श सिंह वेदी के प्रधान बनने पर खालसा जी आपे से बाहर हो रहे हैं। अखबार आमवाले गोपीनाथ के भाई हिन्दू सभा को आर्यो का ही गढ़ समझ रहे हैं। मेरी दृष्टि में हिन्दू सीभा को जो सम्मति पंडित बुलाकीराम शास्त्री जी ने पंजाबी लाहौर द्वारा दी है वह निष्पक्ष हो के विचारने योग्य है। सभा को वही कार्य करने चाहिए जो वह कर सके; यदि इस सभा की आवश्यकता समझ भी ली जाए। पंडित बुलाकीराम जी की सम्मति है कि सभा को शिक्षा तथा राजनीतिक कामों से बाहर नहीं जाना चाहिए। किन्तु क्या राजनीतिक काम इन्डियन नेशनल कांग्रेस द्वारा नहीं हो रहा, और क्या शिक्षा का कार्य पहले से ही बहुत सी सोसाइटियाँ नहीं कर रहीं ? इस विषय में 'ट्रीब्यून' लाहौर के योग्य सम्पादक की सम्मति बहुत ही उत्तम है। वह लिखते हैं यदि शिल्पादि की उन्नति करना हो तो नई संस्था स्थापना करने के स्थान में क्यूँ न हिन्दू टेक्निकल इन्स्टीट्यूट का कोष पूरा किया जाए ? जिससे बीसियों के स्थान में सहस्रों हिन्दू शिल्पादि क्रिया सीख अपनी तथा अपने समाज की उन्नति कर सकें। हिन्दू सभा के शुभचिन्तकों ने जो यह सम्मति दी है कि अधिवेशन में आए महाशय उपजातियों का भेद तोड़ने के लिए परस्पर में नाते रिश्ते कर लें बहुत ही उत्तम है, यदि इसमें भी सफलता हुई तो समझा जाएगा कि सहस्रों हिन्दू भाइयों का एकत्र होना व्यर्थ नहीं गया।

राजविद्रोह का जोर समाप्त हो रहा है

जो लोग शान्ति के राज्य में ही शारीरिक, सामाजिक तथा आत्मिक उन्नति की सम्भावना समझते हैं उनके लिए यह समाचार शान्तिदायक होगा कि जिस घोर राजविप्लव के कारण भारत निवासियों पर सन्देह का समुद्र उमड़ पड़ा था उसकी सीमा का पता लग गया है। ढाका तथा नासिक के जत्थों पर ही सारे राजविप्लव की समाप्ति ज्ञात होती है और अतः वे अभियोग अब तक विचाराधीन हैं। इसलिए कहा नहीं जा सकता कि उस अभियोग में तत्त्व कितना है। जो महामूर्ख आर्यत्व से गिरकर इस प्रकार के निषिद्ध गढ़ों में गिरकर अपने देश की हानि और बदनामी करा रहे हैं। उनको समझाने का कर्तव्य उन लोगों को अवश्य लेना चाहिए जिनका उन पर कुछ प्रभाव पड़ सकता है। यह माना कि राज्य कर्मचारी राजभक्तों पर भी प्रसिद्ध दूषण देकर बड़ी अन्तरीय अशुद्धि का प्रमाण देते हैं, किन्तु अविद्यांधकार में फँसे मनुष्यों की अनुचित कार्यवाही पर बुद्धिमानों को न शोक करना चाहिए और न ही इसलिए अपने कर्तव्य का त्याग करना चाहिए। आर्य उपदेशकों तथा विद्वानों का सबसे बढ़कर कर्तव्य है कि वह देश में से रागद्वेष के विचारों को बाहर निकालने की कोशिश करें और प्रजा को धार्मिक राजभक्ति का सदुपदेश करें।

वैदिक धर्म की ही जय होगी

दयानन्द के नाम से घृणा प्रकाशित करते हुए भी लोग वैदिक नियमों के पालन करने में एक-दूसरे को मात कर रहे हैं। दयानन्द ने ब्रह्मचर्य पालन को अत्यन्तावश्यक बतला कर गृहस्थों का विद्योपार्जन करना असम्भव बतलाया। ऋषि के दीर्घ समाधि लेने के वर्षों पीछे आर्यसमाज की आँखें खुलीं और गुरुकुल स्थापित हुआ। एक ओर तो डाक्टर पेनेल ने और उसके पश्चात् श्रीमती एनी बेसेन्ट ने अपने विद्यालयों में विद्यार्थियों के विवाह करने के विरुद्ध आवाज उठाई और दूसरी ओर सनातन धर्म सभाओं ने न केवल पुत्री पाठशालाएँ ही खोल दीं प्रत्युत ऋषिकुल तथा अन्य ब्रह्मचारी आश्रम खोलने आरम्भ कर दिए। अब मद्रास से समाचार आया है कि वहाँ की शिक्षा समिति ने स्कूलों और कालेजों में पढ़ने वाले लड़कों में विवाहों की गणना आरम्भ की है। मद्रास का इंडियन सोशल रिफार्मर ऐसे हाथों में है जो पाश्चिमात्य विचारों का अग्रणी है किन्तु उसने भी लंदन टाइम्स के संवाददाता के ऋषि दयानन्द पर किए कटाक्षों को असह्य बतलाकर उसे मुँहतोड़ उत्तर दिया है। दयानन्द अब एक देश वा एक समाज का मुखिया नहीं रहा, समय आ रहा है जब पक्षपात को छोड़कर सबको ही मुक्तकण्ठ से वर्तमान काल के सच्च आचार्य के सामने सिर झुकाना पड़ेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 5 अक्टूबर, 1910]

आर्यभाषा की उन्नति की आशा बँध चली है

हिन्दू साहित्य सम्मेलन की सफलता के लिए मैं श्री पंडित मदनमोहन मालवीय जी को बधाई देता हूँ और अपनी, रोगग्रस्त होने के कारण, अनुपस्थिति के लिए क्षमा माँगता हूँ। 300 प्रतिनिधियों का नवराज में बाहर से आना मामूली बात नहीं। नागरी प्रचारिणी सभा का 6000 रुपए ऋण एक सभ्य ने ही गुप्तदान से चुका दिया। हिन्दी पैसा फण्ड के कोष में 3500 रुपए आए। एक सेठ महाशय ने 300 रुपए आर्यभाषा के राजपूताने में प्रचारार्थ दिया तथा 500 रुपए एक ऐसी पुस्तक को अर्पण किया जिसमें व्यापारियों के जानने योग्य बातें आर्यभाषा में लिखी हों। महाराजा बड़ौदा की ओर से यह सूचना बड़ी उत्साहवर्धक थी कि आर्यभाषा का कुछ वर्षों तक पढ़ाना उनके राज्य की पाठशालाओं में आवश्यक कर दिया गया है।

विदेश में क्या हो रहा है ?

बम्बई प्रान्त के सावरकर ने श्यामजी कृष्ण के चेलेपन का पूरा सबूत देते हुए जो नाच फ्रांस और ब्रिटिश के राजनीतिज्ञों को नचाया उसका निबटारा अब सभ्य संसार के स्थित किए हुए न्यायालय में होगा। शोक कि यहाँ के अनार्किस्टों ने भारतवर्ष की प्राचीन सभ्यता को भी बदनाम करा दिया है। इस कलंक को धोने का सर्व भारत निवासियों को प्रयत्न करना चाहिए। पुर्तगाल देश में एक दिन के अन्दर, बिना अधिक रक्त बहे, 'एक राजशासन' के 'प्रजातन्त्र राज्य' (Republic) का स्थापन हो गया। इस परिवर्तन का परिणाम चाहे कुछ ही हो, किन्तु एक बात सिद्ध हो गई कि अब बड़े-से-बड़े राजनीतिक परिवर्तन के लिए भी मनुष्यों के रक्त की नदी बहाने की आवश्यकता नहीं। इस घटना से भारतवर्ष के पन्थाइयों को कुछ शिक्षा लेनी चाहिए। यहाँ इस समय मतों के परस्पर विवाद का असर उनकी राजनीतिक तथा अन्य दशाओं पर भी पड़ रहा है क्या बिना दूसरों का दिल दुखाए, बिना अन्य मतावलम्बियों को राजपदाधिकारियों की दृष्टि में गिराए मजहबी प्रचार नहीं हो सकता ? हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सब इस पर विचार करें। फारस में अब तक गड़बड़ चल रही है और ऊपर से रूस और बिरतानियाँ ने धमकाना शुरू कर

दिया है। अपने पैरों उठने देना हो तो कुछ दिन फारस के कामों में दखल बन्द चाहिए। मिस्र देश के खदेव तुर्की सुल्तान को मिल आए हैं, इसका परिणाम न जाने क्या होगा। हमारे आने वाले वाइसराय 'लॉर्ड हार्डिंग्ज' ने चलने से पहले जो वक्तृता दी है उससे पता लगता है कि आप न केवल लॉर्ड मिन्टो की नीति को स्थिर रखेंगे, किन्तु सर्व दलों, समूहों तथा मतों को राजी रखने का प्रयत्न करेंगे। आर्यसमाज के लिए यह शब्द बहुत आशा दिलाने वाले हैं।

भारतवर्ष की अवस्था।

जहाँ लॉर्ड हार्डिंग्ज की वक्तृता सन्तोषजनक है वहाँ लॉर्ड मिन्टो की अन्तिम वक्तृता ने जो उन्होंने शिमला में दी, उनको भारत निवासियों का पूज्य बना दिया है। इस वक्तृता की उदारता तथा दूरदर्शिता भारत निवासियों के सब पिछले दुःख भुला देने के लिए काफी है। युक्तप्रान्त के लाट महोदय श्रीमान् सरजान ह्यूएट के स्वस्थ लौटकर अपने पद का चार्ज लेने पर मैं युक्तप्रान्त को बधाई देता हूँ। इसी समय यह समाचार सुना गया है कि ज्वालापुर के 'भारतोदय' नामी मासिक पत्र से 2000 रुपए की जमानत माँगी गई है। क्या श्रीमान् आगरा के 'मुसाफिर' और ज्वालापुर के 'भारतोदय' पत्रों को एक अवसर अपनी लेखप्रणाली सुधारने का (यदि उसमें त्रुटि हो) न देंगे। क्षमा से बढ़कर भूले हुओं को ठीक मार्ग पर लाने का और कोई साधन नहीं है। कांग्रेस की तैयारियाँ प्रयाग में हो रही हैं। श्री पंडित मालवीय जी के उत्तर में जो उत्साहवर्दक पत्र मिस्टर हूम ने 82 वर्ष की आयु में लिखा है वह मुर्दों में जान डालने वाला है। उन्होंने लिखा है कि 'राजप्रतिनिधियों सम्राटों तथा पार्लियामेन्टों को भी ध्यान से भुलाकर' राजनियमानुसार अपनी उन्नति का प्रयत्न करना चाहिए। क्या इस विश्वासी बूढ़े से आर्यसमाज कुछ भी शिक्षा न लेगा। क्या परमात्मा का सहारा लेकर आगे चलते हुए वैदिक धर्म की उन्नति को कोई शक्ति रोक सकती है ? परमात्मा करे मेरे आर्य भाइयों के अन्दर की आँखें खुलें और वे समझें कि बिना वैदिक आचार के संचार के जीवन व्यर्थ जा रहा है। श्रीमती एनी बेसेन्ट इस समय भी बड़े उत्साह से काम कर रही है। जो सराहनीय है, किन्तु जो कोशिश वह सत्य के दबाने में करती हैं वह सराहनीय नहीं। जब भारतवर्ष और विशेषतः आर्य सन्तान के सुधार का आरम्भ कर्नल अल्काट से बतलाने लगती हैं तो यह नहीं बतलाती कि कर्नल साहब मेडम ब्लैवेट्स्की सहित ऋषि दयानन्द के चेले बनकर आए थे और उन्हीं के आश्रय पर चिरकाल तक काम करते रहे।

[सद्धर्म प्रचारक, 26 अक्टूबर, 1910]

भारतवर्ष

बड़े लाट की राज्य नियन्त्री सभा (इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल) की बैठक मार्च की प्रथम प्रविष्टा के दिन हुई। जब से राज्य नियन्त्री सभा के सभासदों की संख्या में वृद्धि आई है तब से और कुछ लाभ हुआ हो चाहे न हुआ हो, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह अवश्य सिद्ध हो गया है कि अभी तक भारतवासियों में शासन के योग्य गुण नहीं आए। सारे राजनीति के ग्रन्थों का पारायण कर जाइए, आप को दो ही मूल सिद्धान्त मिलेंगे जिन पर सारे राज्य की स्थिति है। वे दो मूल सिद्धान्त—'सोच-विचारकर काम करो तथा काम शुरू करके बीच में न छोड़ो'—ये हैं। ये दो ही मूल सिद्धान्त हैं जिन पर सारी राजनीति ठहरी हुई है। किन्तु क्या वाइसराय की नियन्त्री सभा के सभासद् बनकर हमारे देसी भाइयों ने यह सिद्ध किया है कि वे राजनीति के क-ख-ग से भी परिचित हैं ? क्या उनका व्यवहार यह सिद्ध करता है कि वे राज्य कार्य में हिस्सा लेने के योग्य हैं ? शोक है कि उत्तर निषेध में देना पड़ता है। पहले सोच-विचार के कार्य करने की ही बात ले लीजिए। बंगाल के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ नेता मा. भूपेन्द्रनाथ वसु ने प्रेस एक्ट के सुधार के लिए एक प्रस्ताव करना था। सरे पत्रों में शोर मचा हुआ था, किन्तु जब पेश करने का समय आया तो आपने उठते ही फरमाया कि मेरे मित्रों ने मुझे सलाह दी है कि इस समय यह सुधार पेश न होना चाहिए। अतः मुझे यह प्रस्ताव मोड़ने की आज्ञा दी जाए। खैर, मोड़ने की आज्ञा तो मिल ही जानी थी, परन्तु इस घटना ने क्या दिखाया। इस घटना ने यह दिखाया कि अभी हमारे राजनीतिक नेताओं में सोच-विचारकर कदम रखने की आदत नहीं है। इसीलिए पहले ग्रास में ही मक्षिकापात हो गया।

दूसरा राजनीति का मूल सिद्धान्त दृढ़ता है। यदि तुमने आगा-पीछा सोच विचारकर एक कार्य आरम्भ कर ही दिया है तो तन में प्राण रहते उससे मुँह न मोड़ना ही तुम्हें उन्नति के शिखर पर पहुँचा देगा। धर्म का रास्ता यही है। जो राजनीतिक एक कार्य को आरम्भ करते ही बन्द कर देता है, जो कार्य के श्रीगणेश के साथ ही उसकी इतिश्री कर देता है, वह मिठास रहित मीठे की तरह राजनीति रहित राजनीतिज्ञ है। पिछले अधिवेशन में पं. मदनमोहन मालवीय जी ने मुसलमानों

को विशेष अधिकार देने के विषय में विचार करने के लिए जो प्रस्ताव किया था, उसे उसी अधिवेशन में लौटा लिया। अपने निश्चय तथा कर्तव्यपरायणता में कोई भी दृढ़ता नहीं दिखाई। झट से चुप हो बैठे। यह भी नहीं कह सके कि मालवीय जी के विचार ही उस एक घंटे में बदल गए हों, क्योंकि अब तक उनके लीडर और अभ्युदय पुराने निश्चय के अनुसार ही मुसलमानों को विशेष अधिकार मिलने का विरोध कर रहे हैं।

इस स्थान में इससे यह अभिप्राय नहीं कि वसु महाशय तथा मालवीय जी के प्रस्तावों की कुछ कीमत थी या नहीं। यहाँ अभिप्राय केवल यह दिखाने से है कि हमारे देश के राजनीतिक नेताओं ने अभी तक राजनीति के क-ख-ग का श्री पाठ नहीं किया वे अपने कार्य को धर्म या कर्तव्य समझकर नहीं करते।

इंग्लैंड अभी तक पार्लियामेंट में लॉर्डों की शक्ति के छीनने के लिए जो प्रस्ताव पेश हुआ है, उसका कोई अन्त नहीं दिखता। किन्तु कंजर्वेटिव लोग घबराए हुए अवश्य हैं। प्रस्ताव पर जो विवाद हो रहे हैं वे बड़े ही नीरस तथा अनावश्यक हैं। उधर लॉर्ड लोग अपने साथ बुरी होती देखकर अपने घर को सुधारने में लगे हुए हैं। लॉर्डों के कंजर्वेटिव नेता लॉर्ड लेण्डस डौन हाउस ऑफ लॉर्डस के सुधार के लिए बिल पेश करेंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 8 मार्च, 1911]

पार्लियामेंट बिल

पार्लियामेन्ट बिल या वीटो बिल पार्लियामेन्ट में तो पास हो ही गया समझना चाहिए। इस बिल के छः भाग हैं। इनमें से दूसरा भाग ही अधिक विवादास्पद था वह भी पास हो गया अब शेष कुछ नहीं रहा। अब यह बिल हाऊस ऑफ लॉर्डस में जाएगा। वहाँ देखें इसका क्या फैसला होता है ? बहुत सम्भव है कि हाऊस ऑफ लॉर्डज में यह पास हो जाए। यद्यपि सबकी यही सम्भावना है कि यह बिल लॉर्डज में गिर जाएगा, किन्तु हमें यह सम्भावना ठीक नहीं दिखती। हमारी समझ में तो यही आता है कि लॉर्डज में यह बिल कुछ संशोधनों के साथ पास हो जाएगा और फिर कामन्स भी उन संशोधनों को मानने पर तैयार हो जाएगा। और इस तरह पर राजतिलक से पूर्व ही इस झगड़े को तय किया जाएगा।

शिमला की रियासतें

शिमला के पास बहुत सी छोटी-छोटी रियासतें हैं। ये रियासतें तो नाम मात्र की ही है, वस्तुतः यह जमीन्दारिएँ हैं। कई तो इनमें हजार वार्षिक आमदनी तक की रियासतें हैं। यद्यपि वे इतनी छोटी हैं, तथापि जब पहले-पहले ये इंग्लिश सरकार के नीचे आई थीं तब इन्हें पूरे अधिकार दिए गए थे। वे अब तक हैं। इन छोटी रियासतों के मालिकों को भी उतने ही अधिकार हैं जितने बड़ी-बड़ी रियासतों के स्वामियों को हैं, इन सबके ऊपर एक शिमला का चीफ कमिश्नर है, किन्तु उसे अन्य इतने काम हैं कि वइ इनके सब कामों में ध्यान नहीं दे सकता। इसका परिणाम यह है कि इन रियासतों का प्रबन्ध बहुत खराब है। अनियम का प्रायिक राज्य उनमें रहता है। कोई अच्छा प्रबन्धकर्ता उनमें रहता नहीं। राजे स्वयं कुछ योग्यता रखते नहीं। अतः प्रायः उनकी शिकायतें सुनी जाती हैं।

फारस का कर्ज

फारस को अब धन की बड़ी आवश्यकता हो रही है। उसके लिए कर्जा लेने का प्रस्ताव बहुत दिनों से 'मलर्जिस' में पेश था। कभी किसी देश का प्रस्ताव होता था और कभी किसी देश का, अन्त को इंग्लैंड के इम्पीरियल बैंक से ही कर्जा लेना निश्चित हुआ,

जिस देश का धन सम्बन्धी विश्वास सब जगह फैला हुआ हो, वह सब देशों का उत्तमर्ण हो जाता है और उससे उस देश की नैतिक गुरुता सदा बढ़ी रहती है।

देहली दरबार

देहली दरबार के लिए खूब जोर शोर से तैयारियाँ हो रही हैं। स्थान निश्चत हो गया है, समय विभाग भी निर्धारित कर लिया गया है। किन्तु इस सब तैयारियों के होते हुए एक दैवी विघ्न ऐसा उपस्थित हो गया है कि उससे छुटकारा पाना कठिन प्रतीत होता है। देहली में प्लेग राक्षस ने अड्डा जमा लिया है, पिछले सप्ताहों में तो बड़ा ही डरावना रूप उसका रहा। गत सप्ताह कुछ आराम हुआ है। अब देहली की म्युनिसिपैलिटी ने इसके भगाने के लिए विशेष प्रवन्ध करने का निश्चय किया है। पुराना सारे मुहल्लों का प्लेग का हिसाब देखा जाएगा, उनमें से रोग के विशेष-विशेष केन्द्रों का पता लगाकर उसके हटाने के लिए खास यत्न किया जाएगा। केवल दिल्ली में ही क्यों, इस समय तो सारे देश में से प्लेग के भगाने का यत्न होना चाहिए, ताकि महाराजा जार्ज आकर अपनी प्रजा को सुखी तथा शान्त पा सकें।

मालवीय जी की यूनिवर्सिटी

मालवीय जी अपने विश्वविद्यालयार्थ अच्छा परिश्रम कर रहे हैं। पिछले दिनों में आपने ग्वालियर आदि स्थानों में तदर्थ चक्कर लगाए। अब आप बम्बई की ओर गए हैं। दस लाख से कुछ अधिक रुपयों की प्रतिज्ञाएँ हो चुकी हैं। यूनिवर्सिटी तो बनाई ही जाएगी, किन्तु निम्नलिखित प्रार्थनाएँ हम मालवीय जी से कर देना चाहते हैं, ताकि उनकी यूनिवर्सिटी पूरा-पूरा आर्य-विश्वविद्यालय बन सके।

(1) इसके लिए कोई चार्टर न लिया जाए। देशवासियों के चार्टर को ही पर्याप्त समझा जाए।

(2) पढ़ाई का साधन आर्यभाषा को ही रखा जाए। आर्यभाषा में जो कमी समझी जाए, उसके पूरा कराने का यत्न किया जाए, न कि अंग्रेजी या अरबी को उसका स्थान देकर उसे देश निकाला दे दिया जाए।

(3) उसे सच्चा आर्य विश्वविद्यालय बनाने के लिए यह भी आवश्यक है कि उसमें किसी अनार्य का अधिकार न होने दिया जाए।

(4) पृथक् धर्म-विद्यालय खोलने के कुछ अर्थ नहीं हैं। क्योंकि इस प्रकार से यह कदापि सर्व सम्मत नहीं हो सकता। नहीं तो बताइए कि कौन से धर्म की उसमें शिक्षा होगी। पौराणिक धर्म की शिक्षा वहाँ होगी या नहीं ? यदि होगी तो सर्वसम्मत विश्वविद्यालय वह नहीं हो सकता। यदि नहीं तो फिर कौन सा धर्म पढ़ाया जाएगा ?

[सद्धर्म प्रचारक, 10 मई, 1911]

इंग्लैंड की पार्लियामेंट में जीवन के चिह्न

यह देखकर किस लोक हितैषी को प्रसन्नता न होगी कि इंग्लैंड की पार्लियामेंट प्रतिदिन नए-से-नए जीवन के चिन्ह दिखा रही है। वीटोबिल और पार्लियामेंट का उसमें से गुजर जाना यह ऐसी अद्‌भुत घटना है—जिसकी इंग्लैंड जैसे अनुदार देश से आशा न थी। यह दोनों बिल पार्लियामेंट से तो गुजर गए। अब रहा इनका हाऊस ऑफ लॉर्डज में पास होना। यह तो स्पष्ट है कि हाउस ऑफ लार्डज में इस बिल का अतिक्षीण विरोध होगा। अभी कल लार्ड्ज में बोलते हुए लॉर्ड रोजवरी ने कहा था कि यदि हाऊस ऑफ लॉर्डज में से वीटा बिल पास हो गया तो फिर हाउस ऑफ लार्ड्ज़ में बैठने के लिए कोई भी मानी पुरुष तैयार न होगा। ये दो बिल और नया सोशलिस्टिक बजट यह सब मिलकर सिद्ध करते हैं—कि लायड जार्ज एक जीवितात्मा पुरुष हैं—उन्होंने अनुदार और सुस्त अंग्रेज जाति में भी वैल्श रुह फूँक दी है।

'बंगाली' के स्वामी सुरेन्द्र बाबू

पहले 'बंगाली' नाम का अंग्रेजी दैनिक पत्र बाबू उपेन्द्रनाथ बसु और बाबू सुरेन्द्रनाथ जी के सम्मिलित स्वामित्व में था। बाबू सुरेन्द्रनाथ उसके सम्पादक थे। अब गत कुछ दिनों से उसके सर्वाधिकारी सुरेन्द्र बाबू ही हो गए हैं। पहले ऐसी आशंका होती थी कि स्वामित्व परिवर्तन में कुछ झगड़ा पड़ेगा और बात कचहरी तक पहुँचेगी—किन्तु दोनों पक्षों ने बाबू शारदा चरण मित्र को अपना न्यायकर्ता बनाकर फैसला कर लिया। अब सुरेन्द्र बाबू की ही अध्यक्षता में वह सम्पादित होता है। इलाहाबाद के 'लीडर' का एक संवाददाता कलकत्ता से लिखता है कि 'सुरेन्द्र बाबू अपने पत्र में अनेक प्रकार की उन्नति करना चाहते हैं—जो कि शनैः-शनैः होगी, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि हम सब यह जानकर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं कि हमारे वृद्ध नेता अभी तक उसी तरह कार्य में तत्पर हैं जैसे पहले थे। घड़ी की तरह समय पर कार्य करने वाले सुरेन्द्र बाबू को आप ऐन समय पर 'बंगाली' के कार्यालय में बैठे हुए, निरीक्षण करते हुए और सलाह देते हुए पाएँगे। फिर वहाँ कार्य समाप्त करते ही आप अपने रिपन कालेज में जाते हैं—और तत्पश्चात् कोलो टूलावाले

कार्यालय में पत्रों के उत्तर देने तथा बातचीत करने के लिए पहुँच जाते हैं। इसके आगे सुरेन्द्र बाबू को इतना कार्य करने की शक्ति का वर्णन करता हुआ वही संवाददाता कहता है—'कि आपका नियमयुक्त जीवन, प्रातः शीघ्र उठना और रात्रि के समय शीघ्र सो जाना, सायंकाल चार बजे से प्रथम अपने घर बैरकपुर में आ पहुँचना, प्रातःकाल नियमपूर्वक भ्रमण करने जाना इत्यादि बातें आपकी इतनी अवस्था में भी इतना कार्य करने के योग्य बनाती हैं। आप आज तक कभी बहुत बड़े रोग से आक्रान्त नहीं सुने गए।'

इस बूढ़े वीर का नियमबद्ध रहना तथा व्यायामप्रेम हमारे देशवासियों के विशेष ध्यान देने योग्य है।

दीये तले अँधेरा

दीये तले अँधेरा इसे ही कहते हैं। बनारस के महाराजा को नया राज्याधिकार मिला है। आपने यहाँ से अब एक 'State Gazetteer' निकलने लगा है, जिसमें रियासत का राजकीय वृतान्त रहा करेगा। वह दो भाषाओं में निकला है—एक अंग्रेजी और दूसरी उर्दू—आर्यभाषा का नाम तक नहीं। उस बनारस की रियासत में जहाँ 90 फीसदी लोग इन्हीं नागरी-वर्णमाला के अक्षरों को प्रयोग में लाते हैं—जो नागरी प्रचारिणी के कारण नागरी प्रचार का केन्द्र-सा बन रहा है—नागरी लिपि तथा आर्यभाषा का अपमान विस्मयजनक है।

मद्रास में शारीरिक शिक्षण

मद्रास की गवर्नमेन्ट ने एक बड़ा उत्तम विचार उठाया है। उसका विचार है कि मद्रास प्रान्त के विद्यालय के विद्यार्थियों को यथोचित मानसिक शिक्षण के साथ-साथ शारीरिक शिक्षण भी दिया जाए। कुछ वर्ष पूर्व मैसूर की रियासत ने अमेरिका के एक अभिज्ञ पुरुष को अपने यहाँ के विद्यालयों में शारीरिक शिक्षण की ठीक-ठीक व्यवस्था करने के लिए बुलाया था। मैसूर में यह शारीरिक शिक्षण का परीक्षण बहुत कुछ सफल हुआ है। इसीलिए मद्रास गवर्नमेन्ट ने भी इस परीक्षण का करना प्रारम्भ किया है। यह बड़ा अच्छा प्रारम्भ है। वस्तुतः शारीरिक शिक्षा के बिना किसी तरह की भी शिक्षा अधूरी होती है। वह शिक्षा, शिक्षा कहाने योग्य नहीं जिससे मनुष्य को अपने शरीर के अंगों को भी नियमपूर्वक चलाना न आए।

पालतू पत्रों का पेचीदा प्रश्न

भारत सरकार की नए-से-नए आविष्कार करने में बड़ी ही फुर्तीली है। होना भी ऐसा ही चाहिए, क्योंकि प्रायः अंग्रेज लोग कहा करते हैं कि जितना और जैसा साम्राज्य-भार इस समय इंग्लिश जाति पर है आज तक इतना और ऐसा कार्यभार

किसी भी जाति पर नहीं पड़ा। नए कार्य के करने में नए परीक्षण करने ही पड़ते हैं। पालतू पत्रों का चलाना भी एक नया आविष्कार है। आवश्यकता को आविष्कार की माता कहा जाता है—यहाँ भी सरकार को देशी पत्र समूह के सामना करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अतः उसने पालूत पत्र सुलभ समाचारादि का आविष्कार किया। यदि केवल सरकार की ओर से एक पत्र ही निकल आता तो कुछ बात न थी, किन्तु रा.व. नरेन्द्रनाथ जैसे सज्जन को इस पत्र के साथ खराब होता देखकर हमें अत्यन्त शोक है। न जाने अपने सारे पिछले देशहितकारी कर्मों पर पानी फेरकर आपने इस सम्पादन कार्य में क्यों हाथ डाला ? यह सम्पादन कार्य ऐसा है जिसमें न आपको शाबासी मिलेगी और न कोई कृतसकार्यता होगी, अभी दो-एक अंक निकले हैं और मुसलमानों ने शोर मचा दिया है कि सुलभ समाचार में हिन्दू धर्म के पक्ष के लेख क्यों रहते हैं। नरेन्द्र बाबू ने कहीं लिख दिया कि बंगाल में जूट की खेती कम करके चावल की खेती को बढ़ाना चाहिए। पायोनियर का एक संवाददाता इस पर आशंका उठाता है कि सुलभ समाचार में ऐसी-ऐसी व्यापारीय सुधारणा की बातें न होनी चाहिए। क्यों न एक आदमी इस कार्य के लिए नियत हो कि वह राय बहादुर नरेन्द्रनाथ के हाथों को पकड़कर उनसे जैसा चाहे लिख देवे। ताकि नाम एक देशी का रहे, किन्तु लिखा हुआ दूसरे का हो। ये राजनीतिक खेलें तो होती ही रहती हैं—इसमें पिसेंगे घुन की न्यायी राय बहादुर नरेन्द्रनाथ—इस कीमत पर रायबहादुरी बहुत महँगी है।

कुमाऊँ में समाज संशोधन

कुमाऊँ प्रान्त के नायक वंश के लोगों के अन्दर कई दिनों से सामाजिक धर्म के बन्धन बहुत ही ढीले हो रहे थे। वहीं की कुलवधुओं के आचार की ओर कभी ध्यान न दिया जाता था। वहाँ के कुलवृद्धों के देखते-देखते कन्याएँ वेश्याकर्म का आश्रय करती थीं और ऐसा करना कोई बुरा कार्य नहीं समझा जाता है। वहाँ के आर्यसमाजी भाइयों के पुरुषार्थ की जितनी ही प्रशंसा की जाए उतनी ही थोड़ी है—जिन्होंने परिश्रम तथा प्रयत्न से उस जाति को इस बुरी हालत से निकाला है। उस जाति के लोगों ने अपने हस्ताक्षरों सहित प्रतिज्ञापत्र लिखा है, जिसमें उन्होंने भविष्यत् में सदा इस दुराचार को हटाने की प्रतिज्ञा की है।

काशी की नागरी प्रचारिणी सभा में विरोध

पत्रों में नागरी प्रचारिणी सभा के कार्यकर्ताओं और श्री बाबू श्यामसुन्दरदास जी आदि कई एक महानुभावों के बीच में झगड़े की चर्चा हो रही है उसके कुछ वृत का उस लेख से पता लग सकेगा—जो हमने कहीं अन्यत्र इसी अंक में बिहार-बन्धु से उद्धृत किया है। इस झगड़े के होने से जो शोक उत्पन्न होता है वह और

भी बढ़ जाता है जब हम सुनते हैं कि यह झगड़ा किसी सिद्धान्त पर अवलम्बित नहीं किन्तु दो व्यक्तियों के ऊपर आश्रित है। सभा के कई कार्यकर्ता बाबू श्यामसुन्दरदास बी.ए. को कोष के अधिष्ठातृत्व से हटाकर पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी को उस स्थान पर नियुक्त करना चाहते हैं। इस नियुक्ति की तैयारियाँ शुरू भी हो गई हैं तथा पिछली नागरी प्रचारिणी पत्रिका में हमने पढ़ा कि पंडित महावीरप्रसाद जी सभा के प्रतिष्ठित सभासद् चुने गए हैं। वैसे तो सभा, जिसे कोषकार्य के करने के योग्य समझे, उसे उस कार्य में नियुक्त करे, उसमें हमें कुछ कथनीय नहीं है। यदि हमें कुछ कथनीय है तो यह है कि सभा को अकृतज्ञता दोष के दोषी होने से बचना चाहिए। बाबू श्यामसुन्दरदास जी बहुत वर्षों तक नागरी प्रचारिणी सभा के प्रधान रहे हैं। जो कुछ नागरी प्रचारिणी ने अब तक किया है—उसमें बहुत बड़ा हिस्सा बाबू जी का ही है—सभा को चाहिए कि वह बाबू जी की पुरानी सेवाओं को न भूले। यदि इसी प्रकार से क्षण भर में सेवकों की सेवाओं पर पानी फिरने लगा तो फिर कौन मनुष्य आनरेरी काम करने के लिए अपना समय तथा जीवन खराब करेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 24 मई, 1911]

दो विश्वविद्यालयों का मिलाप

मालवीय जी ने तो झाड़ में आग लगाकर खूब ही समाधि जमाई और ऐसा मौन धारण किया कि वर्तमान सभ्यता के सबसे बड़े डोलक समाचार पत्रों की गरजती हुई ललकार से भी वह नहीं टूटी। न जाने क्यों मालवीय जी मेल के प्रस्ताव के विषय में इतने चुप हैं ? क्यों नहीं वे उन कठिनाइयों को सर्व साधारण के सामने रख देते जो उन्हें विश्वविद्यालय के कार्य में एकाकी प्रवृत्ति करने में रुकावट प्रतीत होती है ? उन्हें निश्चय रखना चाहिए कि उन कठिनाइयों के स्पष्टतया सामने आ जाने से उनके वर्तमान घातक इलाज की अपेक्षा कोई अच्छा इलाज निकल आएगा। हमने वर्तमान इलाज को घातक कहा है। उसका कारण यह है कि बीबी बेसेन्ट के साथ मिलने से मालवीय जी की कभी भलाई नहीं हो सकती। मालवीय जी विश्वविद्यालय जो लाभ लेना चाहते हैं वह सहस्र प्रयत्न करने पर भी नहीं मिल सकता। क्योंकि वह सम्मिलित विश्वविद्यालय, बीबी बेसेन्ट का विश्वविद्यालय होगा, मालवीय जी का नहीं। मालवीय जी के ब्राह्मणोचित गुणों से हम ही नहीं सारे लोग परिचित हैं। वे सत्य वृत्तिवाले, देशभक्त, किन्तु भोले ब्राह्मण हैं। बीबी बेसेन्ट जैसी चतुरा और धक्कम-धक्का करके आगे बढ़ने की इच्छा रखने वाली महिला को दबाकर रखना उनके लिए असम्भव होगा। साथ ही एक और बात भी मालवीय जी को ध्यान में रखनी चाहिए। यदि मिलित विश्वविद्यालय के बन जाने पर कहीं किसी महात्मा ने हिमालय के घने जंगल से भागकर बीबी बेसेन्ट के कान में फूँक दिया कि मालवीय जी की बात सुनने योग्य नहीं, वस्तुतः विद्यालय की चालिका बनने लायक तुम हो; तब तो मालवीय जी को बड़ी कठिनाई का सामना करना होगा। क्योंकि बीबी बेसेन्ट ऐसे कार्य में महात्माओं की आज्ञापालन करके ही छोड़ा करती हैं—जैसे कि थियासोफिकल सोसाइटी के प्रधान बनने के समय वे सिद्ध कर चुकी हैं।

मिस्टर गोखले का शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव

मालवीय जी के विश्वविद्यालय के दूसरे दर्जे पर, इस समय जागता हुआ प्रश्न मिस्टर गोखले के शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव का है। इस विषय में अपनी सम्मति हम प्रचारक

के किसी पूर्व अंक में दे आए हैं। यह कोई राजनीति का प्रश्न नहीं है और न ही यह कोई बड़ा दर्शन का सिद्धान्त है। यह एक समाजशास्त्र का छोटा सा सिद्धान्त है कि भावी सन्तान की शिक्षा ऐसी रीति से होनी चाहिए जिससे कि वह अपनी जाति या मनुष्य समाज की रक्षा में अधिक योग्य हो सके; मनुष्य जाति की विरोधिनी शक्तियों का अधिक सामना कर सके तथा इस संसार पर के जाति के अस्तित्व के मिटाने वाले कारणों का सामना कर सके। धार्मिक मानसिक तथा शारीरिक उचित शिक्षण के बिना ये उद्देश्य कभी भी सिद्ध नहीं हो सकते। भारतीय स्कूलों की शिक्षा इस उद्देश्य के पूरा करने में अशक्त तथा अयोग्य सिद्ध हुई है। इस अशक्त तथा अयोग्य शिक्षा का जितना ही आश्रय लिया जाएगा उतना ही बुरा है। अपनी शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकता को आप जितना ही उस स्कूली शिक्षा से पूरा करने का यत्न करेंगे, उतना ही आप पीछे पछताएँगे। यदि वस्तुतः मनुष्यसमाज की उन्नति अभीष्ट है और यदि वस्तुतः बालकों को उचित शिक्षा देते हुए मनुष्य बनाने की इच्छा है, तो अपने आपको भारत के नेता कहनेवालों ! आप को चाहिए कि आप इस मृगतृष्णा को छोड़कर अपने बालकों की शिक्षा का प्रबन्ध अपने हाथों में लो। मिस्टर गोखले का बिल पहले से विद्यमान स्वाधीन शिक्षण पर कुल्हाड़ा चला देगा और भविष्यत् स्वाधीन शिक्षण को असम्भव कर देगा। ऐसे बिल का विरोध करना प्रत्येक शिक्षा-हितैषी का परम कर्तव्य है। बिल के पक्षपाती स्थान-स्थान पर सभाएँ करते और रेजूलेशन पास करते हैं, किन्तु शिक्षा सुधार के पक्षपाती और वे लोग जो अपने धर्म की शिक्षा देने के लिए पृथक् कोई विद्यालय बनाना चाहते हैं—इस विषय में निश्चल हैं। ईश्वर उनकी अज्ञान निद्रा को भंग करें।

महाराज का स्वागत

उस दिल्ली शहर में, जिसकी मिट्टी के नीचे और दीवारों के पीछे आज भी प्राचीन भारत के पवित्र क्षत्रियों और मध्यकालीन मुगलों की जलती हुई चिताओं में से निकलने वाली अग्निशिखाएँ कूद-कूदकर इतिहासज्ञों के दिलों में आदर और बीभत्स रस का मिलित संचार कर रही हैं—महाराज पंचम जार्ज का राज्याभिषेक प्रमोद और हास्यरस का आविर्भाव कर देंगा, इस समाचार को सुनकर किस भारतवासी का मन प्रसन्न न हुआ होगा। वह बूढ़ा दिल्ली नगर जिसने सैकड़ों राजवंशों को बनते और बिगड़ते देखा है, जिसकी एक-एक ईंट और एक-एक पत्थर एक-एक राजा और एक-एक राजवंश के राज्याभिषेक के जल और अधःपात के रुधिर से सिक्त हो चुके हैं—वही बूढ़ा और अनुभवी दिल्ली शहर—फिर एक महाराज का राजतिलक देखेगा—यह एक साधारण किन्तु कल्पना का प्रसव करने वाला दृश्य है। इस दृश्य को देखने हजारों भारतवासी जाएँगे और सैकड़ों जा रहे हैं। महाराज के राजतिलक की तैयारियाँ बड़े जोर-शोर से हो रही हैं। स्वागत की तैयारियाँ केवल दिल्ली में

ही हो रही हो सो नहीं—कलकत्ता और बम्बई में भी इसके लिए खूब प्रयत्न जारी हैं। कलकत्ता में जिस तरह का स्वागत होने वाला था वह हम पहले कह चुके हैं। अब स्वागतकारिणी सभा को एक नया ही प्रस्ताव सूझा है कि महाराज को रावण का दिग्विजयार्थ प्रस्थान या औरंगजेब का काश्मीर के विजय के लिए प्रस्थान दिखाया जाए। ये दृश्य गौरवयुक्त तो काफी होंगे, किन्तु उनके प्रभावशाली होने में सन्देह है क्योंकि महाराजा की सवारी के सामने से रावण या औरंगजेब की सवारी निकालना कोई अच्छा सादृश्य न सूचना करेगा। भारतवर्ष की जातियों के रंग-ढंग दिखाने वाला प्रस्ताव अच्छा है और पर्याप्त भी है।

[सद्धर्म प्रचारक, 31 मई, 1911]

मिस्टर गोखले का शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव प्रथम युक्ति

हमारे पाठकों को स्मरण होगा कि कई सप्ताह हुए मिस्टर गोखले के शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव के विषय में लिखते हुए हमने कहा था कि हर एक आर्य पुरुष को उसका विरोध करना चाहिए। अपने कथन की पुष्टि में हमने तीन कारण दिए थे। उनमें से प्रथम यह था कि किसी जाति या देश की शिक्षा का प्रबन्ध जहाँ तक हो सके उस जाति या देश के लोगों के हाथों में होना चाहिए। जो नियत शिक्षा किसी सारी जाति को दी जाने वाली है—वह कौन सी हो ? कैसी हो ? इत्यादि सब प्रश्नों का उत्तर उस जाति के प्रधान-प्रधान व्यक्तियों के अतिरिक्त और कोई नहीं दे सकता। अतः हमारी सम्मति में जब तक शिक्षा की प्रबन्धककर्तृ उपसभाओं के अन्दर जाति या देश के प्रतिनिधियों की विशेष संख्या न निश्चित की जाए और शिक्षा के प्रबन्ध में जातीय इच्छा को विशेष प्रवेश न हो तब तक शिक्षा को कभी आवश्यक न करना चाहिए क्योंकि अनुपयोगिनी तथा अहितकारिणी शिक्षा के होने से हम शिक्षा का न होना अच्छा समझते हैं। हमारे इस कथन पर सम्मति देता हुआ प्रयाग का योग्य सहयोगी 'अभ्युदय' लिखता है कि हमारी यह सलाह कार्य में परिणत नहीं हो सकती क्योंकि देश के सब बालकों की शिक्षा के लिए 3 करोड़ रुपए वार्षिक की आवश्यकता है। आश्चर्य है कि हमारे योग्य सहयोगी को हमारी युक्ति के अन्दर यह अपूर्व त्रुटि कैसे दीख पड़ी ? हमने यह नहीं कहा था कि सरकारी रुपए के व्यय से पढ़ना भी भारतीय बालकों के लिए बुरा है—हमने केवल यह कहा था कि जब तक शिक्षा प्रणाली का कार्य अपनी जाति के प्रतिनिधियों के हाथ में न हो तब तक आवश्यक मुफ्त शिक्षण लाभ की अपेक्षा हानि उत्पन्न कर सकता है।

द्वितीय युक्ति

मिस्टर गोखले के प्रस्ताव का विरोध करते हुए हमने जो दूसरी युक्ति दी वह यह थी कि यदि मिस्टर गोखले का प्रस्ताव इसी रूप में नियम बन जाए जिस रूप में वह अब पेश किया गया है तो हमारे देश का स्वाधीन शिक्षण, बहुत सम्भव है कि असम्भव हो जाए। मिस्टर गोखले के प्रस्ताव द्वारा हर एक बालक के लिए

सरकारी स्कूल में जाना आवश्यक होगा। न जाने के लिए कुछ थोड़े से कारण रखे गए हैं–उन में से एक यह भी है कि यदि बालक स्थानीय शिक्षाधिकारियों की सम्मति में उचित रीति से शिक्षा पा रहा हो तो उसे स्कूल जाने के बन्धन से मुक्त किया जा सकता है। उचित रीति का निश्चायक कौन होगा ? जब तक इस उचित रीति का लक्षण इस प्रस्ताव में ठीक-ठीक नहीं किया जाता और जब तक उस लक्षण द्वारा देश के स्वायत्त शिक्षण को रक्षित नहीं किया जाता तब तक यह नियम स्वायत्त शिक्षण के सिर पर सूत के धागे में लटकी हुई तलवार के समान है–न जाने वह कब गिर पड़े और उसके सिर के दो टुकड़े कर दे। इस पर टिप्पणी देता हुआ वही योग्य सहयोगी लिखता है कि 'बिल में तो यह कहा गया है कि यदि कोई बालक अपने घर पर पढ़ता है या किसी जगह पर पढ़ता है तो उसे मिस्टर गोखले के बिल के अनुसार बने हुए स्कूलों में नहीं जाना पड़ेगा।' ठीक है मिस्टर गोखले के बिल में जो कुछ लिखा है यह उसका भाव है। ऐसा हमारा सहयोगी कह सकता है क्योंकि उसके शब्दार्थ ये नहीं हैं। हम उचित शिक्षण शब्द का यह अभिप्राय नहीं समझते। हम समझते हैं कि उचित शिक्षण शब्द शिक्षा का बहुत-सा भविष्य स्थानीय शिक्षा अधिकारियों के हाथों में छोड़ देता है।

आगे चलकर हमारा सहयोगी लिखता है कि 'धर्म को छोड़कर हमारा सर्वस्व अपहरण हो जाने से भी यदि सारे भारतवर्ष में प्रारम्भिक शिक्षा का प्रचार हो जाए तब भी हम उससे कुछ हानि नहीं समझते।' हमारे सहयोगी का कथन ठीक है किन्तु यदि हम प्रस्ताव के शब्दों को इसी तरह से अपूर्ण रखा गया तो क्या हम यह नहीं कह सकते कि सहयोगी की प्रियतम वस्तु धर्म पर भी दंश आ सकता है ?

तृतीय युक्ति

हमारी तृतीय युक्ति कर सम्बन्धिनी थी। हमने कहा था कि इस समय भारतवर्ष की निर्धन प्रजा इस योग्य नहीं कि उस पर शिक्षा के निमित्त कर लगाया जाए। हाँ, यदि किसी और कर में कमी कर दी जाए या और शिक्षा के निमित्त से लगाए हुए कर से ही कार्य चल जाए तो कोई हर्ज नहीं, हमारे इस कथन का प्रतिषेध करते हुए हमारे सहयोगी बिहार बन्धु ने कहा है कि शिक्षा के निमित कर लगाने में कोई दोष नहीं–क्योंकि शिक्षा कोई ऐसी निकम्मी वस्तु नहीं कि उसके निमित्त कर लगाना बुरा हो। उसके उत्तर में हमें यही निवेदन करना है कि हमने कोई सिद्धान्त विषयक प्रश्न नहीं उठाया था कि शिक्षा विषयक कर चाहिए या नहीं। यहाँ प्रश्न सिद्धान्त का नहीं औचित्य का है। क्या भारतीय दरिद्र प्रजा इस योग्य है कि वह एक और कर बर्दाश्त करे। हम आशा करते हैं कि हमारा सहयोगी इस औचित्य विषयक प्रश्न का भी उत्तर दे देगा। हम इन तीनों और विशेषतया

पहली दो उपरोक्त भूलों को प्रस्ताव की भयानक भूलें समझते है।। जब तक मिस्टर गोखले इन तीनों को हटाने के लिए प्रस्ताव में कोई उलट-फेर न करें तब तक यह प्रस्ताव पास न होना चाहिए। हम शुल्क रहित शिक्षा के भारत की वर्तमान दशा में विरुद्ध नहीं हैं।

'वैदिक मैगजीन'

आर्यसमाज़ ने अभी साहित्य दृष्टि से बहुत ही थोड़ी उन्नति की है। जैसा एक सार्वदेशिक उद्देश्यों वाली समाज का साहित्य होना चाहिए या वैसा इसने अभी तैयार नहीं किया है। आर्यसमाज के अंग्रेजी साहित्य का तो अभी कहना ही क्या है ? उसके शून्य स्थान में तो अभी तीन या चार का अंक ही लिखा गया है। 'वैदिक मैगजीन' आर्यसमाज का मासिक पत्र है, इसके ग्राहकों की संख्या अब तक मुश्किल से 500 तक पहुँची है। इतने ग्राहकों के रहते मैगजीन कभी भी आत्म-आश्रय नहीं हो सकती। अभी तक मैगजीन अपना व्यय भी नहीं निकाल सकी। यह भी आर्यसमाज के विद्या प्रेम का एक उदाहरण है। 'वैदिक मैगजीन' का सम्पादन बहुत उत्तम होता है। सम्पादक महोदय—उसके यथासम्भव उच्च बनाने में कोई यत्न बचा नहीं रखते। वस्तुतः यह आर्यसमाज के पत्रों में बहुत ऊँचे स्थान पर स्थित है। किन्तु फिर भी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को इसे चलाने के लिए अपने पल्ले से कुछ-न-कुछ डालना पड़ता है। क्या इस शोकजनक दृश्य को दूर करना सब आर्यपुरुषों का कर्तव्य नहीं है ?

हिन्दू यूनिवर्सिटी के लिए हिन्दू कान्फ्रेंस

हिन्दू यूनिवर्सिटी के मेल का मामला बड़ा टेढ़ा हो गया है। मालवीय जी ने बिना सोचे-विचारे मेल का प्रस्ताव कर दिया। हमारे एक मित्र के कथनानुसार—अब कदम रखकर उन्होंने फूँकना शुरू किया है। संसार भर फूँक-फूँककर कदम रखता है, किन्तु मालवीय जी कदम रखकर फूँकना शुरू करते हैं। मालवीय जी इस मेल के भँवर में ऐसे पड़े हैं कि छुटकारा पाना कठिन हो गया है। इस मेल के प्रस्ताव ने हिन्दू यूनिवर्सिटी के लिए बढ़ती हुई जोश रूपी अग्नि के लिए पानी का कार्य किया है। अब मालवीय जी को इस भँवर से निकालने के लिए बाबू शारदाचरण मित्र तैयार हुए हैं। आप इलाहाबाद या किसी ऐसे ही अन्य बड़े स्थान में जुलाई मास में किसी समय हिन्दुओं की एक विशेष कान्फ्रेंस मेल के प्रस्ताव पर विचार करने के लिए करने वाले हैं। मेल के न चाहने वालों को यह समय हाथ से न जाने देना चाहिए।

भारतवर्ष में वकालत का युग

संसार के इतिहास के लेखक हर एक समय को एक किसी सामयिक विशेषता के कारण विशेष युग के नाम से पुकारा करते हैं। भारतवर्ष में सत्ययुग, द्वापर, त्रेता और कलयुग चार युग प्रसिद्ध हैं। अन्यत्र भी कहीं प्रस्तरयुग, कहीं धातुयुग आदि नाम विशेष-विशेष समय को दिए गए हैं। भारतवर्ष को ही नहीं—सारे सभ्य संसार को दृष्टि में रखते हुए यदि आप वर्तमान समय को कुछ नाम देना चाहें तो वकालतयुग या वकीलयुग दे सकते हैं। यह वकीलों और वकालत का समय है। राज्य प्रबन्ध से लेकर छोटे-से-छोटे काम में मुखिया वकील-ही-वकील दिखते हैं। यह एक बात ही वर्तमान समय को वकीलयुग नाम देने के लिए पर्याप्त है। किन्तु आज हम इस चिह्न के अतिरिक्त एक और चिह्न बताना चाहते हैं। हमें प्रतिदिन तीन-चार दैनिक पत्रों के देखने का अवसर मिलता है। ज्यों ही हम भारतीय समाचारों के स्तम्भों पर दृष्टि डालते हैं त्यों ही हमें मुकदमों के समाचार दिखाई पड़ते हैं। बम्बई-कलकत्ता-लाहौर-प्रयाग आदि किसी बड़े शहर या किसी प्रान्त के समाचार ढूँढ़िए—आपको तीन-चौथाई से अधिक समाचार मुकदमों के मिलेंगे। हमने ध्यान देकर यह परिणाम निकाला है—और भी जो पाठकगण दैनिक पत्रों को देखते हों—ध्यान देकर पढ़ें तो इसी परिणाम पर पहुँचेंगे। यह एक सत्य घटना है, इसका कारण पता लगाना समाजशास्त्रों का कार्य है।

पंजाब के पोस्ट आफिस में नागरी

पंजाब के पोस्ट मास्टर जनरल ने यह आज्ञा दे रखी है कि 'क्योंकि नागरी पंजाब की भाषा नहीं है अतः जिस पत्र पर पता नागरी में हो वह डैड लेटर आफिस में भेज दिया जाए'। इसलिए पंजाब के साधारण पोस्ट मास्टरों के लिए नागरी-अक्षर जानना आवश्यक नहीं और नागरी-अक्षरों के लिखे हुए पतेवाला खत दो-तीन दिन की देरी से अपने स्थान पर पहुँचता है। यह एक विचित्र आज्ञा है—और उसका विचित्र परिणाम है। पहले जरा आज्ञा पर ध्यान दीजिए। आज्ञा में लिखा है कि 'नागरी पंजाब की भाषा नहीं है।' नागरी भाषा नहीं कहाती, किन्तु लिपि का नाम नागरी है। साथ ही लिखा है कि 'पंजाब की भाषा नागरी नहीं, इसलिए पत्रों पर उसमें पता होने पर पत्र डि.एल. आफिस में पहुँचे'। हम पूछते हैं कि क्या अंग्रेजी देश की या प्रान्त की भाषा है जो उसमें लिखे हुए पते वाले पत्र डि.एल. आफिस में नहीं डाले जाते। इसलिए हमारी समझ में पोस्ट मास्टर जनरल को पंजाबी पत्र की सलाह माननी चाहिए और जरा अधिक उत्साह दिखाकर नागरी-अक्षरों के जानने वाले पोस्ट मास्टर रखने चाहिए।

बोर्डिंग हाऊस में आग

देहरादून के डी.ए.वी स्कूल के बोर्डिंग हाऊस में 18 अप्रैल को किसी दुष्ट ने आग लगा दी। रात के 10 बजे का समय था। छोटे-छोटे विद्यार्थी दूध पीकर सोने की तैयारी कर रहे थे जबकि छप्परों में आग लगी हुई दिखाई दी। बालकों को आश्रम से बाहर निकालने, सामान को सुरक्षित करने तथा आग को बुझाने के लिए यथा शक्ति बहुत परिश्रम किया गया। ईश्वर की कृपा से किसी बालक को किसी प्रकार को हानि नहीं पहुँची। तकरीबन पाँच सहस्त्र रुपए की बोर्डिंग हाऊस की हानि हुई। कहते हैं कि उदारदानी नेगी पूरणसिंह जी ने, जिन्होंने कि अब तक बने हुए स्कूल के बनने में एक बहुत बड़ा हिस्सा लिया है, इस हानि को पूरा कर देने का वचन दे दिया है। हम स्कूल के कार्यकर्ताओं से हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हैं और आशा करते हैं कि स्कूल के सब हितैषी शीघ्र ही बोर्डिंग स्कूल की हानि को पूरा कर देंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 21 जून, 1911]

भयानक अधःपात

कुछ वर्ष हुए जब यूरोप तथा अमेरिका में दास प्रथा विद्यमान थी। धनी लोगों के पास मूल्य क्रीत दास रहते थे—जो उनका कार्य वैसे ही करते थे जैसे बैल या गधा करता है। ये मनुष्यों की अपेक्षा पशुओं से अधिक मिलते थे। उनका स्वामी उनका जो चाहे बना सकता था। वह उन्हें बेच सकता था, दान दे सकता था। अज्ञात समय से दासप्रथा चली आई थी। दासभाव भी अज्ञात समय से ही चला आया था। जो कोई व्यक्ति कारण विशेष से दास हुआ—उसका प्रपौत्र पूरा आज्ञाकारी, नम्र और पशु समान दास हो जाता था। कोई सांसारिक या पारमार्थिक भोग उनके लिए इस संसार में न था। वे केवल कार्य करना जानते थे। दिन-भर चक्की पीसी या खुर्पा चलाया, शाम को सो रहे। इन नरपशुओं की ऐसी दशा देखकर कई दयामय महानुभावों को दया आई। उन्होंने दासत्व की प्रथा को उड़ाने के लिए यत्न प्रारम्भ किया। वे दासों को पशु से मनुष्य और अर्ध पुरुष से पूर्ण पुरुष बनाना चाहते थे। ईश्वर की दी हुई शक्तियों का जो तिरोभाव उनमें हो रहा था, उनसे हटाकर विकसित पद्म की न्यायी उनके गुण समूह आविर्भूत करना चाहते थे। किन्तु पाठकगण ! आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि दासत्व प्रथा के उड़ाने के विरोधियों में से दास लोग भी थे। वे भी दासत्व प्रथा को उड़ाने में अपनी हानि समझते थे। वे कहते थे कि हम लोग स्वतन्त्र पुरुष नहीं बनना चाहते। क्योंकि फिर हमें अपनी रक्षा आप करनी पड़ेगी, रोगी होने पर हमें आप अपनी देखभाल करनी पड़ेगी, यह असम्भव है; इसकी शक्ति हम में नहीं है। इससे विचित्र और क्या दृश्य हो सकता है ? एक मनुष्य मनुष्यता की अपेक्षा पशुता को अच्छा समझे। क्या यह अद्भुत बात नहीं ? किन्तु इसमें भी बहुत अद्भुतता नहीं। स्वभाव की महिमा ही ऐसी है। स्वभाव एक चंचल हिरण को आलसी गधा बना सकता है, वह एक क्रियाशील पुरुष को चेष्टाहीन नपुंसक बना सकता है। स्वभाव की महिमा विचित्र है।

पाठकगण ! अब क्षण भर में अपने ऊपर दृष्टि डालिए और फिर सोचिए कि क्या हम भी स्वभाव से अपनी सब शक्तियों को नहीं भुला बैठे ? क्या हम भी यह प्रश्न अपने आप से नहीं करने लग गए कि भला हम स्वयं अपने लिए

क्या कर सकते हैं ? हमारी रक्षा, हमारा पालन, हमारे स्वदेशियों का जीवन, सब कुछ औरों द्वारा होना चाहिए। हम अपना भार स्वयं उठाएँ ? असम्भव ! सर्वथा असम्भव !! क्या हमारे भाव भी अब ऐसे नहीं हो गए ? क्या आर्यजाति का विशुद्ध रुधिर रखते हुए भी हम यह नहीं समझने लग गए कि हमारे लिए सब कुछ औरों को ही करना चाहिए ?

हम और हमारी शिक्षा

वर्तमान समय का सबसे आवश्यक प्रश्न शिक्षा है। जातियों और राष्ट्रों की दौड़ में जो जाति या राष्ट्र आगे रहना चाहे उसके लिए इस समय अपने लिए उचित शिक्षा का प्रबन्ध अवश्य कर लेना चाहिए। भारतीय राष्ट्र इस समय राष्ट्रों की दौड़ में बहुत पीछे पड़ा हुआ है। वह कुछ-कुछ तेज भागने के लिए यत्न कर रहा है। वह इतना पीछे नहीं रहना चाहता, वह कुछ आगे बढ़ना चाहता है। कुछ क्या ? उसकी इच्छा तो यह है कि वह सब राष्ट्रों से आगे बढ़ जाए। इस दौड़ के लिए उचित शिक्षारूपी भोजन की आवश्यकता है। इस दौड़ के लिए ऐसे शिक्षा रूपी भोजन की आवश्यकता है जो उचित हो—जो राष्ट्र के अंग-प्रत्यंग में फुर्ती डाल दे और दौड़ने वाले को इतना सबल बना दे कि वह जब तक सबसे आगे न निकल जाए तब तक थके नहीं। ऐसी शिक्षा की इस समय राष्ट्र को आवश्यकता नहीं—जिससे दौड़ने वाले का बहुत पेट भर जाए, उसका शरीर फोड़े-फुन्सी निकालने वाले गन्दमाल से भर जाए या उसे अजीर्ण हो जाए। ऐसी शिक्षा को दूर से नमस्कार है, क्योंकि वह लाभ के स्थान में हानि करेगी।

यही सब कुछ सोच विचारकर इस समय कई महानुभावों ने स्वयं विश्वविद्यालय खोलने का विचार किया है। यह बड़ा सुलक्षण है। और यह कोई असम्भव बात नहीं। जिस देश में अब भी कई कालेज तथा स्कूल केवल व्यक्तिगत यत्नों से चल रहे हैं, जिस देश में कई गुरुकुल महाविद्यालय इस समय विद्यमान हैं और जिस देश में श्री पंडित मदनमोहन मालवीय जैसे उद्यमी महानुभाव विद्यमान हैं वहाँ सबका स्वयं शिक्षण असम्भव नहीं। कई सज्जनों की सम्मति है कि इस समय हमारा देश इस योग्य नहीं कि वह अपनी शिक्षा अपने हाथ में ले सके। हमारा प्रश्न है कि उस अयोग्यता का कारण क्या है ? क्या इतना धन हमारे देश में नहीं ? यह तो कोई भी न मानेगा। क्योंकि यदि सरकार भी मुफ्त शिक्षा का प्रचार करे तो धन विलायत से ही नहीं आएगा। क्या मनुष्यों की कमी है ? इस बात को कम-से-कम हम तो मानने को तैयार नहीं ? क्या म. गोखले अपने सौ-सवा सौ देश सेवकों के साथ मिलकर यदि देश के शिक्षण का ही कार्य शुरू कर दें तो सैकड़ों और देशसेवक उन्हें सहायता देने को तैयार न हो जाएँगे ? कहा जाता है कि इस समय देश में शिक्षा को आवश्यक किए बिना देश का शिक्षित होना

असम्भव है और शिक्षा को बिना सरकारी दबाव के शिक्षित नहीं किया जा सकता। ऐसा कहने वालों के प्रति हम यहाँ केवल एक भविष्यद् वार्त्ता सुना देते हैं कि जब तक ब्रिटिश सरकार के सिर पर एक भी मगजवाला राजनीतिज्ञ है वह कभी भी भारतवर्ष में शिक्षा को आवश्यक न करेगी। इसका कारण बताना निरर्थक है, किन्तु जो लोग यह सम्भावना रखते हैं, हमारी सम्मति में उनकी सम्भावना हमारी देशीय शिक्षा की सम्भावना से भी बहुत असम्भाव्य है।

क्या ऐसी अवस्थाओं के होते हुए हमारा शिक्षार्थ सरकार के सामने हाथ पसारना, पहले नोट में कहे हुए स्वभाव का फल नहीं ?

पंजाब की भाषा

पंजाब की भाषा का प्रश्न अभी फँसा हुआ ही है। अपनी भाषा निश्चित न होने से पंजाब को जो हानि हुई है वह हमने किसी पहले लेख में दिखाई थी। पंजाब की भाषा स्थिर न रहने से अब तक बहुत हानि उठानी पड़ी है और आगे भी उठानी पड़ेगी। जिस देश की भाषा ही निश्चित नहीं—वहाँ का और क्या निश्चित होगा ? इस समय चार भाषाएँ पंजाब की देशभाषा होने की उम्मीदवार हैं। पंजाबी, उर्दू, अंग्रेजी और आर्यभाषा। इनमें से पंजाबी को इस देश की भाषा बनाना बड़ी भारी मूर्खता का कार्य होगा। सबसे प्रथम ऐसा करने से पंजाब अन्य प्रान्तों से पृथक् हो जाएगा। और किसी प्रान्त में भी पंजाबी नहीं समझी जाती। पंजाब में पंजाबी को व्यापक करने का प्रथम परिणाम भारत की एकता में एक बड़ा भारी विघ्न उपस्थित करना होगा। दूसरे पंजाबी भाषा बहुत ही निर्धन है। उसमें भाव प्रकाशन के लिए बहुत थोड़े साधन विद्यमान हैं। तीसरे उसका साहित्य अभी बहुत थोड़ा है। उसे धनी बनाने के लिए बहुत समय तथा यत्न की आवश्यकता है। इन कारणों से पंजाबी भाषा तो पंजाब की भाषा होने के सर्वथा अयोग्य है। दूसरी उर्दू भाषा है—उसका भी नाम अब उम्मीदवारों की सूची से कट रहा है। पिछले तीन मासों की पंजाब की रिपोर्ट से पता लगता है कि उर्दू में बहुत थोड़ी पुस्तकें पंजाब में छपी हैं। उर्दू बहुत ही दोषयुक्त भाषा है—और साथ ही उसका आश्रयण हमारे गिरे हुए समय का स्मरण कराने वाला है। तीसरी भाषा अंग्रेजी है। अंग्रेजी भाषा के सहित पंजाबी लोग ऐसे ही सजेंगे जैसे हैट के साथ नए किरानी सजा करते हैं। इसके अतिरिक्त उसके आश्रय से पंजाबी शिक्षित लोग साधारण लोगों से इतने पृथक् हो जाएँगे जितने कांग्रेस वाले भारत की साधारण प्रजा से। इंग्लिश भाषा में गुण भी कोई विशेष नहीं। इसके लिखने और पढ़ने में वही सम्बन्ध है जो 3 और 6 में। इस विषय में इलाहाबाद के ऐंग्लो इंडियन नारदमुनि पायोनियर में किसी हितैषी ने एक बड़ा ही चतुरता-पूर्ण लेख लिखा है। उसने कोई विशेष युक्ति नहीं दी, अतः उन पर विशेष लिखने की आवश्यकता

नहीं, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि लेख किसी चतुर मनुष्य का लिखा था। जब उपरोक्त तीनों भाषाएँ पंजाब की भाषा बनाने के योग्य नहीं—तब शेष आर्यभाषा रह गई। पंजाबी भाइयो ! उठो और जितना शीघ्र हो सके अपनी वास्तविक भाषा आर्यभाषा का आश्रय करो।

[सद्धर्म प्रचारक, 19 जुलाई, 1911]

वीटो बिल

समय भी बड़ा भारी अध्यापक है। जो बात सौ युक्तियों में समझ नहीं आती, समय आने पर वही बात एक भी युक्ति के बिना समझ में आ जाती है। अन्यथा हाऊस ऑफ लार्ड्स में वीटो बिल का पास हो जाना कैसे सम्भव था। इंग्लैंड की राज्य प्रथा ऐसी है कि हर एक नियम पहले हाउस ऑफ कामन्स में पेश होता है, वहाँ तीन बार पास हो जाने पर वह हाउस ऑफ लार्ड्स में भेजा जाता है। वहाँ भी उसे तीन बार पास होना पड़ता है। तब उस पर ग्रेट ब्रिटेन के महाराज के हस्ताक्षर कराए जाते हैं—तब कहीं वह नियम बनता है। इन तीनों स्थानों में से एक स्थान में भी पास न होने पर, वह नियम नहीं बन सकता। हाऊस ऑफ कामन्स या प्रतिनिधि सभा को इसमें बड़ी शिकायत है। उसका कथन है कि धन सम्बन्धी प्रस्तावों पर हाऊस ऑफ लार्ड्स में विचार होने की आवश्यकता नहीं। सर्व साधारण लोगों से कर लिया जाता है—वे ही उसका प्रबन्ध कर सकते हैं। प्रतिनिधि सभा सर्वसाधारण के प्रतिनिधियों की सभा है, अतः कर लेने या व्यय करने का पूर्ण अधिकार प्रतिनिधि सभा को ही चाहिए। साथ ही प्रतिनिधि सभा का यह भी कथन है कि यदि किसी प्रस्ताव को प्रतिनिधि सभा, एक-दो और तीन बार निरन्तर पास कर दे तो चाहे हाऊस ऑफ लार्ड्स की उसमें अनुमति हो या न हो—वह अवश्य नियम बन जाएगा। इन दोनों नियमों के हो जाने से हाऊस ऑफ लार्ड्स की शक्तियाँ बहुत कम हो जाएँगी। अतः आशा नहीं थी कि हाउस ऑफ लार्ड्स इसे पास करे। किन्तु कल समाचार आया कि हाऊस आफ लार्ड्स में भी यह प्रस्ताव तीसरी बार पास हो गया। यह समय और शिक्षा का प्रभाव नहीं था तो किसका है ? हाऊस ऑफ लार्ड्स जैसी संकुचित विचारों वाली सभा में आज से पाँच या दस वर्ष पूर्व भी यदि कोई इस प्रस्ताव को पास कराना चाहता तो निस्सन्देह वह प्रयत्न व्यर्थ होता।

हाऊस ऑफ लार्ड्स ने कुछ संशोधन करके कामन्स में भेजे हैं, देखें उनका क्या होता है ?

[सद्धर्म प्रचारक, 26 जुलाई, 1911]

मिस्टर गोखले का शिक्षा बिल

हमें हर्ष है कि भारतवर्ष के शिक्षित लोगों ने मिस्टर गोखले के बिल का बहुत अच्छा स्वागत किया है। यह स्वागत शिक्षा के लिए लोगों की प्यास को सूचित करता है। यह बहुत ही शुभ और मंगल चिह्न है। अभी मिस्टर गोखले मद्रास गए थे—वहाँ आपने अपने शिक्षा बिल पर एक बड़ा उत्तम तथा प्रभावशाली व्याख्यान दिया। उसमें आपने कहा कि वे अपने प्रस्ताव में अब भी उचित संशोधन करने को उद्धत हैं। यह आपने अपनी उदारता के अनुरूप ही कहा। मद्रास के अतिरिक्त और भी अनेक स्थानों में इस विषय के समर्थन में सभाएँ हो रही हैं। अभी विलायत में, भारतवासियों का एक डेपुटेशन लॉर्ड क्रयू के पास गया था। डेपुटेशन ने अर्ल से प्रार्थना की थी कि वे मिस्टर गोखले के बिल को स्वीकार करें। लार्ड क्रयू ने उत्तर दिया कि विशेष तो वे कुछ नहीं कहना चाहते—हाँ वे शिक्षा में संशोधन करना अवश्य चाहते हैं। प्रायः सभी अच्छे-अच्छे अधिकारी इस बिल के सिद्धान्त के पक्ष में हैं। किन्तु मुसलमान लोग इस सिद्धान्त के विरुद्ध हैं। विरुद्ध भी क्यों हैं ! इसलिए नहीं कि वे शिक्षा को बुरा समझते हैं या स्वाधीन शिक्षा को पसन्द करते हैं। किन्तु इसलिए कि मिस्टर गोखले उनकी स्वार्थ भरी चेष्टाओं का अनुमोदन नहीं करते। मिस्टर गोखले यह क्यों नहीं कहते कि मुसलमानों को भारतीय शासन में सब बड़े-बड़े अधिकार देकर, बाकी सबको उनके अर्दली बना देने चाहिए। अभी थोड़े दिन हुए मुसलिम लोग की एक शाखा के अधिवेशन में एक जोशीले मुसलमान ने ऐसा ही कहा था। कहीं इस स्वप्रियता का भी ठिकाना है।

बाबू अरविन्द घोष पर वृथादोष

इलाहाबाद का पायोनियर, लाहौर का सिविल एण्ड मिलिटरी गजट, कलकत्ता का इंग्लिश मैन और मद्रास का मद्रास टाइम्स—ये सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। इन सबकी एक तान और एक ही स्वर है। ये सब एक नीति का अवलम्बन करके चलते हैं। इनकी अनेक नीतियों में से एक नीति यह है कि कुछ एक देशभक्तों का नाम अपनी डायरी में लिख लेना और समय या असमय में उन पर राजद्रोह का दोष लगाते रहना—ताकि हाकिम लोग इन पत्रों की आवश्यकता को कहीं भूल

न जाएँ। इसका एक दृष्टान्त अभी मिल गया। बाबू अरविन्द घोष इस संसार की असत्यता तथा छल-कपट से दुःखित होकर अपनी आत्मिक उन्नति करने के लिए इस समय पांडिचेरी में साधन कर रहे हैं। उन्हें राजनीति से या किसी और झगड़े से कोई मतलब नहीं। किन्तु 'मद्रास टाइम्स' को उनकी इस विश्रामावस्था से भी खीज छूटी और उसने टीना बली के खून का थोड़ा-बहुत भाग अरविन्द घोष पर भी बिखेरना चाहा। बाबू अरविन्द घोष ने उसके प्रतिवाद में एक चिट्ठी पत्रों में छपवाई है। उसमें आपने बहुत अच्छी तरह दिखा दिया है कि कई लोग उनकी निर्दोषता को सह नहीं सकते और अतएव कल्पित दोष लगाने पर बाधित हो जाते हैं। यहाँ हमें एक बात 'मद्रास टाइम्स' आदि से कहनी है। वह निवेदन यह है कि यदि तुम किसी को अपना शत्रु बनाना चाहते हो तो उसका सबसे सरल उपाय यह है कि उसे तुम शत्रु कहने लग जाओ और वैसा ही व्यवहार उससे करने लग जाओ। किसी शत्रु को भी मित्र बनाने का तरीका इससे उलटा है। जिससे तुम मित्रवत् बनोगे—वह तुम्हारा शत्रु भी होगा तो मित्र हो जाएगा। जब तुम हर एक देशभक्त को राजद्रोही प्रसिद्ध करते हो तो तुम्हें सोचना चाहिए कि उपयुक्त सिद्धान्त के अनुसार तुम्हारा कार्य हितकारी है या अहितकारी।

गोरक्षा और पुलिस

इटारसी से एक सज्जन लिखते हैं—'मालूम हो कि आपने जो पत्र गोरक्षा का भेजा था, उसमें हमने 110 मनुष्यों के हस्ताक्षर करा के भेज दिए। और मालूम हो कि हस्ताक्षर कमती होने का सबब ऐसा है कि इंस्पेक्टर साहब पुलिस ने प्रार्थना पत्र ले लिया था। सो वहाँ से हमको बहुत दिनों में मिला, इसलिए मैं ज्यादा हस्ताक्षर न करा सका।' इस पत्र पर और कोई नोट हम देना नहीं चाहते—केवल यह पूछना चाहते हैं कि क्या अब गोरक्षा के प्रार्थना पत्र पर भी पुलिस की दृष्टि पड़ेगी ?

गोवध पर मुसलमानों का दंगा

बिहार में अब तक बहुत अन्तर्जातिक फिसाद न होते थे। सीतामढ़ी के गाँव में अब एक बड़ा भारी फिसाद हो गया। एक दिन मुसलमानों ने सारे ग्राम में घोषणा दे दी कि वे गोवध करेंगे। कुछ एक गो-प्रेमी आर्यगण उन्हें इस कार्य से रोकने के लिए गए। किन्तु मुसलमानों ने रुकने के स्थान पर छुरों द्वारा उन पर प्रहार किया। कहते हैं, चार आर्यपुरुष मारे गए। पुलिस तहकीकात कर रही है। किन्तु पुलिस की खोज से अधिक भी किसी चीज की आवश्यकता है। यदि ऐसे खूनों का बहुत कड़ा दृष्टान्त रूपी दण्ड न दिया गया तो निस्सन्देह देश में ऐसे बहुत दंगे होने का डर है। इस समय गोरक्षा का प्रश्न गरम है। जब तक उसका एक ओर फैसला न हो तब तक पुलिस को बहुत होशियार रहना चाहिए—जिससे ऐसे-ऐसे

दंगे न हो सकें।

ब्रिटिश पार्लियामेंट में दंगा

सुनते हैं—अंग्रेज लोग अपनी पार्लियामेंट को संसार भर की सभाओं में आदर्श-भूत समझते हैं। नहीं जानते यह कहाँ तक सच है। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि अभी परसों जो दृश्य उस आदर्श सभा में देखा गया—वह आदर्शता के योग्य ही था। भरी हुई सभा में विलायत के प्रधान सचिव मिस्टर एस्किथ वीटो बिल को संशोधन सहित पेश करने के लिए उठे। उठते ही आदर्श सभा के सभासदों ने शोर और गोलियों से उनका स्वागत किया। 'देशद्रोही', 'जातिद्रोही' आदि का शोर चारों ओर मच गया। मिस्टर एस्किथ सुनाने के लिए पन्द्रह-बीस मिनट तक खड़े रहे। किन्तु फिर भी शोर बन्द न हुआ। उन्होंने फिर बोलना आरम्भ किया, किन्तु शोर फिर भी जारी रहा। अन्त को मिस्टर एस्किथ अपनी वक्तृता अपने आपको सुनाकर बैठ गए। फिर दूसरे दल के मिस्टर स्मिथ उठे। अब लिबरल दल की बारी थी। उन्होंने भी शोर मचाया और स्मिथ महाशय को अपना-सा मुँह लेकर बैठना पड़ा। क्या ब्रिटिश पार्लियामेंट की यही आदर्श सभ्यता है ?

असल में बात यह है कि इस संसार में जिसके पास शक्ति है—वही सभ्य, वही कुलीन और वही धन्य। जिसके पास शक्ति नहीं वह असभ्य, नीच, झूठा और चोर। यदि ऐसा ही शोरगुल भारतवर्ष की कांग्रेस में मचे तो वह असभ्यता। वह इस बात का चिह्न होगा कि भारतवासी अब स्वराज्य के योग्य नहीं। किन्तु यदि ब्रिटिश पार्लियामेंट में यही शोर मचे तो वह प्राण का चिह्न है। वह स्वराज्य की योग्यता की मुहर है। इस संसार की गति विचित्र है।

हिन्दी-साहित्य विवर्धिनी

गत 24वीं जून को मुजफ्फरनगर में हिन्दी साहित्य की उन्नति के लिए 'हिन्दी साहित्य विवर्धिनी' सभा की स्थापना की गई है। बाबू कृपाराम इसके मन्त्री निर्वाचित हुए हैं। प्रत्येक मास के अन्तिम रविवार को इसके अधिवेशन होंगे। इस उत्साह के लिए हम अपने मुजफ्फरनगर के भाइयों का धन्यवाद करते हैं। ऐसी ही सभाओं की इस समय प्रत्येक नगर में आवश्यकता है। अनन्तर इन सब सभाओं को एक सूत्र में बाँधकर मातृभाषा की उन्नति के लिए एकजुटता से काम करने का प्रयत्न करना होगा। हिन्दी की सभाओं को इस समय हिन्दी पुस्तकों की बिक्री बढ़ाने की ओर भी ध्यान देना चाहिए। क्योंकि जब तक पुस्तकों की बिक्री नहीं होगी तब तक अच्छी पुस्तकों की संख्या कभी नहीं बढ़ेगी।

एक और नादिरशाह

मुसलमानों का मग़ज़ आजकल बहुत ऊँचा चढ़ रहा है। उसकी चढ़ाई का अन्त न जाने कहाँ होगा। पूना में आल इंडिया उर्दू कान्फ्रेंस का एक अधिवेशन हुआ। उसमें व्याख्यान देते हुए एक सय्यद मुहम्मद अकबरपीरजादा ने उठकर फरमाया कि अगर खुदा न ख्वास्ता अंग्रेज हिन्दुस्तान से चले जाएँ तो क्या वही खुदा अफगानिस्तान से कोई दूसरा अहमद शाह अब्दाली न पैदा कर देगा, या वह भी न हुआ तो इरान से कोई नादिरशाह न भेज देगा, और वह भी न हुआ तो तुर्किस्तान से कोई और तैमूर न बुला लेगा ? और हम पूछते हैं कि क्या भारतवर्ष में वही खुदा राणाप्रताप, शिवाजी और रणजीतसिंह को उत्पन्न न कर देगा ? किन्तु ऐसे प्रश्नोत्तरों से ही क्या होता है ? यहाँ प्रश्न यह है कि क्या ऐसे-ऐसे शब्द भारतवर्ष की वर्तमानावस्था में कहे जाने चाहिए। क्या ये शब्द सरकार को कहे जाने अभीष्ट हैं ? हमें यह विश्वास नहीं कि सरकार ऐसे शब्दों का प्रयोग पसन्द करती है। किन्तु फिर भी मुसलमान लोग आर्यजाति का दिल दुखाना अपना कर्तव्य समझते हैं। वर्तमान दशा में उनका बुरा हाल है। शिक्षा में वे पीछे हैं—विद्या में पीछे हैं। अधिकार की प्राप्ति के लिए उन्हें दर-दर भीख माँगनी पड़ती है। किन्तु ऐसी अवस्था में भी उन्हें ऐसे-ऐसे गर्व सहित शब्द मुँह से निकालने में कोई संकोच नहीं होता—आश्चर्य यही है।

इंग्लैंड में भारतीय खिलाड़ी

इंग्लैंड में भारतीय गेंद-बल्ला खेलने वालों का एक दल गया हुआ है। वह जब से गया था—हारता ही रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि हार का देवता उन पर खूब प्रसन्न है। किन्तु अब उनके भाग्यों ने कुछ पलटा खाया है। अब कुछ दिनों से उनकी जीत होने लगी है। भारतीय भीम राममूर्ति भी इस समय इंग्लैंड में ही हैं। यदि किक्रेट का दल अब जीतता ही गया तो ये दोनों प्रकार के खिलाड़ी मिलकर खिलाड़ियों में अच्छा नाम पाएँगे।

हिन्दू नाम पर झगड़ा

कुछ दिनों से इलाहाबाद के 'लीडर' पत्र में हिन्दू नाम पर अच्छा वाद-विवाद हो रहा है। एक महाशय का कथन है कि हमें अपने आपको हिन्दू नहीं कहना चाहिए किन्तु आर्य कहना चाहिए। क्योंकि हिन्दू नाम हमें मुसलमानों ने दिया हुआ है। किन्तु दूसरे महाशय का कथन है कि हिन्दू शब्द चाहे पुराने समय में किसी अर्थ का वाचक हो—इस समय वह अच्छे अर्थों में ही प्रयुक्त होता है, अतः केवल नाम पर झगड़ने से लाभ नहीं। हमारी सम्मति में यह कहना बिलकुल ठीक है कि इस

समय हिन्दू शब्द बुरे अर्थों में प्रयुक्त नहीं होता। अतः उसके रख लेने में कोई हर्ज नहीं। किन्तु हमारा एक निवेदन अवश्य है। यह तो प्रायः सब जानते हैं कि पुराने आर्य-ग्रन्थों में कहीं भी हमारी जाति का नाम हिन्दू नहीं पाया जाता। यदि हम मान भी लें कि हिन्दू शब्द इन्दु से या सिन्धु से निकला—तब भी वह दूसरों ने ही निकाला—हमने अपने आपको यह नाम नहीं दिया। इस हालत में हम अपने आपको हिन्दू कहने के लिए बाधित नहीं हैं। यह भी सब मानते हैं कि हमारा वास्तविक नाम आर्य है। जब यहाँ तक ठीक है तो फिर यदि हम आपने आपको आर्य कहने लग जाएँगे तो उसमें हानि ही क्या है ? हमारी जमीन तो छिन नहीं चली। यह केवल आत्मगौरव का प्रश्न है, इसमें केवल मानसिक भावों का समावेश है। थोड़ा सा यत्न अपेक्षित है—और हम अपने प्राचीन ऋषि-मुनियों के नाम को पा सकते हैं। नाम भी कैसा उत्तम हो उसका अर्थ ही श्रेष्ठ है। हिन्दू शब्द का तो कोई अर्थ ही नहीं।

[सद्धर्म प्रचारक, 23 अगस्त, 1911]

दोलायित राजनीतिक अवस्था

इंग्लैंड की आन्तरिक राजनीतिक अवस्था बड़ी ही अस्थिर अवस्था में पड़ी हुई है। प्रचारक के पाठक यह तो जानते ही हैं कि पार्लियामेंट बिल कुछ एक संशोधनों के सहित हाउस ऑफ लार्ड से वापिस आया है। उन संशोधनों पर हाउस ऑफ कामन्स फिर से विचार करेगी। आजकल उदार दल शक्ति पर है। प्रधान सचिव एस्क्विथ ने उस दिन संशोधन सहित बिल से पेश करने की सूचना दी थी। तब जो दृश्य सारी सभा में दिखाई दिया था उसका वृत्तान्त पाठकगण पिछले अंक में पढ़ आए हैं। यदि हाउस ऑफ कामन्स लॉर्डों के भेजे हुए संशोधनों को अस्वीकृत करके मूल प्रस्ताव को फिर हाउस ऑफ लॉर्ड्स में लौटा दे, तो लॉर्डों को उसे पास करना पड़ेगा। यदि वे करने का वचन न देंगे तो राजा जितने नए लॉर्डों को चाहे बनाकर इस प्रस्ताव को पास करा सकता है। यह प्रस्ताव पहले भी तीन-चार कामन्स में पास हो चुका है—अतः सम्भवतः अब भी होगा ही। इसलिए दूसरा दल बहुत घबराया हुआ है। वह बहुत ही किंकर्तव्यविमूढ़-सा हो रहा है। इस बात को वह कभी नहीं चाहता कि नए पचास-साठ लॉर्ड बना दिए जावें—और लॉर्डों का सारा गौरव धूल में मिल जावे। इसीलिए उन में से कइयों ने निश्चय किया है कि वे इस प्रस्ताव को हाउस ऑफ लार्ड्स में भी पास हो जाने देंगे। किन्तु कई कुत्ते की दुम के समान हठी भी उस दल में हैं—वे कहते हैं कि चाहे ब्रह्मांड पलटा खा जाए—वे कभी भी अपने पहले निश्चय से न टलेंगे। इस घटना से कंजर्वेटिव या अनुदार दल में परस्पर की फूट पड़ गई है। इस फूट के हटाने का यत्न विचित्र रीति से किया गया है। दोनों सभाओं में कंजर्वेटिव दल के मुखियाओं ने वर्तमान सचिव समूह पर शोक प्रकाशित करने का प्रस्ताव करना है। शोक इस बात पर प्रकाशित किया जावेगा कि उन्होंने राजा को नए लार्ड बनाने की सलाह दी। यदि हाउस ऑफ कामन्स में यह शोक प्रकाशक प्रस्ताव पास हो गया—जिसकी आशा सर्वथा नहीं है—तो वर्तमान सचिव को अपने स्थान छोड़ने पड़ेंगे। किन्तु यदि वह स्वीकृत न हुआ—तब तो जो होना है सो होगा। हाउस ऑफ लार्ड्स बिना संशोधनों के ही इस प्रस्ताव को पास कर देगा। देखें क्या होता है ? बहुत सम्भव तो पिछली ही बात है।

मुहम्मडन यूनिवर्सिटी का वास्तविक उद्देश्य

इस मास के 'डौन' पत्र में मुहम्मडन यूनिवर्सिटी पर एक बड़ा उत्तम लेख है। उस लेख में इस विषय पर विचार किया गया है कि मुहम्मडन यूनिवर्सिटी का वास्तविक उद्देश्य क्या है ? उस लेख का भावार्थ हम अपने पाठकों को यहाँ बताना चाहते हैं। कहा जाता है कि मुहम्मडन यूनिवर्सिटी का उद्देश्य मुसलमानों की शिक्षा सम्बन्धी अवस्था को सुधारना है। वे लोग शिक्षा के सम्बन्ध में अभी अपने और देशवासियों से बहुत पीछे पड़े हुए हैं। उनको शिक्षित करना आवश्यक है—इसलिए मुहम्मडन यूनिवर्सिटी का बनना आवश्यक है। अर्थात् इस यूनिवर्सिटी का वास्तविक आगमन शिक्षा की भूख को हटाने के लिए है। क्या वस्तुतः यही उद्देश्य मुहम्मडन यूनिवर्सिटी का है ? थोड़ा सा ध्यान देकर विचार करने से प्रतीत होता है कि यह उद्देश्य कल्पित है, वास्तविक नहीं। यह केवल एक पर्दामात्र है—इसके अन्दर गुप्त कारण कोई और है—इस बात का सबूत पाने के लिए ज़रा पीछे चलिए। जब सर सैयद अहमद खाँ को पहले-पहल मुसलमानों को उठाने का स्वप्न आया था। तब उन्होंने प्रारम्भ में ही मुहम्मडन यूनिवर्सिटी स्थिर करने का विचार पेश किया था। उस समय न कोई स्कूल था न कोई कालेज। भला यदि शिक्षा का प्रचार ही इस प्रस्ताव का उद्देश्य था तो सूखी यूनिवर्सिटी क्या बनता ? अलीगढ़ कालेज भी पीछे बना। इस एक कालेज को लेकर ही सर सैयद यूनिवर्सिटी बनाना चाहते थे। फिर एक और भी बात है। सरकारी यूनिवर्सिटी को बने आज इतने दिन हो गए। आर्यसन्तान के लिए शिक्षित होने का अच्छा अवसर था—उसने इस अवसर से उपयोग लेने की परवाह नहीं की। यदि वस्तुतः शिक्षा की माँग को पूरा करना ही इस यूनिवर्सिटी का उद्देश्य होता—तो अब तक मुसलमान वर्तमान यूनिवर्सिटी से इस माँग को पूरा करने का भी कुछ यत्न करते। किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। इससे प्रतीत होता है कि वस्तुतः शिक्षा की माँग से अतिरिक्त कोई और भी कारण इस यूनिवर्सिटी की स्थापना का है। वह कारण, वह उद्देश्य—सारे भूगोल पर स्थित हुए मुसलमानों को मिलाकर उनका एक जत्था बनाने का है। मुसलमान लोग भारतवर्षपने से भारतवर्ष में नहीं रहते—किन्तु मुसलमानपने से भारतवर्ष में रहते हैं। वे अन्य भारतवासियों को अपना भाई नहीं समझते—किन्तु ईरान और पार्शिया के वासियों को अपना भाई-बन्द समझते हैं। इस यूनिवर्सिटी का उद्देश्य इन सब मुसलमान भाइयों की ही एक बिरादरी का स्थापन करना होगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 9 अगस्त, 1911]

मुहम्मडन यूनिवर्सिटी का फैसला

थोड़े दिन हुए, गवर्नमेंट ने महमूदाबाद के राजा को सूचित किया था कि यदि मुसलमान लोग पर्याप्त धन इकट्ठा कर लें और उनके प्रबन्ध सम्बन्धी नियमों से गवर्नमेंट और भारतमन्त्री सन्तुष्ट हो जाए तो एक शिक्षक यूनिवर्सिटी की संस्थापना की आज्ञा देने के लिए गवर्नमेंट तैयार है। अब इसी प्रस्तावित यूनिवर्सिटी के नियम लखनऊ से प्रकाशित हो गए हैं। इसके अनुसार ट्रस्टियों की सभा यूनिवर्सिटी का शासन किया करेगी और भारत का वाइसराय स्वपदाधिकार से इसका चान्सलर होगा। मुसलमान प्रोफेसर के अतिरिक्त इसमें छः अंग्रेज प्रोफेसर रहा करेंगे। हम नहीं जानते कि गवर्नमेंट और भारत मन्त्री की इससे सन्तुष्टि हुई है या नहीं। किन्तु हम आशा करते हैं कि नियम बनाने वालों ने अपने घर की सन्तुष्टि की भी परवाह की होगी।

हिन्दू यूनिवर्सिटी का मार्ग निश्चित हो गया

मुहम्मडन यूनिवर्सिटी के नियम प्रकाशित हो जाने से अब हिन्दू यूनिवर्सिटी का मार्ग निश्चित हो गया। यदि हिन्दू-यूनिवर्सिटी 'चार्टर' लेना चाहती है तो उसे भी मुसलमानी यूनिवर्सिटी के चरण चिह्नों पर चलना होगा। यह बात निश्चित समझनी चाहिए कि गवर्नमेंट की वे दो शर्तें इस विश्वविद्यालय को भी माननी होंगी जो मुसलमानी यूनिवर्सिटी के साथ की गईं। हम नहीं कह सकते कि लखनऊ से प्रकाशित नियमों में अभी गवर्नमेंट क्या-क्या परिवर्तन चाहेगी, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि वह इससे कम में कदापि सन्तुष्ट नहीं हो सकती। रुपए के विषय में हमें कोई डर नहीं है। जिस आर्यजाति में इतने समर्थ लोग पड़े हुए हैं कि उनके लिए 25 या 50 लाख रुपया इकट्ठा करना क्या बड़ी बात है। परन्तु चार्टर लेने के लिए सारी स्वाधीनता खो देनी पड़ी तो यह एक विचारणीय प्रश्न है कि ऐसे विश्वविद्यालय से कितने लाभ की सम्भावना है।

विश्वविद्यालय के संचालक विचार कर लें

हमें शोक है कि जब से मालवीय जी के विश्वविद्यालय की 'स्कीम' प्रकाशित हुई है, तब से कई बार हमें उनके विरुद्ध लिखना पड़ा है। हमें बड़ा हर्ष होता यदि हम मालवीय जी की स्कीम का सर्वतो भावेन समर्थन कर सकते या न्यून-से-न्यून

इस विषय में चुप रह सकते। आर्यजाति इस समय ऐसी निर्बल हो रही है, उसके लोगों की दृष्टि इस समय ऐसी क्षुद्र हो रही है कि सच्चा मतभेद भी विरोध की दृष्टि से देखा जाता है और द्वेषाग्नि को उत्पन्न कर देता है। परन्तु हमारी आत्मा हमें बतलाती है कि ऐसे समय में चुप रहना, सार्वजनिक विश्वास को तोड़ना है और विकट अपराध का भागी होना है। अतएव हमारी फिर विश्वविद्यालय के संचालकों से प्रार्थना है कि वे बड़ी सावधानी से पैर उठाएँ जिससे पीछे पछताना न पड़े। हमारा फिर उनसे प्रश्न है कि इतनी गवर्नमेंट के अधीन यूनिवर्सिटियों के होते हुए एक वैसी ही और यूनिवर्सिटी से क्या लाभ होगा ?

हम फिर से 'स्वावलम्ब' का नाम लेकर अपने पक्ष का समर्थन नहीं करना चाहते क्योंकि इस शब्द से हमारे एक मान्य सहयोगी को बड़ा क्षोभ हुआ है। कदाचित् उसकी सम्मति में हमने 'स्वावलम्बी' का नाम लेकर घोर पाप किया है। परन्तु इस समय हम एक दृष्टान्त सामने रखना चाहते हैं। अभी हाल में बम्बई गवर्नमेंट के अनुचित हस्तक्षेप से वहाँ की यूनिवर्सिटी सैनेट की जो दुर्दशा हुई है उसे कौन भुला सकता है ? उसे देखकर गोखले और मेहता जैसे शान्त और गम्भीर महानुभावों को भी कहना पड़ा कि इस प्रकार का व्यवहार यूनिवर्सिटी की स्वाधीनता के लिए सर्वथा हानिकारक है। मि. गोखले पर कोई गवर्नमेंट के विरोधी होने का दोष नहीं लगा सका। इसी तरह और भी कई विद्वानों का मत है कि गवर्नमेंट के अधीन रहकर यूनिवर्सिटी में कभी भी अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सकतीं। क्या उनकी सम्मति पर विश्वविद्यालय के संचालक ध्यान देंगे ?

मिदनापुर के अभियोग का फैसला

जिस मिदनापुर के अभियोग को पढ़ते-पढ़ते पाठक थक गए थे, उसका अब फैसला हो गया है। परन्तु फैसला बड़ा सन्तोषदायक हुआ है। यह अभियोग बड़ी देर तक चला, इसलिए हम पाठकों की स्मृति को ताजा कर देते हैं। 1908 के जून और जुलाई मास के बीच में मिदनापुर की पुलिस ने 25 या 30 वहाँ के निवासी पकड़ लिये। जिसमें वहाँ के रईस जमींदार और राजा भी थे। दो-एक साथियों के कथन के बल पर प्रसिद्ध किया गया कि डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मि. वैस्टन को मारने के लिए एक भारी षड्यन्त्र रखा गया था, इसमें लगभग 154 आदमी सम्मिलित थे। परन्तु अभियोग के थोड़े ही चलने पर, तीन को छोड़कर और सब पर से अभियोग उठा लिया गया। और अपील करने पर हाईकोर्ट ने उन तीनों को भी निर्दोषी ठहराया। इस प्रकार साफ छूट जाने पर बाबू प्यारी मोहनदास ने मैजिस्ट्रेट मि. वैस्टन और पुलिस अफसरों पर हानि की नालिश कर दी। उनका कथन था कि बिना किसी कारण के पुलिस ने उनको तंग किया और यह सारा दुख इसलिए दिया गया क्योंकि पुलिस मेरे पुत्र से कहलवाना चाहती थी कि हत्या षड्यन्त्र की उनसे

खबर है। इस अभियोग का फैसला प्रसिद्ध विचारपति फलीचर ने किया हैं। सुनते हैं, फैसला इतना लम्बा था कि कई घंटों में पढ़ा गया। फैसला करते हुए विचारपति ने मि. वैस्टन और पुलिस अफसरों को दोषी ठहराया। यद्यपि मि. वैस्टन इस षड्यन्त्र की कहानी को सच्ची समझते थे, तथापि नियम के अनुसार वे दोषी ही समझे जाएँगे, किन्तु फलीचर की सम्मति में पुलिस अफसरों का बड़ा भारी अपराध था। वे उस कहानी को सच्ची नहीं समझते थे और इसीलिए उन्होंने झूठी गवाही दिलवाई और साथियों को अपराधी स्वीकार करने के लिए सिखाया और दोषी होने के कारण उन्हें 1000 रुपया मुद्दई को देना पड़ा।

यह है पुलिस के विषय में एक विचारपति की सम्मति। अब गवर्नमेंट को उचित है कि वह इन पुलिस अफसरों को यथोचित दंड दे, पुलिस के लिए झूठी गवाही प्राप्त करने से बढ़कर अपराध क्या हो सकता है ? थोड़ी देर हुई एक को खान बहादुर की और दूसरे को रायबहादुर की उपाधि मिली थी। अभी हाल में उन्हें पहले से ऊँचे पद पर कर दिया गया है। आशा है गवर्नमेंट ध्यान देगी।

प्रो. सिंह की साहित्य-सेवा

विदेश यात्रा में जादू की शक्ति भी लगती है। वहाँ जाते ही विचारों की काया ही पलट जाती है। जो लोग यहाँ अपनी भाषा का नाम लेना पाप समझते हैं, वहाँ जाते ही उसके अनन्य भक्त हो जाते हैं। आर्यभाषा के मासिक पत्र इस बात के साक्षी हैं। परन्तु उनमें एक बड़ी विचित्र बात हुई है। वे लेखक प्रायः दिल बहलाने वाले लेख ही भेजते हैं। कई लेख तो बच्चों का ही मनोरंजन कर सकते हैं। शायद वे हिन्दी पढ़ने वालों को बच्चों से अधिक ज्ञानवान् नहीं समझते। इसके अतिरिक्त उनमें से शायद ही किसी ने स्थिर साहित्य बनाने का प्रयत्न किया हो। परन्तु गुरुकुल (हरद्वार) के प्रो. महेशचरणसिंह इस नियम के अपवाद लगते हैं। आपने विदेश में रहकर यह अनुभव कर लिया था कि वैज्ञानिक और ऐतिहासिक पुस्तकों के प्रकाशित किए बिना भारतवासी कभी न उठ सकेंगे। इसलिए आपने वहीं 'हिन्दी कैमिस्ट्री' को लिखना प्रारम्भ कर दिया था। वह प्रकाशित हो चुकी है। इसके अतिरिक्त आप कई वैज्ञानिक पुस्तकें तैयार कर रहे हैं। आप का 'विद्युच्छास्त्र' प्रयाग में छप रहा है। दूसरी ओर आप 'वनस्पतिशास्त्र' लिख रहे हैं, जिसका प्रथम भाग आपने सद्धर्म प्रचारक प्रेस में छपवा भी डाला है। इस तरह आप बातों से नहीं, किन्तु काम से सिद्ध कर रहे हैं कि हिन्दी में वैज्ञानिक पुस्तकें लिखी जा सकती हैं। आप में क्रिया शक्ति ग़ज़ब की लगती है। एक ओर आप वैज्ञानिक पुस्तकें लिखते हैं, दूसरी ओर ऐतिहासिक ग्रन्थ तैयार करते हैं। आपने इंग्लैंड का इतिहास भी लिखा है और वह छपना भी शुरू हो गया है। विदेश से लौटे हुए अन्य सज्जनों को प्रो. सिंह का अनुकरण करना चाहिए।

साहित्य परिषद्

अब धीरे-धीरे गुरुकुल विद्या—चर्चा का केन्द्र बन रहा है। प्रो. सिंह गुरुकुल में बैठकर जो साहित्य सेवा कर रहे हैं उससे ऊपर के नोट में हम दिखा चुके हैं। इसके अतिरिक्त गुरुकुल भूमि से कई आर्यभाषा की उत्तम पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें से 'प्राचीन भारतवर्ष का इतिहास', 'भौतिकी' और 'रसायनशास्त्र' प्रधान हैं। हमें सूचना मिली है कि इतिहास के अध्यापक श्री बालकृष्ण एम.ए. इंग्लैंड का एक विस्तृत इतिहास और अकबर का जीवन चरित तैयार कर रहे हैं जो शीघ्र ही छपकर प्रकाशित होगा। गुरुकुल के महाविद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थी भी निश्चेष्ट नहीं बैठे हैं। उन्होंने साहित्योन्नति, विद्या प्रेम और समालोचना शक्ति को बढ़ाने के लिए कई वर्षों से एक 'साहित्य परिषद्' स्थापित कर रखती है। इसके पाक्षिक अधिवेशनों में निबन्ध पढ़े जाते हैं और उन पर समालोचना होती है। परिषद् के मन्त्री के भेजे हुए वार्षिक वृत्तान्त का सार हम अन्यत्र प्रकाशित करते हैं। रिपोर्ट के पढ़ने से पता लगेगा कि यह परिषद् साहित्य की अच्छी सेवा कर रही है। निबन्ध लेखक भिन्न-भिन्न विषयों पर अच्छी खोज करते हैं। मन्त्री के इस कथन से हम भी सहमत हैं कि परिषद् की आर्थिक दशा अच्छी नहीं है अतएव इसके बाहरी सभासदों को कुछ विशेष प्रयत्न करना चाहिए। इसके साथ ही मन्त्रीजी की प्रतिवर्ष एक निबन्ध भेजने वाली प्रार्थना पर भी ध्यान देना चाहिए। यह परिषद् प्रतिवर्ष एक विद्वानों का सम्मेलन भी करती है जो 'सरस्वती सम्मेलन' के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें विद्वान् लोग, संस्कृत और आर्यभाषा में बड़े गम्भीर विषयों पर विवाद करते हैं। अबकी बार का 'सरस्वती सम्मेलन' बड़ी ही सफलता से समाप्त हुआ था। परिषद् ने उसे कुछ अधिक गम्भीर बनाने के लिए उसका ढंग बदल दिया है जो सरस्वती सम्मेलन के अन्यत्र प्रकाशित नियमों से पता लगेगा। देखना चाहिए, यह परीक्षण कहाँ तक सफल होता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 16 अगस्त, 1911]

अनात्म शिक्षा की लहर

चारों ओर भयानक हाहाकार मचा हुआ है। अशान्ति-ही-अशान्ति का शब्द सुनाई देता है। न जाने कितने उपाय हैं, कितने प्रकार के सेनाएँ हैं जिनके सहाय से अशान्ति अपना राज्य फैला रही है। अशान्ति के उन साधनों में से एक अराजकतावाद या विनाशवाद है। यूरोप में इस वाद का विशेषतया प्रचार है और वहाँ के असर से तपोभूमि भारतवर्ष में भी इस पापवाद का विस्तार हो रहा है। यह अराजकतावाद किसी प्रकार के भी बन्धन की या नियम को नहीं चाहता। सब प्रकार के सामाजिक धार्मिक तथा नैतिक बन्धनों से यह मुक्त होना चाहता है। ऐसा वाद है जो यूरोप के राजनीतिक सागर को चलायमान कर रहा है और शनैः-शनैः भारतीय महासागर में भी उसकी छाया अपना स्वरूप दिखा रही है। राजनीतिक विचारक इन वादों का मसला हल करने में चकराए हुए हैं और नहीं जानते कि किस रीति से किन साधनों से इस अत्याचारीवाद का प्रभाव दूर करें ? हमारी समझ में इस वाद का एक ही इलाज है और वह देशों के नवीन खिलते हुए फूलों को आत्मिक शिक्षा रूपी रस से सिक्त करना है। जब तक नवीन अवस्था में बालकों की आत्मा के ठीक रास्ते लाने वाली शिक्षा नहीं दी जाती और उनके मनों को दया और प्रेम के सौरभ से सुरभित नहीं किया जाता, तब तक उन्हें उच्छृंखलता-प्रधान वादों से बचाना कठिन कार्य है। बहुत लोगों की सम्मति है कि प्रारम्भ में बालकों की आत्मिक शिक्षा देना लाभदायक नहीं, किन्तु यह उनकी भूल है। यही एक उपाय है जो नौजवानों में फैलने वाले अशान्तिकारी वादों का समूल नाश कर सकता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 8 नवम्बर, 1911]

इंग्लैंड की राजनीतिक दशा

इंग्लैंड की राजनीतिक दशा यद्यपि इस समय शान्त है, तथापि शीघ्र ही आने वाले तूफान के लिए तैयार हो रही है। पार्लियामेन्ट की अगली बैठक में होमरूल, इनश्योरेंस बिल जैसे विवादास्पद प्रस्ताव पेश होंगे। उन पर अभी से विवाद चल रहा है। उदार दल के नेता इस आगामी वाग्युद्ध के लिए खूब तैयार हो रहे हैं, किन्तु दूसरा दल निर्बल होता जा रहा है। अभी तक केवल आपस का विभेद ही इस निर्बलता का कारण था, किन्तु अब दल के प्रधान मुखिया मि. बालफूर का अपने पद से मुक्तिपत्र दे देना और भी घाव पर नमक का काम करेगा। मि. बालफूर बड़े अनुभवी तथा योग्य नेता थे। यद्यपि उन्होंने अपनी प्रधानता में अपने दल से कई भयानक अशुद्धियाँ करवाई, तथापि उनकी योग्यता में सन्देह नहीं। अब उनके मुक्तिपत्र दे देने से अनुदार दल निस्सन्देह बहुत निर्बल हो जाएगा। आपके मुक्तिपत्र देने का एक कारण स्वास्थ्य ठीक न रहना है और दूसरा कारण अपने दल में भेदभाव का पड़ जाना है।

उर्दू और आर्यभाषा के पत्र

आर्यभाषा के पत्रों पर प्रायः लोग यह दोष दिया करते हैं कि वे आपस में लड़ते-झगड़ते रहते हैं और एक-दूसरे को गाली-गलौच देते रहते हैं। आर्यभाषा के पत्र यद्यपि इस दोष से सर्वथा मुक्त नहीं हैं तथापि उर्दू पत्र उनसे भी दो-चार कदम बढ़े हुए हैं और उनमें यह विशेषता है कि वे आर्यभाषा पत्रों की अपेक्षा कई गुणे अधिक अविचारशील हैं। सभी उर्दू भाषा के पत्र दोषी नहीं है और न सभी भाषा के पत्र लड़ाके हैं। किन्तु इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि उर्दू भाषा के पत्रों में, विशेषतया पंजाब से निकलने वालों में—बड़ी राशि लड़ाकू तथा अविचारशील सम्पादकों द्वारा सम्पादित होती है। 'हिन्दुस्तान', 'प्रकाश', 'हिन्दू' आदि कुछ एक मुख्य पत्रों को छोड़ दीजिए, बाकियों में तू-तू, मैं-मैं की इतनी बहुतायत होती है कि उन्हें देखकर घृणा उत्पन्न होती है। उर्दू पत्रों की इस प्रवृत्ति का एक बड़ा प्रमाण यह है कि जहाँ पिछले छह-सात महीनों में सरकार ने उर्दू के कई पत्रों से जमानत ली है और कइयों के कान खींचे हैं, वहाँ भाषापत्रों में

किसी के साथ भी यह व्यवहार नहीं करना पड़ा। इसका यह अभिप्राय नहीं कि भाषा पत्रों में जान नहीं, वे भी जोशीले लेख लिखते हैं, किन्तु इतने अविचारपूर्ण नहीं कि कोई उन पर उँगली उठा सके।

शिल्प शिक्षा का भूत

प्रकाश महोदय की सबसे प्रथम शंका यह है कि कई लोग गुरुकुल से तरखान, लोहार निकालना चाहते हैं। आपकी सम्मति में गुरुकुल से वेद के विद्वान् यूँ कहिए कि वेद के विद्यार्थी पैदा होने चाहिए। लुहारी-तरखानी में और वेद विद्या में वैसा ही सम्बन्ध है, जैसा रात और दिन में। न केवल कई लोगों की ही ऐसी सम्मति है, गुरुकुल के अधिकारी भी ऐसा ही समझते हैं। या कम-से-कम लोगों के दबाव में आकर ऐसा ही कहने लगते हैं। प्रकाश महाशय आगे लिखते हैं कि जब कई शिक्षित लोग कुलगुरु की सब बातों से सन्तुष्ट होकर केवल एक शिल्प शिक्षा की कमी बताते हैं, तब "गुरुकुल के अधिकारी यह समझते हैं कि ऐसा शिक्षित पुरुष गुरुकुल को एक अपूर्व संस्था का भाव लेकर घर वापस न जाए, झट उसे कारखाना दिखा देते हैं, और साथ ही यह कह देते हैं कि धन के अभाव में इस कारखाने में काफी सामान नहीं। मानो कि इच्छा तो इसे शिल्पशाला बनाने की है, किन्तु धन का अभाव है।" केवल इतना ही होता और लोगों के दबाव में आकर ही गुरुकुल के अधिकारी ऐसा कह देते, तब भी खैर थी, किन्तु यहाँ तो बात ही और है। गुरुकुल के अधिकारियों में एक नीचे दर्जे का भाव पैदा हुआ है, जिसे प्रकाश महाशय उड़ाना चाहते हैं। वह भाव यह है कि भारत की उन्नति कारीगरी से ही हो सकती है।

सहयोगी की सम्मति में कारीगरी वैश्यत्व में आ जाती है और इस समय देश को वैश्यों की आवश्यकता नहीं, किन्तु ब्राह्मणों की आवश्यकता है। इतनी है प्रकाश महाशय की प्रथम आशंका।

वैश्यत्व और ब्राह्मणत्व के विषय में गुरुकुल के अधिकारियों की प्रकाश महाशय की सलाह बहुत ही सच्ची है और ठीक है, किन्तु शंका यह है कि क्या सचमुच गुरुकुल के अधिकारी वैश्यत्ववादी ही हैं, जो उन्हें इतने लम्बे-चौड़े व्याख्यान देने की आवश्यकता हुई। जिसने गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता श्री महात्मा मुंशीराम जी और उप मुख्याधिष्ठाता श्री मं. रामदेव जी के व्याख्यान सुने हैं, कम-से-कम वह तो कभी भी इस परिणाम पर नहीं पहुँच सकता। उपर्युक्त दोनों महानुभाव कई वर्षों से निरन्तर ब्राह्मणों के प्राधान्य को चिल्ला-चिल्लाकर बताते आए हैं और गुरुकुल से ब्राह्मण उत्पन्न करने का ही वचन देते आए हैं। तब हम नहीं जानते, प्रकाश महाशय को इस दीर्घ व्याख्या की जरूरत क्यों पड़ी ?

दूसरा उप-प्रश्न यहाँ गुरुकुल के अधिकारियों की शिल्प विषयक सम्मति का

है। गुरुकुल के अधिकारियों की शिक्षित दर्शकों के साथ जो बातचीत होती है उसकी कई रिपोर्टें तो प्रकाश ने इकट्ठी कर ही ली होंगी, क्योंकि अन्यथा वह ऐसे विषय में यह लिखने का साहस न करता कि अधिकारी ऐसा उत्तर देते हैं और उसका अभिप्राय यह होता है। हम उन रिपोर्टों से इनकार नहीं करते, केवल प्रकाश महाशय से उन शिक्षित महोदयों के नाम पूछते हैं जिन्हें ऐसी-ऐसी बातें कही गई हों, क्योंकि हम नहीं जानते कि गुरुकुल के मुख्य-मुख्य अधिकारियों में से वैसी सम्मतियाँ किसकी हैं जैसी सम्मतियों का वर्णन प्रकाश करता है। हर एक मनुष्य अपने-अपने अनुभव का उत्तरदाता होता है और हम भी अपने अनुभव के आधार पर कह सकते हैं कि गुरुकुल के अधिकारी कभी भी ऐसा उत्तर नहीं देते जिससे प्रतीत हो कि वे गुरुकुल को एक शिल्पविद्यालय बनाना चाहते हैं।

गुरुकुल में शिल्पशिक्षा का क्या वृत्तान्त और उद्देश्य है, यह भी सुन लीजिए। गुरुकुल एक ऐसा विद्यालय है जहाँ वैदिक विद्या तथा वैदिक धर्म का पढ़ना आवश्यक है। और सब विषय गौण हैं, वेद विद्या मुख्य है। उस वेद विद्या के परिज्ञान के लिए अनेक और अप्रधान विद्याओं का अध्ययन आवश्यक होता है। यह सभी जानते हैं कि बिना विज्ञानादि के ज्ञान के तथा बिना संस्कृत साहित्य के प्रगाढ़ योग्यता पाए, ईश्वरीय ज्ञान का समझना असम्भव है। इसलिए, वेद विद्या की प्राप्ति के लिए, इन सभी प्रकार के विज्ञानों से परिचय आवश्यक है। वेद विद्या को मुख्य मानते हुए कई और गौण विषयों की शिक्षा भी इस प्रकार आवश्यक हो जाती है। साथ ही हर एक मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिए कुछ ऐसी शिक्षा का देना भी आवश्यक है, जिससे वह अपने चारों के वृत्तान्त को जान सके और संसार में ऐसे न फिरे जैसे एक मंगलग्रह का निवासी यहाँ पर घूमे। इस प्रकार प्रतीत होता है कि वेद विद्या में पारंगत होने की इच्छा रखने वाले को भी अन्य कई विद्याओं की आवश्यकता है। हम प्रकाश महाशय से पूछते हैं कि क्या जिस वेद को आप भी सर्व-विद्याभंडार मानते हैं, उसमें शिल्प नहीं। तब फिर वेद के ज्ञान के लिए उपयोगी होते हुए भी शिल्प से इतना द्वेष क्यों ? किन्तु यह उत्तर उस अवस्था में हैं, जब यह मान लिया जाए कि ब्रह्मचारियों को वेद पढ़ाकर ही गुरुकुल का कार्य समाप्त हो जाता है। इससे आगे जाना उसका कर्तव्य नहीं। किन्तु हमारी सम्मति में यह मानना ठीक नहीं। गुरुकुल का कार्य जहाँ यह है कि वह अपने अन्दर शिक्षा पाने वाले ब्रह्मचारियों को वेद की शिक्षा दे, वहाँ उसका यह भी कर्तव्य है कि वह उनके भविष्य को सर्वथा क्षुधायुक्त या निकम्मा न बनने दे। जो स्नातक गुरुकुल से निकलने के साथ ही उपदेशक हो जाएँगे—जैसा हमारी समझ में बहुतायत से नहीं होना चाहिए, क्योंकि उपदेशकता का मार्ग छुरे की धार से भी तेज है—उन्हें छोड़कर अन्यों का भविष्य भी गुरुकुल ने अपने हाथ में लिया है। उन्हें केवल वेद विद्या के पढ़ाने से वे दो ही कार्य कर सकते हैं या वे पाठन

का कार्य करें या ग्रन्थादि लिखें। किन्तु जिनकी प्रवृत्ति इन दोनों कार्यों की ओर न हो, उनका क्या बनाया जाए ? प्रकाश के ही शब्दों में निस्सन्देह कई ऐसे विद्यार्थी होंगे जो अपनी योग्यता या माता-पिता के संस्कारों के कारण ब्राह्मण न बन सकें, तब उन बेचारे अब्राह्मणों को कहाँ भरती किया जाए ? ऐसे ही विद्यार्थियों के लिए आवश्यक है कि वेद विद्या के साथ-साथ और भी ऐसी विद्याओं का शिक्षण गुरुकुल में दिया जाए, जिनसे जहाँ ईश्वरीय ज्ञान के परिज्ञान में सहायता मिले, वहाँ उनका जीवन भी तमोमय न हो जाए।

सहयोगी के लेख से प्रतीत होता है कि उसे डर है कि कहीं गुरुकुल में वेद का स्थान शिल्प न ले ले। इस शंका की निवृत्ति के लिए हमारा सहयोगी से निवेदन है कि ऐसा न हो रहा है और न होने की सम्भावना है। जो विद्यालय में शिल्प सीखते हैं, वे विद्यार्थी हैं जो अपना खेल का समय उपयोगी कार्यों में लगाना चाहते हैं। जो महाविद्यालय में शिल्प सीखेंगे, वे विद्यार्थी होंगे, जिनकी प्रवृत्ति इतिहास, दर्शन, विज्ञानादि में से किसी ओर नहीं, और इसीलिए वे महाविद्यालय में वेद विद्या के साथ-साथ इन विषयों के स्थान पर शिल्प की शिक्षा पाएँगे। हम नहीं जानते कि इतिहास, विज्ञानादि किस हिसाब से शिल्प की अपेक्षा वेद के अधिक पास हैं, क्योंकि प्रकाश ने महाविद्यालय तथा विद्यालय में इन विषयों की शिक्षा पर कभी आक्षेप नहीं किया।

शेष रहा यह प्रश्न कि क्या अभी गुरुकुल के पास इतना धन है कि वह एक अच्छा शिल्पविद्यालय खोल सके ? हमारी समझ में एक यही प्रश्न है जो अभी शिल्पशिक्षा में बाधा डाल सकता है, अन्य कोई नहीं। क्योंकि हम वेदों के साथ शिल्प या रुचि का कोई विरोध नहीं देखते।

[सद्धर्म प्रचारक, 15 नवम्बर, 1911]

सामाजिक संशोधन और धर्म

भारत में सामाजिक संशोधन की स्थापना के जितने वास्तविक और विचारशील नेता हुए हैं, वह सब सदा इस बात पर बल देते रहे हैं कि किसी प्रकार कुरीतियों का चिरस्थायी नाश और उत्तम रीतियों का प्रचार देश में नहीं हो सकता, जब तक कि सामाजिक संशोधन का आधार धर्म पर न रखा जावे। स्वर्गीय श्रीमान जस्टिस रानाडे महोदय की भी यही सम्मति थी। और जो कोई उनकी आरमान माला को पढ़ता है, उसको यह दृढ़ निश्चय हो जाता है कि यद्यपि रानाडे महोदय पहले-पहल प्राचीन महर्षियों के बतलाए हुए पथ से कहीं-कहीं हटते हुए भी प्रतीत होते हैं, किन्तु उनकी अन्तिम वक्तृताओं से यही परिणाम निकलता है कि वह देश की वास्तविक उन्नति प्राचीन भारतीय सभ्यता की पुनर्जीवनी में ही समझते थे। रानाडे महोदय के समय के एक विद्याशीलसम्पन्न वृद्ध देशसेवक और प्रसिद्ध संशोधक दीवान बहादुर रघुनाथ राव हैं, जिनकी महर्षि दयानन्द से भी भेंट हुई थी और जो महर्षि के धर्म कार्य में उनके सहायक भी थे। दीवान बहादुर सदा ही यह उपेदश करते रहे हैं कि हमें वेदादि सच्छास्त्रों के अनुगामी होना चाहिए और सामाजिक संशोधन का कार्य वैदिक शिक्षा के आधार पर ही करना चाहिए, वेद भगवान् के लिए तो उनकी निष्ठा असीम है। मद्रास में मन्नागढ़ी नगर में कुछ दिन हुए प्रान्तीय सोशल कान्फ्रेंस का एक अधिवेशन हुआ था, उसके प्रधान महोदय ने अपनी आरम्भिक वक्तृता में जहाँ प्राचीन भारतीय सभ्याता की पुनर्जीवनी पर बल दिया था, वहाँ साथ ही उन्होंने यह भी कह दिया था कि "सब संशोधकों को पहले यह निर्णय करना चाहिए कि हिन्दू धर्म का कितना भाग वह सुरक्षित देखेंगे और कितना परिवर्तित कर देवेंगे।"

इस पर टिप्पणी चढ़ाते हुए दीवान बहादुर मद्रास के दैनिक इंग्लिश पत्र 'हिन्दू' में लिखते हैं :

"यह व्याख्यान वास्तव में विद्वतापूर्ण है, किन्तु मेरी सम्मति में इसमें अलक्षिता का दोष है। मैं एक वैदिक आर्य हूँ और इसलिए विश्वास करता हूँ कि वेद के विधिवत् उपदेश आर्यों की धर्म अवस्था है, जिस पर बिना यह विचारे कि वह जातीय है या नहीं, चलना मेरा कर्तव्य है। जहाँ तक मैंने प्राचीन आर्यसाहित्य को पढ़ा है, उससे मुझे सन्तोष है कि वेद के विधिवत् उपदेश जो कुछ मैं जातीयता

समझता हूँ, उसके अनुकूल हैं। सच पूछो तो यह आज्ञा सर्वतन्त्र सिद्धान्त है। जिन विषयों पर वेद की आज्ञा उपस्थित है उन पर मुझे अधिक शिक्षा की किंचितमात्र भी आवश्यकता नहीं है।'' हम चाहते हैं कि बुजुर्ग दीवान बहादुर की शिक्षा पर मद्रास नगर के उतावले युवक जो दिल से तो क्रिस्टान हैं, किन्तु तिस पर भी कपटतायुक्त भीरूता से पौराणिक कुरीतियों के अनुगामी बने हुए हैं और हर समय प्लेटफार्म से वेद शास्त्रों की निन्दा करते रहते हैं, अवश्य ध्यान देंगें।

आत्मिक और मानसिक शिक्षा

गुरुकुल के संचालकों ने जिस समय गुरुकुल की नींव धरी थी, उस समय उनके मन में कई विचार काम कर रहे थे और कई उद्देश्य उनके सन्मुख थे। जहाँ गुरुकुल का एक मुख्य उद्देश्य वैदिक धर्म के विद्वान्, विश्वासी, प्रचारक उत्पन्न करना है, वहाँ उसका उतना ही बड़ा उद्देश्य सदाचारी नागरिक उत्पन्न करना है, जिनका आचार ही उनको समीपवासी लोगों के लिए उपदेश का काम दे। गुरुकुल के चलाने वाले दयानन्द के अनुगामी यह अनुभव करते हैं कि शुष्क मानसिक शिक्षा जरूरी नहीं कि आचार पर अपना प्रभाव डाले। आचार परिवर्तन के लिए आवश्यक है कि मनावेशों और मन की वृत्तियों को नियम में लाया जावे और इस कार्य का पूर्ति आत्मिक साधनों के बिना कठिन ही नहीं, किन्तु असम्भव है। इस सिद्धान्त की सत्यता का एक दुःखदायक उदाहरण आज हम अपने पाठकों के आगे रखते हैं। इस समय वैज्ञानिक जगत् में कोई विरली ही व्यक्ति होगी जो प्रसिद्ध विदुषी नारी मैडम क्यूरी ने रेडियम radium के आविष्कार में सहायता दी और वह पहली ही स्त्री है, जो पेरिस के एक जगत् प्रसिद्ध विश्वविद्यालय की महोपाध्यायी हुई है। 'रायटर' की तार से विदित हुआ है कि उसी विश्वविद्यालय के एक महोपाध्याय की भार्या ने अपने पति के सम्बन्ध में मैडम महाशाली पर दुराचार का दोषारोपण किया है और वह न्यायालय में सिद्ध भी हो गया है। शोक ! शोक !! शोक !!! किन्तु इस शोक से क्या बनता है ?

यूरोप प्रकृति पूजा में ग्रस्त है। धार्मिक शिक्षा ही उसको इस रोग से निवृति करा सकती है। क्रिश्चियन धर्म मृत हो चुका है। संसार में केवल वेद का अमृतरूपी उपदेश ही सिसकते हुए यूरोप में फिर से जीवन डाल सकता है। वैदिक धर्म को अपने जीवन में पूर्ण प्रकार से धारण करने वाले और देश देशान्तर में उसका डंका बजाने वाले विद्वान् केवल गुरुकुल से ही किसी समय निकल सकते हैं। तिस पर भी यदि आर्य पुरुष अपने उत्तरदातृत्व और गुरुकुल की ओर अपने कर्तव्य का ध्यान न दे, तो उनके विषय में संसार क्या सम्मति स्थिर करेगा; इसका निर्णय वह स्वयं ही कर लेवें।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 दिसम्बर, 1911]

ढ़ाका यूनिवर्सिटी

ढाका में एक नई यूनिवर्सिटी की स्थापना की सूचना पाते ही बंगाल के कई पत्रों ने उसके विरुद्ध बड़ा आन्दोलन आरम्भ किया है। वे पत्र इसमें कई तरह की गूढ़ नीतियों और रहस्यों को देखने का यत्न कर रहे हैं। इसी नए विश्वविद्यालय के विरुद्ध अपनी सम्मति प्रकट करने के लिए बंगाल के कुछ नेता बड़े लाट की सेवा में उपस्थित हुए थे। बड़े लाट ने उसका जो उत्तर दिया है वह ध्यान से पढ़ने योग्य है। उसमें डेपुटेशन के द्वारा की गई आशंकाओं का उत्तर दिया गया है और इस विश्वविद्यालय की स्थापना का कारण बताया गया है। स्थापना का कारण बताते हुए वाइसराय ने कहा है कि जब वे पिछली बार ढाका गए तो उन्होंने वहाँ की मुसलमान प्रजा में शिक्षा के लिए बड़ा उत्साह पाया। दोनों बंगालों को मिला देने से ढाका निवासियों की शिक्षा में अवश्य ही बाधा पड़ती। अतएव दोनों बंगालियों को मिलाते हुए, वहाँ की प्रजा की शिक्षा के लिए इस नए विश्वविद्यालय की बड़ी आवश्यकता थी। वाइसराय ने विश्वास दिलाया कि इस नए विश्वविद्यालय की स्थापना का कारण केवल शिक्षा सम्बन्धी है, इसमें कोई राजनीतिक कारण नहीं है। डेपुटेशन के लोगों ने आशंका प्रकट की थी कि कदाचित् दो विश्वविद्यालयों के कारण फिर बंगाल का विच्छेद हो जाए। इसके उत्तर में वाइसराय ने कहा कि एक संयुक्त प्रान्त में तीन विश्वविद्यालय की स्थापना से यदि उसका विच्छेद नहीं हो सकता तो दो विश्वविद्यालयों से बंगाल का विच्छेद भी नहीं हो सकता। बंगाल के प्रत्येक विद्यार्थी को स्वतन्त्रता होगी कि वह चाहे ढाका विश्वविद्यालय में पढ़े और चाहे कलकत्ता विश्वविद्यालय में। इसके अतिरिक्त इन दोनों विश्वविद्यालयों में भेद होगा। कलकत्ता का विश्वविद्यालय केवल परीक्षा लेने वाला विश्वविद्यालय है, परन्तु ढाका का विश्वविद्यालय केवल परीक्षा के लिए नहीं, किन्तु पढ़ाई का भी काम करेगा। अन्त में वाइसराय ने विश्वास दिलाया कि यह भय सर्वथा वृथा है कि ढाका का विश्वविद्यालय केवल मुसलमानों के लिए होगा। उसका द्वार प्रत्येक विद्यार्थी के लिए खुला होगा, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान।

आर्यस्कूलों के खिलाड़ियों से दुर्व्यवहार

कौन-सा आर्य होगा, जिसने लुधियाना आर्यस्कूल के क्रिकेट के खिलाड़ियों पर की गई जबरदस्ती का समाचार शोक के साथ न सुना होगा। कथा पुरानी हो चुकी, अतः लम्बा समाचार छापने की आवश्यकता नहीं। हमने अभी तक विश्वासजनक प्रमाण के अभाव से उस घटना पर सम्मति न दी थी। अब एक विश्वस्त प्रमाण से हमें पूरी घटना का ज्ञान हो गया है। आर्यस्कूल का मैच मिशन स्कूल के साथ हो रहा था। पहली इनिंग में आर्यस्कूल की जीत हुई। दूसरे दिन जब खेल फिर से शुरू होने वाला था, तब मिशनस्कूल के कई खिलाड़ियों ने आर्यस्कूल के दो खिलाड़ियों को पीटा। उन दो में से एक आर्यटीम का मुखिया था और बॉलर भी था। मिशनवालों ने उसकी एक बाँह तोड़ दी, ताकि वह बॉलिंग न कर सके। जब खेल के बोर्ड से निवेदन किया गया तो उसने न्याय की जगह आर्यस्कूल की टीम को भी खेल में से निकाल दिया। पीछे से यद्यपि डिप्टी कमिशनर साहब ने घाव पर मरहम लगा दी और बॉलिंग का इनाम रामजी दास को ही दे दिया, तथापि आर्यस्कूल के दल के साथ जो अन्याय होना था, सो हो गया।

उधर जालन्धर से भी यही समाचार आया है। वहाँ के दुआबा हाई स्कूल की फुटबाल की टीम भी सदा विजय पाती रही है। अब के जरा से झगड़े पर, गवर्नमेंट स्कूलवालों ने उन्हें भी बेतरह पीटा। यद्यपि जिस प्रकार से अवसर होने पर भी दोनों स्थानों के आर्य टीमोंवाले नहीं भड़के, वह प्रशंसा का अधिकारी है, तथापि ऐसी घटनाओं का होना प्रकट करता है कि आर्यस्कूलों को, स्कूलों की टूर्नामेंटों में अधिक न्याय या शान्तिपूर्वक व्यवहार की आशा न रखनी चाहिए।

एक निवेदन

इन विचारों को दृष्टि में रखते हुए हम आर्यस्कूलों से एक निवेदन करने का साहस करते हैं। इस प्रकार के दुर्व्यवहारों का रुकना एक ही तरह सम्भव है। यदि सब आर्यस्कूल मिलकर एक अपनी पृथक् टूर्नामेंट किया करें तो बहुत ही अच्छा हो। जहाँ आर्यस्कूलों का आपस में परिचय बढ़ जाए, वहाँ खेलों की संख्या को बढ़ाकर देसी उपयोगी खेलों का भी उसमें समावेश किया जा सके। इसी टूर्नामेंट में गुरुकुल भी सम्मिलित हो सकता है और गुरुकुल की क्रीड़ाभूमि से उत्तम शान्त तथा सुन्दर स्थान इन खेलों के लिए मिलना कठिन है। यदि प्रतिवर्ष ऐसा ही आर्य-क्रीड़ोत्सव पृथक् हो जाया करे तो फिर ऐसे दुर्व्यवहारों को सहने की आवश्यकता न पड़े। क्या सब आर्यस्कूलों के कार्यकर्ता हमारे इस निवेदन पर ध्यान देंगे।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की श्रेष्ठता में वाइसराय की साक्षी

ज्यों-ज्यों समय बीत रहा है त्यों-त्यों लोग गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की उत्तमता को

स्वीकार करने लग गए हैं। नागरिक प्रलोभनों से बचाकर विद्यार्थियों को अपने शरीर, मन और आचार को उन्नत करने का अवसर देना; गुरु और शिष्य को सदा साथ रखकर उनमें अटूट सम्बन्ध उत्पन्न करना—गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का प्रधान कार्य है। यूरोप के विश्वविद्यालयों में ये सिद्धान्त बहुत अंशों में पहले से ही स्वीकार किए जाते हैं, परन्तु भारतवर्ष के कालेज इन सिद्धान्तों से सर्वथा उलटी ओर जा रहे हैं। आजकल कालेज प्रलोभनों के केन्द्रीभूत नगरों में स्थापित किए जाते हैं और वहाँ अध्यापकों और विद्यार्थियों का सम्बन्ध बहुत थोड़ी देर के लिए ही होता है। यह वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली का बड़ा भारी दोष है। यह बात हम अपने मन से नहीं, किन्तु भारत में वाइसराय लार्ड हार्डिंग्ज की साक्षी से कह रहे हैं। बंगाल के डेपुटेशन के उत्तर में उन्होंने जो भाषण किया, उसमें उन्होंने इस विषय में जो कुछ कहा है, वह ध्यान देकर पढ़ने योग्य है। कलकत्ता विश्वविद्यालय के वाइस चासन्लर डा. आशुतोष मुकर्जी की साक्षी पर वे कहते हैं कि "वे आस्थाएँ जिनमें हमारे विद्यार्थी रहते हैं और वे प्रलोभन जिनका उन्हें सामना करना पड़ता है, कई बार विद्यार्थियों के जीवन को, न केवल शरीर और आचार की दृष्टि से ही, परन्तु मानसिकोन्नति की दृष्टि से भी सर्वथा नष्ट कर देते हैं।" प्रसिद्ध डाक्टर इन्द्र माधवमल्लिक कहते हैं कि "कलकत्ता के वे घर जिनमें विद्यार्थी रहते हैं, उनकी शारीरिक दशा के लिए घातक होते हैं।" इन विद्वानों की सम्मतियाँ उद्धृत करके वाइसराय कहते हैं :

"मुझे शोक से कहना पड़ता है कि मेरा अपना अनुभव भी इन सज्जनों की सम्मति के अनुकूल है और मैं आपसे और बंगाली पिताओं से पूछता हूँ क्या ऐसी अवस्थाओं में अपने लड़कों को पालकर आप सन्तुष्ट हैं ? आपका और उनका चाहे कोई ही उत्तर क्यों न हो, मेरा अपना उत्तर यह है कि मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ। मुझे इस विषय का बड़ा रोष है कि बुद्धिमान और चतुर नवयुवक ऐसे अस्वास्थ्यकारी और कुत्सित अवस्थाओं में पलें। यह गवर्नमेंट का कर्तव्य है कि वह इस दुरव्यवस्था को मिटाने में कोई कसर न उठा रखें।"

हम केवल बंगाली पिताओं से नहीं, किन्तु सारे भारतवासी पिताओं से प्रश्न करते हैं कि क्या आप ऐसी अस्वास्थ्यकारी और कुत्सित अवस्थाओं में अपने लड़कों को पालकर सन्तुष्ट हैं ? हम आपके उत्तर दिए बिना ही जानते हैं कि आप सन्तुष्ट नहीं हैं। तब गवर्नमेंट के साथ क्या आपका यह कर्तव्य नहीं है कि आप भी इस दुरव्यवस्था को दूर करने का प्रयत्न करें और इस दुरव्यवस्था को दूर करने वालों की तन, मन और धन से सहायता करें।

[सद्धर्म प्रचारक, 21 फरवरी, 1912]

इंग्लैंड में भारत के विद्यार्थी

वर्षों व्यतीत हो गए यह शिकायत चली आती है कि इंग्लैंड में भारतीय विद्यार्थियों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं होता। पहले यही शिकायत थी कि कालोनियों में भारतवासियों के साथ पशुओं के समान व्यवहार किया जाता है, किन्तु इंग्लैंड में रहने वाले भारतीय छात्रों की शिकायत अब कालोनियों के मातृदेश पर भी छाया डालने लगी है। जिस देश में फ्रांस और जर्मनी के, इटली और रूस के राजनीतिक विद्रोही तक सुरक्षित आश्रय पा सकते हैं, उसके अन्दर, उसी साम्राज्य की प्रजा के पुत्र जाए और उनके साथ अपराधियों का-सा व्यवहार हो, यह कैसी चिन्ता की बात है ? अस्तु ! भारत के इंग्लैंडवासी विद्यार्थियों की शिकायतें बतलाती हैं कि वहाँ उन्हें एक प्रकार के खुले कारागार में रखा जाता है। एक सभा भारतीय छात्रों की सहायता के नाम से बनाई गई है। छात्रों का कथन है कि वह सभा उनकी सहायता नहीं करती, प्रत्युत उनके जीवन पर कड़ी निगाह रखती है, अपराधियों की भाँति उनका पीछा करती है। क्या यह अपमानजनक दशा सह्य हो सकती है।

इंग्लैंड न जाना चाहिए

भारतीय छात्रों को इंग्लैंड प्रायः बैरिस्टर बनने के लिए जाना पड़ता है। बैरिस्टरों की पहले ही भारतवर्ष में अतिवृष्टि हो रही है।

संख्या अधिक बढ़ जाने से अब वकालत-पेशा लोग भूखों मर रहे हैं। इस लिए बम्बई के गुजराती पत्र की सलाह बिलकुल ठीक है कि भारतवासियों को अब वकालत के पेशे के पीछे अधिक न भागना चाहिए। भागना भी हो तो वकीलों की आमदनी, आवश्यक नहीं कि बैरिस्टर से कम हो। विलायत से लौटे हुए भी पत्थर के माधो पाए जाते हैं और वकील भी हजारों कमाते हैं। कई लोग सिविल सर्विस के लिए विलायत जाते हैं। उसके पीछे यदि भारतवासी भागना छोड़ दें, तो स्मरण रखना चाहिए कि वह उनके पीछे भागेगी। यदि भारतीय छात्र सिविल सर्विस के लिए विलायत न जावे तो सरकार को सिविल सर्विस की परीक्षा भारत में ही करनी पड़ेगी, क्योंकि यह भी हम जानते हैं कि अंग्रेजी सरकार भारत वर्ष

में सब अंग्रेज कर्मचारी नहीं ला सकती और न ही लाना चाहती है। इसमें सरकार का अपना स्वार्थ है कि वह अधिक प्रतिभाशाली भारतवासियों को सिविल सर्विस की ओर खींच ले। उसके पीछे न भागना और भी लाभदायक होगा। शेष रहा यह कि भारतवासी इंग्लैंड में विद्याप्राप्ति के लिए जाए। हमारी सम्मति में अमेरिका, फ्रांस, स्विटजरलैंड आदि देशों में इंग्लैंड से बहुत उत्तम विद्या प्राप्त हो सकती है। इसलिए अच्छा तो यह है कि भारतवासी विद्यार्थी उस अपमान से बचने के लिए, जो उन्हें इंग्लैंड में सहना पड़ता है, वहाँ जाना ही छोड़ दें।

मुसलमानों की शिक्षा

सरकार मुसलमानों की शिक्षा के लिए विशेष यत्न करना चाहती है। वह मुसलमानों में उच्च शिक्षा के प्रचार के लिए विशेष यत्न करना चाहती है। मकतबों की सहायता करना, उर्दू की पढ़ाई पर विशेष ध्यान देना, छात्रवृत्तियों द्वारा मुसलमान विद्यार्थियों को उत्साहित करना—ये सब साधन हैं, जिनसे सरकार मुसलमान में शिक्षा बढ़ाना चाहती है। इस विचार के लिए सरकार की जितनी प्रशंसा की जाए, थोड़ी है। भारतवर्ष के आधे दुख हिन्दु-मुहम्मडन संग्राम के कारण हैं। उन्नति का रास्ता रुकने के कारण यदि सौ हैं तो उनमें से पचास हिन्दुओं और मुसलमानों के परस्पर युद्ध के साथ सम्बन्ध रखते हैं। इस युद्ध का एक यही कारण है कि मुसलमानों को उच्च शिक्षा दी जाए। शिक्षा मनुष्य की आँखें खोलने का आश्चर्यकारी यत्न है। सरकार हमारे मुसलमान भाइयों की शिक्षा के लिए जितना अधिक प्रबन्ध करेगी, उतना ही भला होगा। शिक्षित होकर हमारे मुसलमान भाई समझने लगेंगे कि हम सबकी माता एक भारतमाता है, फिर अलहदा अधिकार या नौकरियाँ माँगने का विचार उन्हें सपने में भी न सताएगा।

चीन में प्रजा का राज्य

बूढ़े चीन, तुम्हें बधाई हो ! भारतवर्ष के भाई चीन तुम्हें प्रजा सत्तात्मक राज्य पाने पर सोए हुए भारतवर्ष की ओर से सौ-सौ बधाई हो ! कल जो अमेरिका तुम्हारी भूमि पर तोपें उतारने में न डरता था, उस द्वारा नए प्रकार के शासन को स्वीकार करना मुबारिक हो ! प्रजा सत्तात्मक राज्य, परमात्मा का अपना राज्य है, क्योंकि परमात्मा के शब्द की प्रतिध्वनि प्रजा के राज्य से निकलती है। उस परमात्मा के राज्य के नीचे आना; हे चीन ! तुम्हारे लिए सुखदायी हो। यह अवसर हम बधाई देने का इसलिए रखते हैं, क्योंकि अमरीका ने चीन के प्रजा सत्तात्मक राज्य को स्वीकार कर लिया है। और देश भी शीघ्र ही अमरीका का अनुकरण करेंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 मई, 1913]

ब्रिटिश शासन में बेगार

कहते हुए हृदय विदीर्ण होता है, प्राण थर्राते हैं कि हाय ! ब्रिटिश शासन में भी बेगार की प्रथा हिमालय पर्वत के समान अटल है। सहयोगी 'भारतमित्र' में कुमाऊँ जिले की बेगार सम्बन्धी जो दो लेख प्रकाशित हुए हैं, उनको पढ़कर कौन ऐसा सहृदय है, जिसकी आँखों में दो आँसू न आते हों ? चाहे जैसा पत्थर दिल क्यों न हो, पर कुमाऊँ जिले में बेगार की प्रथा देखकर वह रोए बिना नहीं रहेगा। वहाँ के निवासियों को इस प्रथा के कारण बहुत सी यन्त्रणाएँ भुगतनी पड़ती हैं। बेगारों में कहीं-कहीं देखा गया है कि रसद के समय जिले के हाकिम जिस पदार्थ का जो निर्ख नियत कर देते हैं, वह चाहे जितना कम क्यों न हो, उसी भाव पर दुकानदार को बेचना पड़ता है। सरकार को यह निन्दनीय प्रथा उठाकर, बेगार करने वालों का यश प्राप्त करना चाहिए। जिस इंग्लैंड ने एक दिन गुलामी का व्यवहार उठाकर समस्त संसार में अपनी कीर्त्ति की विमल पताका उड़ाई थी, क्या उसी इंग्लैंड के आधीन भारतवर्ष में बेगार की प्रथा रहना उचित है ? लोकल गवर्नमेंटों को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

क्या यह राजद्रोह नहीं है ?

नहीं जानते आजकल इंग्लैंड की पार्लियामेंट में अधिकार चाहने के लिए जो स्त्रियाँ आन्दोलन कर रही हैं, उसका परिणाम क्या होगा ? पर इसमें सन्देह नहीं है कि वहाँ की स्त्रियों ने अपने विरोधियों के नाक में दम कर डाले हैं। कोई सप्ताह ऐसा नहीं जाता है जिसमें इंग्लैंड की रमणियों के उधम के समाचार न मिलते हो। मिस्टर डिकिंस का बिल रद्द हो जाने पर वहाँ की स्त्रियों भीषण रूप धारण कर लिया है। पार्लियामेन्ट के मेम्बरों पर हाथ छोड़नादि तो अब उनके बाएँ हाथ का खेल है। बैंक ऑफ लन्दन तक में आग लगाना चाहतीं, पर कुशल हुई कि बैंक बच गया। जेल में पहुँचकर भोजन नहीं करती हैं। हम पूछते हैं कि क्या यह राजद्रोह नहीं है ? बहुत सम्भव है कि भारतवर्ष में राजद्रोह के सपने लेने वालों को इंग्लैंड की ठंडी वायु में राजद्रोह प्रतीत न होता हो।

बड़ौदा में शिक्षा प्रचार

प्रत्येक देशी राजाओं को बड़ौदा नरेश का अनुकरण करना चाहिए। बड़ौदा नरेश ने अपनी प्रजा में शिक्षा प्रचार करने के लिए असाधारण प्रयत्न किया है। अब उन्होंने अपने राज्य के सर्वसाधारण लोगों की विद्या की ओर रुचि उत्पन्न करने के लिए एक और नवीन उपाय का अवलम्बन किया है। उन्होंने अपने राज्य में चलते हुए पुस्तकालयों (Travelling Libraries) की व्यवस्था की है। उनके राज्य में ऐसे पुस्तकालय चौरासी हैं। जिनमें अत्यन्त जातियों की स्त्रियों के लिए पन्द्रह और पुरुषों के लिए छब्बीस हैं। जिनमें से साढ़े हजार पुस्तकें पढ़ने के लिए दी गई हैं। यह नियम रखा गया है कि प्रत्येक सन्दूक में सौ पुस्तकें रखी जाती हैं। जिनमें महाभारत-रामायण आदि तथा अन्य धर्म पुस्तकें भी होती हैं। अब वहाँ के शिक्षा विभाग ने चलती हुई तस्वीरें और लालटेनों का भी प्रबन्ध किया है। इसके लिए दस हजार रुपए मन्जूर भी हुए हैं। कुछ आदमी स्थान-स्थान पर जाते हैं, जो इन चित्रों के सम्बन्ध में समझाते रहते हैं। इस भाँति बड़ौदा नरेश अपने राज्य में विद्या की रुचि उत्पन्न करने के लिए प्राणपण से चेष्टा कर रहे हैं। यदि अन्यान्य देशी राजा भी इस भाँति चेष्टा करें तो इस देश से अविद्या रूपी अंधकार बहुत कुछ दूर हो सकता है।

हाकिमों को कांग्रेस का भय

इंडियन कांग्रेस का आगामी अधिवेशन करांची में होगा। यह प्रथम अवसर है कि 25-26 वर्ष पीछे कांग्रेस का सिन्ध में अधिवेशन होगा। यद्यपि कांग्रेस की कार्यप्रणाली को देखते हुए यह बिना किसी संकोच के कहा जा सकता है कि कांग्रेस कोई विशेष रूप से जीवित जागृत संस्था नहीं है। तथापि कांग्रेस में कोई प्राण न होने पर भी कहीं-कहीं ऐंग्लो-इंडियन अखबार और यूरोपियन अफसर उसके नाम से बेतरह घबराते हैं। ''सिन्ध में ऐंग्लो-इंडियन अखबार और हाकिम लोग कांग्रेस के आने का समाचार सुनकर घबराने लगे हैं। इसलिए वहाँ मुसलमानों को कांग्रेस से अलग रखने की चेष्टा की गई थी। पहले तो 'सिन्ध गज़ट' नामक एक ऐंग्लो-इंडियन अखबार ने कांग्रेस की कार्यकारिणी सभा के विरुद्ध विष उगलना प्रारम्भ किया था। सिन्ध के एडीशनल ज्यूडिशियल कमिश्नर मि. एच.एम. क्राम ने एक सभा में कांग्रेस का खुल्लमखुल्ला विरोध किया है। आपका कथन है कि चाहे आज पढ़े-लिखे सिन्धी भले ही यह कहें कि मैं भारतवासी हूँ, किन्तु अपने मन में वह कहता है कि हैदराबादी आमिल, एक शिकारपुरी और ब्राह्मण हूँ।'' उक्त ज्यूडिशिल कमिशनर बहादुर का कथन है कि भारतवर्ष में जहाँ इतनी रीतियाँ, जाति, पार्टियाँ प्रचलित हैं वहाँ एक राष्ट्र-निर्माण होना कठिन है। अस्तु ! इस प्रकार उक्त

ज्यूडिशियल कमिश्नर ने बहुत सी बातें कहीं हैं। अब प्रश्न यह है कि किस नियम के अनुकूल उक्त ज्यूडिशियल कमिश्नर ने राजनीतिक विषयों में हस्तक्षेप किया है ? जिस भाँति उक्त कमिश्नर ने कांग्रेस के विपक्ष में बातें कही हैं। यदि उसी प्रकार कोई भारतवासी सरकारी अफसर कांग्रेस के पक्ष में कहता तो क्या वह अपनी नौकरी पर रह सकता था ? सिन्धवालों को कांग्रेस के लिए दृढ़ता से कार्य करना चाहिए। क्योंकि संयुक्त प्रान्त में जब पहली कांग्रेस हुई थी तब उस समय संयुक्त प्रान्त के छोटे लाट तक ने कांग्रेस का प्रबल विरोध किया था, पर कुछ परिणाम न निकला।

कांग्रेस का सभापति कौन होगा ?

मद्रास में अखबारों में आन्दोलन हो रहा है कि अब की बार इंडियन नेशनल कांग्रेस का कोई मद्रासी सभापति होना चाहिए। क्योंकि 27 वर्ष के भीतर केवल दो मद्रासी सज्जन सभापति हुए हैं। इस पर कराँची का 'फिनोक्स' नामक अखबार कहता है कि सिन्ध में मुसलमानों की बस्ती बहुत है, इसलिए कोई मुसलमान सभापति होना चाहिए, जिससे इस बार कांग्रेस में बहुत से मुसलमान सम्मिलित हो सकें। हम नहीं जानते कि सभापतित्व के लिए प्रान्तिक और जातिभाव की क्या आवश्यकता है ? पंजाब से आज तक कांग्रेस का कोई सभापति नहीं हुआ है। मद्रास के समाचारपत्रों की उदारता इसमें थी कि वे इस बार पंजाब से किसी योग्य पुरुष को सभापति करने की सम्मति प्रदान करते। पर 'फिनोक्स' के कथनानुसार किसी मुसलमान सज्जन को सभापति करने की इच्छा हो तो हमारी सम्मति में बाँकीपुर के मिस्टर मज़हरूल हक्क को सभापति करना चाहिए। बिहार प्रान्त से आज तक कोई सभापति भी नहीं हुआ है, दूसरे मिस्टर मज़हरूल हक्क सदैव से कांग्रेस के पक्षपाती हैं और हिन्दू-मुसलमान, दोनों में एकता फैलाने का प्रयत्न करते रहे हैं।

[सद्धर्म प्रचारक, 17 मई, 1913]

आर्यसमाज और ब्राह्मण

आर्यसमाज गुणकर्म स्वभाव के अनुसार वर्ण व्यवस्था मानता है। जिसके जैसे कर्म होंगे, वह समाज में पदवी पाएगा। एक ब्राह्मण नामधारी रसोइए का पुत्र यदि स्टेशन पर पानी पिलाकर अपना पेट भरता है तो वह पंडित जी कहाने के योग्य नहीं है। यदि एक कान्यकुब्ज वंशोद्भव युवा दूकान खोल ले और टका पन्थी बन जाए, तो वह वैश्य कहाएगा, ब्राह्मण नहीं। जो विद्या, शारीरिक बल को अथवा धन को केवल अपने उपभोग में व्यतीत करता है, वह शूद्र है। जो पंडित होकर और संस्कृत पढ़कर भी, न सन्ध्या करता है और न परमात्मा में विश्वास करता है, न देश की सेवा में तन को लगाता है और न मन को, वह शूद्र के समान है। उसका नाम विद्वान् लोग शूद्र रखेंगे। हीरे और मोती कंकरों के अन्दर से मिलते हैं और पद्म का फूल कीचड़ में से पैदा होता है। आर्यसमाज समाजशास्त्र के विशुद्ध सिद्धान्तों को मानता है, इसलिए यह जन्म को कभी ध्यान में नहीं लाता। यह शोक के साथ दिखाई दे रहा है कि अभी समाज इस जन्म रोग से सर्वथा छूटा नहीं है। जन्म से अपने आपको ब्राह्मण मानने वाले कई लोग जन्म की मुख्यता को फिर से स्थापित करना चाहते हैं। यह भयानक लक्षण है। आर्यसमाज गुणों और कर्मों को प्रधान मानता है, इसी सिद्धान्त पर वह अपने समाजशास्त्र को स्थापित करता है। जो लोग इस सिद्धान्त को तोड़ना चाहते हैं, वे समाज के शत्रु हैं।

पश्चिमीय आँखों में गुरुकुल

अन्त में सत्य की जीत होती है। यह कहावत, गुरुकुल के विषय में अक्षर-अक्षर चरितार्थ हो रही है। जिस समय गुरुकुल की स्थापना हुई थी, उस समय अनेक व्यक्ति हँसते थे, अनेक प्रकार की खिल्ली उड़ाते थे और गुरुकुल के विरोध करने में मस्तिष्क की समस्त शक्तियों का ह्रास करते थे। पर अन्त में सत्य, सत्य ही रहा। इस समय गुरुकुल के यश की सुगन्धि भारतवर्ष में ही नहीं, विदेशों तक में फैली हुई है। इस समय गुरुकुल विद्वानों के लिए आकर्षण-शक्ति हो रही है। जौन एस. हीलेंड नामक एक अंग्रेज ने जून मास के 'मार्डन रिव्यू' में एक लेख 'भारतवर्ष के भाग्य पर कुछ विचार' शीर्षक से लिखा है। इस लेख के आरम्भ

में उक्त सज्जन ने पश्चिम की कुछ घटनाओं का उल्लेख करते हुए गुरुकुल कांगड़ी की बहुत प्रशंसा की है। लेख के अन्त में गुरुकुल के विषय में लेखक ने जो सम्मति दी है, उस पर गुरुकुल के समस्त प्रेमियों को अभिमान करना चाहिए। सुनिए, लेखक महाशय क्या कहते हैं। वे कहते हैं, "We of the West must thank God, our brothers at Hardwar, for you and your work, because there is at the Gurukul a hope not for India alone but for the whole earth" इसका तात्पर्य यह है कि 'हम पश्चिम के लोग, परमात्मा का, हरिद्वार के हमारे भाइयो ! आपको और आपके काम का धन्यवाद करते हैं। क्योंकि गुरुकुल से अकेले भारतवर्ष को ही आशा नहीं है, किन्तु समस्त संसार को इससे आशा है।' क्या अब भी गुरुकुल के गौरव में कुछ न्यूनता है ? क्या भारतवर्ष की शिक्षित मंडली का अपने पश्चिमी गुरुओं की यह सुनकर भी गुरुकुल पर श्रद्धा होगी ?

अमरीका में प्रारम्भिक शिक्षा

यह कहना व्यर्थ है कि बिना शिक्षा के कोई देश नहीं उठ सकता है। बहुत से भारतवासी शिक्षा के महत्त्व को समझ गए हैं। किन्तु शिक्षा पद्धति कैसी होनी चाहिए इस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया है। अमेरिका में प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त है। फिर भारतवर्ष की भाँति वहाँ के छोटे-छोटे बच्चों को पुस्तकें नहीं रटाई जाती हैं। एक सज्जन लिखते हैं कि वहाँ के भूगोल पढ़ाने में और यहाँ के भूगोल पढ़ाने में बहुत भेद है। भारतवर्ष के सरकारी स्कूलों में बालकों को भूगोल का व्यावहारिक कुछ ज्ञान न कराके, भौगोलिक परिभाषाएँ रटाई जाती हैं कि चट्टान क्या है ? द्वीप क्या है, महासागर क्या है ? पर अमेरिका में यह बात नहीं है। वहाँ जिस गाँव या शहर में बालक रहता है, उस शहर के मानचित्र में वहाँ की गलियों, दुकानों और सार्वजनिक इमारत बनी होती है। बालक अपने जाने हुए पदार्थों को देखकर समझ जाता है कि भूगोल का तत्त्व क्या है ? पीछे वह अपने देश तथा अन्य देशों का भूगोल पढ़ता है। भला जिस देश में इस भाँति व्यावहारिक शिक्षा का प्रचार हो, वही शिक्षा अपना वास्तविक चमत्कार दिखला सकती है, न कि हमारे देश की भाँति सारी आयु पुस्तकें रटने में ही बीत जाती है तिस पर भी एक मौलिक (Original) मनुष्य पैदा नहीं होता है। हाँ, अलबत्ता यूनिवर्सिटी में ठप्पा लगा हुआ दो अंगुल का कागज का टुकड़ा मिल जाता है जो कि हमको दासता करने में कभी थोड़ी बहुत सहायता देता है और कभी नहीं देता है।

पश्चिमीय राजनीति सीखो

भारतमाता के सच्चे सपूत और राजनीतिक संन्यासी, आनरेबल मिस्टर गोपलकृष्ण गोखले की दक्षिण अफ्रीका की यात्रा प्रवासी भारतवासियों के दुख मिटाने के लिए

समर्थ नहीं हुई है। आनरेबल मि. गोखले का कथन है कि जनरल स्मिटिस ने वचन दिया था कि नेटाल में प्रत्येक भारतवासी पर तीन पौंड्स का जो कर है, वह बन्द कर दिया जाएगा। अब जनरल स्मिट्स इससे अस्वीकार हैं। वे कहते हैं कि यह ऐसे ही चना दिया था। पाठकों का स्मरण रखना चाहिए कि यह जनरल स्मिट्स वही हैं जिनकी पट्टी में आकर पाँच वर्ष हुए मि. गाँधी ने निष्क्रिय प्रतिरोध को रोकने की चेष्टा की थी और पीछे इन्हीं जनरल स्मिट्स ने मि. गाँधी को अँगूठा दिखा दिया था। सच बात तो यह है कि अभी भारतवासियों को पश्चिमीय राजनीति के मर्म सीखने की बहुत आवश्यकता है। चाहे मि. गोखले हों, चाहे मि. गाँधी–फिर भी तो यह हैं बिचारे भोले-भाले भारतवासी। इनको क्या खबर है कि जनरल स्मिट्स का कथन, महाराज युधिष्ठिर के समान है कि अश्वत्थामा मारा गया, चाहे वह हाथी हो या मनुष्य।

हिन्दू विश्वविद्यालय और सरकार

स्मरण रखना चाहिए कि जो जाति दूसरों से भीख माँगती है, वह जाति कभी उठ नहीं सकती है। कम-से-कम जो जाति अपनी शिक्षा का आप प्रबन्ध नहीं कर सकती है, उस जाति में मौलिक पुरुषों का अभाव रहता है। यही कारण है कि भारतवर्ष में यूनिवर्सिटी के बनने पर आज तक कोई भी मौलिक पुरुष इन यूनिवर्सिटी में से नहीं निकला है। राजा राममोहन, स्वामी दयानन्द सरस्वती, सर सैयद अहमद खाँ प्रभृति जैसे असाधारण प्रतिभाशाली व्यक्ति इन यूनिवर्सिटियों में से नहीं निकले थे। पर तिस पर भी हिन्दू विश्वविद्यालय के संचालक बार-बार सरकार से अपने विद्यालय के निमित्त चार्टर की प्रार्थना करते हैं, पर सरकार से उनको सूखा उत्तर मिलता है। गत 28वीं अप्रैल को हिन्दू विश्वविद्यालय कमेटी के प्रेसीडेंट, दरभंगा नरेश ने सर हारकोर्ट बटलर को एक चिट्ठी लिखी। पुनजीर्वित हिन्दू विश्वविद्यालय की व्यवस्था का पूर्ण वर्णन किया था। उसके उत्तर में सर हारकोर्ट बटलर ने जो उत्तर दिया है, उससे पता लगता है कि अभी तक विश्वविद्यालय के बनने में बहुत विलम्ब है। हारकोर्ट बटलर का कथन है–पाँच शर्तों के बिना सरकार कोई स्कीम स्वीकार न करेगी–(1) उपयुक्त स्थान हो। (2) सेन्ट्रल हिन्दू कालेज किसी विद्यालय को दे दिया जाए। (3) पचास लाख रुपए इकट्ठा कर लिये जाये–इसमें चन्दा देने वालों की जायदाद और सालाना चन्दा भी शामिल है। पर शर्त यह है कि पक्की लिखा-पढ़ी हो जाए। (4) विश्वविद्यालय की नियमावली किस ढंग पर बनाई जाए जो आपके पीछे लिखा जाएगा। (5) एक कमेटी जो नियुक्त हो जाए, जो कह दे कि सेन्ट्रल हिन्दू कालेज आश्रम और शिक्षा के विश्वविद्यालय में परिणत हो सकता है। सर हारकोर्ट बटलर की इस चिट्ठी से स्पष्ट ज्ञात होता है कि अभी हिन्दू विश्वविद्यालय के बनने में देरी है।

[सद्धर्म प्रचारक, 14 जून, 1913]

शिक्षा और राजद्रोह

क्या सचमुच उच्च शिक्षा राजद्रोह फैलाती है ? यह बात चाहे सत्य हो अथवा मिथ्या, परन्तु लन्दन टाइम्स के संवाददाता मि. शिरोल के लेखों से यह भाव बहुत से मनुष्यों के हृदय में बैठ चुका है। लोग बिना सोचे-विचारे ही अब उच्च शिक्षा की निन्दा करते हैं, पर वास्तव में देखना यह है कि क्या सचमुच उच्च शिक्षा राजद्रोह का कारण होती है। शिक्षा प्राप्त करके मनुष्य, मनुष्य बनता है। बिना शिक्षा प्राप्त किए मनुष्य वास्तविक मनुष्य नहीं होता है। शिक्षा का उद्देश्य हृदय के अन्धकार को दूर करने और शान्ति का संचार करना है। पर शिक्षा के कारण जो अशान्ति होती है, उसका कारण यह है कि मनुष्य शिक्षा प्राप्त करके समझ जाता है कि मुझे मनुष्यत्व के अधिकार प्राप्त हैं या नहीं। शिक्षा प्राप्त करने पर अपने मनुष्यत्व के स्तत्व और अधिकारों के निमित्त युद्ध करने का साहस आ जाता है, इसी का दूसरा नाम अशान्ति घर रखा गया है। और नहीं तो राजद्रोह और शिक्षा का कुछ सम्बन्ध नहीं है। इंग्लैंड में सफरजेटों (मताभिलाषणी स्त्रियों) ने जो आन्दोलन कर रखा है, उसका कारण भी उच्च शिक्षा बतलाई जाती है। इस पर हमारा कहना है कि यह उच्च शिक्षा का दोष नहीं है, किन्तु शिक्षा प्रणाली का दोष है, जिससे इंग्लैंड की स्त्रियों में उद्दंडता आ गई है। यदि उन्हें आदर्श गृहलक्ष्मी बनाने की चेष्टा की जाती तो आज इंग्लैंड को यह दुर्दिन न देखना पड़ता। उच्च शिक्षा को व्यर्थ कोसा जाता है।

देहाती पाठशालाओं की दुर्दशा

भारतवर्ष में शिक्षा के साथ ही शिक्षकों की भी दुर्दशा का शेष नहीं है। अच्छे-से-अच्छे शिक्षक को उसकी योग्यता के सामने बहुत कम वेतन मिलता है। विशेषतः ग्रामीण अध्यापकों को बहुत बुरी दशा होती है। देहातों में जो प्राइमरी स्कूल होते हैं उनमें प्रायः पाठशाला के अध्यापकों के योग्य यथेष्ट सम्मान नहीं होता। दस-बीस रुपए मासिक का अध्यापक होता है। किसी-किसी देहाती पाठशालाओं में देखा गया है कि लड़कों को बैठने के लिए बैंच आदि भी नहीं होते हैं। संयुक्त प्रान्त में प्रारम्भिक शिक्षा के विचार करने के लिए जो कमेटी बैठी है उसको अब यहाँ के देहाती स्कूलों

वर्तमान पाठशालाओं पर भी दृष्टि डालकर इस विषय पर भी विचार करना चाहिए। जिससे कि देहाती पाठशालाओं में सुधार हो।

यूनिवर्सिटी की परीक्षा का फल

जिस भाँति चातक स्वामी की बाट देखा करता है, उसी भाँति यूनिवर्सिटियों की परीक्षाओं के परिणाम के निमित्त बिचारे छात्रगण उत्कंठित रहते हैं। अबकी बार पंजाब यूनिवर्सिटी की मैट्रिक परीक्षा के फल ने बिचारे विद्यार्थियों को बहुत क्लेश पहुँचाया था। बहुत से विद्यार्थियों के तारों के उत्तर परीक्षा फल के प्रकाशित होने से बहुत पीछे मिले। अनेक विद्यार्थी अपनी परीक्षा के परिणाम जानने की लालसा में लाहौर तक पहुँचे थे। खैर, यह तो थी पंजाब विश्वविद्यालय की बात। अब संयुक्त प्रान्त के विश्वविद्यालय के फल सुनिएगा। वहाँ पर प्रयाग में सिंडीकेट की मीटिंग न होकर, नैनीताल में हुई। सिंडीकेट की सभा ने सब परीक्षाओं के फल पास कर दिए, पर रजिस्ट्रार साहब ने कहा कि जब तक इलाहाबाद में प्रकाशित न होवे, तब तक लोगों को नहीं बतलाए जाएँगे। सच पूछिए तो इसका कोई कारण न था, यदि कमेटी नैनीताल की परीक्षाओं के फल विषयक विचार करना चाहती थी, तो पहले कम-से-कम जनसाधारण में यह विज्ञप्ति कर देती कि परीक्षाओं के फल पर नैनीताल में विचार होगा। पर उसका परिणाम प्रयाग में सुनाया जावेगा। तो क्यों बहुत बिचारे विद्यार्थी और उनके सम्बन्धी नैनीताल में परीक्षा की बाट में डेरा डालते। फिर समझ में नहीं आता एक रजिस्ट्रार के कहने से कमेटी ने यह क्यों स्वीकार कर लिया कि परीक्षा का फल प्रयाग में प्रकाशित होगा। लखनऊ के 'एडवोकेट' का यह कहना बहुत ठीक है कि रजिस्ट्रार ने केवल अपनी सुविधा के लिए यह चाल चली, क्योंकि उसके पास नैनीताल में इतने कर्मचारी न थे। कमेटी को चाहिए था कि एक मनुष्य की अपेक्षा, विद्यार्थियों की सुविधा पर विशेष ध्यान देती। अथवा अब रजिस्ट्रार और असिस्टेंट रजिस्ट्रार यूनिवर्सिटी के व्यय पर प्रयाग से नैनीताल पहुँच गए थे तो एक क्लर्क भी जा सकता था। इसमें सन्देह नहीं कि सिंडीकेट ने, इसमें जो व्यय हुआ है, उस पर कुछ आपत्ति नहीं की होगी। भारतवर्ष के किसी सिंडीकेट की कमेटी अपने सिंडीकेट के हाल के अतिरिक्त कहीं भी नहीं मिली है। तब यह इलाहाबाद के विश्वविद्यालय के साथ ही क्यों किया गया ? आशा है कि प्रयाग विश्वविद्यालय का सिंडीकेट 'एडवोकेट' के प्रश्नों का अवश्य उत्तर देगी। इस देश में हाकिमों का पहाड़ों पर जाने का जो रोग बढ़ा है, उसकी कुछ मात्रा कम होनी चाहिए। क्योंकि इससे शासन की बहुत सी बातों में असुविधा रहती है।

क्या इंग्लैंड में उच्च शिक्षा बन्द होगी ?

इंग्लैंड में सफरजेटों का आन्दोलन बतला रहा है कि भारतवासियों के समान ही यहाँ की स्त्रियों को अपने अधिकारों की लौ लग रही है। भारतवासियों में जो राजद्रोह की मात्रा बढ़ी हुई बतलाई जाती है उसका कारण उच्च शिक्षा कहा जाता है। अभी इंग्लैंड में जिस सफरजेट ने अपने प्राणों की आहुति दी है, वह भी उच्च शिक्षा प्राप्त है। तब तो यह प्रश्न स्वभावतः ही उठता है कि क्या इंग्लैंड में उच्च शिक्षा का द्वार बन्द किया जाएगा ? क्या सर वेलिंटियन शिरोल को वहाँ की महिलाओं के कालेजों में भी राजद्रोह की गन्ध प्रतीत हुई है ? क्या इंग्लैंड में शिक्षा का मूल्य इतना बढ़ा दिया जाएगा कि सब स्त्रियाँ पढ़ न सकें। सफरजेटों के इस आन्दोलन को देखते हुए यह प्रश्न स्वभावतः ही प्रत्येक भारतवासी के हृदय में उठता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 21 जून, 1913]

यूनिवर्सिटी में राजनीति

भारतवर्ष में राजनीति का भूत बहुत बुरी तरह से अपना रंग दिखलाता है। कलकत्ता यूनिवर्सिटी में भी राजनीति के इस भूत के ने विचित्र रंग दिखलाया है। राजनीति के भूत के कारण ही वहाँ की यूनिवर्सिटी के तीन विशेष व्याख्याता (लेक्चरार्स) अयोग्य ठहराए गए हैं। जिनके नाम यह हैं—डाक्टर ए.एम. सरहवर्द्धी, मिस्टर ए. रसूल और मिस्टर के.पी. जयसवाल। तीन लेक्चरार्स (विशेष व्याख्याताओं) के विषय में भारत सरकार का कहना है कि बड़े लाट उन लोगों को विशेष व्याख्याता (लेक्चरार्स) नियुक्त करना पसन्द नहीं करते हैं, जिन्होंने हाल में राजनीतिक कार्यों में विशेष भाग लिया है। गवर्नमेंट की इस घोषणा पर आन्तरिक वेदना हुए बिना नहीं रहती है। भला संसार में ऐसा कौन सा देश है जहाँ का शिक्षित सम्प्रदाय राजनीति में भाग न लेता हो। उन्नतशाली देशों में जीवन और मृत्यु का प्रश्न राजनीति ही है। खैर, इसको जाने दीजिएगा, यह तो दूर की बात है। यदि भारतवर्ष में ही इस नियम का पालन किया जाए तो बहुत से शिक्षित व्यक्ति इन विश्वविद्यालयों में न रह सकेंगे। सर फिरोजशाह मेहता, मिस्टर गोखले, डॉ. तेजबहादुर सप्रू, डाक्टर सतीशचन्द्र बनर्जी, यहाँ तक कि डाक्टर सुन्दरलाल और डॉ. रासबिहारी घोष से भी यहाँ के विश्वविद्यालय लाभ न उठा सकेंगे, और यदि इसी नियम का इंग्लैंड में पालन किया गया तो लार्ड मोर्ले और लार्ड कर्जन तक का यूनिवर्सिटी की दीवालों के पास फटकना तक नहीं हो सकता है। तब न मालूम भारत सरकार राजनीति के नाम से ऐसी क्यों भयभीत होती है ? इसके अतिरिक्त ऊपर जिन तीन सज्जनों के नाम दिए हैं, उनका तो भारतवर्ष के राजनीतिक कार्यों में बहुत नाम सुनने में भी नहीं आया है।

कालेपानी में राजनीतिक कैदी

कालेपानी में राजनीतिक कैदियों की दुर्दशा का समाचार बहुत दिनों से सुनने में आ रहे हैं। कलकत्ता के 'बंगाली' अखबार ने इस विषय पर पूरा-पूरा आन्दोलन आरम्भ कर दिया है। पर उसकी आवाज नक्कारखाने की तूती के समान है। समस्त संसार में यदि हम भूलते नहीं तो उग्र और प्रचंड रूप में भी राजनीतिक कैदियों

के प्रति बुरा व्यवहार नहीं होता है। पर शोक है, अंडमान टापू (कालेपानी) में राजनीतिक कैदियों के प्रति अच्छा व्यवहार नहीं हो रहा है। इंग्लैंड में प्रधानमन्त्री तक की टोपियाँ उतार लेने पर भी वहाँ की मताभिलाषिणी स्त्रियाँ जेल में भूखे रहने से छुटकारा पा सकती हैं। पर भारतवर्ष में राजद्रोह के सन्देह मात्र में जो गिरफ्तार हैं, वे भी भूखे रहने से कारागार से मुक्ति लाभ प्राप्त नहीं कर सकते हैं। अंडमान टापू में एक राजनीतिक कैदी ने बाहत्तर दिन तक भोजन नहीं किया था। जिसके कारण वह सूख गया था। और उसका दंड घटाने के बदले में एक और वर्ष के लिए बढ़ा दिया गया। ठीक है 'नमाज छोड़ने गए और रोजे गले पड़े'।

[सद्धर्म प्रचारक, 28 जून, 1913]

राष्ट्र निर्माण कैसे हो ?

भारतवर्ष में एक राष्ट्र कहाँ है ? जिधर देखो, उधर ही अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग अलापने वाली छोटी-छोटी अनेक जातियाँ बनी हुई हैं। ये छोटी-छोटी जातियाँ भारतीय राष्ट्रनिर्माण में बहुत सी बाधाएँ उपस्थित कर रही हैं। इन जातियों के अगुआ अपनी जातियों के पक्ष करने में ही अपनी समस्त शक्तियों को नष्ट कर रहे हैं। कहीं-कहीं देखा गया है कि इन जातियों ने समस्त राष्ट्र के स्वार्थ को केवल अपने स्वार्थ के कारण नष्ट किया है। मुसलमानों को अपनी थोड़ी संख्या के बहाने लेजिस्लेटिव कौंसिलों में विशेष अधिकार प्राप्त कर लेने पर भारतवर्ष की अन्य कई जातियों में भी इसकी चेष्टा की थी। पारसियों के अतिरिक्त जैनियों और मैथिल ब्राह्मणों ने भी अपनी थोड़ी संख्या के बहाने कौंसिलों में विशेष अधिकार प्राप्ति के निमित्त आन्दोलन किया था। वह तो परमात्मा की कृपा से अच्छा हुआ कि यह आन्दोलन सफल नहीं हुआ, नहीं तो इससे भारतीय राष्ट्र निर्माण में और भी विशेष बाधा उपस्थित होती। भारतवर्ष में एक राष्ट्र निर्माण करने के निमित्त आवश्यक है कि छोटी-छोटी जातियों के स्वार्थ को त्याग करके समस्त देश के स्वार्थ की रक्षा की जाए। इस सिद्धान्त को ग्रहण किए बिना यह देश कदापि नहीं उठ सकता।

जनसाधारण में शिक्षा की आवश्यकता

इस समय सबसे भारी प्रश्न हमारे सामने जनसाधारण में शिक्षा की आवश्यकता का है। भारतवर्ष की जनसंख्या विचारते हुए शिक्षा का बहुत कम प्रचार है। अछूत जातियों में तो शिक्षा का नाम निशान तक नहीं है। मिस्टर गोखले का प्रारम्भिक शिक्षा सम्बन्धी उद्योग सफल नहीं हुआ। जब गवर्नमेंट नहीं सुनती है तब हम लोग स्वयं भी शिक्षा प्रचार में बहुत कम प्रयत्न करते हैं। हर्ष का स्थल है कि ऐसी स्थिति में पंजाब के शाहपुर जिले में कुछ जमींदारों ने इस विषय में उद्योग प्रारम्भ किया है। सुना गया है कि वे अपने जिले के काश्तकारों से ऐसा अनुरोध करने वाले हैं कि जिनता रुपया भूमि कर पर दिया जाए, उतने ही पैसे वह दें, जिससे उस जिले में एक सेकेंड्री स्कूल खुल सके। और प्रारम्भिक पाठशालाओं की संख्या

बढ़े। वास्तव में शाहपुर के जमींदारों का यह विचार प्रशंसनीय है, क्या आशा की जा सकती है कि देश के अन्यान्य व्यक्ति भी इसका अनुकरण करेंगे ?

रंग का पक्षपात

सन् 1857 के सिपाही विद्रोह के पश्चात् स्वर्गीय महारानी विक्टोरिया ने जो घोषणा पत्र निकाला था, उसमें उन्होंने स्पष्ट किसी जाति विशेष और रंग विशेष के पक्ष न करने की प्रतिज्ञा की थी। सच पूछिए तो इस घोषणापत्र ने और महारानी की अभय वाणी ने भारतवासियों के दग्ध हृदय को शान्त किया था। पर खेद है कि उक्त घोषणापत्र को रटते-रटते, हमारे इतने दिन बीत गए, पर वह प्रतिज्ञा कार्य में परिणत न हुई। बल्कि लॉर्ड कर्जन सरीखे हाकिमों ने उक्त घोषणापत्र का उलटा ही अर्थ समझाने की चेष्टा की थी। खैर वह तो जो हुआ, सो हुआ, पर अब रेलवे कम्पनियाँ भी रंग के पक्षपात की दलदल में फँसने लगी हैं। बंगाल नागपुर रेलवे कम्पनी ने यूरोपियन यात्रियों के लिए तीसरे दर्जे की गाड़ियाँ बनवाई हैं। ये तीसरे दर्जे की गाड़ियाँ क्या खासी दूसरे दर्जे की गाड़ियाँ हैं। तीसरे दर्जे की बैठकें तख्ते की नहीं मुलायम बैंत की बनावट से बुनी हुई हैं। गाड़ी में नल सहित शौच का स्थान (पायखाना) है। केवल इस तीसरे दर्जे और दूसरे दर्जे में इतना ही भेद है कि दूसरे दर्जे में बैठकों पर चमड़े के गद्दे हैं। और इस तीसरे दर्जे में चमड़े के गद्दों के स्थान में बैंत का बुना हुआ जाल है। इस दर्जे में भारतवासी चाहे जितना धनाढ्य क्यों नहीं घुस सकता। इसके अतिरिक्त भारतवासियों के तीसरे दर्जे की जैसी पहली अवस्था थी, वैसी ही है। बंगाल नागपुर रेलवे कम्पनी को सोचना चाहिए कि उसके कोष में सबसे अधिक रुपया, काले चमड़े के भारतवासियों का ही जाता है। इससे उसको भारतवासियों की सुविधा पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए।

अपना-अपना स्वार्थ

जापान, इंग्लैंड और अमेरिका का अपना-अपना स्वार्थ उपस्थित हुआ है। अमेरिका, इंग्लैंड और जापान से जो सन्धि करने चला है, उससे उसके कार्य में बहुत विघ्न उपस्थित होता है। जापान चाहता है कि कैलिफोर्निया नए कानून का हेग की अन्तर्जाति सभा में विचार हो। इंग्लैंड चाहता है कि पनामा नहर में अमेरिका जहाज की भाँति इंग्लैंड के जहाज भी मुफ्त निकल जावें। जहाँ तक इस प्रश्न पर विचार किया जाता है, यही प्रतीत होता है कि अमेरिका इन दोनों शर्तों को स्वीकार नहीं करेगा। क्योंकि कौन ऐसा है, जो आई हुई लक्ष्मी को फेंक दे। देखना चाहिए कि अमेरिका, जापान और इंग्लैंड तीनों के भाग का कैसे निबटारा हो ?

[सद्धर्म प्रचारक, 5 जुलाई, 1913]

राष्ट्रीय शिक्षा की आवश्यकता

जैसे एक तालाब में बहुत दिन तक पानी बन्द रहने से पानी गन्दा हो जाता है और उसमें दुर्गन्ध आने लग जाती है। वैसे ही जो जाति अपने मस्तिष्क की शक्तियों से कार्य न लेकर दूसरों से विचार उधार लेती रहती है, उसके मस्तिष्क की शक्तियाँ रुक जाती हैं। उसमें विचार स्वातन्त्र्य का एकदम अभाव हो जाता है, कुछ करने-धरने की शक्ति नहीं रहती है। अपने भले-बुरे का ज्ञान नहीं रहता है। योग्यता होने पर भी अपने को अयोग्य कहने में गौरव और सम्मान समझती है। यही दशा आज भारतवर्ष की हो रही है। डेढ़ सौ वर्ष से भारतवासियों में निरन्तर शिक्षा का प्रचार होने पर भी भारतवर्ष जहाँ का तहाँ क्यों है और जापान ने पचास वर्ष के भीतर ही अपने यहाँ शिक्षा प्रचार करने से ही संसार की आँखें क्यों खोल दी हैं ? इसका कारण यह है कि हम लोग राष्ट्रीय शिक्षा का महत्त्व नहीं पहचानते हैं और हम राष्ट्रीय शिक्षा के महत्त्व से नितान्त अपरिचित हैं। जापानवाले जानते हैं कि मातृभाषा के आदर करने से मनुष्य मातृभूमि के महत्त को पहचानता है। यही कारण है कि जापान में जो शिक्षा पचास वर्ष में काम कर गई है वह भारतवर्ष में डेढ़ सौ वर्ष में भी नहीं कर सकी। इस समय भारतवर्ष में राष्ट्रीय शिक्षा का विशेष प्रयोजन है और वह राष्ट्रीय शिक्षा विदेशी भाषा द्वारा नहीं हो सकती है। उसके लिए अपनी मातृभाषा के आदर करने की आवश्यकता है।

हिन्दू यूनिवर्सिटी पर प्रोफेसर काक्स

इस स्थल पर यह प्रश्न स्वभावतः ही होता है कि जिस हिन्दू यूनिवर्सिटी का नाद चारों ओर सुनाई पड़ रहा है क्या वह यूनिवर्सिटी भी भारतवर्ष में राष्ट्रीय शिक्षा के अभाव मोचन करने में समर्थ न होगी। इस समय हिन्दू यूनिवर्सिटी भी दूसरों से विचार उधार लेकर हमको सौंपना चाहती है। अभी तक उसके संचालक आर्यभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने में संकोच कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त सुना गया है कि हिन्दू यूनिवर्सिटी का प्रिंसिपल कोई हिन्दू या भारतीय न होकर अंग्रेज होगा। इस विषय पर प्रोफेसर काक्स ने जुलाई मास के 'माडर्न रिव्यू' में एक विवेचन पूर्ण लेख लिखा है। नहीं जानते कि हिन्दू यूनिवर्सिटी के संचालक,

उस लेख पर ध्यान देंगे या नहीं। पर प्रोफेसर काक्स का कहना है कि यदि हिन्दू ऐसी हिन्दू यूनिवर्सिटी का प्रबन्ध नहीं कर सकते हैं, जो उन्होंने ही स्थापित की है और उन्हीं के खर्च से चलती है, तब देखना है कि वे शासन के योग्य कैसे हो सकते हैं ? प्रोफेसर काक्स का कहना है कि सिविल सर्विस के कारण अच्छे अंग्रेज नहीं आ सकते हैं। इसके अतिरिक्त प्रोफेसर काक्स ने अपने लेख में और भी कई प्रबल युक्तियाँ दी हैं, जिन पर हिन्दू यूनिवर्सिटी के संचालकों को विचार करना आवश्यक है।

मित्रों में जूती पैजार

जहाँ स्वार्थ के कारण मित्रता होती है, वहाँ मित्रों में जूती पैजार हुए बिना नहीं रहती है। जिन बालकान छोटे राज्यों ने मिलकर बिचारे टर्की का गला घोंटा था, वही मित्र राज्य लालच के फेर में पड़कर आपस में भिड़ गए हैं। एक ओर अकेला बल्गारिया है दूसरी ओर सरबेरिया मांटीनेगरी और यूनान हैं। युद्ध में प्राप्त रूस राज्य ही इस झगड़े का कारण है। कभी सरबेरियन और यूनानियों के जीतने का समाचार मिलता है और कभी बल्गेरियनों का। यूरोपियन शक्तियाँ इस युद्ध को रोकना चाहती हैं। यदि युद्ध न रुका तो सम्भव है कि समस्त यूरोप में एक बार समराग्नि विशेष रूप से प्रज्वलित होगी, क्योंकि यूरोपियन राष्ट्र इन चारों में, एक-दूसरे के सहायक हैं। युद्ध में बल्गेरिया को विजय लक्ष्मी प्राप्त न होते देखकर आस्ट्रिया चिन्तित हुआ है। आस्ट्रिया को चिन्तित देखकर रूस का भी माथा ठनका है। रूस और इंग्लैंड भी इन दिनों मित्र बन बैठे हैं। इंग्लैंड भी अपने जहाजों की देखभाल करने लगा है, पर बहुत सम्भव है कि यूरोपियन राष्ट्र अपनी-अपनी भलाई के लिए, इस युद्ध को बढ़ने न देंगे। देखना चाहिए कि ऊँट किस करवट बैठता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 12 जुलाई, 1913]

संयुक्त प्रान्त में शिक्षा

पहले से ही संयुक्त प्रान्त में शिक्षा का अभाव है। तिस पर ऐसा कोई सप्ताह खाली नहीं जाता है, जिसमें यह सुनाई न पड़ता हो कि अमुक स्थान में इतने विद्यार्थी दाखिल नहीं होने पाए हैं। विद्यार्थियों की थोड़ी संख्या भरती करने के अतिरिक्त और एक आश्चर्य में डालने वाला समाचार 'लीडर' में पढ़ने में आया है कि जो विद्यार्थी परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गया है, उसको दुगुनी फीस देनी पड़ेगी। समझ में नहीं आया कि इस नियम की क्या आवश्यकता है जो लड़का परीक्षा में फेल हो जाता है, उसे माँ-बाप पुनः स्कूल में पढ़ाते ही हैं, जिससे उसका दुगुना खर्च पड़ जाता है। इस नियम को न रखना ही अच्छा है। ऐसे नियम से संयुक्त प्रान्त में शिक्षा के प्रचार में और भी बाधा उपस्थित होगी।

संयुक्त प्रान्त में प्रारम्भिक शिक्षा समिति

संयुक्त प्रान्त शिक्षा में बहुत पीछे है। गवर्नमेंट के साथ-ही-साथ वहाँ के सर्वसाधारणों ने भी शिक्षा प्रचार के लिए विशेष रुचि प्रकट नहीं की है। हर्ष का स्थल है कि आनरेबल मिस्टर गोखले की भारतीय सेवक समिति की प्रयाग में जो शाखा है। उसकी आधीनता में वहाँ पर प्रारम्भिक शिक्षा मंडल खुलने वाला है। स्वर्गीय पं. अयोध्यानाथ के सुयोग्य पुत्र और भारतीय सेवक समिति के सदस्य पं. हृदयनाथ कुंजरू तथा उनके साथियों के हाथ में इस प्रारम्भिक शिक्षा मंडल का कार्य रहेगा। आगामी दूसरी अगस्त को इस विषय के विचार करने के लिए प्रयाग में सार्वजनिक सभा होगी। इस कार्य में हिन्दुओं के साथ मुसलमानों ने भी योग दिया है। यदि अन्यान्य प्रान्तों में भी हिन्दू-मुसलमान इस भाँति मिलकर प्रारम्भिक शिक्षा समितियों का संगठन करें तो अच्छा है।

[सद्धर्म प्रचारक, 26 जुलाई, 1913]

आर्यसमाज और राजनीति

इस समय यह कल्पना प्रायः उड़ चुकी है कि आर्यसमाज राजनीति से कोई सम्बन्ध रखता है। किन्तु 'श्रीराम क्रान्तिकारी' नामक उपन्यास ने इस प्रश्न को फिर से जगा दिया है। फिर से इस विषय में आन्दोलन प्रारम्भ हो रहा है। क्या आर्यसमाज राजद्रोही है ? क्या उसका वास्तविक उद्देश्य राजनीतिक है। ये प्रश्न हैं जो चारों ओर से उठ रहे हैं। एक ओर वे लोग हैं, जो देखते हुए भी देखना नहीं चाहते और अपने मनोभावों को बिगाड़कर चिल्ला उठते हैं कि 'हाँ आर्यसमाज राजनीतिक है, वह राजद्रोही है'। दूसरी ओर ऐसे भी सामाजिक भाई हैं, जो ऐसे आक्षेपों से डर जाते हैं और आवश्यकता से अधिक भयभीत होकर कहने लगते हैं, 'नहीं, नहीं, हम राजद्रोही नहीं, हम तो बड़े राजभक्त हैं। यह लो हम से हस्ताक्षर करा लो'। हमारी सम्मति में दोनों प्रकार के सज्जन अशुद्धि करते हैं। सभा न राजद्रोही है और न उसे राजभक्ति का ठप्पा माथे पर लगाए फिरने की आवश्यकता है। उसे तो धर्म से और मनुष्यों के आत्मा से सम्बन्ध है। वह राजनीति से कोई सम्बन्ध ही नहीं रखता। वह इसे अपने घेरे से बाहर समझता है। आर्यसमाज समूह रूप से मनुष्यों के आत्मा का, मन का और शरीर का सुधार चाहता है। अब बाकी रहे आर्यसमाजी, वे जहाँ आर्यसमाज के सभासद् हैं, वहाँ भारतवासी भी हैं। भारतवासी की हैसियत में वे चाहे जैसे राजनीतिक विचार रखें, यदि वे विचार केवल सम्मति के साथ सम्बन्ध रखें और धर्माधर्म के साथ किसी प्रकार का दोष न लगाएँ, तो उनका समाज उत्तरदाता नहीं है। न आर्यसमाज अपने सभासदों के राजनीतिक विचारों को किसी प्रकार से चलाने का अधिकार रखता है और न यह उचित या उपयोगी ही है।

समाज आत्मिक उदारता सिखाता है

हाँ, एक बात अवश्य है। सम्भव है कि समाज एक प्रकार से जाति का शिक्षक हो। वह मनुष्यों के आत्माओं को उदारता और आत्मावलम्ब सिखाता है। वह अपने सभासदों को बताता है कि केवल 'बाबाजी' के कहने से कोई बात न मानो। केवल उसी बात को मानो, जो सच हो। सच का मान करो, सच के सामने सिर झुकाओ।

इसलिए यह समझना तो बिलकुल ठीक हो सकता है कि आर्यसमाज, सभासदों को बिलकुल गिरे और दबे हुए मनुष्य नहीं रहने देता। वह उन्हें कुछ-कुछ आप-भरोसा सिखाता है। ऐसी अवस्था में यदि उनके धार्मिक विचार और उनकी आत्मिक उन्नति, उनके और प्रकार के विचारों पर भी प्रभाव डालें तो अयोग्य नहीं और न असम्भव है। हाँ, आर्यसमाज 'अहिंसा' धर्म को मानता है, इसलिए अराजकवाद का वह परम शत्रु है, किन्तु उदार विचारों का वह दिली मित्र है। जिन लोगों ने उदार या स्वावलम्ब वाले भावों को ही राजविद्रोह समझा हुआ है, उन लोगों के लिए आर्यसमाज राजविद्रोही है। किन्तु जो सज्जन एक धार्मिक और राजनीतिक संस्था में भेद जानते हैं, वे ऐसी भूल नहीं कर सकते।

[सद्धर्म प्रचारक, 9 अगस्त, 1913

चौमुखा विकास

आज हम अन्यत्र ब्रह्मचारी इन्द्र का एक विवेचनापूर्ण लेख प्रकाशित करते हैं। जिसमें लेखक ने बड़ी अच्छी तरह दिखलाया है कि दयानन्द आर्यजाति की चौमुखी उन्नति का पक्षपाती था। दयानन्द ऋषि था, दूरदर्शी था। वह इकतरफा उन्नति के पक्षपाती बनने की भूल कैसे कर सकता था ? जो लोग समझते हैं कि हम एक अंग को छोड़कर दूसरे अंग का सुधार कर सकते हैं या उसकी उन्नति कर सकते हैं, उन्हें समाजशास्त्र का कुछ भी ज्ञान नहीं। बच्चे का मन, आत्मा और शरीर एक साथ ही उन्नति करते हैं। इनमें से एक का जुदा विकास असम्भव है। मनुष्य समाज की भी यही दशा है। मनुष्य समाज में भी धर्म सुधार, समाज सुधार, राजनीति सुधार और साहित्य सुधार–सभी सुधार इकट्ठा चलते हैं। हम यह नहीं कहते कि सभी समाजों को सब तरह के सुधारों में हाथ डालना चाहिए या अपने ऊपर सब तरह की उन्नति का भार लेना चाहिए। परन्तु यह स्पष्टतौर से समझ रखना चाहिए कि सब तरह की उन्नति एक साथ चलती है, एक के पीछे दूसरी को चलना कठिन ही नहीं, वरन असम्भव है।

पंजाब ! जागो।

पाठक दूसरी जगह पढ़ेंगे कि मद्रास ने दक्षिण अफ्रीका की कमेटी के श्रीयुत गांधी के पास सहायता के लिए दो हजार पौंड भेजे हैं। बम्बई में आजकल दीवालों के कारण रुपया इकट्ठा करने में बड़ा कष्ट होता है तथापि यहाँ की कमेटी ने भी 25 हजार रुपया भेज दिया है। परन्तु दक्षिण अफ्रीका में हमारे भाइयों को जो कष्ट हो रहे हैं उनके सामने यह रुपया क्या है। अभी अफ्रीका से समाचार आया है कि खान में काम करने वाले भारतवासियों ने कर्मवीर गांधी का साथ देना निश्चित कर लिया है। वे कई दलों में बँटकर ट्रांसवाल जा रहे हैं। उनमें से 200 भारतवासी जेल में भी चले गए हैं। इनके निस्सहाय परिवारों के पालन का भार हम पर है। सभी प्रान्तों को इस समय चेतना चाहिए। क्या वह पंजाब, जो पीड़ित भाइयों की सहायता करने में सबसे प्रसिद्ध रहा है, इस समय न जागेगा ? हम जानते हैं कि बैंकों के गिर जाने के कारण पंजाबियों पर प्रान्तीय विपत्ति आई है। पर राष्ट्रीय

विपत्ति के सामने प्रान्तीय विपत्ति क्या चीज है ?

बायकाट का शस्त्र पकड़ो।

कई लोग कलकत्ता के गोरे अखबार 'इंग्लिश मैन' से चिढ़ते हैं। परन्तु हम उस के कृतज्ञ हैं क्योंकि वह हमारी आँखें खोलने का काम करता है। अभी उस दिन उसने दक्षिणी अफ्रीका के गोरों का वास्तविक आशय प्रकट कर दिया है। वह कहता है कि अफ्रीका के गोरेवासी कुलियों को छोड़कर और किसी भी भारतवासी को अमरीका में आने नहीं देना चाहते। वे हर तरह से कानून बनाकर भारतवासियों को तंग करना चाहते हैं, ताकि उनके लिए अफ्रीका में रहना असम्भव हो जाए। अफ्रीकावासियों का आशय जानकार भी क्या हम सोए रहेंगे ? क्या हम ऐसे कानून नहीं बना सकते जिससे कोई भी अफ्रीका का गोरा यहाँ घुसने न पाए और यदि घुसे भी तो उसके लिए यहाँ रहना असम्भव हो जाए।

इसके लिए आवश्यक है कि हम भारत सरकार को इस तरह के कानून बनाने के लिए बाधित करें। कानून के साथ ही सर्वसाधारण को भी बहिष्कार का शस्त्र हाथ में लेना चाहिए। जब तक दक्षिणी अफ्रीका अत्याचारी कानून को न बदले तब तक उसके साथ व्यापार का कोई भी सम्बन्ध न रखना चाहिए।

[सद्धर्म प्रचारक, 8 नवम्बर, 1913]

हिन्दू कान्फ्रेंस के सभापति

पंजाब की हिन्दू कान्फ्रेंस क्या है ? एक प्रकार का लड़कों का खिलौना। पिछले कई सप्ताह से इसके सभापति को लेकर ही आन्दोलन मच रहा था। पहले इसके सभापति राय हरीचन्द बहादुर चुने गए थे, इस पर अम्बालेवालों ने आपत्ति उठाई कि हम अपने यहाँ कान्फ्रेंस न करेंगे और हिन्दू सभा के प्रधान कार्यालय के निश्चय किया गया कि कान्फ्रेंस गुजरांवाला में होगी। इस निश्चय पर अम्बालेवालों ने समझा कि हमारी नाक न कट जाए, वे हिन्दू सभा को पुनः अपने यहाँ बुलाने पर राजी हो गए। पर अब देखते हैं कि मनोनीत सभापति ने भी सभापति होना स्वीकार नहीं किया है। और श्रीयुत केदारनाथ जी साहब सभापति निर्वाचित हुए हैं। हम राय साहब को सभापति होने के लिए बधाई देते हैं। हमारी समझ में ही नहीं आता कि समस्त भारतवासियों की सम्मति में पंजाब में सार्वजनिक जीवन (पब्लिक लाइफ) के बनाने में निम्न तीन सज्जन—लाला लाजपतराय, महात्मा मुन्शीराम जी और लाला हंसराज जी ने विशेष भाग लिया है। सम्भव है, हिन्दू सभा ने इन तीन सज्जनों से इसलिए सभापति होने की प्रार्थना न की हो कि इन तीनों में से कोई सभापति होना स्वीकार न करे।

गंगा आने वाली थी, पर भगीरथ के सिर पड़ी

पाठक जानते हैं कि मुसलमानों में दो दल हो गए हैं। मित्र अमीर अली और सर आगा खाँ तरुण मुसलमानों के कार्य से प्रसन्न नहीं हैं। इसके लिए प्रादेशिक लीगों में से अधिकांश ने मिस्टर वजीर हसन और मिस्टर मुहम्मद अली को ही दोष ठहराया है। पर अब इस का भीतरी रहस्य प्रकट होने लगा है। मौलाना आजाद ने कहा है कि रेड क्रेसेंट सोसाइटी के अस्पताल के साथ मुसलमान डाक्टरों के बदले यूरोपियनों को भेजने के बारे में मिस्टर अमीर अली और मिस्टर मुहम्मद अली में दीवानी मामला चलने की नौबत आ गई थी। मिस्टर मुहम्मद अली का कथन था कि हिन्दुस्तान से रुपए दिए गए हैं तो हिन्दुस्तानियों की आज्ञा से काम हो और हम लोग मुसलमान डाक्टरों को भेजना पसन्द करते हैं। पर मिस्टर अमीर अली इससे सहमत नहीं थे। उनका कहना था कि यूरोपियन डाक्टर, हिन्दुस्तानियों से

कुशल हैं और उन्हें भेज दिया जाए। मिस्टर अमीर अली के त्याग पत्र के बारे में मौलाना आजाद का मत है कि इन लोगों का लीग से अलग होना तो अनिवार्य था, क्योंकि लीग इनकी आज्ञा से नहीं चलती है। तरुण मुसलमानों को राजनीतिक आन्दोलनों की ओर झुकते देख उन्होंने लीग का स्वाँग रचा और उसे राजभक्ति प्रदायिनी संस्था का रूप दिया। इस पर टीका-टिप्पणी करना व्यर्थ है, पर साथ ही प्रश्न है कि क्या राजनीतिक आन्दोलन विषैला सांप है, जो लीग के पुराने कार्यकर्ता इससे कोसों दूर भागना चाहते हैं। अब भारतवर्ष की तरुण पीढ़ी की चाहे, वह मुसलमान हो अथवा हिन्दू राजनीतिक आन्दोलन की ओर से रुचि हटाना कठिन है।

गोरखाओं का अत्याचार

पाठक अन्यत्र समाचारों में पढ़े कि पूर्व बंगाल में गोरखाओं की पलटन ने किस भाँति अत्याचार कर रखा है। गोरखा ही क्यों, प्रायः सभी अंग्रेजी पलटनों के देशी और अंग्रेजी सिपाही ऐसे अत्याचारों से बाज नहीं आते हैं। भारतवर्ष के कई प्रान्तों में जब पलटन एक स्थान से दूसरे स्थान को कूच करती है तब पलटन के इन सिपाहियों का और भी अत्याचार बढ़ जाता है। जिन स्थानों में बेगार की प्रथा प्रचलित है उन स्थानों में इनके कठोर अत्याचारों से लोगों को बहुत तंग होना पड़ता है। रसद के समय पलटन के सिपाही दुकानदारों से चीजें कुछ भाव लेते हैं और दाम कुछ देते हैं। प्रायः देखा गया है कि बहुत से प्रतिष्ठित दुकानदारों का इनके कारण नाक में दम आ जाता है। पलटनों के सिपाहियों की उच्छृंखलता रोकने के लिए भारत सरकार को कड़े कानून बनाने चाहिए।

कलकत्ता विश्वविद्यालय में हिन्दी परीक्षाएँ

हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने थोड़े दिनों में जो कार्य किया है, उसकी हम प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकते हैं। सुना जाता है कि अब सम्मेलन पंजाब तथा प्रयाग के विश्वविद्यालयों में कुछ उपाधि परीक्षाएँ नियत कराना चाहता है, इस पर कई सज्जन कहते हैं कि ये उपाधि परीक्षाएँ कलकत्ता विश्वविद्यालय में भी नियत होनी चाहिएँ। जिससे बंगाल और बिहार प्रान्त के हिन्दी भाषा-भाषी छात्रगण लाभ उठा सकें। बात तो ठीक है। सन् 1908 में कलकत्ता के प्रेसीडेन्सी कालेज में से हिन्दी अध्यापक हटाने का विशेष आन्दोलन हुआ था। इस आन्दोलन में सफलता भी प्राप्त हुई। फिर अध्यापक रखा गया था। इससे आशा होती है कि यदि सम्मेलन चेष्टा करे तो उसे सफलता प्राप्त होगी।

शिक्षा में रंग भेद

परमात्मा की ओर से जैसे हवा, पानी आदि पदार्थ बिना मूल्य के मनुष्यों के लिए हैं वैसे ही शिक्षा है। पर देखते हैं कि यह रंग का भेद शिक्षा में भी आ घुसा है। विशेषतः ब्रिटिश विश्वविद्यालयों में इस रंग भेद ने बड़ा उत्पात मचा रखा है। कई बार यह शिकायत सुनी जाती है कि इंग्लैंड में भारतीय विद्यार्थियों के प्रति अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता। शिक्षा में यह रंग भेद होना अच्छा नहीं। गवर्नमेन्ट को सोचना चाहिए कि विलायत में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के हृदय पर रंग का भेद बुरा प्रभाव डाले बिना नहीं रहता।

[सद्धर्म प्रचारक, 22 नवम्बर, 1913]

यू.पी. के प्रतिनिधि कांग्रेस से क्यों उठ गए

सहयोगी 'भारत मित्र' के संवाददाता ने कराँची के कांग्रेस का समाचार लिखते हुए यह लिखा था कि संयुक्त प्रान्त के प्रतिनिधि तथा पंजाब के प्रतिनिधि कांग्रेस से अन्तिम दिवस उठकर चले गए, पर उसका कारण नहीं लिखा। उसके विषय में एक विश्वस्त सज्जन लिखते हैं–'कांग्रेस बैठने से एक दिन पूर्व सभापति महाशय के स्थान पर विशेष प्रतिनिधियों की एक बैठक हुई थी जिसमें विचार विषय यह था कि मुसलिम लीग ने पार साल जो कांग्रेस के पथ पर चलते हुए अपने लिए औपनिवेशिक स्वराज्य का प्रस्ताव स्वीकार किया है उस के लिए उन्हें किस प्रकार धन्यवाद देना चाहिए। यह भी सुना जाता है कि संयुक्त प्रान्त या पंजाब के प्रतिनिधियों ने इस का विरोध किया था और कांग्रेस के विषय निर्वाचन समिति में भी इसका घोर विरोध किया था, पर इन प्रदेशों के प्रतिनिधियों की संख्या न्यून होने के कारण कुछ हो न सका और वह प्रस्ताव स्वीकार हो गया। दूसरे दिन संयुक्त प्रान्त के कुल प्रतिनिधियों ने मिलकर एक पत्र द्वारा इस का विरोध करना चाहा, पर सभापति तथा अन्य मित्रों के अनुरोध से पत्र वापस ले लिया। उस प्रस्ताव के समर्थन करने वालों में बाबू गंगाप्रसाद वर्मा व लाला लाजपतराय का नाम था किन्तु अपनी सम्मति उसके प्रतिकूल होने के कारण ये दोनों अग्रगण्य महोदय उस प्रस्ताव पर कुछ न बोले। उस दिन रात्रि को जब विषय निर्वाचन समिति फिर बैठी तो उस प्रश्न पर विचार उठा कि पूर्व रीति के अनुसार कांग्रेस को अपनी सम्मति पृथक् निर्वाचन के विरुद्ध फिर प्रकट करनी चाहिए। किन्तु मुसलमान भाइयों का दिल न दुखे इस कारण से यह प्रस्ताव उस प्रस्ताव माला में नहीं रखा गया था जिसे कराँची की स्वागतकारिणी सभा ने मुद्रित कराया था।

अनेक विवाद के उपरान्त इस प्रश्न पर फिर भी कुछ न हो सका। दूसरे दिन संयुक्त प्रान्त तथा पंजाब के प्रतिनिधियों ने सभापति से इस पर पुनः विचार करने की प्रार्थना की। ऐसी प्रार्थना प्रयाग, कलकत्ता तथा बांकीपुर में स्वीकार हो चुकी थी और एक प्रश्न पर (इसी प्रश्न पर) विषय निर्वाचन समिति का निश्चय हो जाने के उपरान्त भी कई-कई बार पुनः विचार हुए थे; किन्तु सभापति ने यह प्रार्थना स्वीकार न की और उन प्रदेशों के प्रतिनिधियों को कांग्रेस में इस प्रश्न

को उपस्थित करने की भी आज्ञा न दी। यही कारण था कि उत्तर ठीक-ठीक न मिलने पर संयुक्त प्रान्त तथा पंजाब के सब प्रतिनिधि कांग्रेस छोड़कर उठ के चले आए—आशा है सहयोगी 'लीडर', जिसके सम्पादक महोदय भी कांग्रेस में उपस्थित थे, इस प्रश्न पर कुछ अधिक प्रकाश डालेंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 जनवरी, 1914]

वर्तमान शिक्षा पर वाइसराय की सम्मति

आगरे में सेंटजान कालेज के भवन को खोलते हुए वाइसराय ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर अपनी सम्मति प्रकाशित की है, जो बड़े महत्त्व की है। वहाँ भाषण करते हुए वाइसराय ने उसी आशंका को स्थान दिया है जिसे हम पहले सप्ताह के मुख्य लेख में दिखा चुके हैं। वाइसराय ने कहा कि मुझे शिक्षा के साथ बड़ा प्रेम है, मेरे समय में जो शिक्षा पर अधिक व्यय हुआ है वह इस बात का प्रमाण है। पर कभी-कभी मुझे इस व्यय के लाभदायक होने में आशंका होने लगती है। हम कभी-कभी देखते हैं कि इन विश्वविद्यालयों से निकलकर लड़के उचित कारोबार के न मिलने से भटकते फिरते हैं। साथ ही मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि विद्यालय अपने विद्यार्थियों को विशेष परीक्षाओं में से निकाल देने की ओर ही ध्यान देते हैं, विद्यार्थियों के आचार और शारीरिक उन्नति जैसे आवश्यक विषयों की ओर ध्यान नहीं देते। इस समय देश के सामने यह बड़ा कठिन प्रश्न उपस्थित है कि प्रतिवर्ष इन विद्यालयों से जो लड़के निकलते हैं उन्हें उचित कारोबार कैसे प्राप्त हो और हमारे विद्यालय इस काम के योग्य विद्यार्थियों को कैसे बना सकें। पिछली बार भी हम कह चुके हैं और फिर कहते हैं कि जब तक विश्वविद्यालयों पर सरकारी मुहर की आवश्यकता समझी जाती है और उनमें पढ़ने वाले विद्यार्थियों के आगे नौकरी का ही आदर्श रहता है तब तक यह प्रश्न कठिन प्रश्न कभी हल नहीं हो सकता।

प्रयाग का हिन्दू बोर्डिंग हाउस

प्रयाग में हिन्दू बोर्डिंग हाउस है। यह प्रधानतया प्रयाग के भूषण पंडित मदनमोहन मालवीय जी के परिश्रम का फल है। उसी बोर्डिंग हाउस के प्रबन्ध में कुछ समय से गड़बड़ सुनी जाती है। बोर्डिंग में रहने वाले छात्रों की कई शिकायतें हैं। इसी विषय में एक पत्र भी हम पिछली संख्या में प्रकाशित कर चुके हैं। इस बार एक और सज्जन ने हमारे पास उसी विषय में एक और पत्र भेजा है। उस पत्र में पुरानी शिकायतों के अतिरिक्त कई और शिकायतें लिखी हैं। हम इस विषय को पत्र में अधिक लाना अच्छा नहीं समझते, इसीलिए हमने वह पत्र अभी तक प्रकाशित

करना उचित नहीं समझा है। बोर्डिंग की प्रबन्धकर्ता सभा को चाहिए कि वह विद्यार्थियों से पूछकर उनकी शिकायतों को दूर कर दे। विद्यार्थियों और बोर्डिंग के संचालकों का इसमें ही भला है।

डाक विभाग में हिन्दी

हम यह कई बार शिकायत कर चुके हैं कि पंजाब सरकार की आज्ञा होने पर भी वहाँ के डाकिये हिन्दी नहीं जानते। इसलिए हिन्दी पते वाले पत्र इधर-उधर मारे-मारे फिरते हैं। पहले प्रचारक का पता देवनागरी में छपता था, परन्तु ग्राहकों को पत्र न पहुँचने की बार-बार शिकायतों ने हमें पता अंग्रेजी में छपवाने के लिए बाधित कर दिया। देहली में तो बहुत ही बुरी हालत है। यहाँ शायद ही कोई डाकिया हिन्दी जानता हो। डाकिये हिन्दी का पता नहीं पढ़ सकते और एक का पत्र दूसरे के दे जाते हैं। हमारा कार्यालय चाँदनी चौक में है; प्रतिदिन ही हमारे कार्यालय में चाँदनी चौक के अन्य निवासियों की चिट्ठियाँ आ जाती हैं। परसों पोस्ट मास्टर के नाम की चिट्ठी अपनी मेज पर देखकर हमें बड़ा आश्चर्य हुआ। देखा तो पता हिन्दी में लिखा था। हमने यह पत्र पोस्ट मास्टर जनरल के पास भेज दिया है, हमें आशा है कि वे इस पर पूरी तरह ध्यान देंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 17 जनवरी, 1914]

बेल्जियम को क्या करना चाहिए था ?

आज बेलिज्यम की दशा को देखकर लोगों को तरस आ रहा है, किन्तु साथ ही साथ उनके लिए आदरभाव भी बढ़ रहे हैं। जब कभी आदरभाव की अपेक्षा तरस का भाव प्रबल हो जाता है तब लोग कह उठते हैं कि 'बेल्जियम व्यर्थ ही जर्मनी से लड़ा, वह मान क्यों न गया कि जर्मनी सेनाएँ उसमें से गुज़र जाएँ'। बेल्जियम ऐसा क्यों करता ? अपनी भलाई-बुराई पर विचार करके बेल्जियम ने शर्त की थी, उसके लिए उसके सिवाय और कोई ठीक निश्चय नहीं हो सकता था। बेल्जियम को जर्मनी का कहा न मानना मँहगा पड़ा है; सही, परन्तु फ्रांस या इंग्लैंड का कहा न मानना उसके लिए और भी मँहगा पड़ता। स्थल में फ्रांस और जल में इंग्लैंड मिलकर बेल्जियम के प्राण लेने के लिए पर्याप्त थे। यह सब कुछ सोच-विचार कर बेल्जियम ने जर्मनी सेनाओं को रास्ता देने से इन्कार कर दिया। इस पर जर्मनी की सेनाएँ उसके अन्दर घुस आईं। उस समय बेल्जियम को जो करना चाहिए था उसने वही किया। वेद का मन्त्र है—

इन्द्रो जयाति न परा जयाता अधिराजोराजसु राजयातै।
चर्कृत्य ईड्यो वन्द्यश्चोपसद्यो नमस्यो भवेह। —अथर्व.

जो राजा शत्रु को जीतता है, किन्तु उससे पराजित नहीं होता, वह देश के सब श्रीमानों और शक्तिशालियों से अधिक शक्तिशाली है, वही क्रियाशील राजा पूजनीय, वन्दनीय और पास जाकर नमस्कार योग्य होता है।

जर्मनी की केवल धमकी या सेना से डरकर यदि बेल्जियम का वीर राजा एल्बर्ट डर जाता तो हार जाता और वेद की आज्ञानुसार नमस्कार योग्य राजा न होता। बेल्जियमवासियों ने अपने राजा के शब्द में अपनी ध्वनि मिलाकर स्वतन्त्रता देवी का जय-जय बोल दिया। बेल्जियम को जो चाहिए था, उसने वही किया है। जर्मनी के कथन से अपने विचार स्वतन्त्रता को छोड़ देता, यह बात उन्हीं लोगों के मुँह से निकल सकती है, जो सदियों से दासता से अपनी जातीय स्वतन्त्रता की इच्छाओं को भुला चुके हैं।

[सद्धर्म प्रचारक, 31 अक्टूबर, 1914]

हिन्दू यूनिवर्सिटी

हिन्दू यूनिवर्सिटी का बिल वाइसराय की कौंसिल में पेश हो गया। पेश करने के लिए डॉ. सुन्दरलाल को कौंसिल का विशेष सभासद् नियुक्त किया गया है। वे यूनिवर्सिटीवालों के विचारों को कौंसिल के सामने रखेंगे। यूनिवर्सिटी से हमारी जो आशाएँ थीं, वे सारी अभी-अभी पूर्ण नहीं होंगी। इसीलिए हम अभी तक हिन्दू यूनिवर्सिटी का पूरा-पूरा पक्ष समर्थन नहीं कर सके। हमें ऐसा विश्वविद्यालय नहीं चाहिए जो सरकारी विश्वविद्यालयों की नाई 16 आने सरकारी विश्वविद्यालय हो, अभी तक हमें निश्चयपूर्वक नहीं बतलाया गया कि हिन्दू विश्वविद्यालय किस बात में कम सरकारी होगा। क्या प्रबन्ध में और क्या शिक्षा में सरकार की जबरदस्त मुट्ठी हमारे ऊपर रहेगी। इसलिए अभी तक तो पूछा नहीं। अब हम खुले दिल से डाक्टर सुन्दरलाल के प्रति 'शुभास्ते पन्थानः' नहीं कह सकते, आगे की भगवान् जाने।

दूभर जीवन

मार्च की 18 तारीख की शाम को दिल्ली में हम से एक मित्र मिले और उन्होंने ठंडी साँस भर के कहा कि—"आज सायंकाल से भारतवासियों का जीवन दूभर हो गया"। पूछने पर उन्होंने उस नए नियम की ओर संकेत किया जिसके द्वारा भारत सरकार ने प्रबन्ध की सहूलियत के लिए संक्षिप्त न्याय के अधिकार ले लिये हैं। राजनीतिक मामलों में अब सरकार की लम्बे मुकदमे न करने पड़ेंगे, विशेष न्यायालय में ही मामला पेश होकर तय हो जाया करेगा। विशेष न्यायाधीशों को फाँसी तक का अधिकार होगा। जो लोग इस युद्ध से भारत के राजनीतिक लाभों पर विचार करते रहते हैं और जो लोग गर्मागर्म राजनीतिक हलचल किया करते हैं, उन सबको इस समय सावधान हो जाना चाहिए। जो अपना कार्य करने वाली शान्त प्रजा थी, वह जैसे पहले रहती थी, वैसे ही अब रहेगी।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 मार्च, 1915]

संसार समाचार

विदेश यात्रा

भारत के कुछ दरिद्री मजदूर अपने देश में सन्तोषदायक मजदूरी न मिलने पर उत्तर अमेरिका के कनेडा देश में मजदूरी करने जाया करते थे। अब इंग्लिंश्तान की गवर्नमेन्ट कनेडा की गवर्नमेन्ट की सम्मत्यनुसार पूर्ववत् अधिक भारतीय कुलियों को कनेडा में जाने न देगी।

स्वदेश द्रोही अंग्रेज–पता लगा है कि अंग्रेजों के मालटा द्वीप के किलों का नक्शा किसी अंग्रेज स्वदेश द्रोही ने किसी विदेशी राजा के हाथों में बेच दिया है। जिब्राल्टर किला का नक्शा भी उक्त अंग्रेज बेच रहा था, जबकि वह पकड़ा गया। खोजने पर पता लगा है कि इंग्लिश्तान के समुद्री किनारों की रक्षा का नक्शा तथा अनेक गुप्त नक्शे एक अंग्रेज राजमन्त्री के घर से निकाल लिये गए हैं। अंग्रेजी पार्लियामेन्ट में सरकारी भेदों के खोलने वालों के विरुद्ध एक व्यवस्था बनने वाली है और इस विषय पर एक प्रकार का हलचल हो रहा है।

सीमावर्ती लड़ाई में अमीर काबुल का हाथ–यद्यपि अनेक पुरुष ऐसा कहते हैं कि मोहमन्दों के साथ अंग्रेजों की जो लड़ाई हो रही है उससे अमीर काबुल का कोई सम्बन्ध नहीं है। तथापि सीमा प्रान्त से कुछ ऐसे भी समाचार आ रहे हैं जिनसे सिद्ध होता है कि अमीर काबुल इस लड़ाई को अच्छा समझ रहे हैं। समाचार आए हैं कि डक्का के पन्द्रह सौ काबुली सिपाही जो अपने-अपने ग्रामों में रहा करते थे उनमें से 500 सिपाही एकाएक अपने अस्त्र-शस्त्रों सहित मोहमन्दों की मदद को रवाना हुए जिसकी सूचना अमीर काबुल को दी गई। परन्तु उन्होंने उक्त सिपाहियों को रोकने की कुछ भी आज्ञा न दी। पुनः अमीर काबुल को सूचना मिली कि उनकी राजधनी से कुल पैंतीस मील की दूरी पर रहने वाले तेजीन नामक अफगान योद्धा सूफी मुल्ला के साथ मोहमन्दों की सहायता के लिए रवाना हुए परन्तु उन्हें भी रोका न गया। यह भी सुना जाता है कि वास्तव में अमीर काबुल अंग्रेजों के विरुद्ध कुछ करना नहीं चाहते। परन्तु उनकी बड़ी बीबी और भाई नसीरउल्ला खाँ अंग्रेजों के विरुद्ध काबुलियों को बना रहे हैं।

दुर्भिक्ष–यद्यपि बम्बई और पंजाब के किसी-किसी भाग, मध्य भारत के कुछ स्थानों तथा युक्त प्रदेश के अनेक भागों और बंगाल के तीन जिलों में भी दुर्भिक्ष

फैल रहा है तथापि उड़ीसा प्रान्त में दुर्भिक्ष सबसे अधिक है। कलकत्ता की अनुशीलन समिति ने दुर्भिक्ष पीड़ितों के सहायतार्थ एक उपसभा बनाई है जिसके सभासद् बाबू सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी आदि अनेक प्रतिष्ठित पुरुष हैं। आशा की जाती है कि इस सभा से दुर्भिक्ष पीड़ितों को विशेष सहायता मिलेगी।

प्लेग से मृत्यु–तमाम भारत में गत सप्ताह 4564 मनुष्य प्लेग में मरे। इनमें से 2348 मनुष्य पंजाब में मरे थे।

दुर्घटना–गत 6 मई को गाजियाबाद और दसुआ रेलवे स्टेशनों के बीच दो पैंसेजर गाड़ियाँ लड़ गईं, दोनों गाड़ियों के इन्जीनियर मारे गए, छः डब्बों में आग लग गई, उनचास मनुष्यों को चोटें आईं जो गाजियाबाद के अस्पताल में पहुँचाए गए। तेरह लाशें टूटे हुए डब्बों के ढेर से निकल चुकी हैं। इन गाड़ियों में से एक पर एक बारात के बहुत से लोग जा रहे थे इनमें से केवल एक जीवित बचा। जितने अंग्रेज मुसाफिर इन गाड़ियों पर सवार थे उनमें से एक को भी चोट न आई। रेलवे कम्पनियों और गवर्नमेन्ट को चाहिए कि अपने इन्जीनियरों का एक कमीशन बैठाए और उनके द्वारा उस उपाय को निकलवाए जिससे दौड़ती हुई रेलगाड़ियाँ भी शीघ्र रोकी जा सकें। तथा रेलवे कम्पनियाँ सब डब्बों को ऐसा दृढ़ बनाया करें जो टक्कर लगने पर भी टूट न सकें।

दरवेश सरदार के साथ युद्ध–मिस्र देश के ब्लूनील प्रान्त में दरवेशों का एक सरदार रहता है। इसके साथ अंग्रेज गवर्नर डिकिंसन की लड़ाई हुई है जिसमें 34 दरवेश और दो मिस्री अफसर मारे गए तथा दो अंग्रेज अफसर घायल हुए हैं।

नेपाल के प्रधानमन्त्री–गत 8 मई को लन्दन पहुँच गए। भारत के मन्त्री लार्ड मोर्ले के प्राइवेट सेक्रेटरी ने अनेक अंग्रेजों के साथ आपका स्वागत किया गत 9 मई को आप लॉर्ड मोर्ले से मिले और ग्यारह मई को इंग्लिश्तान तथा भारत के सम्राट् महाराज एडवर्ड से।

अकाल पीड़ितों को सहायता–दानरक्षक कोष से गत सप्ताह 1199569 मनुष्यों को संयुक्त प्रान्त में, 138639 मनुष्यों को मध्यभारत में, 4184 मनुष्यों को बंगाल में, 10249 मनुष्यों को बम्बई में, 26620 मनुष्यों को मध्य प्रदेश में, 1596 मनुष्यों को पंजाब में तथा 96 मनुष्यों को मद्रास में सहायता मिली। इस हिसाब से ज्ञात होता है कि काल का कोष दिनोदिन बढ़ता ही जा रहा है।

मुजफ्फरपुर में अंग्रेजों की सरकार–गत 8 मई को बिहार प्रान्त के मुजफ्फरपुर में बिहार के भिन्न-भिन्न स्थानों से एक सौ से कुछ अधिक अंग्रेज इस विषय पर विचार करने के लिए एकत्रित हुए कि राजविध्वंसकों से अंग्रेज सरकारी नौकरों की रक्षा के लिए क्या करना चाहिए। अनेक व्याख्यानों के पश्चात् सभापति मिस्टर काक्स ने कहा कि गवर्नमेन्ट से प्रार्थना करना चाहिए कि वह देशियों के समाचार पत्रों पर अधिक दबाव डाले, बंगाल में सार्वजनिक सभाओं का बन्द करने की आज्ञा

जारी करे अर्थात् 1907 ईस्वी के एक्ट 6 को सम्पूर्ण बंगाल में जारी कर दे। सभासदों ने उक्त विचारों को पसन्द किया और सर्व सम्मत्यनुसार उक्त प्रस्ताव पास हुए।

शोक प्रकाश–बंगाल लैंड होल्डर्स एसोसिएशन कलकत्ता अर्थात् बंगाल के जमीदारों की सभा तथा बिहार लैंड होल्डर्स एसोसिएशन बांकीपुर अर्थात् बिहार के जमींदारों की सभा तथा कलकत्ता कारपोरेशन नाम सभा ने मुजफ्फरपुर के मिस्टर कैनेडी की स्त्री और उनकी पुत्री की मृत्यु पर तथा घातकों के कार्यों पर शोक प्रकाशित किया है।

मिस्टर केयरहार्डी–दीन पुरुषों के मित्र अंग्रेजी पार्लियामेंट के मेम्बर मिस्टर केयरहार्डी भारत, लंका तथा दक्षिण अफ्रीका से भ्रमण करके जब इंग्लिश्तान पहुँचे तो वहाँ उनके मित्रों तथा निर्धन लोगों के-दल (लेबरपार्टी) ने उनका स्वागत बड़े प्रेम से किया। लन्दन का 'डेली न्यूज' नाम पत्र उनके उस स्वागत के विषय में जो एलबर्ट हाल में हुआ एक लम्बा लेख प्रकाशित करता है। मिस्टर केयरहार्डी ने अपने व्याख्यान में कहा कि–"मेरे जीवन का उद्देश्य यह है कि मैं अन्याय के विरुद्ध पवित्र असन्तोष फैलाऊँ। मैंने अब तक जो कुछ देखा है उससे ज्ञात होता है कि स्वार्थपरता ही सब बुराइयों का मूल है, इत्यादि'। आपके व्याख्यानान्तर महाशय पारख ने लन्दन इंडियन सोसाइटी की ओर से आपको धन्यवाद दिया और भी अनेक अंग्रेजों ने मिस्टर हार्डी को धन्यवाद दिया जिससे बोध होता है कि मिस्टर हार्डी इंग्लिश्तान में एक सुप्रतिष्ठित और पवित्र मनुष्य समझे जाते हैं।

[सद्धर्म प्रचारक, 13 मई, 1908]

चीन में दलाई लामा

तिब्बती बौद्धों के पुराने धर्म्माचार्य तथा उनके पुराने शासक तथा अंग्रेजों के शत्रु दलाईलामा गत तिब्बत युद्ध के समय से ल्हासा नगर से निकाले जाने पर अपने चीनी शिष्यों के मध्य घूम रहे थे। अब आप चीन की राजधानी पिकिंग की ओर जा रहे हैं। महाराणी चीन ने आज्ञा दी है कि जब दलाईलामा पीकिंग पहुँचे तो उनका आतिथ्य-सत्कार धूमधाम से किया जाए।

काबुल में सुल्तान रूम के दूत–भारत की पश्चिमोत्तर सीमा के अनेक पुरुष कहते हैं कि सुल्तान रूम का एक दूत दल काबुल में आया है जिसका उद्देश्य ठीक-ठीक तो ज्ञात नहीं, परन्तु अनुमान है कि यह उद्देश्य मजहबी और राजनीतिक दोनों है। अमीर काबुल के छोटे भाई सरदार नसरुल्ला खाँ तथा मुसलमान मुल्लाओं ने इस दूत दल का स्वागत बड़े प्रेम और उत्साह से किया है।

फारस के नए प्रधानमन्त्री–शानई दौला नियत हुए हैं। जब से फारस में पार्लियामेन्ट हुई है तब से सचिवों का परिवर्तन बारम्बार हो रहा है, जिससे बोध होता है कि भूकम्प की तरह राजनीतिक हलचल अभी देश के अन्दर बना हुआ है।

क्रीट के इसाई और मुसलमान–क्रीट टापू पहले सुल्तान रूम का था और यूनान का भी इस पर कुछ अधिकार था। ईसाई बादशाहों ने क्रीट की क्रिस्तान प्रजा पर अत्याचार होते देख सुल्तान को मजबूर किया कि वह ईसाई बादशाहों की थोड़ी-थोड़ी सेनाओं को क्रीट में शान्ति बनाए रखने के लिए रहने दे। सुल्तान को बलवानों की बात माननी पड़ी। अब ईसाई बादशाहों ने अपनी सेनाओं को क्रीट से हटा लेने का विचार किया है जिसका परिणाम यह होगा कि क्रीट की प्रजा प्रतिनिधि सभा यूनान के गवर्नर की सहायता से शासन करेगी जिससे कि क्रीटस्थ थोड़े से मुसलमानों को क्लेश होगा। अतएव अब सुल्तान चाहते हैं कि बादशाहों की सेना वहाँ बनी रहे जैसा कि सुल्तान को पहले अभीष्ट न था। मालूम होता है कि शान्ति और सहायता पाकर क्रीट के ईसाइयों ने अपनी विशेषोन्नति कर ली है।

मोर को के मूर मुसलमान–जो फ्रांसीसियों से लड़ रहे थे अभी तक पूरे

पराजित न हुए। बूदेनबी नामक स्थान में हाल ही उक्त दोनों दलों के बीच सात घन्टों तक घोर संग्राम हुआ है। अन्त में मूरों को हारकर पीछे हटना पड़ा।

शोक प्रकाश–मद्रास की महाजन सभा तथा पटना नगर निवासियों की एक सभा ने मुजफ्फरपुर के मिस्टर कैनेडी की धर्मपत्नी तथा उनकी पुत्री के बम-गोले से मारे जाने पर शोक प्रकाशित किया है।

महाराज दरभंगा ने–मुजफ्फरपुर में पहुँचकर वहाँ के अंग्रेजों से वार्त्तालाप किया है और कहा है कि वह बड़े लाट साहब की सभा में बम-गोला सम्बन्धी उपद्रवों को घोर दण्डों के साथ रोकने तथा राजविद्रोह विषयक लेखों को बन्द कराने के लिए पूरी बहस करेंगे।

डाक्टर रास बिहारी घोष के–एक सम्बन्धी ने सहयोगी 'एम्पायर' को लिखा है कि पुलिस का कोई बड़ा दल डाक्टर घोष की दियासलाई के कारखाने की तलाशी लेने नहीं आई थी। केवल दो पुलिस कर्मचारी पाँच मिनटों तक कुछ पूछ-ताछकर लौट गए थे।

दुर्भिक्ष पीड़ितों को सहायता–गत सप्ताह दीनरक्षक कोष से भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में काल पीड़ित लोग इस प्रकार सहायता पाते रहे : 'बंगाल में 40000, युक्त प्रान्त में 117000, पंजाब में 21000, मध्यप्रदेश में 30000, बम्बई में 10000, मध्यभारत में 141000 अर्थात् कुल 1393000 मनुष्य।

आत्मसमर्पण का भाव–जापान की राजधानी टोकियो के क्रिस्तान प्रधान पादरी आडरी लन्दन के 'टाइम्स' पत्र को लिखते हैं कि जापानियों में स्वदेश के लाभ के लिए स्वार्थ त्याग, आत्मसमर्पण का भाव दिनोंदिन बढ़ता ही जाता है और यही भाव अब नवयुवक चीनियों में भी भरता जाता है।

अभागे भारतीय कुलियों की विदेशों में दुर्दशा–दीन भारतवासियों को जब भारत में खाने को अन्न नहीं मिलता तब वे कुली बनकर विदेशों में मजदूरी करने जाते हैं। इनकी जो-जो दुर्दशा नेटाल, केप कालोनी, बोअर देश तथा कनेडा नाम अंग्रेजी उपनिवेशों में हुई है उसकी कथा तो कई बार प्रसिद्ध हो चुकी। अब समाचार आया है कि अफ्रीका के बेंगुइला प्रदेश में (जहाँ पोर्चुगीजों का राज्य है) भी भारतीय कुलियों की दुर्दशा हो रही है। इन दुर्दशाओं का विस्तृत वृत्तान्त पोर्चुगल की राजधानी लिस्बन नगर के समाचार पत्रों में छपा है। अब पोर्चुगल की गवर्नमेन्ट ने आज्ञा दी है कि इन दुर्दशाओं की बाबत खोज की जाए। हाँ ! संसार को शिक्षा देने वाले आर्यों की कुछ सन्तति अब ऐसी दीन हो गई कि वह पेट की ज्वाला बुझाने को भी जहाँ कहीं मजदूरी करने जाती है वहीं उस को धक्के मिलते हैं ! घोर दुरावस्था है ! परमात्मन् तुम बिन दीनों की रक्षा कौन करेगा ?

चीन के विद्रोही–चीन में इस समय कुछ ऐसे विद्रोही उत्पन्न हो गए हैं जो चीन के राज कार्यों में विशेष सुधार चाहते हैं, परन्तु उनकी इच्छानुसार सुधार नहीं

होता। इस कारण वे कोलाहल मचा रहे हैं। उक्त विद्रोही दल के 60 चीनी हाल ही में सिंगापुर आए हैं।

किंग एडवर्ड और जार रूस–सुना जाता है कि फ्रांस राजसभा के प्रधान फैलियरिस इंग्लिश्तान से 29 मई को विदा हो जाएँगे। तब महाराज एडवर्ड रूस के जार से भेट करने को सेंट पिटर्सबर्ग पधारेंगे।

1280 गोलियाँ और पाँच रिवाल्वर–कलकत्ता मोचीपाड़ा का रहने वाला तारानाथ राय चौधरी, जिस समय 'युगान्तर' पत्र के विरुद्ध कलकत्ता पुलिस कोर्ट में अभियोग चल रहा था, कोर्ट में उपस्थित हो अपराधी को बड़े स्नेह से देखता था। जिससे पुलिस को सन्देह हुआ कि यह पुरुष युगान्तरवालों का साथी है। इसी सन्देह में पुलिस ने तारानाथ के मकान की खानातलाशी ली और उसके घर से 1280 गोलियाँ तथा पाँच रिवाल्वर बरामद किए। परन्तु तारानाथ का पता न लगा। अब उसके विरुद्ध वारन्ट जारी है।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 मई, 1908]

बम-गोला सम्बन्धी अभियान

कलकत्ता की पुलिस कोर्ट के न्यायाधीश मिस्टर थार्नहिल के सम्मुख चल रहा है। गवर्नमेन्ट की ओर से प्रसिद्ध बैरिस्टर मिस्टर नार्टल तथा अपराधियों की ओर से कई वकील काम कर रहे हैं। पुलिस कमिश्नर मिस्टर हैलीडे, इंसपेक्टर पूर्णचन्द्र विश्वास, सुपरिंटेंडेंट वाडसन, सब-इंस्पेक्टर सतीशचन्द्र बैनर्जी, इंस्पेक्टर सुरेशचन्द्र घोष, शेख अब्दुल्ला आदि की साक्षी अपराधियों के विरुद्ध गवर्नमेंट की ओर से हुई। शरतचन्द्र दास नाम बंगाली का इजहार हुआ यह अपराधियों का रसोइया (भोजन बनाने वाला था) परन्तु वास्तव में पुलिस का जासूस था। इसने अपनी करतूत की प्रशंसा की और अपराधियों को पहचान लिया और कहा कि अरविन्द घोष भी इन लोगों से मिला-जुला करते थे।

अमरीका में भारतीय आन्दोलनकारी–लन्दन 'टाइम्स' का संवाददाता अमेरिका से लिखता है कि बम-गोला बनाने की शिक्षा बैंकुइवार (अमेरिका) से भारत में गई है। यहाँ मिल्सडी स्थान में तीन भारतवासियों ने एक स्कूल खोला है जिसमें यहाँ आए हुए सिक्खों को पढ़ाने के बहाने से राजविद्रोह की शिक्षाएँ दी जाती हैं। ये समाचार कहाँ तक ठीक हैं अभी तक पूरा पता न लगा।

अमीर काबुल की अप्रसन्नता के कारण–डाक्टरानी वान इंजेन किंटर, जो अमीर काबुल की स्त्रियों की दवा करती है, थोड़े दिन हुए कि काबुल से आई हैं। इन का कथन है कि अमीर साहब ने विलायत जाने की इच्छा अंग्रेजों पर प्रकट की थी, परन्तु वह मंजूर न हुई, उन्होंने अपना राजदूत लन्दन में रखना चाहा सो नामंजूर हुआ, अंग्रेज और रूसियों के बीच अफगानिस्तान के विषय में जो सन्धि हुई उस के पूर्व अमीर साहब से कुछ पूछा न गया तथा उस सन्धि पत्र में अमीर साहब के विषय में 'हिज मैजेस्टी' अर्थात् स्वतन्त्र सम्राट् की पदवी लिखने की अपेक्षा 'हिजहाइनेस' साधारण राजा की पदवी लिखी गई।

अमीर काबुल और उसके छोटे भाई–अमीर काबुल के छोटे भाई नसरुहल्ला खाँ अपने बड़े भाई से कुछ अप्रसन्न हो गए हैं, क्योंकि अमीर साहब विलायती चीजों को पसन्द करते और नसरुहल्ला खाँ विलायती चीजों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। डाक्टरानी विंटर कहती हैं कि नसरुहल्ला खाँ ने अपनी अंग्रेजी घड़ी

फेंक दी है और अंग्रेजी दवाइयों का इस्तेमाल भी बन्द कर दिया है। मुल्लाओं का पोशाक वह पहनता है। जिस समय अमीर साहब हेरात की ओर आए वे उस समय अमीर के बड़े-बड़े अफसरों को भी नसरुहल्ला खाँ ने अपनी ओर मिला लिया था जिस कारण अमीर साहब अपने बड़े-बड़े अफसरों का भी विश्वास नहीं करते। नसरुल्लाह खाँ की इच्छा है कि अमीर साहब गद्दी से उठाए जाएँ। अमीर साहब इन सब कार्यवाहियों से बहुत डरे हुए हैं। यद्यपि वह अन्दर से अंग्रेजों के साथ प्रेम रखते हैं, परन्तु ऊपर से उन्हें अंग्रेजों के विरोधियों का भी कुछ सम्मान करना पड़ता है।

बंगाल के जमालपुर बलवे का वृत्तान्त–अभी तक अनेक महाशयों हो याद ही होगा। इस बलवे की जाँच समय मजिस्ट्रेट ने व्रजेन्द्रकिशोर राय चौधरी की कचहरी की जाँच कराई थी। अब उक्त महाशय ने मजिस्ट्रेट मिस्टर एल. ओक्लार्क पर मानहानि का दावा किया है तथा यह भी कहते हैं कि हमारे खजाने के चौदह-पन्द्रह हजार रुपयों का पता नहीं है। इन दिनों अभियोग कलकत्ता हाई कोर्ट के जज मिस्टर फ्लेचर के इजलास में चल रहा है।

जापानियों के विरुद्ध–किरीन के 5000 पाँच हजार चीनी सैनिक चेन्टाओ स्थान को रवाना हुए हैं क्योंकि जापानी लोग चेन्टाओ के चीनियों से कर वसूल करने का यत्न करते हैं और कह रहे हैं कि चेन्टाओ कोरिया के आधीन है।

लन्दन में भारतभूषणों के व्याख्यान–भारत के भूषण महाशय गोपाल कृष्ण गोखले तथा महाशय रमेशचन्द्र दत्त ने गत 26 मई को एक महती सभा में, जिसमें पार्लियामेंट के अनेक सभासद् उपस्थित थे, भारत की वर्तमान दशा पर व्याख्यान दिया और कहा कि जब तक भारतवासियों को स्वशासन में अधिक अधिकार न मिलेगा तब तक हम लोगों को भय है कि भारत का असन्तोष बढ़ता ही जाएगा। पार्लियामेन्ट के जो मेम्बर भारत के हितैषी हैं उन्हें चाहिए कि पार्लियामेन्ट में भारतवासियों को स्वशासन के लिए अधिक अधिकार दिलाने का यत्न करें।

भारतवासियों की पुकार–ट्रांसवाल गवर्नमेन्ट की कानों तक पहुँचाई गई है, जो नगर में महाशय गांधी ने ट्रांसवाल गवर्नमेन्ट को लिखा है कि गवर्नमेन्ट ने प्रतिज्ञा की थी कि वह भारतवासियों के विरुद्ध जो रेजिस्ट्रेशन एक्ट पास किया है उसे रद्द कर देगी, परन्तु गवर्नमेन्ट ने अभी तक अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं की। अतः रेजिस्ट्रेशन एक्ट के अनुसार मैंने जो अपना नाम स्वेच्छा से सरकारी रजिस्टर में लिखाने के लिए प्रार्थना पत्र दिया था वह वापस किया जाए। ट्रांसवाल गवर्नमेन्ट ने उत्तर में लिख भेजा है कि गवर्नमेन्ट ने कभी भी प्रतिज्ञा नही की थी कि वह भारतवासियों के विरुद्ध पास हुए रजिस्ट्रेशन एक्ट को उठा देगी। अतः बोअर देशस्थ भारतवासियों में पुनः हलचल हो रहा है।

नेपाल के प्रधानमन्त्री–नवा नगर के जान साहब, कूचबिहार के महाराज तथा

जंजीरा के नवाब साहब के साथ उस महती सभा में पधारे थे जो फ्रांस देश के प्रधान फैलियरीज के सम्मानार्थ लन्दन सभा घर में एकत्रित हो रहे—इन भारतीय श्रीमानों को उस गद्दी पर कुर्सियाँ मिली थीं जिस गद्दी पर प्रशंसित प्रधान महाशय तथा प्रसिद्ध अंग्रेज तथा फ्रांसीसी श्रीमानों की कुर्सियाँ लग रही थीं। उक्त चारों भारतीय श्रीमान् अपने सम्मानों से प्रसन्न तो बहुत हुए होंगे, परन्तु उस सभा से उन्हें कुछ और भी पाठ लेना उचित है वह यह कि जो शासक अपनी प्रजा का तन, मन, धन से हित चाहता है वही सब लोकमान्य हो सकता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 3 जून, 1908]

चटगाँव की राजनीतिक सभा

चटगाँव जिले के राजनीतिक बंगालियों की एक सभा हाल ही चटगाँव नगर में हुई है। सभासदों ने एक स्वर हो यह प्रस्ताव पास किया है कि भारत के नर्म और गरम (माडरेट तथा एकस्ट्रिमिस्ट) दोनों दलों के राजनीतिकों का कांग्रेस एक ही हो और दोनों दलों को मिलाने के लिए उस प्रस्तावों के अनुसार कार्य किया जाए जो प्रस्ताव कि पवना के प्रान्तिक कांग्रेस में पास हो चुके हैं।

महाराज रणजीत सिंह जी–जो क्रिकेट खेल में विशेष व्युत्पन्न होने के कारण तमाम इंग्लिश्तान में प्रसिद्ध हो रहे हैं। उनके लिए इंग्लिश्तान के कैम्ब्रिज नगर में उनकी विदाई के लिए एक बृहत् सभा होगी जिसमें क्रिकेट खेल से प्रेम रखनेवाले अनेक उच्च अंग्रेज श्रीमान जोड्यूक तथा लॉर्ड पदधारी हैं, सम्मिलित होंगे। भारत की आत्मिक उन्नति की बात तो छोड़ दीजिए क्योंकि संसार के किसी अन्य भाग में इसकी तुलना मिलनी सर्वथा असम्भव है, परन्तु एतद्देशियों की शारीरिक और मानसिक उन्नति को यदि विदेशियों की उक्त उन्नतियों के साथ मिलाएँ तो इस देश में अनेक ऐसे उदाहरण मिलेंगे जिससे आप इस परिणाम पर पहुँच सकते हैं कि यदि भारत सन्तान को समुचित शिक्षा मिले तो उन्नति के किसी भी विभाग में वह किसी से भी न्यून नहीं रह सकते।

फारस की राजधानी तेहरान में–आस्ट्रोस्ग्राडस्की नामक रूसी एजेन्ट मारा गया है। इस हत्याकांड के लिए भी शाह फारस से रूस उत्तर माँगेगा।

श्यामदेश–जो ब्रह्मदेश से पूर्व की ओर फ्रांसीसी राज अनाम के साथ सटा हुआ है, उसे फ्रांसीसियों ने अपने आधीन करने के लिए अनेक बार नाना प्रकार के यत्न किए, परन्तु येन-केन-प्रकारेण उसकी स्वतन्त्रता अब तक बनी ही है। रूस पर विजय प्राप्त कर बौद्ध जापान ने चाहा था कि बौद्ध श्याम की पूरी रक्षा के लिए वह श्याम के साथ एक प्रकार की सन्धि कर ले, परन्तु अंग्रेज तथा फ्रांसीसियों ने उक्त सन्धि होने नहीं दी। प्रत्युत फ्रांसीसियों ने श्याम नरेश को समझा बुझाकर उनके साथ स्वयं एक प्रकार की सन्धि कर ली जिससे श्यामदेश का एक छोटा सा भाग फ्रांसीसियों के हाथ आ गया। लन्दन के समाचार पत्र 'टाइम्स' में कुछ दिनों से यह विवाद चल रहा है कि श्याम का शासन कैसा है। कतिपय लेखकों

ने श्याम के कुशासनों की समीक्षा कर उसमें यूरोपियनों के हस्तक्षेप की आवश्यकता बतलाई थी। परन्तु अब एक अंग्रेज लेखक जो श्याम में 20 वर्ष रह चुका है उसकी उन्नति की बातें सुना रहा है। अच्छा होता कि जिन देशों को यूरोपीय अभी तक अपने अधीन कर चुके हैं उनकी प्रजा को पूर्ण उन्नत कर लेते तो दूसरे देशों की ओर हाथ फैलाने की चेष्टा करते, क्योंकि सबको पददलित कर देना न अपने लिए और न अन्यों के लिए लाभकर है। प्रत्युत सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझना मनुष्यता है।

नेपाल के दीवान–फ्रांस देश की महद्राज सभा के प्रधान फैलियरीज, जबकि लन्दन पधारे थे, उस समय नेपाल के प्रधानमन्त्री आप से भेंट करने गए थे। प्रधान महाशय ने प्रधानमन्त्री महाशय का स्वागत किया।

आकाशयान–जो भारत में महाराज भोज के समय तक कहीं-कहीं चलाया जाता था और जिसकी विद्या पिछले दिनों भारतवासियों के विषयी एवं अज्ञ होने के कारण भारत से लुप्त प्राप्त हो गई, उसका जापान तथा यूरोप में पुनः प्रचार हो रहा है। हाल में ही एक फ्रांसीसी ने इटली के महाराज विक्टर इमैनुएल के सम्मुख अपने आकाशयान में चढ़कर महाराज के पियाजा नाम महाभवन की परिक्रमा सात बार करके उनका धन्यवाद प्राप्त किया है।

बंगाल के भावी लाट–बंगाल के वर्तमान लाट सर ऐंड्रूफ्रेसर आगामी नवम्बर मास में अपना पद परित्याग कर देंगे और उनके स्थान में बड़े लाट साहब की कौंसिल के सभासद् मिस्टर वेकर सी.एस. आई. बंगाल के लाट नियत किए जाएँगे।

हांगकांग में प्लेग–चीन राज्य के समीप हांगकांग बन्दर में जहाँ अनेक भारतवासी बसते हैं, वहाँ प्लेग फैल रहा है। गत 2 जून को 47 मनुष्य प्लेग से पीड़ित हुए थे।

फ्रांस राजसभा के प्रधान पर आक्रमण–फ्रांस राजसभा के प्रधान फैलियरीज अभी इंग्लिश्तान से यश लूटकर अपने देश फ्रांस में लौटे ही थे कि एकाएक उनके शत्रुओं ने उन पर आक्रमण कर दिया। लोगों का सन्देह है कि प्रधान महाशय गत 4 जून को गोली से घायल किए गए, परन्तु इस विषय का पक्का समाचार अभी तक भारत में नहीं पहुँचा है। इन दुर्घटना का कारण यह है कि गत 4 जून को जोला नाम एक फ्रांसीसी राजनीतिज्ञ की लाश फ्रांस की राजधानी पेरिस नगर के पैंथियन नाम स्थान में पहुँचाई गई। पैंथियन उस स्थान का नाम है जहाँ फ्रांस के बड़े-बड़े देश हितैषियों की लाशें तथा मूर्तियाँ रहती हैं। जोला ड्रेफू वंश का एक प्रसिद्ध पुरुष था। एक समय उसके विरुद्ध यह अभियोग चलाया गया था कि उसने कई फ्रांसीसी किलों का नक्शा फ्रांस के शत्रुओं के हाथ बेच दिया है। परन्तु उस अभियोग में उसका दोष प्रमाणित न हो सका तथापि बहुत से फ्रांसीसी ड्रेफू वंश को फ्रांस का द्रोही समझने लगे। इसी कारण जोला की लाश जब पैंथियन में पहुँची

तो ड्रेफू वंश से द्वेष रखने वाले फ्रांसीसियों से रहा न गया। जोला की लाश की प्रतिष्ठा देवता की लाश की तरह प्रतिष्ठत होते देख वे भड़क उठे और पैंथियन स्थान में पहुँचे। पैंथियन के भीतर से, जबकि प्रधान फैलियारी और उक्त लाश को प्रतिष्ठा देने गए थे, निकले और उनके साथ ही ड्रेफू वंश का मेजर ड्रेफू नाम पुरुष बाहर आने लगा तो ग्रिगोरी नाम एक पत्र सम्पादक ने मेजड्रिफू पर गोली चलाई, फिर तो हल्ला हो गया। जिसमें सुना गया है कि प्रधान फैलियारीज भी कठिन घायल हुए हैं।

700 अफगान योद्धा–जिनके विषय में अन्यत्र छपा है कि उन्होंने फारसियों के रीगन नगर को जयकर अपने आधीन कर लिया है। उनके विषय में पुनः समाचार यह आया है कि ये लोग मकरान प्रदेश में समुद्र के किनारे ठहरे हुए थे, जबकि गोली-बारूद तथा बन्दूकों से लदा हुआ एक जहाज किनारे आया। उस जहाज से युद्ध की सब सामग्री लेकर उन्होंने 900 ऊँटों पर लाद दिया और वहाँ से चलकर रीगन नगर में पहुँचे। वहाँ किसी से युद्ध नहीं किया। अब रीगन से अफगान सौदागरों का यह दल पूरब की ओर जा रहा है। लोगों का अनुमान है कि यह सब युद्ध की सामग्री महमन्द तथा अफ्रीकी आदि सीमावर्ती मुसलमानों के लिए जा रही है।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 जून, 1908]

पक्षपात संसार का नाश कर रहा है

काले और गोरों का भेद सभ्यताभिमानी अमेरिका में भी कम नहीं हैं। अभी हाल ही की बात है कि ओकलाहोमा प्रदेश के किल्यो नगर में काले हब्शी और गोरों का झगड़ा हुआ जिसमें एक गोरा मारा गया। भय के मारे हब्शी नगर छोड़ पहाड़ों में भाग गए, वहाँ भी उन पर गोरों ने धावा किया। तब तो हब्शी लड़ने को उद्यत हुए। प्रायः एक सौ हब्शी और गोरों के बीच युद्ध हुआ जिसमें पन्द्रह हब्शी तथा आठ गोरे मारे गए। अब सरकारी सेना युद्ध बन्द करने और युद्ध करने वालों को पकड़ने के लिए भेजी गई है। यदि संसार के काले और गोरों को कोई समझाता कि प्राकृतिक शरीर की ओर से ध्यान खींचकर अन्तर्मुख देखो, प्रत्येक आत्मा एक ही प्रकार का दिखेगा, तो आज जो द्वेषाग्नि करोड़ों हृदयों को जला रही है, जला न सकती।

अमीर काबुल के यहाँ टर्की के लोग–सुल्तान रूम की राजधानी कुस्तुनतुनिया से कुछ तुर्क मुसलमान, जो अमीर काबुल के यहाँ आए हैं उनमें एक डाक्टर और एक व्यूह रचना सिखाने वाले हैं। रूम के मुसलमान यदि काबुल के मुसलमानों को युद्ध विद्या सिखाएँगे तो इसमें सन्देह नहीं कि अमीर की सेना युद्ध विद्या में पूर्वापेक्षा बहुत अच्छी हो जाएगी।

मध्य एशिया की भावी दशा–जब से सम्राट् एडवर्ड सप्तम रूस में पहुँचे हैं तब से रूसी तथा अंग्रेजी समाचार पत्र दोनों देशों के परस्पर झगड़ों के मिटाने की सम्मति देते हैं। एक रूसी पत्र लिखता है कि अफगानिस्तान की दो सीमाओं पर एक ओर जो रूसी और दूसरी ओर अंग्रेजी रेलवे लाइन है उन दोनों को जोड़ देना चाहिए। जिसमें वे परस्पर के वाणिज्य के बढ़ाने वाले बन जाएँ। फारस, तिब्बत, अफगानिस्तान तथा भारत के विषय में कुछ तो पहले ही विचार हो चुका है। अब जो विचार शेष हो उन्हें भी पूर्ण कर देना चाहिए जिसमें दोनों देशों को परस्पर झगड़े में डालने वाला कोई विषय शेष न रह जाए। इन बातों से अनुमान होता है कि रूस जो इतने दिनों से भारत पर चढ़ाई करना चाहता था अब उस इच्छा का परित्याग कर देगा, तिब्बत चीन के पूर्णाधीन न रह सकेगा। प्रत्युत उसमें अंग्रेज और रूसी वणिक अव्याहत गति से विचरेंगे, काबुल अब स्वतन्त्र नहीं रह सकेगा।

अमीर अब्दुल रहमान, जो कभी रूसियों के साथ और कभी अंग्रेजों के साथ अपना प्रेम प्रकट कर कभी एक से और कभी दूसरे से अपनी सुश्रुषा कराया करते थे, वह पालिसी अब वर्तमान अमीर काबुल न खेल सकेंगे। फारस में अंग्रेज और रूसी दोनों का वाणिज्य भलीभाँति चलेगा जिससे उक्त दोनों जातियों को बड़ा लाभ होगा।

रूम की दशा–बहुत दिनों से सुनते आते हैं कि सिफमैन अर्थात् बीमार पुरुष की तरह सुल्तान रूम का देश जर्जर हो रहा है। परन्तु आश्चर्य है कि अब तक उसकी स्वतन्त्रता बनी हुई है जिससे बोध होता है कि जो कुछ रूम के विरुद्ध कहा जाता है उसमें कुछ बातें अनुभवरहित पुरुषों की भी मिश्रित रहती हैं। यूरोपीय राजनीति में कुशल अब प्रोफेसर वम्बरी कहते हैं कि जिस प्रकार मृत्यु एकाएक मनुष्य को आ दबाती है उसी प्रकार रूम देश भी शीघ्र ही नष्ट होने वाला है। साथ ही प्रोफेसर साहब शोक करते हैं कि यूरोप के क्रिस्तान सम्राटों ने मिलकर अब तक रूम का नाश क्यों न करा दिया ? क्रिस्तानों और मुसलमानों का परस्पर द्वेष कितना है वास्तव में उक्त कथन उक्त भाव का निर्देशमात्र है।

भारत में अंग्रेजी शिक्षा और अशान्ति–बंगाल के वर्तमान छोटे लाट सर ऐंड्रूफ्रेजर के पुत्र ए.जी. फ्रेजर महाशय, जो लंका की राजधानी के एक कालेज के प्रिंसिपल हैं, गत मास लन्दन में विराजमान थे जबकि आपने भारत के विषय में एक व्याख्यान दिया था। आपके कथनों का आशय यह था कि अंग्रेजी शिक्षा ने भारतवासियों को डिनेशनलाइज कर दिया है अर्थात् उनके स्वजातीय सुभावों के स्थान में विजातीय भावों को भर दिया है। क्योंकि जो शिक्षा उन्हें दी जाती है वह निकृष्ट प्रकार की है और इसी कारण भारत में आज इतनी अशान्ति फैल रही है। यदि इस शिक्षा प्रणाली का संशोधन किया जाए अर्थात् भारतवासियों को उत्तम शिक्षा दी जाए तो सम्भव है कि बहुत सी भावी अशान्ति देखने में न आए।

पूना में काल पत्र के सम्पादक–के विरुद्ध भारतीय दण्ड संग्रह की धारा 124 ए तथा 153 ए के अनुसार गवर्नमेन्ट की ओर से अभियोग चलाया जाता है। अभियोग बम्बई में होगा। अतः उक्त पत्र के सम्पादक को पकड़कर पुलिस ने पूना से बम्बई भेज दिया है।

भारत युद्ध सभा–महाशय कन्हैयालाल घीलोत अवैतनिक मन्त्री भारत शुद्धि सभा, धामी, जिला शिमला लिखते हैं–

'श्री सर्वशक्तिमान परमात्मा जी का धन्यवाद है जिसकी अपार कृपा से हमको ऐसी भारतेश्वर गवर्नमेन्ट सर्वोपरि विद्यमान है जिसकी कृपा रूपी छाया में हम निर्भय वैदिक धर्म प्रचार कर सकते हैं। कारण यह है कि हमारे लाखों राजपूत भाई, जो जबरदस्ती से और लोभ से यवन हो गए थे, हम से अपने आपको एक पृथक् जाति कहने लग गए थे, आज अत्यन्त खुशी है जो कि हमारे साथ एक जाति होने को तैयार हैं इसके लिए एक सभा भारत शुद्धि सभा के नाम से कायम की

गई है। उसके प्रधान श्रीमान्महोदय राना साहिब हीरासिंह धामी नरेन्द्र जी हुए हैं और उपप्रधान श्री राजकुमार पृथ्वीसिंह वर्मा सुकेत निवासी हुए हैं। इसलिए भारतवासियों को सामान्य और राजपूतों को विशेष सूचना दी जाती है और प्रार्थना की जाती है कि इस अपूर्व महोत्साही कार्य से, स्वतन्त्रता से लाभ उठाएँ और अपने सब गौण झगड़ों को त्याग करें। प्रत्येक आर्य हिन्दू को चाहिए कि अपने दृढ़ धैर्य पद पर स्थित हो जाए और ग्राम-ग्राम, नगर-नगर भारत शुद्धि सभा के नियमोपनियमों का प्रचार करें और सभासद बनाएँ और द्रव्य प्राप्ति यानि चन्दा यथायोग्य वसूल करें और भारत निवासी धनाढ्य तथा राजाओं को इस अपूर्व कार्य में ध्यान देना चाहिए। जब लाखों मनुष्यों की इच्छा दिल से आपके धर्म में सम्मिलित होने की है तो क्या आप ऐसे निर्दय हो गए कि अपने पतित हुए भाइयों को उठाना नहीं चाहते हो। यद्यपि आपको अपने सांसारिक व्यवहार से अवकाश नहीं है कि परोपकार देशोन्नति करें। तथापि आप इतना तो अवश्य कर सकते हो कि जब अपने सांसारिक व्यवहार के लिए द्रव्य व्यय करना चाहें तो उसमें से दशमांश अपने पतित हुए भाइयों को उठाने के वास्ते श्रीमान् राना साहिब श्री हीरासिंह साहिब जी प्रधान, मुकाम धामी, जिला शिमला के पास भेज दें। अब समय है तन, मन, धन से सब भाई मिलकर उपकार करें।'

(सद्धर्म प्रचारक, 17 जून, 1908)

भारत की अशान्ति पर विचार

भारत के मन्त्री वाइकाउन्ट मोर्ले (जो लन्दन में रहते हुए भारत के बड़े लाट साहब को भारत शासन विषय में सम्मतियाँ तथा आज्ञाएँ दिया करते हैं) ने गत 12 जून को लन्दन नगर में एक व्याख्यान 'भारत की वर्तमान अशान्ति' विषय पर देते हुए कहा है कि भारत का आकाश काले बादलों से अच्छादित हो रहा है। इन बादलों को छिन्न-भिन्न करने के लिए बल लगाने की आवश्यकता है, परन्तु इस बल का प्रयोग ठीक-ठीक सत्यासत्य के विवेक सहित होना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि भारत की जाग्रत प्रजा अब उस वस्तु की प्राप्ति के लिए चल पड़ी है जिसकी कामना हम लोगों ने ही उन्हें सिखाई है। जब तक हम लोग उनकी इन कामनाओं की तृप्ति का विचार रखते हुए शान्ति संस्थापन की चेष्टा न करेंगे तब तक दोष उनका नहीं प्रत्युत हमारा ही माना जाएगा। पददलित करने के सिद्धान्त का अनुसरण अब हो नहीं सकता क्योंकि इंग्लिश्तान की प्रजा हमारे कामों को देख रही है और पददलित करने की इच्छा भी, मेरा विश्वास है कि अब किसी में विद्यमान नहीं है। मैं यत्न कर रहा हूँ कि भारत अशान्ति सम्बन्धी अति कठिन प्रश्न को हल करूँ इत्यादि।

लार्ड मोर्ले के ये वचन तो आशाजनक ज्ञात होते हैं और ये वचन उनके पहले के अनेक आशा तोड़ने वाले वचनों के प्रतिकूल भी हैं। अतः यदि उन्हें अपने इन आशाजनक वचनों के अनुसार कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ तो वह अनेक भारतीय राजनीतिज्ञों के धन्यवादार्ह बन जाएँगे। लार्ड मोर्ले के विचारों में यह परिवर्तन कैसे हुआ ?

तिब्बत की उन्नति के लिए–चीनी बहुत कुछ सोच-विचार कर रहे हैं। अंग्रेज राजदूत सर हाटर कहते हैं कि तिब्बत में चीनियों की ओर से डाकघरों की स्थापना अतिशीघ्र होगी और वाणिज्य की वृद्धि के लिए भी पूर्ण यत्न किया जाएगा। तिब्बत की राजनीतिक स्थिति पेंचदार है। जब चीनी उसका विशेष सँभाल करने लगेंगे तो रूसी और अंग्रेज भी तत्सम्बन्ध में कुछ-न-कुछ करने पर उद्यत हो जाएँगे।

एक स्वदेश द्रोही की दुर्दशा–फ्रांसीसी लेफ्टिनेंट उल्मो अपने देश के समुद्री युद्ध विभाग की कई बातें किसी विदेशी राज को बतलाने की चेष्टा करता हुआ

पकड़ा गया था। इस अपराध के लिए उसे आजन्म कारागार का दण्ड मिला है। गत 12 जून को हजारों मनुष्यों के बीच में उसकी तलवार तोड़ी गई और दर्शकों ने छिः-छिः करके उसे इतना लज्जित किया कि वह फूट-फूटकर रोने लगा।

अमरीका (युक्त देश) के प्रधान–रूजवेल्ट महाशय राज कार्य से शीघ्र ही विश्राम लेने वाले हैं। इनके स्थान में महाशय टैफ्ट अथवा कोई अन्य पुरुष प्रधान बनाए जाएँगे। महाशय रूजवेल्ट के परोपकारों के लिए आज उनकी प्रजा बधाइयाँ दे रही है।

मोरक्को की वर्तमान दशा–मोरक्को के सुल्तान (जो फ्रांसीसियों के मित्र हैं) का प्रभाव उनकी प्रजा पर दिनोदिन घटता जाता है। मोरक्को की प्रजा विदेशी हस्तक्षेप को बहुत बुरा समझ रही है जिसका परिणाम यह है कि सुल्तान के शत्रु मौलाहफीद की सेना, सुल्तान मोरक्को की सेना से भी अधिक बलवती बन गई है। फ्रांसीसी अब सोच रहे हैं कि यदि सुल्तान की रक्षा के लिए मौलाहफीद से अधिक बिगाड़ किया जाए तो फ्रांसीसियों को हानि अधिक उठानी पड़ेगी। अतः मोरक्को के मामले को किसी प्रकार शीघ्र ही तय करना चाहिए।

अधिक राजनीतिकान्दोलन का प्रमाण–भारत के डाक विभाग ने अभी एक लेख प्रकाशित किया है जिससे विदित होता है कि डाकघरों ने 1853-54 ईस्वी में इस प्रकार समाचार पत्रों को बाँटा था। 'युक्तप्रान्त के समाचार पत्रों की 541032 कापी बंगाल की 56674 कापी', परन्तु 1861-62 ईस्वीं में 'बंगाल की 177422 कापी, युक्तप्रान्त की 901211', परन्तु 1906-7 में बंगाल के समाचार पत्रों की एक करोड़ चालीस लाख कापियाँ और युक्तप्रान्त के समाचार पत्रों की 4722943 कापियाँ बाँटी थीं। 1906-7 में बम्बई प्रान्त के प्रायः 66 लाख, मद्रास के प्रायः 65 लाख, और पंजाब के प्रायः 62 लाख कापियों को बाँटा था। इससे सिद्ध होता है कि बंगाल में इस समय समाचार पत्रों का वितरण सबसे अधिक और पंजाब में सबसे कम होता है। क्योंकि राजनीतिक समाचार पत्रों की संख्या अधिक है इस कारण यह भी बोध होता है कि इस समय बंगाल में राजनीतिक आन्दोलन बम्बई प्रान्त से दूना तथा अन्यान्य प्रान्तों से दूने से भी अधिक है।

शाह फारस–की बुद्धि बड़ी परिवर्तनशील है। जिन अपने पुराने मन्त्रियों को आपने फारस का शत्रु समझ उन्हें प्रायः पदच्युत कर दिया था आपने उनमें से दो को पुनः अपनी सेवा में रख लिया है। इस अनुचित कार्यवाही के विरुद्ध निवेदन करने के लिए प्रजा पक्ष के दो प्रतिष्ठित पुरुष शाह की सेवा में उपस्थित हुए थे, उन्हें शाह ने बन्दी बनवाकर अपनी राजधानी से निकाल दिया है। शाह की सेना इस समय राजधानी तेहरान को घेरे हुए है और प्रजातन्त्र शासन के पक्षपाती भी अपने को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित कर रहे हैं। शान्ति भंग की सम्भावना है। अतः फारसी पार्लियामेन्ट के लोग शाह फारस को बहुत कुछ समझा बुझा रहे हैं।

रूस के राजविद्रोही–अभी तक पूर्ण शान्त न हुए। टिफलिस नगर से जो समाचार लन्दन और वहाँ से भारत को आए हैं उनसे विदित होता है कि टिफलिस नगर के सरकारी चुँगी घर के पाँच अफसरों को मार पच्चीस हजार रूबल (रुपए) राजविद्रोही लूट ले गए। राजविद्रोहियों के भी तीन आदमी मारे गए।

[सद्धर्म प्रचारक, 24 जून, 1908]

अमरीका का उत्तरवर्ती कनेडा देश

अमेरिका का उत्तरवर्ती कनेडा देश—जहाँ अंग्रेजी उपनिवेश का शासन है वहाँ कोई भी भारतवासी तब तक जहाज से उतर न सकेगा जब तक वह 600 रुपए नकद अपने पास न दिखाए। भारत के कुछ काल-पीड़ित लोग अपनी पेट की ज्वाला को शान्त करने की इच्छा से जो अपनी प्यारी जन्मभूमि को परित्याग मजदूरी करने के लिए कनेडा देश में जाया करते थे अब वहाँ भी न जा सकेंगे। हाँ ! भारत की प्रजा ऐसी अभागिनी बन गई है कि प्रायः सभी अंग्रेजी उपनिवेशों में इसे धक्के मिलने लगे।

युद्ध की सामग्री—इलाहाबाद का पायोनियर लिखता है कि फारस की खाड़ी से प्रायः चालीस सहस्र बन्दूकें तथा युद्ध की सामग्री अफगानिस्तान में पहुँच गई है और इसी प्रकार बहुत सी युद्ध की सामग्री दक्षिण फारस तथा अरब देश के पूर्वी भागों में भी फारस की खाड़ी से पहुँचाई गई है। इन सामग्रियों के लाने वाले किस देश के जहाज हैं—अभी तक इसका पता नहीं लगा है। चाहे वह सामग्रियाँ किसी भी देश की क्यों न हों, परन्तु जहाँ यह सब सामान पहुँचे हैं, वहाँ के लोगों को अस्त्र-शस्त्रों की आवश्यकता पड़ी है—इसमें सन्देह नहीं।

ट्रांसवाल देश में भारतवासियों का अपमान—गत जनवरी मास में अंग्रेजी उपनिवेश ट्रांसवाल (बोअर देश) की गवर्नमेन्ट ट्रांसवाल में रहने वाले भारतवासियों का अपमान जब पहले से भी अधिक करने लगी थी तो भारतवासियों ने वहाँ बड़ा कोलाहल मचाया था, उस पर उक्त गवर्नमेन्ट ने भारतवासियों के मुखिया महाशय गन्धी बैरिस्टरादि को समझाकर कुछ सुधार की प्रतिज्ञा की थी। उस पर वहाँ के भारतवासी कुछ शान्त हो गए थे। परन्तु अब जो लन्दन से भारत में तार समाचार आए हैं उनसे विदित होता है कि ट्रांसवाल की गवर्नमेन्ट ने अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं की। अतः वहाँ के जोहानसबर्ग नगर में गत 23 जून को प्रायः एक सहस्र भारतवासियों की एक महती सभा हुई जिसने उक्त गवर्नमेन्ट की इच्छाओं पर शोक प्रकट करते हुए यह प्रस्ताव पास किया कि अब कोई भी भारतवासी अपना नाम रजिस्टर न कराए और रजिस्ट्रेशन दफा के मन्तव्यों (शर्तों) को भारतवासी कभी न मानें चाहे, इसके लिए उन्हें कितना भी क्लेश क्यों न उठाना पड़े।

मोरक्को के मौलाहफीद–जो सुल्तान मोरक्को से लड़ रहे हैं और जिन्हें फ्रांसीसी अपना शत्रु समझते हैं, ने जर्मन सम्राट् को लिख भेजा है कि मोरक्को की सम्पूर्ण प्रजा मेरे पक्ष में है, आप फ्रांसीसियों के विरुद्ध मेरी सहायता करें। प्रार्थना पत्र विचाराधीन है।

रेलगाड़ी पर बम का गोला–ईस्टर्न बंगाल स्टेट रेलवे में कांकीनाड़ा एक स्टेशन है। 21 मई को आधी रात के समय जबकि एक मुसाफिर गाड़ी स्टेशन के निकट आ रही थी उस गाड़ी के सेकंड क्लास के एक कमरे में, जिसमें तीन अंग्रेज बैठे हुए थे, एक बम का गोला एकाएक आ गिरा जिसने उक्त तीनों अंग्रेजों को घायल कर दिया। जब गाड़ी स्टेशन पर पहुँची तो कोलाहल मच गया। घायल पुरुष स्पेशल गाड़ी द्वारा कलकत्ता को रवाना किए गए। प्रायः तीन बजे प्रातःकाल यह गाड़ी कलकत्ता पहुँची और घायल पुरुष मेडिकल कालेज अस्पताल में पहुँचाए गए, जहाँ दो अंग्रेजों की चिकित्सा कर, जिन्हें चोट कम लगी थी, डाक्टरों ने घर जाने की आज़ा दी। परन्तु तीसरा अंग्रेज, जिसका नाम मिस्टर कैम्पसी है, अस्पताल में ही रखा गया। बम-गोले के टुकड़ों ने इसके शरीर को छेद बहुत सा रक्त निकाल दिया था और इसके बाएँ हाथ को तोड़ डाला था। डाक्टरों ने इसके बाएँ हाथ को काट डाला और घायल की बड़ी सावधानी से चिकित्सा की। जिससे आशा की जाती है कि मिस्टर कैम्पसी के प्राण बच जाएँगे। आश्चर्य यह है कि पुलिस विभाग के उच्च-उच्च कर्मचारी बम-गोला फेंकने वाले का पता लगा रहे हैं, परन्तु अभी तक उसका पता न लगा। बंगाल गवर्नमेन्ट ने अपराधी के पकड़ने वाले को 5000 रुपए इनाम देने का विज्ञापन प्रकाशित किया है और कांकीनाड़ा में पुलिस दल उतरा हुआ है।

पंडित बाल गंगाधर तिलक पकड़े गए–पूना 'केसरी' पत्र के सुप्रसिद्ध सम्पादक तथा 'मरहठा' नामक पत्र के अध्यक्ष तथा गरम दल के राजनीतिकों के मुखिया पंडित बालगंगाधर तिलक गत 24 मई को बम्बई में पकड़े गए। इन पर राजविद्रोह का अभियोग चलाया गया है। पूना में इनके घरों की तलाशी हो रही है।

पत्र सम्पादकों की दशा–'काल' के सम्पादक महाशय शिवराम महादेव परांजपे बम्बई हाई कोर्ट से अभी जमानत पर छूटे हैं। शोलापुर 'स्वराज्य' पत्र के सम्पादक लिमनजी राजविद्रोह के अपराध में पकड़े गए हैं। 'बिहारी' पत्र के सम्पादक को बम्बई के प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट ने दो वर्ष कठिन कारागार तथा एक हजार रुपए जुर्माने का दण्ड दिया है।

[सद्धर्म प्रचारक, 1 जुलाई, 1908]

पंजाब के पहाड़ी प्रान्त

पंजाब के पहाड़ी प्रान्तों के नीचे, काश्मीर की तरह गवर्नमेन्ट रेशम के कारखाने खोलने का विचार कर रही है। जब अन्य प्रकार का उत्तमोत्तम कपड़ा बिना हिंसा के मिल सकता है तो क्या मनुष्य के शृंगार के लिए यह हिंसा भी आवश्यक है ?

कांकिनाड़ा के अंग्रेज़ पर बम का गोला क्या चला उसका भाग्य ही उदय हो गया। इसका नाम केम्पसी है। तीन महीनों से ही इस देश में आया था। चन्दे की अपील पर 5,400 रुपए हो चुका है और अभी धड़ाधड़ हो रहा है। मिस्टर केम्पसी वैसे भी बच निकले हैं। अस्पताल से बाहर निकलने पर उनको अच्छा सरमाया जीवन आरम्भ को मिल जाएगा।

बर्दवान के राजा साहेब, जिन्होंने एक बार अपने दरबार में सम्राट् जर्मनी की नकल करते हुए ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के साथ अपना मैत्री का सम्बन्ध जतलाया था, ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की कृपा से महाराजा बहादुर बनाए गए। यह राजा साहब चिरकाल से बंगालियों को बुरा-भला कहने के अभ्यासी बन रहे हैं।

नए वर्ष की उपाधियों पर कई प्रकार की किंवदन्तियाँ हो रही हैं। बाबू नरेन्द्रनाथ सेन को यद्यपि राय बहादुरी से बढ़कर उपाधि का अधिकारी बहुत लोग समझते थे, किन्तु इस समय यही समझा गया है कि गवर्नमेन्ट की सहायता में लिखने के कारण उनको रायबहादुर बनाया गया है। मुझे तो ऐसा निश्चय था कि नरेन्द्र बाबू रायबहादुरी लेने से ही इन्कार कर देंगे।

उर्दू समाचार पत्र 'स्वराज्य' प्रयाग के सम्पादक पर भी राजविद्रोह का अभियोग चलाया गया है और उनकी जमानत भी नहीं ली गई।

फारस में बराबर राजा तथा प्रजा में युद्ध जारी है। शाह ने पार्लियामेन्ट मन्दिर का गिराना तो बन्द कर दिया। अब शाह ने फरमान जारी किया है कि तीन मास तक पार्लियामेन्ट बन्द रहेगी जिसके पश्चात् सच्चे धार्मिक और देश हितैषी सभासद् चुने जाएँगे। मतलब यह कि जो शाह की हाँ-में-हाँ मिलाने वाले होंगे वह बुलाए जाएँगे। शाह के पक्षपातियों तथा अन्य प्रजा में खूब चल रही है।

शाह की शिकायत का अच्छा मुँह-तोड़ जवाब मिला। कुछ फारस देश के

देश हितैषियों ने ब्रिटिश दूत गृह (British Legation) की शरण ली थी। शाह फारस ने सम्राट एडवर्ड के पास इस बात की शिकायत की। सम्राट एडवर्ड ने उत्तर दिया कि जब बीसियों मनुष्यों को बिना उनका अपराध निश्चित किए ही फाँसी पर टाँगा गया तो उनको दूत का शरण देना योग्य ही था। किन्तु शाह फारस की आँखें इस पर भी कब खुलने लगी हैं।

आत्मघात बड़ा पाप है। यह सभी धर्मात्मा पुरुषों की सम्मति है और हमारे प्राचीन शास्त्र बतलाते हैं कि उत्तम शिक्षा पाने से पाप का बोध होता है। परन्तु शोक कि आजकल की शिक्षा का प्रभाव किसी-किसी नवयुवक पर ऐसा पड़ रहा है कि वह आत्मघात को ही अपनी शान्ति का सर्वोपरि उपाय मान रहा है। कलकत्ता के प्रसिद्ध राय बहादुर बनमाली चक्रवर्ती के पुत्र कालीचरण चक्रवर्ती को, जिसकी उमर प्रायः 17 वर्षों की थी, उसके अध्यापक तथा पिता ने भी पाठ में चित्त न लगाने के अपराध में डाँटा था। विद्यार्थी को उनकी कटु परन्तु लाभकर बातें इतनी बुरी मालूम हुई कि वह विष खाकर मर गया।

नर और नारी के स्वत्व क्या हैं ? इस विषय पर इंग्लैंड में कुछ दिनों से घोर विवाद चल रहा है। बड़े-बड़े कुलों की तथा अच्छी पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ चाहती हैं कि इंग्लिश्तान की महदूराज सभा पार्लियामेन्ट में जब तक स्त्रियाँ न बैठेंगी तब तक स्त्रियों के स्वत्वों की रक्षा नहीं हो सकती। कुछ इसी प्रकार की बातें निवेदन करने को स्त्रियों की एक बहुत बड़ी मण्डली लन्दन के वेस्ट मिनिस्टर स्थान की ओर इंग्लिश्तान के वर्तमान प्रधानमन्त्री ऐस्किथ महाशय की सेवा में जा रही थी। इस मण्डली ने यह ज्ञात कर कि ऐस्किथ महाशय इनकी बातें सुनना नहीं चाहते, क्रुद्ध हो गई और उपद्रव करने लगी, पुलिस दल ने इनमें से 29 स्त्रियों को पकड़ लिया। न्यायालय से दो स्त्रियों को दो-दो मास साधारण बन्दी गृह का दण्ड मिला 25 के मुचलके हुए और शेष कई को अन्यान्य साधारण दण्ड मिले। कहा जाता है कि इंग्लिश्तान में स्त्रियों का जितना सम्मान है भारत वा किसी अन्य देश में कदाचित् ही उतना होगा। यदि यह ठीक है तो वहाँ की स्त्रियों पुरुषों पर इतना अविश्वास क्यों करती हैं ?

पूना का एक विद्यार्थी अनन्त गणेश कर्वे इन दिनों पुलिस के हाथों में पड़ गया है। अपराध उसका यह बतलाया जाता है कि पिछले दिनों बड़े लाट साहब की सभा में पास हुए एक्सप्लोसिव एक्ट के विरुद्ध उसके घर से सल्फर और पोटाश दो पदार्थ निकले हैं; परन्तु तोल में दोनों पदार्थ मिलाकर भी दस ग्रेन से अधिक नहीं है और विद्यार्थी कहता है कि इन पदार्थों का संग्रह मैंने रासायनिक परीक्षा के लिए किया; क्योंकि इस प्रकार की परीक्षाएँ मेरे कालेज में हुआ करती हैं और उन्हें मुझे जानना पड़ता है। एक्सप्लोसिव एक्ट के अनुसार इस प्रकार के अभियोगों के चलाने की आज्ञा जब तक बड़े लाट साहब न दें

तब तक अभियोग नहीं चल सकता। अतः इस प्रकार की स्वीकृति के लिए पुलिस यत्न कर रही है और कर्वे अपना चिन्तामय समय काट रहा है। इस प्रकार की कठिनाइयों से बोध होता है कि रासायनिक परीक्षक अपना काम निर्द्धन्दता से न कर सकेंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 8 जुलाई, 1908]

शाह फारस पर

शाह फारस पर अंग्रेज और रूसियों ने दबाव डालना आरम्भ कर दिया है। जिस समय शाह फारस अपनी पार्लियामेन्ट के सभ्यों को बलात् पकड़वा रहे थे और उनकी राजधानी तेहरान में हाहाकार मचा हुआ था, उस समय फारस के कुछ राजनीतिक पुरुष अपने प्राणों के भय से वहाँ के अंग्रेजों के राजदूत भवन में जा छिपे थे। शाह फारस ने उक्त राजनीतिकों को पकड़ने की इच्छा से उक्त राजदूत भवन के चारों ओर भी अपने सिपाहियों का पहरा बैठा दिया था। अब अंग्रेज कहते हैं कि इस प्रकार का पहरा बैठाने से उनका बड़ा अपमान हुआ है, रूसी भी कहते हैं कि अंग्रेजों का कथन सर्वथा ठीक है। अतः ज्ञात होता है कि शाह फारस जब तक अपने उक्त कार्य को भूल मानकर क्षमा प्रार्थना न करेंगे तब तक अंग्रेज और उनके भावी मित्र रूसियों की अप्रसन्नता दूर न होगी। फारस के राजा और प्रजा में जबकि इतना अनबन है तब कुछ दिनों में उस पर विदेशियों का आक्रमण हो अथवा अधिकार जमे तो आश्चर्य ही क्या है।

तवरेज में प्रजा विद्रोह–फारस के प्रसिद्ध नगर तवरेज में शाह फारस की सेना से उनकी प्रजा का जो युद्ध हुआ है उसमें प्रायः 12000 सहस्र मनुष्य मारे गए हैं।

अनन्त गणेश कार्वे–नाम पूना के विद्यार्थी के पकड़े जाने का समाचार इस पत्र में पहले ही छप चुका है। गवर्नमेन्ट ने जबकि स्वीकार कर लिया कि कार्वे के विरुद्ध अभियोग चलाया जाए तब कार्वे के वासस्थान की पूरी तलाशी ली गई जहाँ से सिवाय पोटाश और गन्धक की एक पुड़िया के एक विद्रोहोत्तेजक छपा हुआ पद्य लेख मिला और समाचार पत्रों के कुछ टुकड़े भी मिले। गत 7 जुलाई को पूना के सिटी मजिस्ट्रेट के न्यायालय में यह अभियोग प्रस्तुत हुआ। सैसून अस्पताल के हाउस सर्जियन ने (जहाँ कार्वे विद्याध्ययन करता है) साक्षी दी कि कार्वे ने मुझे उन बोतलों को दिखाया था जिनसे उसने गन्धक और पोटाश निकाला था। एक मुसलमान ने साक्षी दी कि कार्वे मुझसे एक पांउड (प्रायः आधा सेर) क्लारेट आफ पोटाश खरीदने आया था, परन्तु मेरे पास पोटाश था नहीं इस कारण नहीं दिया। साक्षी सुनकर मजिस्ट्रेट ने कार्वे को सेंशस सुपुर्द कर दिया। अब देखना

चाहिए सेशंस जज के इजलास से क्या फैसला होता है।

बाबू अरविन्द घोष के विरुद्ध जो अभियोग कलकत्ता में बम-गोला बनाने वालों के साथ-साथ चल रहा है उसमें बाबू अरविन्द घोष के लिए वकील बैरिस्टरादि रखने को अर्थात् अभियोग सम्बन्धी व्यय के लिए प्रायः आठ हजार रुपए चन्दा हो गया है। कलकत्ता के 'एम्पायर' नाम पत्र की यह सूचना है।

चीन की भावी दशा पर गत 7 जुलाई को लन्दन में व्याख्यान देते हुए प्रसिद्ध अंग्रेज राजनीतिक सर राबर्ट हार्ट महाशय (जो चीन में चिरकाल तक रह चुके हैं) ने कहा कि चीन ने बहुत-सी शक्ति इकट्ठी कर ली है, वह थोड़े ही दिनों में जगत् के बड़े-बड़े पराक्रमी देशों के बराबर हो जाएगा। अंग्रेजों को चाहिए कि यथासम्भव वह चीन की उन्नति में सहायक बनते रहें।

चिदम्बरम पिले को, जिनके विरुद्ध ट्रिनेवली (मद्रास) में राजविद्रोह का अभियोग चल रहा था, गत 7 जुलाई को देशनिकाले का दण्ड मिला और साथ ही आजन्म कारागार का दण्ड भी। उस दिन ट्रिनेवली में इस घोर दण्ड के कारण प्रजा के बीच अशान्ति फैली हुई थी और शान्ति भंग का भी भय था। अतः पुलिस की विशेष तैयारी तमाम नगर में भी, परन्तु चिदम्बरम शीघ्र ही वहाँ से कोयम्बतूर पहुँचाए गए और शान्ति भंग न हुई।

सुब्रह्मण्य शिव जो चिदम्बरम पिले के परम सहायक थे और राजनीतिकान्दोलनों में बराबर उनकी सहायता करते थे, उन्हें भी दस वर्ष कठिन कारागार का दण्ड मिला है।

स्वराज्य-प्रयाग के सम्पादक बाबू शान्तिनारायण को वहाँ के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने राजविद्रोह का अपराधी समझकर उन्हें साढ़े तीन वर्ष कठिन कारागार का दण्ड दिया है।

काल-पत्र के सम्पादक पंडित शिवराम महादेव परांजपे को बम्बई हाईकोर्ट के जज मिस्टर दावर ने राजविद्रोह के अपराध में 19 मास कठिन कारागार का दंड दिया है।

खुदीराम बोस जिसको मुजफ्फरपुर के सेशन्स जज ने मिस्टर कैनेडी की धर्मपत्नी तथा कन्या के मारने के अपराध में फाँसी पर चढ़ाने की आज्ञा दी है, की ओर से हाई कोर्ट में अपील हुई है। खुदीराम बोस कहता है कि जिस बम-गोले से कैनेडी साहब की स्त्री तथा कन्या मारी गई उस बम-गोले को मैंने नहीं फेंका था। प्रत्युत उसे मेरे साथी दिनेशचन्द्र राय ने फेंका था। अतः उक्त नारियों का वध उसके हाथ से हुआ, न कि मेरे हाथों से। अतः मैं वध का अपराधी नहीं हूँ।

इंग्लिस्तान के प्रायः पचास बड़े-बड़े जहाज इंग्लिश्तान के पास उत्तर सागर में अपना समूह बल दिखाने को एकत्रित हुए थे। इनके परीक्षक समुद्र युद्ध विद्या

विशारद लॉर्ड चार्लस वैरेस फोर्ड थे। इन्होंने इंग्लिश्तान की गवर्नमेन्ट को सूचना दी है कि यदि शत्रुओं के जहाज इंग्लिस्तान पर आक्रमण करें और मुझे इंग्लिस्तान की रक्षा सौंपी जाए तो मैं इतने जहाजों से इंग्लिस्तान की रक्षा नहीं कर सकूँगा। तात्पर्य यह है कि इंग्लिस्तान को अपने जहाजों की संख्या और भी बढ़नी चाहिए।

विधवा भवन महाशय कल्याण सिंह गुप्त अजमेर से सुचित करते हैं कि दीन विधवाओं की रक्षा के लिए यहाँ एक विधवा भवन खुला है। जिस किसी दुखी विधवा को इस भवन में निवास करने की इच्छा हो उस उक्त भवन के मन्त्री महाशय से पत्र व्यवहार कर वा करा सकती है।

धरती फट गई बाबू छन्नूलाल जैनी जसवन्तनगर से सूचित करते हैं कि गत 28 जून को यहाँ से डेढ़ मील की दूरी पर अजनौरा ग्राम की धरती फट गई जिसमें एक गाय और एक मनुष्य धँस गए। अस्सी हाथ की रस्सी इस दरार में डाली गई थी, परन्तु यह इतने से भी अधिक गहरा ज्ञात हुआ।

[सद्धर्म प्रचारक, 15 जुलाई, 1908]

खुदीराम बोस पर अभियोग

बम-गोले से वध करने वाले खुदीराम बोस का अभियोग कलकत्ता हाई कोर्ट से भी निर्णीत हो गया। हाई कोर्ट के जजों ने भी फाँसी की ही आज्ञा उचित समझी। लेकिन बंगाल गवर्नमेन्ट की ओर से बहस करने वाले नार्टन साहब बैरिस्टर, जो आजकल कलकत्ता में बम बनाने वालों के विरुद्ध अभियोग चला रहे हैं, चाहते हैं कि खुदीराम बोस को तब तक फाँसी न दी जाए जब तक उसकी साक्षी कलकत्ता के बम बनाने वाले के विषय में न ले ली जाए। अतः अभी तक कुछ दिन और फाँसी पड़ने वाले को अपने दिन गिन-गिनकर काटने पड़ेंगे।

पूना में बम-गोला–गत ग्यारह जुलाई शनिवार को पूना के सदाशिव पीठ मुहल्ले में एक बम-गोले का घोर शब्द हुआ। पुलिस उस ओर दौड़ी, परन्तु फेंकने वाला पकड़ा न गया और न गोला से किसी मनुष्य वा पशु को हानि पहुँची क्योंकि गोले के निकट कोई प्राणी नहीं था। अंग्रेजों के विरुद्ध एक विज्ञापन भी एक दीवार में चिपका हुआ पास ही पाया गया। ये सब अशान्ति के लक्षण अंग्रेज तथा भारतीय दोनों को चिन्ता में डाल रहे हैं।

बम गोला बनाने वालों के सहायक–कलकत्ता मछुआ बाजार के रहने वाले प्रवास चन्द्रदेव नामक जमींदार भी समझे गए हैं। अतः अलीपुर के मजिस्ट्रेट की आज्ञानुसार गत 16 जुलाई को रात्रि समय 4 बजे वह पकड़े गए और उनके घर की पूरी खोज हुई। इनके विरुद्ध भी राजविद्रोह सम्बन्धी अभियोग चलाया जाएगा।

दक्षिण अफ्रीका में भारतवासियों का रहना अधिकतर कठिन हो रहा है। ट्रांसवाल में रेजिस्ट्रेशन एक्ट के अनुसार एक पढ़े-लिखे पारसी को आज्ञा मिली है कि वह एक सप्ताह में ट्रांसवाल छोड़कर निकल जाए। नेटाल की गवर्नमेन्ट ने आज्ञा दी है कि 1908 ईस्वी के बाद किसी भी भारतवासी को नेटाल में बसने की सनद न मिलेगी। लोग आश्चर्य करते हैं कि भारतवासी जबकि इंग्लिश्तान की प्रजा समझी जाती है तो ट्रांसवाल तथा नेटालादि उपनिवेशों में उनका इतना अधिक अपमान क्यों हुआ करता है ?

श्याम देश के समीप अनाम नामक एक देश फ्रांसीसियों के हाथ में है। वहाँ की प्रजा विद्रोह के लक्षण प्रकट कर रही है। अतः फ्रांसीसियों की रक्षा के

लिए फ्रांस देश की एक सेना अनाम को रवाना हुई है।

शाह फारस की बुद्धि मारी गई—अभी तक वह स्वदेश प्रेमी फारसी राजनीतिज्ञों को दबा ही रहे हैं जिससे उनकी प्रजा दिनोदिन उनसे बिगड़ती जाती है। तवरेज के वे फारसी जो राज शासन में संशोधन चाहते हैं और प्रजातन्त्र शासन प्रणाली के पक्षपाती हैं, शाह की सेना का सामना दृढ़ता के साथ कर रहे हैं। शाह के सेनापति रहीम खाँ ने कई महीनों से तवरेज नगर को घेर रखा है और उस पर गोले वर्षा रहे हैं, परन्तु विद्रोही प्रजा अभी तक सर न हुई। जिस राजा के रहते उसकी प्रजा अत्याचारियों से पीड़ित होती रहे वह राजा वास्तव में जीवित नहीं समझा जाता। वर्तमान शाह यदि प्रजा को पुत्रवत् समझते—जैसा कि प्रजा को राजा का समझना धर्म है तो वह अपने विषयानन्द को परित्याग अपना सारा बल अपनी प्रजा की रक्षा में लगाते और उन्हें इस योग्य बना देते कि इस घोर समय में वह रूसियों के पादाक्रान्त नहीं होती। परन्तु अब फारसियों की स्वतन्त्रता बच नहीं सकती। उनका राजा रूसियों का दास बन चुका, अब प्रजा को भी दास बनना पड़ेगा। अंग्रेज फारसियों को इस परतन्त्रता से बचा नहीं सकते। अतः सहस्रों वर्षों का एक स्वतन्त्र देश अब परतन्त्रता की बेड़ी में जकड़ा जाकर चिरकाल तक नाना प्रकार के क्लेशों को भोगता रहेगा। शोक !

'केसरी' सम्पादक पंडित बालगंगाधर तिलक के विरुद्ध राज विद्रोह का अभियोग बम्बई हाई कोर्ट में जस्टिस दावर के न्यायालय में चल रहा है। गत 15 जुलाई को महाशय तिलक ने उन सब कागजों को देखने की इच्छा प्रकट की जो उनके आफिस तथा निवासस्थान से पुलिस लाई थी। आज्ञा पाकर जब तिलक महाशय ने उन सब कागजों को देखा तो न्यायाधीश से कहा कि इसमें से कई कागज गुम हैं। न्यायाधीश के पूछने पर पुलिस ने कहा कि हाँ, कुछ कागज इसमें नहीं हैं। वे कागज फिर लाए गए और उन सबको महाशय तिलक ने देख लिया। 16 जुलाई को महाशय तिलक ने कथन किया कि मेरा राजनीतिक विचार उसी प्रकार का है जैसा कि मैंने अपनी साक्षी में गत मार्च मास में डिसेंट्रलाइजेशन कमीशन के सम्मुख वर्णन किया था। जबकि बम-गोला सम्बन्धी दुर्घटना बंगाल में संघटित हुई तब मैंने अपना यह कर्तव्य समझा कि मैं गवर्नमेन्ट को इसके कारण तथा इसके शान्ति के उपाय बतलाऊँ। 'पायोनियर', 'टाइम्स' आफ इंडियादि के अंग्रेज सम्पादकों ने यह कहना आरम्भ किया कि यह दुर्घटना देशी लोगों के राजनीतिक प्रचार का फल है। मैंने अपना कर्तव्य समझा कि इनके इन कथनों का उत्तर दूँ और जो कुछ मैंने लिखा उसका आशय यही था कि गवर्नमेन्ट को चाहिए कि वह कांग्रेस के प्रचार को न रोके, प्रत्युत अपने हाकिमों को दबाए और अपना संशोधन करे। हमारे लेखों का अनुवाद, अनुवादकर्ता ने बिगाड़ दिया है जिस कारण मैं दोषी समझा जाता हूँ, वास्तव में मैं दोषी नहीं हूँ। जिस प्रकार

इंग्लिश्तान में 1792 ई. में अशान्ति थी इस प्रकार की अशान्ति आज भारत में देखी जाती है। द्वितीय जेम्स के समय में 7 पादरी 1792 में डाक्टर सचिबरल तथा सेण्ट ऑफ केडीन के विरुद्ध जिस प्रकार अभियोग चलाए गए थे उसी प्रकार अभियोग आजकल यहाँ चलाए जा रहे हैं। जूरी को विचारना चाहिए कि मैंने इन लेखों को किस अभिप्राय से लिखा है। यदि मेरे लेख संशोधन के लिए लिखे समझे जाएँ तो मैं अपराधी सिद्ध नहीं हो सकता। मैंने अपने लेखों में जो समीक्षा की है उसका तात्पर्य यह भी है कि अंग्रेज और भारतवासियों के बीच जो अनबन बढ़ रही है वह तब तक नहीं मिटेगी जब तक भारतवासियों को क्रमशः स्वशासन के उपयुक्त न बनने देंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 22 जुलाई, 1908]

नेपाल के प्रधानमंत्री

नेपाल के प्रधानमन्त्री अब इंग्लिश्तान से भारत को शीघ्र ही लौटने वाले हैं। आपने प्रकट किया है कि उनके हृदय पर इंग्लिस्तान ने बड़ा प्रभाव डाला है। अब से वह भारत में स्थापित अंग्रेजी राज्य की सहायता पूर्वापेक्षा अधिकतर किया करेंगे और तिब्बतवालों को भी सहायक बनाएँगे। इंग्लिस्तान भी इस समय आश्चर्य भूमि बन रही है। कोई भारतवासी तो वहाँ जाकर अंग्रेजों का परममित्र बन जाता है और कोई उनकी भारत सम्बन्धी नीति को घोर घृणा की दृष्टि से देखने लगता है।

राज विद्रोह प्रचार–का जो अभियोग 'अरुणोदय' नाम मरहठी पत्र के सम्पादक काशीनाथ फड़के के विरुद्ध बम्बई के प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट अस्टन साहब के इजलास में चल रहा था–वह निर्णित हो गया। उक्त मजिस्ट्रेट ने उक्त सम्पादक को राजविद्रोही समझ चौदह मास कठिन कारागार का दण्ड दिया।

'हिन्दू स्वराज्य'–के भूतपूर्व सम्पादक उल्लू भाई थानावाला राजविद्रोह प्रचार के अपराध में मोरवी नगर में पकड़े गए हैं। यह अभियोग भी बम्बई के प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट के इजलास में ही चलेगा।

सात अगस्त–वह दिन हे जबकि बंग-विच्छेद के विरुद्ध बंगालियों ने महाशोक प्रकाशित किया था और जिस दिन स्वदेश वस्तु प्रचार की प्रतिज्ञा उन्होंने धारण की थी। यद्यपि इस समय बंगाल में इतना कोलाहल है तथापि बंगाली लोग उस दिन सार्वजनिक सभाओं में एकत्रित हो अपनी उक्त प्रतिज्ञा को स्मरण करना तथा कराना चाहते हैं।

रूम और जर्मनी का सम्बन्ध दिनोदिन घनिष्ट होता जाता है। 'रायटर' के तार समाचार से ज्ञात होता है कि सुल्तान रूम के निवेदन पर जर्मन सम्राट ने उन तुर्कों की रक्षा का भार अपने ऊपर लिया है जो इस समय अबीसीनिया, चीन तथा श्यामदेश में निवास करते हैं। फ्रांसीसी सुल्तान रूम की इस कार्यवाही से अप्रसन्न हो रहे हैं।

भारत का लेखा जिसे अंग्रेजी शब्दों में इंडियन बजट कहते हैं, प्रत्येक वर्षों की तरह इस वर्ष भी लन्दन की पार्लियामेन्ट में गत 22 जुलाई की रात को प्रस्तुत

किया गया था। सहकारी मन्त्री मिस्टर बुचानन ने इस बजट को प्रस्तुत करते समय एक वक्तृता भी दी थी जिसमें आपने कहा था कि इंग्लिश्तान में इस समय भारतीय राजनीतिक कोलाहल के विषय में जो इतनी चिन्ता हो रही है—सो ठीक नहीं है, इतनी चिन्ता की आवश्यकता नहीं। भारत गवर्नमेन्ट की धन सम्बन्धी दशा अच्छी है। भारत के प्रधान सेनापति लार्ड किचनर के मन्त्रणानुसार भारतीय सेनाओं को जो नूतन विधि के अनुसार सुसज्जित किया गया है उसमें व्यय तो अधिक पड़ा है, परन्तु सेना पूर्वापेक्षा अधिकतर बलवती हो गई है—जैसा कि गत सीमायुद्ध में सिद्ध हो चुका है। भारत के प्रत्येक भाग और प्रत्येक जाति के लोगों से आशाजनक पत्र इस विषय के आ रहे हैं कि वे बम सम्बन्धी तथा अन्यान्य राजनीतिक रोगों को दूर करने का यत्न करेंगे। भारत गवर्नमेन्ट उक्त प्रकार के उपद्रवों को दफन करने में सब प्रकार के उपायों को प्रयुक्त करेगी। अनेक शिक्षित भारतवासी जो स्वदेश शासन में भाग लेना चाहते हैं उनकी इच्छाओं का हमें सम्मान करना पड़ेगा। यदि हम इन लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर सकेंगे तो हमारा शासन सफल होगा। जो लोग राजभक्ति के साथ हमारा शासन स्वीकार कर रहे हैं उन्हें भारतीय जाति के शासन में हम भाग देने को तैयार हैं। यह भाग उन्हें किस प्रकार देना चाहिए—एक बड़ा कठिन प्रश्न है जिस पर विचार हो रहा है। यदि हम लोग विश्वास दिला दें कि हम इस प्रश्न को सच्चे भाव से हल करना चाहते हैं तो इसमें सन्देह नहीं कि भारत के नर्म दल (मॉडरेट पार्टी) के सब राजनीतिक हमारी सहायता करने लगेंगे। हमारा यह विश्वास नहीं हैं कि बंग-विच्छेद को यदि हम उठा दें तो बंगाल शान्त हो जाएगा। अतः हमें चाहिए कि बंगाल शासन को सुधारें और उस दुर्भाव को मिटाने का यत्न करें जो बंग-विच्छेद की आज्ञा को बुरी तरह के बर्ताव में लाकर पैदा किया गया है। नियमोबद्ध उन्नति की ओर चलने की राय लॉर्ड मिण्टो की है। डिसेंट्रलाइजेशन कमीशन से विशेष लाभ की सम्भावना है। भारत शासन में क्या-क्या उन्नति होनी चाहिए उसे भारत सचिव लॉर्ड मोर्ले थोड़े ही दिनों में प्रकाशित करेंगे। उक्त वक्तृता की समाप्ति कर मिस्टर लेस उठ खड़े हुए और बोलने लगे कि प्रारम्भिक शिक्षा का अधिक प्रचार भारत में होना चाहिए और इंग्लिश्तान में भारत के सम्बन्ध में जो राजविद्रोह की बातें फैलाई जाती हैं—उसे रोकना चाहिए। मिस्टर केयर हार्डी ने कहा कि हमने भारत में राजविद्रोह सूचक कोई भी व्याख्यान नहीं दिया, भारतवासियों के साथ अच्छा बर्ताव होना चाहिए। सर हेनरी काटन ने कहा कि भारतवासियों को उस देश की जजी, मजिस्ट्रेटी अधिक मिलनी चाहिए, मिस्टर तिलक के विरुद्ध जो अभियोग चलाया गया है वह ठीक नहीं। इससे गवर्नमेन्ट की हानि होगी। इत्यादि।

रूम देश की दशा शोचनीय हो रही है। वहाँ की कई सेनाएँ सुल्तान के विरुद्ध बागी हो गई हैं और उन्होंने अपने कई अफसरों को मार डाला है। सुना

जाता है कि रूम की राजनीतिक संशोधक मंडली इन उत्पातों का कारण है। यूनानी लोग उक्त संशोधक मंडली को गोले-गोली आदि युद्ध के सामानों की सहायता कर रहे हैं। सुल्तान ने अप्रसन्न होकर अपने प्रधानमन्त्री (वजीरे आजम) को पदच्युत कर दिया है और उनके स्थान में सय्यद फाशा को वजीरे आजम बनाया है।

[सद्धर्म प्रचारक, 29 जुलाई, 1908]

सुल्तान रूम का राज्य बच गया

मुसलमान जगत् के सबसे बड़े वर्तमान बादशाह सुल्तान रूम हैं। परन्तु इनकी शक्ति को रूम ने, यूनान ने और अन्यान्य कई क्रिस्तान देशों ने क्रमशः घटाकर इनके राज्य से बल्गेरियादि कई देशों को पृथक् कर दिया था। इतना ही नहीं जो क्रिस्तान सुल्तान के राज्य में रहते थे वे सब-के-सब स्वतन्त्रता प्राप्ति की इच्छा से क्रिस्तान सम्राटों को बारम्बार सुल्तान के विरुद्ध उभाड़ा करते थे। परन्तु सुल्तान रूम जिसे दबदबे के साथ अपनी प्रजा पर शासन करते थे और अपनी सेना को जिस ढंग से सुसज्जित रखते थे—उससे किसी का हौसला नहीं पड़ता था कि एकाएक टर्की देश (रूम) राज्य को पददलित करे। यूरोप के क्रिस्तान बहुत दिनों से टर्की देश को सिकमैन कहते आते हैं जिससे उनका तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार रुग्ण पुरुष एक-न-एक दिन कालग्रस्त हो जाता है उसी प्रकार टर्की भी एक-न-एक दिन अपनी स्वतन्त्रता खो बैठेगा। परन्तु मनुष्य का अनुमान ऐसे विषयों में सर्वथा ठीक नहीं हुआ करता। उसी टर्की देश के भीतर से थोड़े ही दिनों में ऐसे नवयुवक पुरुष निकले जो इंग्लिश्तान, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों में जाकर प्रजातन्त्र शासन प्रणाली के नियमों को सीखने लगे और उक्त देशों से लौटकर टर्की में इस शासनप्रणाली की उत्तमता मुसलमानों को बतलाने लगे। थोड़े ही दिनों में यह शिक्षा टर्की की प्रजा, शासक मण्डल तथा सेना में भी प्रचरित हो गई जिसका परिणाम यह हुआ कि गत जुलाई मास से बल्गेरिया, मैसीडोनिया तथा टर्की के सीमावर्ती अनेक देशों में स्थित टर्की सेना बागी होने लगी। सैनिकों से सुल्तान के प्रेमपात्र अनेक सेनापतियों को मार डाला। इन सब समाचारों ने सम्पूर्ण टर्की देश में कोलाहल मचा दिया। नवयुवक टर्कीवासी इस समय टर्की में पार्लियामेन्ट स्थापन के लिए कटिबद्ध हो गए। टर्की में अब ऐसा समय उपस्थित हुआ जबकि या तो सुल्तान अपने देश में नवयुवक पार्टी के विरुद्ध हो अपने देश में मुसलमानों के बीच घोर युद्ध कराते और इस प्रकार अपने देश को निर्बल बनाकर उसे क्रिस्तान सम्राटों के आधीन होने देते अथवा अपने झूठे अभिमान को छोड़कर नवयुवक टर्की पार्टी की बातें को मान अपनी प्रजा को पूर्ण बलवान बनने देते। सुल्तान ने इस परीक्षा के समय में जैसी बुद्धिमता दिखाई है उससे बोध होता है कि वह प्रताहितैषी राजा

की उपाधि कारण करने योग्य हैं। सुल्तान ने अपनी प्रजा में खलबली देख सबसे पहले यह काम किया कि उनका प्रधानमन्त्री, जो प्रजातन्त्र शासन प्रणाली के विरुद्ध था, उसे पदच्युत कर एक अन्य उदार पुरुष को प्रधानमन्त्री बनाया। इसी प्रकार मन्त्री दल के अन्य कई पदों में भी परिवर्तन किया। पुनः एक घोषणा प्रकाशित की कि हम अपनी प्रजा को अधिकार देते हैं कि वह अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करे और एक नवम्बर 1908 को प्रजा प्रतिनिधि सभा अर्थात् पार्लियामेन्ट एकत्रित हो और यह सिद्ध करने के लिए कि वह अपनी प्रजा को धोखा नहीं देते शेख इसलाम नाम धर्माचार्य के सम्मुख कुरान लेकर शपथ खाई कि वह जो स्वत्व प्रजा को दे रहे हैं सच्चे भाव से देते हैं। यह समाचार ज्यों ही शेख इसलाम ने प्रजा को सुनाया त्यों ही टर्की देश में आनदोत्सव मनाने लगा। इस आनन्द में मुसलमान और क्रिस्तान प्रजा परस्पर के द्वेष को बिलकुल भूल गई और सबों ने रात्रि समय अपने गृहों को दीपमाला से सुसज्जित किया। बधाई के तार देश की चारों दिशाओं से आने लगे। सहस्रों मनुष्यों के झुंड सुल्तान को बधाई देने के लिए राजमहल में पधारे जिनका सत्कार प्रधानमन्त्री ने किया। इस प्रकार इस समय सारे टर्की देश में आनन्द का सागर उमड़ रहा है। उमड़े क्यों न जबकि राजनीतिक स्वतन्त्रता का स्वाद अभी से वहाँ की प्रजा लेने लगी। ईश्वर सब सम्राटों को सुबुद्धि दे, ताकि वे अपनी सब प्रजाओं को उक्त स्वाद लेने योग्य बना दे तथा प्रजा अपने पुरुषार्थ से भी उक्त अधिकार के योग्य बन जाए।

तिलक महाराज को जो-जो कठिन दण्ड मिला उससे बम्बई में प्रायः एक सप्ताह तक खलबली मची रही। कभी बीस सहस्र, कभी पन्द्रह सहस्र, कभी दो-तीन सहस्र पुरुषों ने मिलकर बम्बई के भिन्न-भिन्न भागों में अंग्रेज, पुलिस दल तथा सैनिकों पर ईंटे चलाईं, पुलिस ने भी प्रजा के इन समूहों पर गोलियाँ चलाईं और प्रायः दस पुरुषों को जान से मार डाला और अनेक को घायल किया। इन मामलों में एक पन्द्रह वर्ष की कन्या भी है। इन घटनाओं के देखने से बोध होता है कि तिलक महाराज की प्रतिष्ठा बम्बई के हिन्दुओं के हृदय में बहुत है।

[सद्धर्म प्रचारक, 5 अगस्त, 1908]

सुल्तान रूम और उनकी प्रजा

ज्ञात होता है कि सुल्तान रूम टर्की के उन नूतन मुसलमान राजनीतिज्ञों की पूरी सम्मति मानने लगे हैं जो अपने देश में पार्लियामेन्ट स्थापन करना चाहते हैं। इस कारण पुराने मन्त्रीगण त्यागपत्र (इस्तीफा) दे-देकर कुस्तुनतुनिया से भाग रहे हैं। भागने का कारण यह है कि पुराने मन्त्री दल ने टर्की की प्रजा पर अत्याचार अधिक किया है। जिससे प्रजा उनसे अत्यायारों का बदला लेना चाहती है। पुराने प्रधानमन्त्री इज्जतपाशा भागकर पहले जर्मन राजदूत के भवन में छिपे थे, वहाँ से भागकर एक अंग्रेजी जहाज पर सवार हुए और ऐड्रियानोपल स्थान की ओर रवाना हो गए। पुराना अत्याचारी फहीमपाशा, जो यमीशर स्थान में था, उस पर प्रजा एकाएक टूट पड़ी और उसे घायल कर दिया। नए उदार राजनीतिज्ञों के विश्वास पात्र कियामीलपाशा नूतन मन्त्री दल निर्माण कर रहे हैं, पुराने दो मन्त्री तथा पुराने कई अन्यान्य उच्च कर्मचारी बन्दी बनाए गए हैं (कैद किए गए हैं)। जिस समय पुलिस इन्हें कैदकर लिये जाती थी; सर्व साधारण प्रजा इनको देखकर हँसी करती थी। परन्तु अभी तक टर्की की प्रजा को परस्पर में लड़ा देने का उद्योग टर्की के भीतरी तथा बाहरी शत्रु करते ही जाते हैं। टर्की राज्य के प्रधान बन्दरगाह ऐड्रियानोपल की महती सेना को किसी ने भड़का दिया था और वह सेना नूतन उदार राजनीतिज्ञों के विरुद्ध हो गई थी। फिर सोच विचारकर उक्त सेना ने प्रायः 300 प्रतिनिधि निर्वाचित किए और उन्हें सुल्तान रूम की सेवा में भेजा। प्रतिनिधि गण जब राजधानी कुस्तुनतुनिया (कांस्टैटिनोपल) में पहुँचे तो सुल्तान ने उनको अपने थालदीज नाम राजभवन में आमन्त्रित कर भोज दिया और उनके मुख्य पुरुष से बातें करते हुए कहा कि तुर्क सैनिकों को किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वे हमारे पुत्रवत् हैं उन्हें किसी प्रकार का क्लेश न होगा। उनका पिछला वेतन जितना बाकी है वह सब उन्हें दे दिया जाएगा और उनमें जो वृद्ध हो गए हैं उनसे अब काम नहीं लिया जाएगा। प्रत्युत उन्हें अब शेष जीवन के लिए छुट्टी मिल जाएगी। हमारे योद्धाओं तक हमारा यह सन्देश पहुँचा दो और उनसे हमारा सलाम कहो। उक्त प्रतिनिधिगण जब कुस्तुनतुनिया से ऐड्रियानोपल में लौटे और तटस्थ सेना को सुल्तान का सन्देशा सुनाया तब तो सेना आनन्द से फूल उठी और सुल्तान

रूम का जयजयकार मनाने लगी। कुस्तुनतुनिया में जो 9000 तुर्कों की एक बलवती सेना है वह भी नूतन उदार भाव के राजनीतिज्ञों की पक्षपाती हो गई है। सुल्तान इस समय अपनी प्रजा के साथ बड़ी उदारता दिखा रहे हैं। आर्मीनिया के दो लाख क्रिस्तान, जो पुराने राजमन्त्रियों के अत्याचार से दुखी होकर अमेरिका देश को भाग गए थे, सुल्तान ने घोषणा प्रकाशित की है कि उनका सब अपराध क्षमा किया गया। वे अपने देश आर्मीनिया को लौट आएँ। सुल्तान के अनेक राजनीतिक अपराधी तथा अन्यान्य प्रकार के अपराधी प्रायः 950 जो बन्दीगृहों में अपने दुख के दिन काट रहे थे उनके अपराध क्षमाकर उन्हें बन्दीगृहों से छोड़ दिया। इस प्रकार सुल्तान की बुद्धिमता तथा उदार दल के तुर्कों के उद्योग से टर्की की प्रजा पर जो अनेक प्रकार के अत्याचार हुए हैं, उनका भजन हो रहा है।

अंग्रेजी राज के विरोधी–अमेरिका देश में बैंकुवर नाम एक नगर है वहाँ से लन्दन नगर के 'टाइम्स' नामक समाचार पत्र का एक संवाददाता लिखता है कि पैसिफिक महासागर के किनारे अमेरिका के कोलम्बिया प्रदेश में कुछ भारतवासी ऐसे एकत्रित हो रहे हैं जो भारत से अंग्रेजी राज्य को उच्छिन्न करना चाहते हैं। अभी तक इनकी संख्या 1500 तक ही पहुँची है। इनका प्रधान स्थान सियाटिल है जहाँ से इनका विद्वेषवर्दक समाचार पत्र की हि ोस्तान प्रकाशित हुआ करता है, कुछ भी पता नहीं लगता कि इन्हें अपना कार्य चलाने के लिए द्रव्य कहाँ से मिलता है। इनका एक मुखिया आजकल न्यूयार्क नगर में गया है जहाँ अंग्रेजों से शत्रुता रखनेवाले कुछ अमरीकन रहते हैं। उक्त संवाददाता यह भी लिखता है कि इन हिन्दुस्तानियों के ऐसे द्वेषी बनने का मुख्य कारण यह है कि कोलम्बिया तथा अन्यान्य अंग्रेजी राज्यों में हिन्दुस्तानियों के साथ बुरा सलूक किया गया है।

भारतवासियों के साथ सलूक जो आजकल दक्षिण अफ्रीका के अंग्रेजी उपनिवेशों में हो रहा है उसे अंग्रेजी पार्लियामेन्ट के सभासद् कर्नल सीली अच्छा नहीं समझते। उन्होंने पार्लियामेन्ट के सम्मुख कथन किया है कि अंग्रेजी उपनिवेशों को अधिकार है कि वे अब अपने देशों में नए भारतवासियों को न आने दें, परन्तु जो पहले से बसे हैं उनको पूरा अधिकार देना चाहिए। पार्लियामेन्ट इस विषय में विचार कर रही है।

आकाशयान–जिस सुविधा के साथ प्राचीन काल में भारतवासी चलाते थे उस सुविधा के साथ यूरोप निवासी अभी तक नहीं चला सके। तथापि उनका प्रयत्न सराहनीय है। हाल में ही काउन्ट जेपलिन नामक एक जर्मन विज्ञानी आकाशयान पर चढ़कर उड़े थे। कई मीलों तक जो जेपलिन अपने आकाशयान पर उड़ते हुए चले गए, परन्तु मेयेस स्थान के निकट उनके यान की इंजिन बिगड़ गई जहाँ उतरकर उन्होंने उसे सुधार लिया और फिर उड़े। कुछ दूर जाकर उन्हें तूफान का सामना करना पड़ा। इस कारण स्टरगी स्थान के निकट फिर उतरे।

यहाँ के सिपाहियों ने यान के रस्सों को पकड़ लिया, परन्तु उनसे आकाशयान रुक न सका और आकाश को उड़ गया तब इसमें आग लग गई और जलकर नष्ट हो गया। प्रायः चालीस सहस्र नर-नारी इस दुर्घटना को देखते रहे, परन्तु किसी से कुछ बन न पड़ा। इस आकाशयान के जल जाने से जेपलिन का कई लाख रुपया नष्ट हो गया है और वह बहुत उदास हैं। जर्मन गवर्नमेन्ट ने उन्हें प्रातः तीन लाख की सहायता देने की प्रतिज्ञा की है। जहाँ की गवर्नमेन्ट अपनी प्रजा को दुखों के साथ इस प्रकार सहानुभूति प्रकट करती है वहीं सुख श्रीवर्दन और शान्ति संस्थापन होता है।

वध–शिमला के जो तार समाचार 'एम्पायर' में छपे हैं उससे ज्ञात होता है कि जिस हूपर नामक एक अंग्रेज स्त्री को एक मुसलमान ने मार डाला, सुना जाता है कि बधिक ने अपना अपराध भी स्वीकार कर लिया। यह भी ज्ञात हुआ कि लक्ष्मीदास नाम एक हिन्दू को कलेन साहब नामक एक अंग्रेज ने मार डाला। साहब अपने इजहार में बयान करते हैं कि लक्ष्मीदास से मेरी कोई भी शत्रुता न थी, लेकिन मैं शराब के नशे में चूर था।

[सद्धर्म प्रचारक, 12 अगस्त, 1908]

युद्ध की तैयारियाँ

जर्मनी जंगी जहाजों को जिस शीघ्रता के साथ बना रहा है उससे चिन्तित होकर अंग्रेज राजनीतिज्ञों ने इंग्लिश्तान के जंगी जहाजों की संख्या वृद्धि के लिए जो बारम्बार प्रस्ताव किए हैं, वे प्रकाशित हो चुके हैं। आस्ट्रिया की राजसभा तथा इटली की राजसभा ने अपने-अपने जंगी जहाजों की वृद्धि के लिए अपनी-अपनी वर्तमान योग्यतानुसार व्यय करना स्वीकार कर लिया है। अब समाचार प्रकाशित हुआ है कि फ्रांस की जलयुद्ध सभा प्रायः 45 नए जंगी जहाज बनाने की इच्छा करती है जिसके लिए प्रायः डेढ़ अरब रुपया फ्रांस की राजसभा को व्यय करना पड़ेगा। इन समाचारों के श्रवण करने के स्वभावतः प्रश्न उठता है कि उक्त देशों की राजसभाएँ जंगी जहाजों के बनाने में इतना रुपया क्यों व्यय करना चाहती है ? जबकि उक्त देशों में लक्षों प्रजा इस प्रकार की है कि उसे पेट भर अन्न नहीं मिलता और लक्षों प्रजा मूर्ख बनी हुई है। तो उक्त देशों की राजसभाएँ प्रजा को सुशिक्षित करने, दीन प्रजा के उद्यम के लिए विविध प्रकार के कार्यालय खोलने तथा अंधे, लंगड़े, लूले और वृद्ध प्रजावर्ग को अन्नदान करने में अपने उन रुपयों को व्यय क्यों नहीं करतीं जिन्हें वे जंगी जहाजों की वृद्धि में व्यय कर रही हैं ?

उत्तर स्पष्ट है कि उक्त देश एक-दूसरे का विश्वास नहीं करते। ज्यों ही एक देश में कुछ भी युद्ध सम्बन्धी पदार्थों की वृद्धि हुई, त्यों ही दूसरा डर जाता और समझता है कि कहीं युद्ध में हम इससे परास्त न हो जाएँ और शीघ्र ही अपनी युद्ध सम्बन्धी सामग्रियाँ भी बढ़ाने लगता है। धार्मिक भाव के अभाव के कारण यूरोपियनों के बीच जो यह परस्पर का अविश्वास फैल रहा है, न मालूम एक दिन यह कैसा भयंकर परिणाम प्रकट करेगा।

लॉर्ड रोजबेरी, जो इंग्लिश्तान के एक सुप्रसिद्ध राजनीतिक हैं। उन्होंने गत 4 जून को लन्दन में एकत्रित प्रेस कान्फ्रेंस के बीच व्याख्यान देते हुए कहा है कि "इस समय जैसे घोर संग्राम की तैयारी यूरोप में दिखाई देती है वैसी तैयारी पूर्व कभी भी नहीं हुई थी।...यूरोप की दया शोचनीय है...यूरोप गड़गड़ाता हुआ असभ्यता की खाई में गिर रहा है।" लार्ड रोज़बेरी सच कहते हैं। जहाँ अविश्वास का चक्रवर्ती राज्य है, जहाँ उपदेश और शिक्षा के द्वारा भ्रातृभाव एवं परस्पर विश्वास

का भाव दृढ़ होने के बदले रक्तपात का भाव दृढ़तर होता जाता है, वहाँ निस्सन्देह मनुष्य वेषधारी अधिक पशु निवास कर रहे हैं। ऐसी सभ्यता हमसे दूर रहे। वही पुरानी सभ्यता, जिसको धारण कर प्राचीन आर्य मनुष्य मात्र को बन्धु समझते थे, मनुष्य मात्र को वेद की शिक्षा देकर एक को दूसरे का प्यारा बना देते थे--हमारे लिए भूषण होवे। ताकि आर्यगण संसार को उपदेश देकर पुनः उसे सन्मार्ग पर लाएँ और लोगों के हृदयों को व्यग्रता दूर हो जाए।

सम्राटों के सम्मिलन–रूस के जार जर्मन सम्राट से मिलकर फ्रांस राजसभा के प्रधान से मिलेंगे और पुनः महाराज एडवर्ड से मिलकर जर्मन सम्राट से मिलेंगे। जर्मन समाचार पत्र लिखते हैं कि यदि जार रूस जर्मन सम्राट के साथ पूर्ण प्रेम कर ले तो फारस और टर्की के मामले में रूस को जर्मनी से बड़ी सहायता मिलेगी। रूसी पत्र भी लिखते हैं कि रूसियों को अपने पड़ोसी जर्मनीवालों के साथ मिलने से बड़ा लाभ होगा। लोग अपने मन में प्रश्न करते होंगे कि सम्राटों के वर्तमान असाधारण सम्मिलनों का कारण क्या है ? हो-न-हो किसी बड़ी बात का निर्णय ये लोग शीघ्र करना चाहते हैं। ध्यान देकर यदि देखा जाए तो ज्ञात होगा कि क्रीट के मामले पर यदि यूरोपीय सम्राट ठीक-ठीक विचार करेंगे तो यूनान और टर्की के बीच भयंकर संग्राम उपस्थित हो जाएगा, अतः इस विषय पर दूसरी बात यह है कि रूम के सुल्तान अब्दुल हमीद के पदच्युत हो जाने से टर्की देश में बगदाद रेलवे बनाकर जर्मनीवाले जो राजनीतिक तथा वाणिज्य सम्बन्धी लाभ उठाना चाहते थे वह लाभ अब वे उठा न सकेंगे। जिस कारण जर्मनीवाले तुर्कों से अप्रसन्न हो रहे हैं। इस क्षति की पूर्ति के विषय में सम्भव है कि जर्मन सम्राट जार रूस से बातें करें।

तृतीय बात यह है कि फारस का मामला अब पक गया है। रूसी सेना फारस के तबरेज नगर में पहुँच भी चुकी है, रूसियों की इच्छा अनेक दिनों से ऐसी हो रही है कि वे फारस को येन-केन-प्रकारेण अपने आधीन कर लें और यदि जापान के साथ संग्राम करने में रूस को घोर क्षति उठानी न पड़ती तो रूस अब तक अवश्य ही फारस पर अपना पूरा अधिकार जमा लेने का प्रबन्ध कर लेता। परन्तु रूस की इस इच्छा की पूर्ति में अंग्रेज बाधक बन रहे हैं। वे कहते हैं कि फारस का शासन फारसियों के हाथ में रहने दो। हम तुम स्वतन्त्रतापूर्वक फारस में वाणिज्य करें और वाणिज्य ही द्वारा लाभ उठाते रहें। सम्भव है कि रूस को अंग्रेजों की सुसम्मति अब भाती न हो और वह इस मामले में जर्मनीवालों से मदद लेना चाहते हों। चाहे जो कुछ हो, समय बड़ा बेढब है। चाहे यूनान के मामले में किसी यूरोपीय सम्राट ने यूनानियों को मदद दी अथवा फारस को अपने आधीन करने में रूसियों ने किसी अन्य सम्राट की सहायता ली तो यूरोपीय सम्राटों के बीच घोर युद्ध आरम्भ हो जाएगा।

फारस में अशान्ति–यद्यपि शाह फारस ने घोषणा प्रकाशित कर दी है कि वह अपनी प्रजा को पार्लियामेन्ट देंगे और बहुत-सी प्रजा शाह की इस प्रतिज्ञा पर विश्वास भी करती है। परन्तु बहुत-सी प्रजा उनकी ऐसी भी है जो उनकी प्रतिज्ञा पर विश्वास नहीं करती। यही कारण है कि फारस के अनेक स्थानों में अभी तक अशान्ति बनी हुई है। फारस के दक्षिण में जो 'बूशहर' नामक नगर है उस पर तंजिस्तानी नाम विद्रोही फारसी प्रजा ने हाल ही चढ़ाई कर दी थी। परन्तु शाह के गवर्नर, जो उक्त नगर में रहते हैं, उनकी सेना ने तंजिस्तानियों के साथ घोर युद्ध कर उनहें परास्त कर दिया और उनके मुखिया सरूयद मुर्तजा को बन्दी बना लिया (कैदकर लिया)।

टर्की–टर्की की पार्लियामेन्ट ने अपनी जल, थल सेनाओं को उन्नति के लिए छः करोड़ रुपया व्यय करना निश्चित किया है। टर्की के गत विद्रोह के समय अडाना नगर में जो विद्रोह हुआ था उसकी जाँच अभी तक हो रही है। 445 मुसलमान तथा 117 ईसाई आदि अन्यान्य मतावलम्बी इस विद्रोह में सम्मलित होने के अपराध में पकड़े गए हैं। मीजान नामक तुर्की समाचार पत्र का सम्पादक विद्रोहियों का सहायक समझा गया है। और उसे आजन्म कठोर कारावास का दण्ड मिला है।

अमीर काबुल के विरुद्ध अभिसन्धि–अमीर काबुल के विरुद्ध अभिसन्धि करने के अपराध में अनेक अफगान सरदारों के साथ जो पंजाबी मुसलमान पकड़े गए हैं उनका अभियोग अभी तक चल रहा है। अब क्वेटा तथा पेशावर के काबुली पोस्टमास्टरों के विषय में आज्ञा मिली है कि वे उक्त पंजाई मुसलमानों के विषय में कोई पत्र भारत से काबुल को रवाना न करें।

आर्यसामाजिक और सनातनी–होशियारपुर नगर में आर्यसामाजिक पुरुषों और उनके पौराणिक भाइयों के बीच जो झगड़ा चल रहा है वह अवश्य ही शोकप्रद है। परस्पर के झगड़े आपस में निवृत्त न होकर जब, मजिस्ट्रेट के इजलास में पहुँचे तो उभय पक्ष के लोगों को दंड भोगना पड़ा। तथापि लोगों की आँखें न खुलीं। हमारे आर्य भ्राताओं को समझना चाहिए कि पौराणिक जो उन पर अत्याचार करते हैं, वह सबकी अज्ञानता है। वह अभी तक यह नहीं समझते कि कौन उनका कल्याण करने वाला और कौन उनका अकल्याण चाहने वाला है। अतः पौराणिक भाइयों को समझना चाहिए कि जिस आर्यधर्म के सिद्धान्त ने एक बार किसी के हृदय में स्थान बना लिया वह उस पुरुष को भयभीत नहीं होने देगा, चाहे उस पर कितना भी प्रहार किया जाए। परन्तु वह उस सिद्धान्त हो नहीं छोड़ेगा। अतः उस पर अत्याचार करना व्यर्थ है।

रूसी डूमा में कोलाहल–रूस की डूमा नामक राजसभा में एक धर्म विषयक प्रश्न पर इतना विवाद हुआ कि सभा कि प्रधान सभा से उठकर चले गए। सभासदों में मार-पीट हो जाती, परन्तु कुछ मध्यस्थों ने बीच में पड़कर ने बीच में पड़कर

कुछ सभासदों को पृथक्-पृथक् कर दिया। यूरोपीय राजसभाओं के ऐसे ही कुव्यवहारों से यूरोपियनों के अनुयायी अनेक भारतीय राजनीतिकों की भी अपनी प्रजा सभाओं में कभी-कभी कोलाहल मचा दिया करते हैं, परन्तु ग्रहण गुणों का होना चाहिए, न कि अवगुणों का।

[सद्धर्म प्रचारक, 16 जून, 1909]

फारस की वर्तमान दशा

सिपहदार खाँ सरदार अत्साद तथा सरदार मन्सूर, जिन्होंने अपनी सेनाओं के बल से शाह फारस को राजसिंहासन से उतार रूसियों की शरण में भागने पर मजबूर कर दिया था और उक्त शाह के प्रायः बारह वर्ष के लड़के को राजसिंहासन पर बिठा भारत के शासन के लिए राजसभा स्थापित करवाई थी। इन दिनों फारस की उन्नति के लिए पूर्णोद्योग कर रहे हैं। फारस की प्रायः कुल सेनाएँ इन्हीं सरदारों के आधीन हैं। फारस का राजकोष द्रव्यविहीन हो रहा है और सैनिकों का वेतन अनेक दिनों से चुकाया नहीं गया है। अतः कई फारसी राजनीतिज्ञ सम्मति देते हैं कि फारस गवर्नमेन्ट को अंग्रेजों वा रूसियों से ऋण लेकर इन सिपाहियों का वेतन चुका देना चाहिए। जिसमें सिपाही विद्रोह न करें। परन्तु अन्यान्य फारसी राजनीतिज्ञ कहते हैं कि हम लोगों को टर्की देश से शिक्षा ग्रहण करते हुए अपने यत्नों से ही अपने पैरों पर खड़ा होने का उद्योग करना चाहिए। प्रायः दो वर्ष से जो मालगुजारी तहसीली नहीं गई है उसकी वसूली का प्रबन्ध करना चाहिए। यदि ये रुपए वसूल हो जाएँ तो सेना के सिपाहियों तथा अन्यों का वेतन चुकाना कुछ भी कठिन न होगा। यह भी सुना जाता है कि यदि फारस गवर्नमेन्ट को रुपए की अधिक तंगी होगी तो उक्त तीनों सरदार, जो बड़े द्रव्यवाले भी हैं, अपनी गवर्नमेन्ट को पर्याप्त धन ऋण दे सकते हैं जिससे किसी प्रकार की बाधा राजशासन में नहीं पड़ेगी। प्रजा उक्त तीनों सरदारों तथा सम्पूर्ण मन्त्रीदल से प्रसन्न दिखती है, अतः भावी विद्रोह की अब सम्भावना नहीं है। फारस गवर्नमेन्ट ने यूरोपियनों को सूचित कर दिया है कि वे अपने माल और जान के लिए किंचित् भी भय न करें, फारसी सेना उनकी सदैव रक्षा करती रहेगी। फारस के पदच्युत शाह के लिए फारस गवर्नमेन्ट ने प्रायः ढाई लाख रुपए वार्षिक पेंशन नियत कर दिया है और अब वह फ़ारस छोड़कर किसी अन्य स्थान के लिए शीघ्र ही प्रस्थान करेंगे। उक्त गवर्नमेन्ट अपने राज्य में रेलवे लाइनें बनाने का विचार अभी से कर रही है, जिनके द्वारा विशेष धनागम की सम्भावना है।

मोरक्को में युद्ध–अभी तक मूर नामक मुसलमानों तथा स्पेनवालों के बीच युद्ध हो रहा है। गत 31 अगस्त को मूरों की एक बड़ी सेना ने मार्शिका स्थान

के निकटवर्ती स्पेनी सेना पर आक्रमण कर दिया था। कई घंटों के घोर युद्ध के अनन्तर स्पेनी गोलन्दाजों ने मूरों को मार हटाया।

टर्की के सुल्तान—अपनी राजधानी से जूसा नगर की जेयारत को पधारे हैं। यहाँ की मुसलमान तथा क्रिस्तान प्रजा ने आपका बड़े प्रेम से स्वागत किया था जिससे सुल्तान को बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। इनके बड़े भाई जब टर्की के सुल्तान थे तो अपने प्राणों के भय से प्रायः अपनी राजधानी और विशेषकर अपने महलों में ही रहा करते थे। उन्होंने अनेक नर-नारियों पर अत्याचार किया था कि जिस कारण आत्मा कम्पायमान हुआ करता था। वर्तमान सुलतान को किसी का भय नहीं है इसी कारण साधारण शरीर रक्षकों के साथ निर्भय घूमते हैं।

[सद्धर्म प्रचारक, 8 सितम्बर, 1909]

मूर और स्पेनवालों का घोर युद्ध

उत्तर अफ्रीका में भूमध्य सागर के किनारे जो मुसलमानों का मोरक्को देश है वहाँ के कुछ पहाड़ी मुसलमान ऐसे हैं जो अफरीदियों की तरह अपने को स्वतन्त्र मानते हैं। मोरक्को के सुल्तान मौलाहफीद भी अभी तक उन पर अपना शासन जमा न सके हैं। इन पहाड़ी मुसलमानों तथा स्पेनवालों का झगड़ा कुछ दिनों से चल रहा है और यह झगड़ा दिनोदिन घोर रूप धारण करता जाता है।

स्पेनवालों ने मूर मुसलमानों के जेलुअन दुर्ग को जब जयकर लिया तो मूरों ने स्पेनवालों के गुरुगु किले पर गत 23 सितम्बर को रात्रि के समय दो बजे ही चढ़ाई कर दी। छः बजे प्रातःकाल तक घोर युद्ध होता रहा और तदनन्तर दिन-भर साधारण लड़ाई होती रही। इस युद्ध में स्पेनवालों के छः मनुष्य मारे गए तथा 19 घायल हुए। परन्तु गुरुगु पर्वत का शिखर भाग भी (जो इस युद्ध के समय तक मूरों के अधीन था) अब स्पेनवालों के अधीन आ गया। यह समाचार ज्यों ही स्पेन की राजधानी मेड्रिड में पहुँचा त्यों ही सारा नगर आनन्द से भर गया और लोग जगह-जगह उत्सव मनाने लगे। परन्तु स्पेनवालों का यह उल्लास चिरस्थायी न रहा, क्योंकि मूर लोगों के जेलुअन दुर्ग से जिसे स्पेनवालों ने पहले ही जय कर लिया था। जब स्पेनी सेना चारों ओर फैलने लगी तब मूर लोगों ने भी चारों ओर से इन सेनाओं को घेरना आरम्भ किया। यद्यपि यहाँ की स्पेनी सेना बड़ी बलवती थी जिसमें कई हजार पैदल, घुड़सवाल तथा गोलन्दाज थे और जिन्हें स्पेनी सेना के प्रसिद्ध जनरल विकारियो स्वयं चला रहे थे। तथापि मूरों ने स्पेनी सेना के नाक में दम कर दिया। स्पेनी लोग भी बड़ी बहादुरी के साथ लड़े और मूरों के प्रत्येक आक्रमण को हटा दिया। परन्तु इस युद्ध में स्पेनी सेना के जनरल विकारियो तथा उनके दो कप्तान व दो लेफ्टिनेंट और चौदह सैनिक मारे गए और 150 स्पेनी योद्धा घायल हुए। परन्तु इस युद्ध में मूर भी बहुत मारे गए। उनके मरे तथा घायल योद्धाओं की संख्या ठीक-ठीक ज्ञात न हुई। मूरवालों ने यूरोप के सम्राटों को लिखा था कि स्पेनवाले जो पहाड़ी मेरों पर अत्याचार कर रहे हैं उससे उन्हें रोका जाए। परन्तु यूरोप के सम्राटों ने उत्तर दिया कि यह मामला मोरक्को और स्पेन का ही है। अतः हम लोग इसमें कुछ हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं। इससे ज्ञात होता है

कि यह युद्ध अभी कुछ समय तक चलता रहेगा।

अमीर काबुल ने अपनी सारी प्रजा को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित रखने के लिए आज्ञा दी है कि बन्दूकों के मूल्य बहुत अधिक न लिये जाएँ। विशेष प्रकार की बन्दूकों का मूल्य नियत कर उसकी सूचना अमीर काबुल ने दुकानदारों को दे दी है। और ताकीद की है कि इससे अधिक मूल्य न लिये जाएँ। यद्यपि बन्दूकें काबुल में ही बनाई जाती हैं तो भी विदेशों से भी बन्दूकें अभी तक काबुल में आ रही हैं। 'पायोनियर' को खबर मिली है कि फारस की खाड़ी की ओर विदेशों से बन्दूकें अभी काबुल में आ रही हैं। और कम-से-कम एक जहाज से बन्दूकें बलूचिस्तान के समीपवर्ती मकरान प्रदेश में उतर भी गई हैं।

दक्षिण अफ्रीका में अत्याचार–दक्षिण अफ्रीका में भारतवासियों पर जो अत्याचार हो रहा है उसका उल्लेख कई बार हो चुका है। अब भारत के भिन्न-भिन्न नगरों की प्रजा सभाओं द्वारा उन अत्याचारों पर शोक प्रकाशित कर रही है। गत 27 सितम्बर को पूना नगर में शोक प्रकाशित करने के लिए एक महती सभा हुई थी जिसके प्रधान सुप्रसिद्ध डाक्टर भण्डारकर बनाए गए थे। सभा ने एक प्रस्ताव द्वारा पार्लियामेन्ट तथा राजमन्त्री दल से दक्षिण अफ्रीकास्थ भारतवासियों के दुख निवारणा से प्रार्थना की।

[सद्धर्म प्रचारक, 6 अक्टूबर, 1909]

इंग्लिश्तान और जर्मनी के बीच वैमनस्य

इंग्लिश्तान और जर्मनी के बीच—जो कुछ दिनों से भीतर-ही-भीतर वैमनस्य बढ़ रहा था वह सुना जाता है कि अब घट रहा है। तथापि जर्मनी अपना समुद्री बल बढ़ाता ही जाता है। इस वर्ष गत वर्ष की अपेक्षा प्रायः दो करोड़ रुपए रणपोतों (जंगी जहाज) पर जर्मनी के अधिक व्यय होंगे।

टर्की की पार्लियामेन्ट—गत 15 नवम्बर को टर्की की राजधानी रूम में वहाँ की राजसभा (पार्लियामेन्ट) पुनः खुली। सुल्तान की ओर से जो व्याख्यान पढ़ा गया उससे ज्ञात हुआ कि टर्की के साथ सब का इस समय तक मेल-मिलाप है। सुल्तान ने आज्ञा दी कि राजसभा में हमारी प्रजा (चाहे वे ईसाई हो या यहूदी आदि) में से जो चाहे भरती हो सकता है किसी के लिए कुछ भी रुकावट नहीं है। इस वर्ष जितनी आमदनी हुई उससे प्रायः आठ करोड़ रुपया अधिक व्यय हुआ। सुल्तान ने अपनी जल, थल सेनाओं की वृद्धि की भी आवश्यकताएँ प्रकट कीं।

रूस और जापान—रूस की राजधानी सेंटपिट्र्सबर्ग में जो जापानी राजदूत रहता है वह किसी विशेष कारण जापान को लौट गया है। जिससे लोग अनुमान करने लगे थे कि रूस और जापान के बीच कुछ अनबन हो गई है। परन्तु वह अनुमान ठीक न निकला।

फारस की पार्लियामेन्ट—गत 15 नवम्बर को खुल गई। शाह की ओर से सिपहदार ने शाह के व्याख्यान को पढ़ सुनाया जिसका तात्पर्य यह था कि फारस के साथ दूसरे बादशाहों का मेल है। केवल दुःख की बात यह है कि फारस में विदेशी सेनाएँ अभी तक जमी हुई हैं।

रूसियों का हस्तक्षेप—फारस सीमा पर अर्दवील नामक एक दुर्ग है जिसमें फारस की पार्लियामेन्ट से अग्रसर रहीम खाँ के कुछ सिपाही रहते थे। रहीम खाँ से बातें कर रूसियों ने उस किले को अपनी रक्षा में लिया है और रहीम खाँ के सिपाही उसमें से निकल गए हैं। पार्लियामेन्ट की ओर से इस किले में एक हाकिम (गवर्नर) भी आने वाला है परन्तु उसे आने पर भी यह किला रूसियों की ही रक्षा में रहेगा।

पुर्तगाल के महाराज—इन दिनों इंग्लिश्तान की सैर कर रहे हैं, जहाँ उनका

स्वागत बड़े धूमधाम से हो रहा है। सुना जाता है कि वाणिज्य सम्बन्धी सन्धि इंग्लिश्तान तथा पुर्तगाल के बीच शीघ्र होने वाली है।

चीन के योद्धा–चीन के कई योद्धा इन दिनों यूरोप में घूम रहे हैं। इनका उद्देश्य यह है कि यूरोप के जंगी जहाजों के बनाने की रीति को भलीभाँति अवलोकन कर चीन में भी जंगी जहाजों के बनाने के कारखाने खोलें। ये लोग यूरोप के जिस देश में आते हैं वहीं इनका पूरा सम्मान होता है।

इंग्लिश्तान के आयव्यय का लेख–अर्थात् बजट उस देश की हाऊस ऑफ कामन्स नामक राजसभा से आज होकर जब हाऊस ऑफ लॉर्ड्स नामक राजसभा भेजा गया तो लॉर्ड सभा के सभ्यों ने यह प्रस्ताव पास किया यह बजट इंग्लिस्तान की साधारण प्रजा के सम्मुख रखा जाए, यदि प्रजा इसे स्वीकार करेगी तो हाऊस ऑफ लॉर्ड्स को भी यह स्वीकार होगा। अतः अब वह लेखा इंग्लिस्तान की प्रजा के सम्मुख रखा जाएगा और साथ ही राजसभा के सभ्यों का नूतन निर्वाचन भी आरम्भ होगा। अतः इंग्लिस्तान में लिबरल (उदार) तथा कंजर्वेटिव (संकीर्ण) नाम के जो दो प्रधान राजनीतिक दल हैं। उनके मुखियागण अपने-अपने विचार के पुरुषों को राजसभा में भेजने के लिए घोर परिश्रम कर रहे हैं। यदि इस नूतन निर्वाचन में पुनः लिबरलों की जय हुई अर्थात् राजसभा में अधिक लिबरल सभ्य आ गए तो हाउस ऑफ लॉर्ड्स अर्थात् इंग्लिस्तान के अमीरों की जो सभा है उसका बना रहना भी कठिन हो जाएगा।

धार्मिक तथा सामाजिक संशोधन–मंद्रास हिन्दू सोशल रिफार्म एसोसिएशन नाम प्रसिद्ध सभा की ओर से उक्त नगर में एक सार्वजनिक सभा की गई थी जिसमें महाशय दुरास्वामी आयंगर ने भारत की सामाजिक तथा धार्मिक अवस्था पर अपना एक लेख पढ़ा था। आपके लेख का सारांश यह था कि इंग्लिस्तान में सामाजिक अवस्था की उच्चता वा नीचता धन पर निर्भर है, परन्तु भारत में सामाजिक अवस्था उसी की अच्छी होती है जो धार्मिक हो। अतः भारतवासी यदि अपनी सामाजिक अवस्था सुधारना चाहते हैं तो उन्हें धार्मिक बनना चाहिए।

धार्मिक शिक्षा पर श्रीमान बड़े लाट का कथन–बड़ौदा नगर में श्रीमान गायकवाड़ के व्याख्यानन्तर श्रीमान बड़े लाट का जो व्याख्यान हुआ था उसमें आपने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि ''जो शिक्षा भारतवासियों को (स्कूलों तथा कालिजों द्वारा) अब तक दी गई है उसमें धार्मिक शिक्षा की ओर ध्यान नहीं दिया गया है। वास्तव में धार्मिक शिक्षा ही मनुष्य सदाचार की नींव है। उस नींव का अभाव अब तक अनेक बुराइयों का कारण बन चुका है और भविष्यत् में अनेक बुराइयाँ उसी कारण होने वाली हैं। जिनके निवारण के लिए हमें उद्योग करना आवश्यक है''। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में स्कूलों और कालिजों की शिक्षा से यही तो विशेषता है कि गुरुकुल में विद्यार्थी को ब्रह्मचारी रखकर उसे सांसारिक

विद्यार्थियों के साथ-साथ आत्मिक विद्याएँ भी सिखाई जाती हैं जिससे कि उसे सदाचारी बनना ही पड़ता है।

ट्रांसवाल में–भातरवासियों के साथ ट्रांसवाल की गवर्नमेन्ट जो सलूक करती है उसे दुखद समझ ट्रांसवाल में रहने वाली भारतीय प्रजा ने इंग्लिस्तान में अपने प्रतिनिधियों को भेज उनके द्वारा दुहाई मचाई थी। परन्तु उन प्रतिनिधियों का पुरुषार्थ सफल न हुआ। क्योंकि इंग्लिस्तान की लॉर्ड सभा में लॉर्ड साहब ने स्पष्ट कह दिया कि स्वशासनाधिकारी उपनिवेश (ट्रांसवाल) की शासनविधि को उलटना असम्भव है।

फारस की पार्लियामेन्ट–फारस की पार्लियामेन्ट के प्रधान मुतवसद्दौला नामक राजनीतिज्ञ बनाए गए हैं। भारत का राजकार्य चलाने के लिए ऋण लेने की आवश्यकता है। इस विषय पर उक्त पार्लियामेन्ट में वादानुवाद हो रहा है कि अंग्रेज तथा रूसियों से ऋण लेना चाहिए या नहीं। कुछ सभासद तो यह कहते हैं कि इन ऋण लेने पर फारस की स्वाधीनता में बाधाएँ उपस्थित होंगी, परन्तु कुछ ऐसा भी कहते हैं कि इनसे ही ऋण लेना ठीक होगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 24 नवम्बर, 1909]

कांग्रेस का अधिवेशन

कांग्रेस का अधिवेशन जो इस वर्ष लाहौर में होने वाला है उसके प्रधान प्रयाग के सुप्रसिद्ध वकील तथा कांग्रेस के पुराने सेवक पंडित मदनमोहन मालवीय जी निर्वाचित किए गए हैं। कांग्रेस में सम्मिलित होने को कलकत्ता से बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, ट्रांसवाल से आए हुए मिस्टर पोलक तथा अन्यान्य बारह बड़े-बड़े राजनीतिक प्रस्थित हो चुके हैं। बम्बई से आनरेबल महाशय गोखले, आनरेबल महाशय पारस, महाशय वाचा, महाशय दीक्षित, महाशय जहांगीर पेटिट, महाशय नटराजन, महाशय छगूलाल, ट्रांसवाल से आए हुए महाशय गाँधी, नेटाल से आए हुए महाशय रुक्मण पाण्डेय चल चुके हैं। बिहार से आनरेबल बाबू सच्चिदानन्द सिंह तथा ट्रावांकोर से महाशय सीनाथी राजा लाहौर में पहुँच चुके हैं। पंडित मदनमोहन मालवीय जी पन्द्रह प्रतिनिधियों के साथ प्रयाग से रवाना हो चुके हैं। वालंटियरों (स्वयंसेवकों) का प्रबन्ध इस वर्ष लाहौर में अच्छा नहीं है क्योंकि शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर ने आज्ञा दे दी है कि कोई विद्यार्थी राजनीतिक कार्यों में भाग न ले। अन्यान्य कारणों के विषय में भी श्रवण करने से अनुमान होता है कि अन्यान्य वर्षों के कांग्रेसों की तरह इस वर्ष लाहौर का कांग्रेस धूमधाम के साथ न होगा।

मिस्टर जैक्सन का वध–नासिक के कलेक्टर मिस्टर जैक्सन की विदाई के लिए विजय नाम थियेटर के स्थान में एक सभा हुई थी। जिस समय मिस्टर जैक्सन उक्त स्थान के द्वार पर पहुँचे। उसी समय एक युवक ने मिस्टर जैक्सन पर पिस्तौल की गोलियाँ चलाईं और मिस्टर जैक्सन का प्राणान्त हो गया। सभा, जो थियेटर में बैठी थी, उसमें हाहाकार मच गया और बधिक पकड़ा गया। इस वध पर शोक प्रकाशित करने के लिए बम्बई प्रान्त में अनेक सभाएँ हो चुकी हैं और अनेक समाचार पत्र शोक प्रकाशित कर चुके हैं। हमें भी इस प्रकार के अत्याचारों से बड़ा शोक होता है क्योंकि ऐसे कर्म सर्वथा धर्म विरुद्ध हैं और इस प्रकार के पाप भारतवासियों को कलंकित कर रहे हैं। सुना जाता है कि बधिक, सावरकर नामक एक पुरुष का मित्र है जिसके विरुद्ध जो अभियोग चला था उसमें मिस्टर जैक्सन ने भाग लिया था।

[सद्धर्म प्रचारक, 29 दिसम्बर, 1909]

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक

लोकमान्य पंडित बालगंगाधर तिलक से पूने के मजिस्ट्रेट ने कई हजार की जमानत माँगी थी। आपने हाई कोर्ट में अपील की। हाई कोर्ट ने मजिस्ट्रेट की आज्ञा को बदल दिया और यह बता दिया कि भारत में एक ऐसा भी स्थान है, जहाँ नैतिक पक्ष की परवाह न करके अछूता न्याय किया जा सकता है। यदि देशों में ऐसे न्यायस्थान न हुआ करें तो अराजकतावादियों की संख्या न जाने कितनी बढ़ जाया करे। देखें अब बम्बई सरकार क्या करती है।

अमरीका के प्रेमीडेन्ट का चुनाव हो गया। बहुत सम्भव है कि डॉ. विल्सन ही फिर भी प्रेसीडेन्ट चुने गए। दूसरे म. ह्यूगस का अमरीकावासी जर्मनों ने बड़ा पक्ष किया था। शायद इसीलिए बेचारे को अमरीका की जलवायु में कृतकार्यरता नसीब न हुई।

[सद्धर्म प्रचारक, 18 नवम्बर, 1916]

अफ्रीका में विराट् सभा

जोहन्सबर्ग के समाचार से पता लगता है कि तीन हजार एशिया के रहने वालों ने अफ्रीका में एक विराट सभा की। तीन सौ से ऊपर सार्टिफिकेट जला दिए गए। श्रीयुत गांधी ने कहा कि मैं इस प्रकार के नीच व्यवहार की अपेक्षा जन्म भर जेल में रहना पसन्द करता हूँ और साथ ही मि. स्मट पर 30 जनवरी की सन्धि को तोड़ने का दोष लगाया।

इस समय जो टर्की से समाचार आ रहे हैं उससे पता लगता है कि शीघ्र ही वहाँ शान्ति स्थापित हो जाएगी। नई स्कीम को लोक नेता और वहाँ के पत्र स्वीकार कर रहे हैं। अन्तिम समाचारों से विदित हुआ है कि मुसलमानों से भिन्न लोगों को भी सेना में भरती किया जाएगा। टर्की के नए मन्त्री ने 'टेम्पेस्ट' से कहा है कि मैंने ट्रांस और इंग्लैंड के प्रवीण लोगों से टर्की में सड़क बनवाने और जल पहुँचाने के कार्य को आरम्भ करने के लिए सलाहें ली हैं।

मद्रास, मुम्बई और बंगाल प्रान्त आजकल राजद्रोह के मुकदमों के घर बन रहे हैं। कई राजद्रोह के मुकदमे समाप्त हो गए हैं। कई अभी चल रहे हैं। कई अभिमत राजद्रोही वर्षों के देशनिकाले का दण्ड पाकर जलवायु का परिवर्तन कर चुके हैं, परन्तु कई पत्रों के सम्पादक अभी अपनी यात्रा की तिथि निश्चित न हो सकने के कारण न्यायालयों के आँगनों में बैठे-बैठे जंभाइयाँ ले रहे हैं।

साधारण दशा में यदि किसी परिवार में कोई मृत्यु हो जाए तो बहुत दिनों तक शोक मनाया जाता है। किन्तु जिन लोगों ने प्लेग के हृदय विदारक दिन देखे हैं वे जानते हैं कि उन दिनों में प्लेग से मृत्यु होने पर उतना शोक नहीं मनाया जाता। एक के पीछे दूसरी मृत्यु इतनी जल्दी होती है कि पहली मृत्यु के लिए शोक मनाने का अवसर ही नहीं मिलता। यह ही हाल आजकल राजद्रोह के मुकदमों का हो रहा है। राजद्रोह के मुकदमे संख्या में इतने अधिक हो गए हैं कि साधारण लोगों का तो कहना ही क्या है—सम्पादकों को भी सबका नोटिस लेना कठिन प्रतीत हो रहा है। और इन मुकदमों के भाग्यों का निश्चय इतनी जल्दी-जल्दी हो रहा है कि सहानुभूति रखने वालों को शोक प्रकाशित करने का और राजभक्ति (?) दिखलाने वालों को हर्ष प्रकाशित करने का अवसर ही नहीं मिलता।

श्रीयुत तिलक के हृदयविदारी दण्ड का शोक अभी लोगों के हृदयों से दूर होने नहीं पाया कि मद्रास के सुरेन्द्रनाथ आर्य के 5 वर्ष के देशनिकाले के समाचार को लिये हुए दैनिक पत्र हमारी टेबल पर आ गिरा है। आर्य पर दो दोष लगाए गए थे, जिनमें से पहले के लिए 5 वर्ष और दूसरे के लिए 3 वर्ष के देशनिकाले का दण्ड दिया गया। परन्तु गवर्नमेन्ट ने अपार दया (?) करके दूसरे दोष को वापिस लेकर मुकदमे को खारिज करवा दिया।

हमारे राजनीतिक भाई कहा करते हैं कि पंजाबी राजनीतिक हलचल मचाना नहीं जानते और इसीलिए उन्हें 'पीछे पड़ा हुआ' प्रान्त कहा जाता है। किन्तु यदि 'आगे बढ़ने' का चिह्न स्पीचें देकर हलचल मचाना ही है तो अब हमारी समझ में पंजाब का नम्बर सबसे पहले समझना चाहिए। 1905 में लाला लाजपतराय ने मिस्टर गोखले के साथ इंग्लैंड जाकर अपने व्याख्यानों से बड़ी हलचल मचा दी थी (उसी समय आपने यहाँ के स्कूलों को देखकर शिक्षा का अनुभव प्राप्त किया था, जिस अनुभव पर ही आप आजकल लोगों को अष्टाध्यायी की आवश्यकता समझा रहे हैं) इस साल फिर गोखले विलायत गए हैं। पंजाब कब पीछे रह सकता है। लाला हरदयाल के विषय में पिछले सप्ताह समाचार प्रकाशित हो चुका है।

आज हमें सहयोगी 'हिन्दुस्तान' हर्ष से सुनाता है कि श्रीमान् पंडित रामभजदत्त चौधरी बी.ए. एल.एल.बी. हिन्द के शाहंशाह को अपनी सच्ची अवस्था बताने और इंग्लैंड की प्रजा के सामने अपने दुःख रोने (और इसी से बड़ी हलचल मचाने) इंग्लैंड चले गए। अब कौन कह सकता है कि पंजाब राजनीतिक हलचल में पीछे रहेगा।

अलीपुर का थकाने वाला केस अब सैशन सुपुर्द हो गया है। 34 लोगों पर दोष लगाए गए हैं। उन पर भारतीय शासन को पलटने और एडवर्ड महाराज से उनका राज्य छीनने का अपराध लगाया गया हैं। वीरेन्द्र पर मुजफ्फरपुर के द्रोह में सहायता देने का भी अपराध लगाया गया और यह मुकदमा जुदा चलेगा। अभियोग के समाप्त होने पर मि. नार्टन ने श्रीयुत चक्रवर्ती को अनुचित शब्द कहने के लिए क्षमा भी माँगी।

कई लेखकों का मत है कि बम फेंकने के पागलपन का विचार उन्हीं के दिमागों में घुस सकता है जिनका दिमाग, ईश्वरशून्य, धर्मशून्य और सदाचारशून्य अंग्रेजी (स्कूली) शिक्षा के प्रभाव से फिर गया है। और आजकल के समाचार भी इस मत को पुष्ट करते हैं। किन्तु इस मत की विरोधिनी-सी एक घटना भटपुरा में हो चली थी। कनकिनारा वाली बम घटना पढ़ने वालों को स्मरण होगा कि उस अभियोग में भटपुरा के एक प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान् तर्कालंकार को भी फँसाया गया था। किन्तु ऊपर कहे हुए मत के अनुयायी इस समाचार को सुनकर बड़े प्रसन्न होंगे कि न्यायालय ने तर्कालंकार को निष्कलंक समझकर छोड़ दिया। इसी घटना

को लक्ष करके उस दिन माननीय रायकिशोरीलाल गोस्वामी ने बंगाल कौंसिल में प्रश्न कर डाला, उन्होंने पूछा कि क्या यह गवर्नमेन्ट उन हेतुवों को प्रकाशित कर सकती है, जिनके कारण पुलिस ने भटपुरा के कई सम्भावित पुरुषों पर सन्देह किया और विशेषतः एक संस्कृत के विद्वान् को कनकिनारा के विद्रोह में फँसाया जो अपने आचार की पवित्रता के लिए विख्यात है ? किन्तु सरकार ने इसका विशेष रीति से उत्तर देना आवश्यक न समझा।

[सद्धर्म प्रचारक, 26 अगस्त, 1908]

सभ्यता की शताब्दी में असभ्यता का राज्य

सभ्यता की शताब्दी में असभ्यता का राज्य ही दिखाई देता है। जितनी नूतन कलाएँ निर्मित होती हैं उन सबका लक्ष्य एकमात्र प्राणियों का घात करना होता है। इंग्लैंडीय वर्सलेमग्राम निवासी महाशय रिचन्सन ने एक हवाई जहाज का नमूना बनाया है जिस पर से छः तोपों की बाढ़ हुआ करेगी। यह जहाज आंधी की परवाह न करेगा और जिधर चाहे चल सकेगा। ऐसे जहाज न केवल प्राणियों के घात बढ़ाने के साधन बनेंगे, प्रत्युत चलाने वालों के हृदयों की कोमलता तथा उनके आत्माओं का भी नाश करेंगे। भारतवर्ष की प्राचीन आर्य सभ्यता का आजकल की सभ्यता से यही भेद है कि उस समय आत्मा को ही सर्वोपरि समझा जाता था।

प्राचीन भाषाओं तथा विद्याओं के सम्बन्ध में सामयिक परिषद् अब की बार डेनमार्क (Denmark) देश की राजधानी कोपनहेगन में हुआ था। इसके सभासदों का जो सत्कार वहाँ हुआ उससे हमें अधिक मतलब नहीं। हमें केवल यह शोक है कि भारतवर्ष के जो तीन प्रतिनिधि गए उनमें से भी दो विदेशी थे। हाँ, मद्रास के डाक्टर कुमारस्वामी भारतवर्ष के सच्चे प्रतिनिधि थे जिन्होंने भारतीय प्राचीन शिल्प विद्या को इस कलंक से मुक्त करने का प्रत्यन किया कि भारतीय शिल्प ने यूनानी (Greek) शिल्प का अनुकरण किया है।

याग्वतादि नवीन (किन्तु प्राचीन नामधारी) पुस्तकों के विषय में कैम्ब्रिज के प्रोफेसर रेप्सन ने कहा कि पुराणों के मूल में इतना हस्तक्षेप हुआ है कि उनका अब कुछ महात्म्य ही नहीं रहा। दस वर्ष से अधिक नहीं हुए कि भविष्य पुराण में दो के स्थान में चार भाग बना दिए गए हैं और इंजील के आदम-हव्वा से लेकर आल्हा-ऊदल तक के चरित्र दिए गए हैं। मेरी सम्मति में नवीन पुराणों के आन्दोलन के लिए एक विशेष विद्वान् को उद्दित होना चाहिए। पुस्तकों की आवश्यकता को तो गुरुकुल पुस्तकालय भी पूरा कर सकेगा और इस भूमि के एकान्त स्थान में विचार भी ठीक होगा।

कांग्रेस का आभागी जलसा–मद्रास में होगा। विज्ञापन दिया गया था। इस पर गरम दलवालों ने तो शोर मचाया ही था किन्तु बहुत से नर्म दलवाले लीडर भी इस समाचार को सुनकर चौंक पड़े। पहले उड़ा कि सुरेन्द्र बाबू विरुद्ध हैं।

इसका खण्डन हुआ। फिर कुछ मद्रासी लीडरों ने (जिनमें प्रसिद्ध महाशय आनन्दाचार्लू भी सम्मिलित थे) इस निश्चय से विरोध किया जिनको भी समझा-बुझा लिया गया है। यह सच है कि मद्रास में एक प्रकार का सम्मेलन होगा, किन्तु जो जादू कांग्रेस के नाम में था उसकी इतिश्री सूरत में ही हो चुकी है। रेजोल्यूशन (प्रस्ताव) पास करने से किसी को भी रोका नहीं जा सकता, किन्तु सामूहिक बल का नाश हो चुका। अंग्रेजी कानून के अनुसार कोई ऐसा पुरुष, जो एक कच्वांसी भूमि का भी स्वामी न हो, यदि सारा पंजाब बेचकर रजिस्टरी कराने जाए तो रजिस्टार रजिस्टरी कर देगा, परन्तु ऐसी क्रिया से वह पंजाब का स्वामी नहीं बन सकता। इसी प्रकार सारे देश की वकालत की डींग मारते हुए भी जिस प्रकार यह पहले भी उन्हीं आदमियों की वकील थी जो इस में सम्मिलित हैं इसी प्रकार अब भी उन्हीं की वकील वनी रहेगी। हाँ, जो प्रभाव इस का विदेश में पहले पड़ता था अब उसका दसवां अंश भी नहीं रही।

श्रीमान् महाशय प्रतुलचन्द्र चट्टोपाध्याय पंजाब चीफ कोर्ट की जजी से त्याग पत्र देकर गए। जजों तथा वकीलों ने उनकी बड़ी प्रशंसा की। प्रतुलबाबू देशसेवा का नाम लेते ही जजी में पकड़े गए थे, क्या अब स्वतन्त्र होकर कुछ काम करेंगे ? सम्भव है कि काम में पग आगे डालते ही K.C.I.E बना दिए जाएँ। इनके स्थान में अंग्रेज जज आया है।

पंजाब चीफकोर्ट में जो जजी का स्थान बढ़ाया गया उस पर मिस्टर शाहदीन साहेब रईस बागबनपुरा को नियत किया गया। इस पर हिन्दू नाराज हैं कि महाशय लालचन्द्र जी की योग्यता के आदमी का उल्लघंन क्यों किया गया है। मैंने जब लाहौर यह समाचार सुना तो महाशय लालचन्द्र जी को बधाई देने को तैयार था कि वह दासत्व से बच गए। इसके हृदय के दो प्रकार के चित्र होते हैं। उनके सुखी वा दुखी होना अपने मन की अवस्था के आधीन है। मनेवमनुष्याणाम कारणं बन्धमोक्षयो।

दक्षिण हैदराबाद पर जो आपत्ति आई है उसका समाचार हृदय विदीर्ण करने वाला है। जहाँ वर्षा से दुष्काल दूर हो गया वहाँ हैदराबाद में इतना जल चढ़ आया कि 20 से 25 करोड़ तक धन सम्पत्ति का नाश होने के अतिरिक्त 50 सहस्र मनुष्य मर गए। पानी क्या चढ़ा छोटा प्रलय आ गया। सारे कार्यालय बन्द तथा रेल का चलना भी रुका हुआ है। हैदराबादाधीश निजाम ने अपने दो महल सर्वसाधारण के लिए खोल दिए हुए हैं। चार लाख अपने निज के कोष से तथा दो लाख राज्य के कोष से दिए हैं। किन्तु जहाँ सहस्रों घर बेचिराग हो गए वहाँ दस बीस लाख से भी क्या काम चलेगा। बम्बई तथा कलकत्ता में सहायता के लिए चन्दे हो रहे हैं। मेरी सम्मति में भारतवर्ष के कोने-कोने से सहायता का प्रयत्न होना चाहिए।

बंगालियों ने 16 अक्टूबर को अपना बड़ा पवित्र दिन नियत किया है। जब

संयुक्त बंगाल की स्थिरता की प्रतिज्ञा की थी। अब की बार पहले से ही एक तो खुले मैदान में जलसे करने से रोका गया है और दूसरे एक नई आज्ञा कलकत्ता के पुलिस कमिश्नर ने दी है कि जो मनुष्य लाठी लेकर सड़कादि में निकलेगा वह अपराधी समझा जाएगा। 16 अक्टूबर को बंगाली देशभक्त अपना बड़ा जलूस निकाला करते हैं, उसके रोकने का ही यह उपाय है। लाठी कर कुछ नहीं सकती, फिर न जाने राजकर्मचारी प्रजा को खिजाकर क्यों गवर्नमेन्ट का शत्रु बना रहे हैं।

बम के प्रचार के भयंकर परिणाम निकलने आरम्भ हो गए हैं। एक बंगाली का एक स्त्री से द्वेष था, इसलिए उसके घर में बम रखकर पुलिस को सूचना दे दी। अब बंगाली बाबू स्वयं पकड़े गए हैं। बम के अनाचर के विरुद्ध घृणा प्रकट करना ही काफी नहीं, प्रत्युत प्रत्येक सच्चे देशभक्त को ऐसे अत्याचारों के निर्मूल करने का प्रयत्न करना चाहिए।

[सद्धर्म प्रचारक, 14 अक्टूबर, 1908]

प्रोफेसर पर अभियोग

प्रोफेसर विजय कर्पूरादि पर जो अभियोग कोल्हापुर में चल रहा है उसमें जब सेशन जज ने जमानत देने से इन्कार कर दिया तो श्री महाराजा साहब के यहाँ अपील हुई जहाँ से जमानत स्वीकार हुई। इससे प्रतीत होता है कि अभियोग महाराजा साहेब ने प्रसन्नता से नहीं चलाया।

एक हिन्दुस्तानी ईसाई–ने दो यूरोपियन पादरियों की स्त्री और पुत्र के मरने की झूठी व्यथा सुनाकर ठगा। यह पढ़कर मुझे एक सफेदपोश लाहौरी की कथा याद आई जिसने पुत्र के लिए कफन का बहाना करके मुझे और मेरे कई मित्रों को ठगा था।

पदार्थ के वैचित्र्य यूरोप में–देखकर बुद्धि चकित हो जाती है। एक ओर तो मोटर (Motor) निकली जिस पर आदमी रेल की चाल जा सकता है। इससे मनुष्यों तथा पशुओं को कुचले जाने का भय रहता है। अब एमस्टर्डाम (Amsterdam) नगर के एक विद्वान् ने ऐसी कला निकाली है जिसे मोटर वा ट्रेन के आगे लगाने से पहले आगे आया पशु वा मनुष्य बैठ जाता है; फिर एक कैंची-सी निकलती है जो उसे उठा लेती। इसमें रबड़ लगी हुई होती है और दोनों ओर जाल। रुकावटवाला प्राणी आनन्द से लेट जाता है और इस प्रकार प्राणियों को भय न रहेगा।

बम का भय भयानक–हो रहा है। किसी महाशय के नाम एक पारसल आया। बम समझकर पुलिस के हवाले किया गया इंस्पेक्टर पुलिस ने खोला तो बड़ा सुगन्धित 'काफी पाउडर' (Coffie powder) निकला। अब तो लोग अपने साए से डरने लग गए हैं।

तिलक महाराज के योग्य शिष्य महाशय केलकर जी ने भी 15 दिन का जेलखाना भुगतकर आखिर क्षमा माँग ली, क्या ही अच्छा होता यदि पहले ही क्षमा माँग लेते। 'इन्डियन स्पेकटेटर' ने यह लिखकर बड़ी बुद्धि तीक्ष्णता का परिचय दिया है कि जो हजार रुपया गवर्नमेन्ट ने तिलक महाराज को क्षमा किया था वह उनके चेले से वसूलकर लिया। इस प्रकार गवर्नमेन्ट भी घाटे में नहीं रही।

बंग-विच्छेद का वार्षिक–समारोह बंगालियों ने कठिन रुकावटों के होते हुए

भी बड़े गम्भीर भाव से मनाया। सरकार ने जलसे के लिए कोई जगह न छोड़ी, लाठी तक ले जाना पाप समझा गया। किन्तु बूढ़े शेर सुरेन्द्रनाथ ने एक लाख के जन समाज को प्रतिज्ञा देकर तथा पुलिस तथा मजिस्ट्रेटों की अनुचित कार्यवाही का भी शान्ति से उत्तर देते हुए बड़ी ही धार्मिक विजय प्राप्त की। विपिन बाबू यदि कलकत्ता में होते तो अवश्य कुछ गड़बड़ होती। बंगाल का एक ही अग्रणी सुरेन्द्रनाथ है। यदि उसकी आज्ञानुसार बंगाली चले तो सफलता में सन्देह ही नहीं। किन्तु यहाँ तो नाऊ की बरात में जने-जने ठाकुर हैं। बंग-विच्छेद के दिन लन्दन में भी एक महती सभा हुई जिसके सभापति श्री लाला लाजपतराय जी थे।

म. छज्जू भाई माधवलाल जी ने–4 लाख रुपयों के प्रामेसरी नोट साढ़े तीन की दर सूद के) इसलिए दान किए हैं कि अहमदाबाद में पदार्थ विद्या की पढ़ाई का सुप्रबन्ध किया जाए। क्या कभी कोई ऐसा दानी गुरुकुल को भी मिलेगा।

अमरीका में जो बात होती है–दुनिया से निराली होती है। है भी तो नई दुनिया। अब प्रोफेसर रसल साहेब ग्रीनफील हाई स्कूल के मुख्याध्यापक ने अपने स्कूल में एक विषय पढ़ाई का 'कोर्टशिप' (Courtship) रखता है। इस शब्द का अनुवाद करना कठिन है क्योंकि विवाह से प्रथम वर तथा वधु का हास्य रहस्य का सम्बन्ध संस्कृत जानने वालों के लिए दिमाग में कभी घुसा ही नहीं। इसमें मोहन तथा वशीकरण के मन्त्र सिखाए जाएँगे। क्या यही सभ्यता की उन्नति कहलाती है। अमेरिका पर उर्दू के कवि का यह कथन ठीक सिद्ध होता है–"जो बात की खुदा की कसम लाजवाब की। पापोश में टकी है किरन आफताब की।

[सद्धर्म प्रचारक, 21 अक्टूबर, 1908]

दयानन्द ब्रह्मचारी आश्रम

दयानन्द ब्रह्मचारी आश्रम नाम से जो विद्यालय लाला लाजपतराय के अनुरोध से दयानन्द कालेज, लाहौर के मातहत खुलने का विज्ञापन दिया गया था (जिसमें 25 रुपए और 30 रुपए फीस के कपड़ों और घुड़सवारी आदि के व्यय के अतिरिक्त लिये जाएँगे।) वह दिवाली के दिन खोला जाना था। उसी दिन नए विद्यार्थियों का यज्ञोपवीत संस्कार अनारकली समाज मन्दिर में होना था। अब ट्रिब्यून से पता लगा कि उसका प्रारम्भिक संस्कार फिर कभी होगा।

जापान के जनरल नोड्जू–के देहान्त का समाचार गत बुध के दैनिक पत्रों में छपा है। यह बहादुर सेनापति 'रूस-जापान युद्ध' में चौथी सेना के अधिपति थे। इनकी बहादुरी के बाँकपन की कहानियाँ अब तक इतिहास के विद्यार्थी न भूले होंगे। सारी दुनिया शोर मचाती है, किन्तु शान्त जापान गम्भीरता से अपना काम किए जाता है।

दक्षिण अफ्रीका–में हिन्दुस्तानियों पर जो अत्याचार हो रहे हैं उनके विरुद्ध बम्बई के भूतपूर्व गवर्नर लॉर्ड एमूहिल ने बड़ी दृढ़ आवाज उठाई है। अब आप लॉर्ड लेमिंग्टन भूतपूर्व गवर्नर तथा अन्य सभ्यों को साथ लेकर लॉर्ड मोर्ले तथा लॉर्ड क्रिउ के पास डेपूटेशन लेकर जाएँगे। यह तो आशा नहीं कि ब्रिटिश गवर्नमेन्ट बातों से आँखें पोछने के अतिरिक्त कुछ भी सहायता दे सके, किन्तु लॉर्ड एमूहिल की यह सहानुभूति ब्रिटिश जाति की विश्वासपात्रता को अवश्य सिद्ध करेगी।

बिना शिक्षा दिए कोई भी–हथियार बालकों के हाथ में न देना चाहिए। यह सर्वदेशों के विद्वानों की सम्मति है। कलकत्ता के एक पुलिस सब-इंस्पेक्टर महाशय घोष के दो लड़कों ने बन्दूक उठा ली जो भरी हुई थी। नौ वर्ष के बड़े ने 4 वर्ष के छोटे पर निशाना लगाया और घोड़ा दाग दिया जिससे छोटा मारा गया। जब लड़कों के सामने घोष निशाना लगाते थे तो बन्दूक का प्रयोग भी बच्चों को बतलाना चाहिए था। मेरे एक बच्चे ने एक मानप्रद वृद्ध को नित्य अफ़ीम खाते देखकर एक दिन बड़ा गोला ढाँक लिया था, यदि शीघ्र पता न लगता तो परिणाम भयानक होता। इस समय लीडरी का प्रबल शस्त्र बच्चों के हाथों में दिया जा रहा है। क्या सच्चे लीडर इस पर विचार करेंगे।

'पायोनियर' अखबार–में एक मुख्य लेख इस विषय पर निकला है कि जलवायु तथा ऋतु का प्रत्येक मनुष्य जाति पर विशेष प्रभाव डाला करते हैं। इस लेख में हिन्दुस्तानियों को सम्मति दी है कि विद्यालयादि पहाड़ों के ठंडे स्थानों में खोला करें। बात तो अच्छी दिखती, किन्तु सम्मति देने वाला 'पायोनियर' है। क्या इस सम्मति पर अमल करने से भारत प्रजा देश की गरमियों को सहन करने के योग्य रह जाएगी। यदि नहीं तो क्या सारा मैदान उजाड़ करके लोग पहाड़ों पर ही जा बसेंगे।

गरम दलवालों की–इंग्लिश्तान में जाकर काया ही पलट हो जाती है। विपिन बाबू अब हथियारों के कानून को मन्सूख कराने के लिए ब्रिटिश पब्लिक में अपील करेंगे। तिलक महाराज के ज्येष्ठ शिष्य श्रीयुत मिस्टर खपर्डे ने वेडरबर्न तथा काटन महोदयों से मिलकर अपने पूर्व के बहुत से विचार बदल लिये हैं। पंजाबी में जो नया लेख महाशय हरदयाल का छपा है उसमें सदाचार पर बड़ा जोर दिया गया है। अब महाशय हरदयाल जी का विचार है कि पालिटिक्स भी बिना सदाचार के नहीं चल सकती। क्या यह सर्द मुल्क की आबोहवा की तासीर है या भारतवर्ष में कोई बुद्धिमान लीडर ही नहीं।

'सरस्वती' आर्यभाषा की–एक उत्तम मासिक पुस्तक समझी जाती है। इसके संपादक पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी आर्यभाषा के अच्छे लेखक तथा संस्कृत के पंडित भी है। आपके विचार वेदशास्त्रों के विषय में यूरोपियन संस्कृतज्ञों से मिलते हैं। इसलिए यदि कोई पुरुष आर्यसमाज के विचार से कोई लेख भेजे तो आप उसे छापने से इन्कार कर देते हैं। सरस्वती के गतांक में आपने 'वेद' तथा 'आर्य' शब्द पर ऐसे लेख उद्धृत किए जो आर्यसमाजियों की दृष्टि में उनके धर्म के गौरव को गिराने वाले थे। 'आर्यमित्र' पत्र में इस पर दो-तीन लेखकों के लिख निकले जिनमें बी.एन. का लेख कड़ा था। इस पर द्विवेदी जी ने 'आर्यमित्र' के संपादकीय के अतिरिक्त बी.एन को भी नालिश का नोटिस दे दिया है। द्विवेदी जी यदि नालिश करने पर उतारू हो गए हैं तो उन्हें कोई रोक नहीं सकता। किन्तु एक निवेदन मैं उनसे करूँगा। क्या वह 'सरस्वती' के गतांकों पर पुनः दृष्टि डालेंगे। जहाँ वे सदैव सभ्य पुरुषों पर अभिमान के भरे हुए कटाक्ष करते रहे हैं और क्या वह यह सोचेंगे कि उन लोगों को उन कटाक्षों से क्या ऐसा ही दुख न हुआ होगा जो आज द्विवेदी जी को हो रहा है। मेरी सम्मति में तो इस विवाद से द्विवेदी जी को शिक्षा लेकर आगे के लिए अपनी अभिमान से भरी हुई लेख प्रणाली को बदलने की आवश्यकता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 28 अक्टूबर, 1908]

लॉर्ड कर्जन

लॉर्ड कर्जन बहुपक्षानुसार ग्लेस्गो विश्वविद्यालय (Glasgow University) के मुख्य अध्यक्ष (lord Rector) नियत हुए हैं। आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के संशोधित नियम भी आप ही बना रहे हैं। जब राजनीति के लिए पुराने पड़ गए तो शिक्षा का पवित्र काम हाथ में लिया। आदमी योग्य हैं, यदि मुगलई भाव का त्याग कर दें।

वर्षा की बड़ी आवश्यकता है। बिना वर्षा के चनों की फसल बोई ही नहीं गई। यदि 15 दिन और वर्षा न हुई तो रबी की फसल भी क्या होगी। मद्रासादि से तो वर्षा के समाचार मिले हैं। यदि पंजाब और अवध में बरस जाए तो सारे भारत का दुष्काल दूर हो जाए।

वन्देमातरम् प्रेस जब्त हो गया। एक दिन ऐसा होना ही था। मैं नहीं समझता कि गरम दलवाले शोर क्यूँ मचाते हैं। यदि आत्मबल पर ही निर्भर करना है तो दिखलावे से क्या लाभ।

कानपुर में दिवाली पर जुआ खेलते बहुत से रईस कमेटीदार भी पकड़े गए। जिला मजिस्ट्रेट कहा कि अपने अधिकार दे दो तो छोड़ दिए जाओगे। रईसों ने न माना, मुकदमा चलेगा। शायद मजहबी रस्म की आड़ में छूटना चाहें। यदि इस मुकदमे में स्वतन्त्रतापूर्वक अपराधियों को दण्ड मिला तो शिक्षित भारत राजकर्मचारियों की प्रशंसा ही करेगा।

अमृतसर में ज्वर अब तक भयानक कोलाहल मचा रहा है। 100 मौतों की औसत से ऊपर प्रति दिन है। धर्मात्मा पुरुष रोगियों की सेवा में दतचित्त हैं। परमात्मा कृपा करें।

बम्बई में टोपियों का एक स्वदेशी कारखाना खुलने वाला है। यदि फेल्ट का कपड़ा (felt) भी स्वदेशी ही हो तो वास्तव में देश को लाभ होगा।

ईसाई मत में चमत्कार अब तक होते रहते हैं। एक ईसाई अखबार में लिखा है कि एक हिन्दू ईसाई हो गया, किन्तु माता के साथ वैसा ही प्रेम रखना चाहता था। दीपमाला समीप आने पर उसके मन में विचार उत्पन्न हुआ कि माता को दीपमाला पर धन देवे, किन्तु पास फूटी कौड़ी न थी—दे तो कहाँ से दे, हारकर बीस दिनों तक ईसू का जप करता रहा। अकस्मात् आदित्यवार के प्रातःकाल ही

एक विलायती ईसाई का भेजा चेक तथा पत्र उसे मिला। ईसाई कहते हैं कि मसीह ने प्रार्थना सुनकर यह धन उसे भेज दिया। पहले तो यह विश्वास करना कठिन है कि नए ईसाई को धन न मिलता हो, किन्तु यदि यह मान भी लें तो क्या यह न मानना पड़ेगा कि बुतपरस्ती के लिए धन भेजने को प्रेरणा कहीं महालक्ष्मी ने ही तो नहीं की ! भला मसीह अपने नए भक्त की माँ को बुतपरस्ती में अधिक फँसाने का क्यों प्रयत्न करेगा। तब चमत्कार तो हिंदू देवता का हुआ, न कि मसीह का।

बगदाद एक प्रान्त है एशियाई रूस (Turkey) में। वहाँ इस समय सस्ती, सुन्दर साबुन की टिकियों की बड़ी ग्राहकी है। यदि स्वदेशी साबुन के कारखाने अधिक खुलें तो उधर माल भेजने से बड़ा लाभ हो सकता है। इस विषय में यदि क्वेटे आर्यसमाज के भाई पता लगाकर विस्तृत समाचार छपवा दें तो बड़ा लाभ हो सकता है।

कर्तारपुर के गुरु नौनिहाल सिंह के देहान्त के समाचार से 'ट्रिब्यून' को बड़ा शोक हुआ है। दिल की कमजोरी से गुरु साहब का देहान्त हुआ। अच्छा होता यदि गुरु साहब अपनी सन्तान को चढ़ावे के काम से स्वतन्त्र कर जाते।

कलकत्ता के बमवाले अभियोग में मिस्टर नार्टन सरकारी बैरिस्टर ने 'उपाध्याय ब्रह्म बान्धव' के नाम पर मखौल किया। मरों पर मखौल करना असभ्य·पुरुषों का काम है, किन्तु जो मनुष्य सदा से मित्रों के साथ विश्वासघात करना आया हो उससे और क्या आशा हो सकती है। बंगाली नीतिमानों ने अपने लिए यह भूत स्वयं खड़ा किया था।

रूम (टर्की) में दो आदमी नई संस्था के विरुद्ध लोगों को उकसा रहे थे। न्यायालय से दोनों को फाँसी मिल गई। स्वतन्त्रता का राज्य अच्छे शकुन से आरम्भ हुआ है।

'युगान्तर' के छापने का गुप्त प्रबन्ध पुलिस ने प्रकट कर दिया। एक डाकू के घर से टाइपादि सर्व सामान 'युगान्तर' के कम्पोज किए हुए मैटर सहित निकला। विशेष समाचार ज्ञात होने पर विशेष सम्मति स्थिर हो सकेगी।

[सद्धर्म प्रचारक, 4 नवम्बर, 1908]

कानपुर के कमेटीदार

कानपुर के जो कमेटीदार जुए में पकड़े गए थे उन्होंने चुपके से अब आनरेरी मजिस्ट्रेटी कमेटी के उपप्रधानी तथा मेम्बरी से त्याग पत्र दे दिए और इसलिए साहब मजिस्ट्रेट जिला ने उन पर से अभियोग हटा लिये। क्या इसका यह मतलब है जो सर्वसाधारण कमेटीदारादि नहीं उनका जुआ खेलना राज नियत के विरुद्ध नहीं।

राजविद्रोह–के मुकदमे में जो चिदम्बरम पिल्ले को दो जन्मों का काला पानी हुआ था वह केवल दस वर्ष का रह गया और 'शिव' को दस वर्ष के काले पानी के स्थान में केवल वर्ष का भीषण दण्ड रहा। राज विद्रोहियों में से दो नवम्बर की खुशी में भी विशेष प्रकार कोई नहीं छूटा। यदि इन राज के साथ दया का बर्ताव होता तो शायद देश में कुछ प्रसन्नता के चिह्न दीखते। अब सम्राट् के घोषणा पत्र से काले-गोरे दोनों ही अप्रसन्न हैं।

अमेरिका के प्रधान पद पर भूत प्रधान महाशय रूजवेल्ट के मन्त्री मिस्टर टेफ्ट (M. Taft) नियत हुए हैं। इसका मतलब है यह है कि अगले पाँच वर्ष तक और रूजवेल्ट की नीति चलेगी। दूसरे उसे दबाव मिस्टर ब्राइन (Mr. Bryan) जिन्होंने हिन्दुस्तानियों के हित की बात कही थी उनके पराजय पर 'पायोनियर' प्रसन्न ही है।

फ्रांसादि से बहुत सा–राजब्रिदोह सम्बन्धी साहित्य अब तक भारतवर्ष में आता है, इसका 'पायोनियर' को बहुत शोक है। प्राइवेट डाक द्वारा जो पैकेट आते हैं उनको पोस्ट आफिस रोक नहीं सकता, यह 'पायोनियर' का मत है। इससे निसपक्ष मनुष्य सहमत नहीं। जब मिस्टर हार्डी मेम्बर पार्लियामेन्ट तथा महाशय गोखले से राजभक्तों तक के पत्र खुल जाते हैं तो ऐसे पैकटों को गायब करने में पोस्ट आफिस कब कसर छोड़ता। यदि उसको पता लग जाता कि अमुक पारसल में राजब्रिदोह सम्बन्धी साहित्य है। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट को इस प्रकार के गुप्त लेखों से कोई भय नहीं है। उसको यदि भय है तो कट्टर ऐंग्लो-इंडियन अखबारों के दुखदाई लेखों तथा उसके गुप्तचरों की अनुचित कार्यवाहियों से।

सम्राट् एडवर्ड का घोषणापत्र निकल आया, जिसकी ओर राजनीतिकों की दृष्टि बड़ी उत्कण्ठा से लगी हुई थी। और तो और 'पायोनियर' तक ने उससे

असन्तोष प्रकट किया। हाँ यदि किसी ने उससे सर्वथा प्रसन्नता प्रकट की तो लाहौर के 'ट्रिब्यून' ने, किन्तु सम्भव है कि औरों की देखा-देखी वह भी अपनी सम्मति को बदल ले। यह घोषणा क्या है लॉर्ड मार्ले की ओर से उन राजनीतिक संशोधनों की भूमिका है जो वे 16 नवम्बर को करने वाले थे। इस घोषणा पत्र को यदि न मुद्रित किया जाता तो इतनी निराशता न होती। अब लॉर्ड मोर्ले ने अपने संशोधनों के पार्लियामेन्ट में पेश करने की तिथि भी बदल कर 12 दिसम्बर कर दी है। क्या यह परिवर्तन इसलिए तो नहीं हुआ कि गोखले महादेय तथा अन्य हिन्दुस्तानी सभ्यों के इंग्लैंड छोड़ने के पश्चात् पेश किए जाएँ, ताकि उनको उस का पोल (यदि कोई हो) ब्रिटिश पब्लिक के सामने खोलने का अवसर न मिले। यह स्पष्ट है कि कांग्रेस में सम्मलित होने की इच्छा करने वाला कोई भी हिन्दुस्तानी 12 दिसम्बर तक लन्दन में नहीं ठहर सकता।

तिब्बत में चीन का राज्य है–चीनवाले कुछ लामे गुरुओं का गुजारा बन्द करके अपनी सेना बढ़ाना चाहते थे। दस सहस्र लामे इस पर उठ खड़े हुए और चीनी अम्बन की सेना को पराजय किया। अब चीन से और सेना मँगाई गई है। इसी समय भागा हुआ दलाई लामा चीन की राजधानी में पहुँचा हुआ है और वहाँ से सरेपा लेकर चीन सम्राट का दास बन गया है। विचित्र लीला हो रही है।

[सद्धर्म प्रचारक, 11 नवम्बर, 1908]

गरम दलवालों का आगा-पीछा

गरम दलवालों का आगा तो शेर का होता है, किन्तु पीछा गीदड़ का भी नहीं। पहले तिलक महाराज के बड़े चेले मिस्टर केलकर ने अपने आत्मा के विरुद्ध क्षमा माँगी, अब उनके बड़े पुरजोश चेले 'हिन्दी केसरी' के सम्पादक महाशय सप्पड़े जी ने बड़ी गिरी हुई 'मुआफी' माँगकर अपनी जान बचाई। सप्पड़े जी के कष्ट का हाल पढ़कर तो मुझे दुःख हुआ था, किन्तु इस अपयश से जीना किस काम का। पहले ही क्यों अनुचित जोश दिखाया गया। अब अंग्रेजों का राज्य दूसरे स्वदेशियों की अपेक्षा भी इस समय न्यायानुकूल ही कहा जा सकता है तो उसके गुणों को भी दोष बतलाने से कभी भी कार्य सफलता न हो सकेगी।

दिल्ली का हिन्दू कालेज उन्नति के शिखर–पर पहुँच चला है, यह कुछ दिनों से सुन रहे थे। आज पता लगा कि उस शिखर पर पहुँच गया। प्रमाण-महाशय धीरेन्द्रनाथ चौधरी एम.ए. हिन्दू के स्थान में प्रिंसिपल मिस्टर एम.ए. मोर आ गए हैं और फारसी के अध्यापक मुन्शी गेंदनलाल हिन्दू के स्थान में मौलवी सय्यद मुहम्मद नियत हुए हैं। यदि शेष हिन्दू प्रोफ़ेसर भी रफूचक्कर किए जाए तो दिल्ली का कालेज आदर्श हिन्दू कालेज ही न बन जाए।

मिसेज एनी बेसेन्ट–केवल हिन्दुओं की ही अधिष्ठातृ देवी बनकर सन्तुष्ट नहीं, वह ईसाईयों और मुसलमानों के लिए भी विशेष धर्म पुस्तकें तैयार करने का बोध उठाने को तैयार हैं।

नागपुर में सरकार अंग्रेजी–की ओर से एक प्रदर्शनी खोली गई है। उस रात को आतिशबाजी चलाई गई, जिसके शोर-शराबे में कोई दुष्ट महारानी विक्टोरिया की मूर्ति पर स्याही फेर गए और नाक तोड़ गए। इस प्रकार के नीच कामों से न जाने मूर्खों ने क्या लाभ समझा है। विक्टोरिया को भारत निवासी सब बड़ी मान की दृष्टि से देखते रहे हैं, उसकी मूर्ति को बिगाड़ना पिशाचपन है। और फिर मूर्ति किसी की भी क्यों न हो। छिपकर कायर मूर्तियों को बिगाड़ा करते हैं। धीर पुरुष यदि किसी को वास्तव में दुष्ट समझते हैं तो उसके मुँह पर कहा वा ठोका करते हैं। यदि कभी स्वराज्य प्राप्ति की अभिलाषा है तो ऐसे गिरे हुए काम करने वालों से घृणा प्रकट करके उन्हें सीधा कर देना चाहिए।

दक्षिण अफ्रीका में–जो 54 हिन्दुस्तानी कारागार में भेजे गए थे उन्हें उच्च न्यायालय ने छोड़ दिया कि जब वे पकड़े गए तो वे ट्रांसवाल के निवासी हो चुके थे।

अमरीका में जो साधारण अपराध–समझा जाता है न जाने भारतवर्ष में उसका सम्बन्ध राजविद्रोह से क्यों समझा जाता है। अमेरिका के सान फ्रांसिस्को (San Francisco) नगर से समाचार मिला है कि जिस हेनरी महाशय ने वहाँ के म्युनिसिपल कमिश्नरों पर घूस (रिश्वत) का अभियोग चलाया था उसे एक कैदी ने मुकदमे की पेशी पर गोली मारी जिससे वह मृत्यु के समीप पहुँचा हुआ है। फिर यदि कलकत्ता के बंगाली पुलिस सब-इंस्पेक्टर को उन आदमियों के मित्रों ने मार दिया हो जिनको उक्त पुलिस आफिसर से पकड़वा दिया तो आश्चर्य की क्या बात है। मनुष्यों की प्रकृति, अमेरिका, पुरुष, एशिया ही क्या अफ्रीका तक में एक सी है।

[सद्धर्म प्रचारक, 18 नवम्बर, 1908]

गोराशाही अंग्रेज बौन्दल्या गए हैं

गोरा शाही अंग्रेज बौन्दल्या गए हैं। बंगाल के लाट महोदय पर जो आक्रमण हुआ था उस पर सभी हिन्दुस्तानियों ने घृणा प्रकट की है। जो समझदार अंग्रेज हैं वे जानते हैं कि ऐसे दुष्ट मनुष्य प्रत्येक मनुष्य समाज में रहते हैं जिनके कारण सारा समाज दूषित नहीं हो सकता। वे यह भी जानते हैं कि ऐसे समय में घबराने से उलटी अधिक हानि होती है। किन्तु इंग्लैंड का 'डेली टेलीग्राफ' यह सम्मति देता है कि यह सारी खराबी कालेजों से उठती है, इसलिए देशी कालेजों को बन्द कर देना चाहिए। मैं भी सिफारिश करता हूँ कि अवश्य सब कालेज बन्द कर दिए जाएँ, क्योंकि यदि ऐसा हो और मूर्खता फैल जाए, तब एंग्लो-इंडियन महाशयों को पता लगे कि उनकी जान भी कैसी दूभर हो जाती है। यह अगर-मगर सीखे हुए मनुष्य ही हैं जो काम करने के समय सोच-विचार करके चलते और सदैव शान्ति तथा उन्नति के उपायों को मानते रहते हैं। यह तो है एक सामाचार पत्र के संपादक की मूखर्ता क्रा दृष्टान्त, किन्तु कप्तान (Faber) फेबर एक मेम्बर पार्लियामेन्ट ने यह सलाह दी कि दक्षिण अफ्रीका से फौज सीधी हिन्दुस्तान को भेज दी जाए। पुद्ध विभाग के मन्त्री जी ने उत्तर दिया कि हिन्दुस्तान में ऐसी कोई आपत्ति नहीं आई कि अधिक सेना की आवश्यकता हो। भला जिन्होंने जान हथेली पर रख ली हो और धर्म का नाम न जानते हों उनका सेना क्या कर सकती है। भारत के विज्ञ सज्जन जानते हैं कि राज प्रबन्ध के लिए हमें अभी चिरकाल तक अंग्रेजों की सहायता की आवश्यकता है और यही बान्दलिया गए तो फिर हमारा कहाँ ठिकाना है। किन्तु मनुष्य भला क्या सोच सकता है। परमात्मा के प्रबन्ध को समझना कठिन है। वह जो कुछ करता है न्यायानुकूल ही करता है।

बंगाली मस्तिष्क बड़ा ही कल्पनाचतुर है। जब सम्राट एडवर्ड के घोषणा पत्र में यह छपा कि भारत में शान्ति रही है तो एक वकील ने यह युक्ति पेश की कि जब सम्राट मानते हैं कि कोई अशान्ति नहीं तो बम के सर्व अपराधियों को छोड़ देना चाहिए। अब गोसाईं को गोली से मारने वाले कन्हाईलाल दत्त को जब फाँसी हो चुकी और उसका मृतक शरीर उसके सम्बन्धियों को मिल गया तो उसे देवता बनाकर पूजा गया। इस पर गवर्नमेन्ट ने हुकुम दिया कि आगे के लिए जिस

फाँसी वाले की लाश रोकनी योग्य हो, रोक ली जाया करे। फिर सत्येन्द्र को फाँसी हुई और उसका मृतक शरीर बन्दीगृह के आँगन में ही जलाने की आज्ञा हुई। बंगालियों ने उसका पुतला निकालकर उसका वैसा ही सत्कार करने का विचार किया। इसे भी रोका गया। अब मुझे आश्चर्य न होगा यदि बंगाली यह दावा कर दें कि सरकारी कर्मचारियों ने उनके धर्म में हस्तक्षेप किया है क्योंकि पौराणिक शास्त्रों के अनुसार विशेष अवस्थाओं में पुतला जलाकर श्राद्धादि क्रिया करने का भी विधान है।

जोधपुर से समाचार आया है कि श्रीमान् वाइसराय के जोधपुर पहुँचने पर पुलिसवालों ने आर्यसमाज का साइनबोर्ड जबरदस्ती उतरवा दिया था। क्या लॉर्ड मिन्टो इस विषय का आन्दोलन करके इस सन्देह को दूर करेंगे कि श्रीमान किसी मत विशेष से द्वेष नहीं रखते हैं और अपने शाहंशाह की आज्ञा का यथावत् पालन करने वाले हैं।

हैदराबाद में श्री निजाम ने स्वयं सहायतार्थ कोष खोला है जिसमें एक अपील पर ही तीन लाख चौदह हजार लिखा गया है। आर्यसमाज हैदराबाद भी इस समय बड़ा परोपकार का काम कर रहा है और निर्धनों की सहायतार्थ धनादि वितीर्ण कर रहा है।

नई रोशनी के मुसलमानों की शिक्षा सम्बन्धी वार्षिक समिति इस वर्ष अमृतसर में बैठेगी। 5000 प्रतिनिधियों के इकट्ठे होने की आशा है। बड़ी तैयारियाँ हो रही हैं। अब मुसलमान किसी बात में भी हिन्दुओं से कम नहीं। विद्या, धनादि में बराबरी करने के आन्तरिक अब गवर्नमेन्ट का विशेष कृपा का हाथ सिर पर होने के कारण उन्हें हिन्दुओं को सब बातों में मात कर देना कुछ कठिन प्रतीत नहीं होता। किन्तु एक कसर है, जिसके होते हुए सर्व प्रकार की सहायताएँ व्यर्थ सिद्ध होंगी। यह निश्चय जो उनके लीडरों का है कि वे स्वार्थ के लिए अपने आत्मा का नाश कर रहे हैं उनको वास्तविक उन्नति नहीं करने देगी।

मद्रास में कांग्रेस अधिवेशन में गरम भी नरम पार्टी के साथ मिलना चाहते हैं। बंगाल के नरम-गरम तो घी, खिचड़ी ही समझने चाहिए और वे सब हैं भी व्यक्तिगत द्वेष से मुक्त, किन्तु बम्बई तथा मद्रास की दोनों पार्टियों में बड़ा मतभेद है। गरम कहते हैं कि एक वर्ष के लिए हम कालोनियल स्वराज्य ही मान लेते हैं, किन्तु सारी कांग्रेस के आगे फिर से यह मामला पेश हो। नरमों का आर्गन 'ज्ञान प्रकाश' कहता है कि इनका विश्वास नहीं क्या कर गुजरें, इन को दूर से ही नमस्कार करो। नरम-गरम पार्टी के पैतरों को गूढ़ दृष्टि से देखा जाए तो आर्य समाज के दो दल होने के इतिहास का ही आभास उसमें भी प्रतीत होता है। देखें इस गतके बाजी में किसका पैतरा ठीक बैठता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 25 नवम्बर, 1908]

सुकेत के नए राजा साहब

सुकेत के नए राजा साहब की गद्दी नशीनी पर पुत्री पाठशाला का खुलना जो मैंने लिखा था वह असत्य निकला। एक पत्र प्रेरक के लेख से विदित हुआ कि राजा साहब के आचरण वैसे उत्तम नहीं जैसे मैंने सुने हैं। मुझे इस समाचार से दुःख हुआ। परमात्मा हमारे रईसों की बुद्धियों को स्वच्छ करें जिससे प्रजा का कल्याण हो।

बंगाल के लेफ्टिनेण्ट गवर्नर सर एंड्रूफ्रेजर ने 30 नवम्बर को अपना सब काम सर एडवर्ड बेकर को सँभाल दिया। सर फ्रेजर उन अंग्रेजों में से एक हैं जो भारतवासियों के साथ सच्ची सहानुभूति रखते हैं। सर फ्रेजर उन बिगड़े हुए दिमागवाले एंग्लो-इंडियनों में से नहीं हैं जो दो-चार भूले हुए लड़कों के असहृद व्यवहार के कारण सारे लोगों को एक ही लाठी से गर्दाना चाहते हैं। सर फ्रेजर पर इतने वार किए गए, तथापि कलकत्ता में दी हुई अन्तिम स्पीच में उन्होंने एक भी ऐसी बात नहीं कही जिससे उनके अन्दर बदला लेने का भाव प्रतीत हो। साथ ही उस वक्तृता में सर फ्रेजर ने जो अन्तिम शब्द कहे वे बड़े ध्यान रखने योग्य हैं। उक्त महोदय ने कहा "एक समाज को दूसरे समाज के विरुद्ध खड़ा कर देना, अथवा दो जातियों के अन्दर पहले से बने हुए भेद को बढ़ाना बड़ा ही सुलभ कार्य है। किन्तु भारतवर्ष में हमें सर्वथा इसके विरुद्ध नीति को पकड़ना चाहिए। हमें अपने भेदों को जहाँ तक हो सके घटना चाहिए और सारे प्रयत्न से उन बातों को सामने लाना चाहिए जिनमें हम सब की समानता है और जो ही हम दोनों को इकट्ठा रख सकती है।" प्रयागी 'पायोनियर' ने इस वाक्य को अपने पत्र में उद्धृत किया है और इसे लिख रखने योग्य वाक्य बताया है। किन्तु हमारा कथन है कि वे ही अपने हृदयों तथा अपने पत्र की पुरानी फाइलों को ढूँढ़ें और देखें कि कहीं वे ही जो इस दोष के सबसे बड़े भागी नहीं हैं। ये तो प्रसंगागत बात थी। यदि सर फ्रेजर का शासन बंगालियों के खुश करनेवाला नहीं था तो वह ऐसा भी नहीं था जिस पर वे अपना क्रोध प्रकाशित करें। किन्तु सर फ्रेजर के शासन की भलाई या बुराई उस पर किए गए वारों और आक्रमणों से हमें नहीं परखनी चाहिए। यदि आज से दस वर्ष पहले सर फ्रेजर बंगाल के गवर्नर बनते तो शायद

लोग उनकी पूजा करते, किन्तु आज बंगाल की वह अवस्था नहीं है। बंगाल किसी मनुष्य के साथ प्रेम या विरोध नहीं करता, किन्तु वह एक सिद्धान्त के लिए लड़ रहा है। यदि आज स्वयं लॉर्ड रिपन भी बंगाल के शासक बनकर आए तो वे पुरानी प्रशंसा बंगालियों से प्राप्त कर सकेंगे या नहीं, इसमें बड़ा भारी सन्देह है।

फारस के शाह की आजकल बड़ी विचित्र दशा है। पहले समाचार आया था कि शाह ने घोषणा दे दी है कि अब फारस को पार्लियामेन्ट नहीं दी जाएगी क्योंकि उसकी प्रजा इसके विरुद्ध है। किन्तु जब और लोगों ने दबाव डाला तो आपने कह दिया कि मेरा पार्लियामेन्ट देने का विचार कभी भी नहीं बदला। पर आपने कहा कि मुल्ला लोग इसका बड़ा विरोध करते हैं। अब समाचार आया है कि शाह अपनी प्रजा को ऐसी मजलिस देना चाहते हैं जो उनकी आवश्यकताओं के योग्य हो और साथ ही मुसलमानी धर्म के विरुद्ध न हो।

पता लगता है कि अमीर अपने देश में नए संशोधन करने में बड़े उत्सुक हैं। जिस बात में अपनी प्रजा का लाभ हो उसे झटपट स्वीकार करके जारी कर देते हैं। सरदार नसरुल्लाखान ने अमीर को रिपोर्ट की कि आजकल पत्रादि भेजने में बहुत व्यय होता है, इसलिए इस विभाग से कर बहुत थोड़ा मिलता है। इसलिए सरदार ने सस्ते पोस्टकार्ड चलाने की सम्मति दी है। यह सम्मति अमीर ने झटपट स्वीकार कर ली और पोस्टकार्ड छापने की भी आज्ञा दे दी।

प्रतीत होता है कि श्रीयुत भूपेन्द्रनाथ वसु का प्रयत्न निष्फल होगा। उक्त महोदय प्रयत्न कर रहे हैं कि दोनों दलों की मिली हुई कांग्रेस हो। किन्तु उधर 'मरहठा' सुनाता है कि Congress continuation कमेटी के बम्बई में यह निश्चय कर दिया है कि नागपुर में पुरानी रीति पर चलने वाली कांग्रेस की जाए। नर्म लोगों की नई कांग्रेस मद्रास में होगी तो इसमें सन्देह नहीं कि यह नर्म लोगों की ही कांग्रेस होगी। पर देखना है कि स्वावलम्बन सिद्धान्त के अनुयायी किस प्रकार के ठहराव अपनी कांग्रेस में निश्चित करते हैं।

जब से बम घटनाएँ आरम्भ हुई हैं तब से पुलिस को हैरान करने का लोगों को अच्छा अवसर हाथ आया है। पाठकों को उस लड़के की कहानी भूली न होगी जिसके कलकत्ता में नारियल को बम बताकर दो पुलिस के आदमियों को लज्जित कराया था। अब कलकत्ता से एक और समाचार आया है। चीफ प्रेसिडेन्सी मजिस्ट्रेट के सामने निवारण चन्द बारवी पर झूठी सूचना देने का दोष पुलिस ने लगाया। अभियुक्त ने अपने एक पड़ोसिन के घर में पड़े हुए बम की सूचना दी थी। किन्तु उसने पीछे स्वयं ही माना कि वह बम उसने स्वयं बनाकर उसके घर रखा था। अभियुक्त को एक वर्ष का दण्ड दिया गया है। प्रतीत होता है कि अभियुक्त ने किसी बदला निकालने के लिए ऐसा किया होगा। अथवा कहीं अपनी राजभक्ति दिखाने का तो उसने यह साधन नहीं समझा था।

आजकल फैले हुए राजब्रिदोह को मिटाने के लिए भिन्न-भिन्न मनुष्य भिन्न-भिन्न सम्मतियाँ दे रहे हैं। कई एंग्लो-इंडियन पत्रों की सम्मति है कि कलकत्ता में सैनिक नियम चलाए जाने चाहिए। कई लोग एक नए न्यायालय की आवश्यकता बतला रहे हैं जो राजविद्रोह के अभियोगों का फैसला किया करें। किन्तु एक रिटायर्ड आई.सी.एस. एक नई ही सम्मति देते हैं। उनकी सम्मति में एक ट्रेनिंग कालेज खोला जाए जिसमें पढ़े लड़के ही गवर्नमेन्ट नौकरी प्राप्त किया करें। इस प्रकार करने से, उनकी सम्मति में जो लड़के अब निराश होकर राजविद्रोही बन जाते हैं राजब्रिदोही बनने से बच जाएँगे।

मद्रास प्रान्त में एक–विचित्र घटना हुई है। दो ज्योतिषी गाँव में फलित ज्योतिष द्वारा भविष्यत् बतलाते फिरते थे। एक दिन उन्होंने एक बुढ़िया के घर जाकर कहा कि यदि वह बीस रुपए दे तो वे भूतों को उसके घर से निकाल सकते हैं जिन्होंने एक धन के कोश को दबा रखा है। बुढ़िया ने बीस रुपए उन्हें दिएं। वे थोड़ी देर एक कमरे में बन्द रहे। और थोड़ी देर के पीछे बुढ़िया को लाकर सिक्कों से भरा एक बरतन दिखाया। इतने में ही एक ज्योतिषी गिर पड़ा और दूसरे ने कह दिया कि भूत ने इसे दबा लिया है। उसके सचेत होने पर दोनों ने कहा कि भूत को निकालने के लिए उनके सामने एक परदेशी लकड़ी जलानी पड़ेगी जिसके लिए 100 रुपए चाहिए। उन्हें 100 रुपए दे दिए गए। परन्तु अन्त में उन पर सन्देह होने के कारण उन्हें पुलिस में पकड़वाया गया। यह घटना बतलाती है कि अभी कितना अन्धकार देश में फैला हुआ है।

इंग्लैंड में प्रत्येक विषय के–समाचार पत्र जुदा-जुदा हैं। शारीरिक उन्नति विधायक एक समाचार पत्र लन्दन से निकलता है। जिसका नाम 'हैल्थ एण्ड एट्रेंग्थ' (स्वास्थ्य और बल) है। इस पत्र के किसी गतांक में तमाकू के हानि-लाभ पर बहुत से विज्ञ पुरुषों के लेख निकल रहे हैं। बहुधा सम्मतियाँ यह है कि जो लोग शारीरिक बल बढ़ाना चाहते हैं उन्हें तमाकू से बचना चाहिए। यद्यपि एक-आध पुरुष ने यह लिखा है कि उनको तमाकू, चाय तथा काफी के थोड़े-थोड़े काम में लाने से कुछ अधिक हानि नहीं हुई है। तथापि अधिक मनुष्यों की अनुमति यह है कि चाय तथा काफी तक में भी शरीर की पालन की कोई शक्ति नहीं, प्रत्युत रोचक होने के कारण हानिकारक ही हैं। तमाकू को तो प्राणनाशक विषय सभी जानते हैं। जिन मनुष्यों को दम बढ़ाने का अभ्यास करने की आवश्कयता है उन्हें तमाकू आदि से पृथक् ही रहना चाहिए। अंग्रेजों के आने से पहले भारतवर्ष में चाय-काफी का बहुत कम रिवाज था, हाँ तमाकू का खूब प्रचार था। किन्तु अब उसके सहायक चाय और कापी दोनों हो गए हैं। इन बुराइयों के विरुद्ध बड़े बल से प्रयत्न होना चाहिए यदि गिरे भारत को आलस्य तथा प्रमाद के गढ़े से पुनः उठाना है।

[सद्धर्म प्रचारक, 9 दिसम्बर, 1908]

मन-शरीर का गूढ़ सम्बन्ध

जब मन थक जावे तो उसको फिर से स्वस्थ करने का सबसे उत्तम साधन नसों को ढीला छोड़ के शारीरिक विश्राम लेना है। प्राचीन आर्य ऋषि, आत्मा, मन, इन्द्रिय तथा शरीर का बड़ा गूढ़ सम्बन्ध मानते थे। वर्तमान जगत् के सभ्य देश इसी सच्चाई के निकट आ रहे हैं।

हिन्दुस्तानियों की समझ में नहीं आ सकता कि संसार में ऐसे भी देश हैं जिनमें मांस के बिना कोई ठीक भोजन ही नहीं मिल सकता। इंग्लैंड के प्रसिद्ध उपन्यास लेखक महाशय ज्यार्ज मेरिडिथ कहते है कि यदि उत्तम पका हुआ निरामिष भोजन मिल सके तो वह मांस भक्षण का सर्वथा त्याग कर दें। यदि आर्यसमाज की ओर से लन्दन में एक भोजनशाला खुल जावे जिसमें उत्तमोत्तम निरामिष भोजन तैयार मिले तो बहुत से पुरुषों को हिंसा रूपी घृणित पाप से बचाया जा सकता है। किन्तु यहाँ तो घर की भी सुध नहीं, फिर बाहर जाकर वैदिक धर्म का कर्म द्वारा प्रचार कौन करे।

फ्रांस को बड़ा ही गिरा हुआ देश समझा जाता है। किन्तु समाचार पत्रों में छपा है कि जहाँ सन् 1807 में फ्रांस के अन्दर 623 शराबी अदालत में पकड़े गए वहाँ इंग्लैंड और वेल्ज में दो लाख आदमियों ने मद्यप होने के कारण न्यायालय का मुँह देखा। यह जानना बड़ा आवश्यक है कि उसी समय के अन्दर हिन्दुस्तान की 28 करोड़ आबादी में से कितने शराबी बदमस्ती की हालत में पकड़े गए।

शुमाली अफ्रीका के दरवेशों ने इटालियन लोगों पर 2000 सिपाही को लेकर हमला किया। 48 कटवाकर पीछे हट गए। रूम और आस्ट्रिया की जंग छिड़ने ही वाली मालूम देती है। सारी टर्की (रूम) में आस्ट्रिया की बनी चीजों को बरबाद किया जा रहा है—केवल स्मरना इस नए जोश से मुक्त है। ह्याटी टापू में भी राजविद्रोह के साथ युद्ध की अग्नि प्रचंड होने वाली है। जब चारों ओर से सभ्य देश चीख चिहाड़े के शब्द ही आकाश में गुँजा रहे हैं जो यदि काली के पुजारी बंगाली आपे से बाहर हो जाएँ तो आश्चर्य नहीं करना चाहिए।

कलकत्ता में दमदमें की मेगजीन में आग लगकर बहुत से कारतूसों की समाप्ति तो हो ही गई, किन्तु साथ ही ग्यारह आदमी धमक से मकान के गिरने

पर मर गए और छब्बीस को ऐसी चोटें लगी हैं कि उनके बचने की कोई आशा नहीं है। उधर बम्बई के एक चीनी के कारखाने में आग लगकर नौ लाख का नुकसान हुआ। इस प्रकार की घटनाएँ निर्बलात्मा हिन्दुओं को बहुत ही विस्मित कर देती है। यदि चाहे कुछ ही साक्षी क्यों न दें, किन्तु सर्वसाधारण को यह विश्वास है कि राजा की नीयत का प्रजा की अवस्था पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

बंगाल में डाके बहुत पड़ रहे हैं–वर्तमान डाकों में एक वैचित्र्य यह है कि डाकू प्रायः पढ़े-लिखे आदमी होते हैं और उनके पास प्रायः रिवाल्वर, बन्दूकादि हथियार भी बढ़िया दिखाई देते हैं। गोराशाही अंग्रेजी अखबार तो यह लिखते हैं कि यह बंगाली सभ्य स्वदेशी के कारखाने खोलने के लिए डाके मारते हैं, किन्तु यदि इस आक्षेप को ठीक न समझें तब भी बंगाली सभ्यों को प्रयत्न करना चाहिए कि ऐसे डाकू अवश्य पकड़े जाएँ। लाहौर में कुछ देशभक्त लड़कों से दीन छबड़ीवालों की वस्तुएँ लुटवाकर कौमी जोश का सबक देते थे, क्या बंगाली अत्याचारियों ने भी तो देश रक्षा का अभ्यास डाकों से ही आरम्भ नहीं किया।

ग्रामोफोन एक बाजा है जिसमें भरे हुए शब्द ज्यों के त्यों फिर से सुनाई देते हैं। दुकानदारों ने उनमें ऐसे राग तथा ऐसी वक्तृताएँ भर दी हैं जिन्हें राजकर्मचारी राजविद्रोहजनक समझते हैं। इस प्रकार के राग ऐसी दावतों में निकाले गए जहाँ पूर्वीय बंगाल के लाट साहब तक सम्मिलित थे। अब गवर्नमेन्ट ऐसे ग्रामोफोनों का बिकना बन्द करना चाहती है और उसके लिए दण्ड नियत होगा, किन्तु क्या ऐसा करने पर अपराधी अपनी मतलब सिद्धी का अन्य कोई उपाय न निकाल लेंगे।

'वन्देमारतम्' (दैनिक) को तो अब गवर्नमेन्ट ने बन्द कर दिया। किन्तु पुनर्जन्म के नियम को रोकना गवर्नमेन्ट के वश में भी नहीं है। वन्देमारतम् अब 'स्वराज्य' की योनि में लन्दन नगर में उत्पन्न हो चुका है जिनके जन्मदाता विपिन बाबू हैं। बहादुर विपिन बाबू 'स्वराज्य' का सम्पादन करते हुए अपने पुत्र को भी उच्च विदेशी शिक्षा दिलाएँगे और उसे उस दिन के लिए तैयार करेंगे, जबकि इण्डियन पार्लियामेन्ट में राजमन्त्री का पद वह उपलब्ध कर सकेगा।

गरम दलवाले राजनीतिकों की कांग्रेस का जलसा नागपुर में होगा और वह भी कांग्रेस का 23वां या 24वां वार्षिकोत्सव ही मनाएँगे। लाहौर में आर्यसमाज के भी 32वें सालाने जलसे ही दोनों ओर मनाए गए थे। डाक्टर मंजे को स्वागतकारिणी सभा का प्रधान बनाकर यदि सरदार अजीतसिंह को नागपुर कांग्रेस का प्रधान बना दें तो मद्रास का जलसा आप से आप मात हो जाएगा। 'खूब गुजरेगी जो मिल बैठेंगे दीवाने दो।'

देहली में भी नर्म-गरम दोनों पार्टियाँ बन गई हैं। जलसा तो उस अन्जुमन का था जो कला-कौशल की उन्नति के लिए स्थापित हुई हैं, किन्तु यहाँ पंडित

रघुवरदयाल एम.ए. ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि सैयद हैदरजा के साथ उनके कोई भी साथी काम करने को तैयार नहीं। देहली से भी अब दोनों कांग्रेस के लिए मनमाने प्रतिनिधि आएँगे।

प्रसूता स्त्रियों की अधिक मौत का भयानक चित्र लाहौर 'ट्रिब्यून' के एक पत्र प्रेरक के बड़े करुणात्मक शब्दों में खींचा है। उनके एक मित्र ने बताया कि पंजाब के एक ग्राम में, जिसकी आजादी कुछ सहस्रों से अधिक नहीं, 70 प्रसूता स्त्रियों की मौत पिछले छः महीनों के अन्दर हुई। इसी प्रकार अन्य नगरों तथा ग्रामों की अवस्था की कल्पना करके उक्त महाशय सम्मति देते हैं कि यह मौतें केवल इसलिए होती हैं कि बालक के जन्म के समय मूर्ख दाइयों से ही काम लिया जाता है। यह कल्पना भी किसी हद तक ठीक हो सकती है, किन्तु मैंने अपने दस वर्षों (सम्वत् 1949 से लेकर 1959 विक्रमी तक) के निरीक्षण से यह परिणाम निकाला था कि प्रसूता होने के समय में अधिकतर पढ़ी-लिखी स्त्रियों के ज्वरादि रोग हो जाते हैं, जो उनकी मृत्यु के कारण बनते हैं। क्या 'ट्रिब्यून' के पत्र प्रेरक इस पर भी कुछ विचार करेंगे।

दयानन्द ब्रह्मचारी आश्रम, जिसे लाला लाजपतराय खोलना चाहते थे, चिरकाल से खुल रहा है, किन्तु यह पता नहीं लगता कि उसमें कितने ब्रह्मचारी अन्य प्रकार के व्यय के अतिरिक्त 25/- रुपए मासिक देने वाले प्रविष्ट हो चुके हैं। पहले समाचार पत्रों द्वारा सूचना मिली थी कि दीपमालिका पर वेदारम्भ संस्कार होगा जिसका उसी समय खंडन हो गया था। फिर अनारकली समाज के वार्षिकोत्सव के समय विभाग में वेदारम्भ संस्कार का समय छपा, किन्तु 10 दिसम्बर के 'ट्रिब्यून' में उक्त आश्रम के उपमन्त्री लाला रामप्रसाद लिखते हैं कि आठ नवम्बर से आश्रम इन्फोर्मेली खुला हुआ है। यथा 'फार्मल ओपनिंग सेरेमन' (नियमानुसार प्रतिष्ठा संस्कार) लाला लाजपतराय के इंग्लिश्तान से लौटने पर होगी।

वर्तमान घोर अव्यवस्था को रोकने के लिए विशेष कानून पास हो गया। बड़े लाट साहब को अधिकार दिया गया कि जिस अपराधी के विषय में चाहे आज्ञा दे दें कि मजिस्ट्रेट उसकी अनुपस्थिति में ही आन्दोलन करके चाहे उसे छोड़ दे, चाहे सीधा हाई कोर्ट में उसका चालान कर दे। वहाँ भी मामला संकुचित ही कर दिया गया है जिससे अत्याचारियों पर विशेष दबाव बैठ जाए। जिस समाज वा समिति को बड़े लाट कह दें कि अत्याचार फैलाने को खोली है उसके सभासद् होना ही मनुष्य को दंड का भागी बना देगा। उस सभा को चन्दा देना भी पाप समझा जाएगा। कहा जाता है कि यह कानून केवल बंगाल की विशेष समितियों को दबाने के लिए बनाया गया है, किन्तु यदि किसी अन्य सोसाइटी को भी अत्याचार का प्रचारक निश्चय कर दिया जावे तो उसके भी सभासदों के मुर्दा होने की अवस्था में, समाप्ति ही हो जाएगी। यदि इस कानून से नित्य नई अत्याचार

की भीषण घटनाएँ बन्द हो जाएँ तो मैं इस नए एक्ट को अच्छा ही समझूँगा।

बम्बई प्रान्त के गवर्नर श्रीमान सर ज्यार्ज् क्लार्क की धर्मपत्नी के देहान्त पर सर्वप्रकार के मनुष्यों ने शोक प्रकट किया है। सर ज्यार्ज क्लार्क ने पूजा से जो हित दिखाया तथा जिस न्याय दृष्टि से उन्होंने हिन्दू-मुसलमान दोनों को देखा उसके कारण इस विपत्ति के समय में सभी उनसे समदुखता प्रकाश करेंगे।

कलकत्ता के 'बंगवासी' के इस लेख पर 'पायोनियर' ने हँसी उड़ाई है कि 'यदि सुशिक्षित तथा धार्मिक पुलिस आफिसर रखे जाएँ तो वर्तमान हलचल बहुत कुछ शान्त हो सकती है।' मैं इसके साथ एक और सम्मति जोड़ता हूँ। वह यह है कि जब तक 'पायोनियर सिविल मिलिटेरी गजट', 'इंग्लिशमैन' आदि गोरेशाही अखबारों का मुँह बन्द नहीं किया जाता तब तक लॉर्ड मोर्ले के पेश किए हुए बड़े-से-बड़े संशोधन के नियम भी वर्तमान हलचल को दूर नहीं कर सकेंगे। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि इन सर्व अखबारों के सम्पादक धार्मिक पुरुष नियत किए जाएँ।

कादियाँ के मिर्जा मसीह होने के दावेदार थे। मरे तो वह विशेष रोग से और वह उस अवस्था में जबकि मौत को धोखा देने के लिए रोगी से बचते फिरते थे, किन्तु उनके अनुयायी इसमें भी एक चमत्कार ही मानते हैं। यह तो उनकी इच्छा पर निर्भर है। एक बात प्रत्यक्ष है कि मिर्जा के मरने के पश्चात् ढकों की आमदनी कम हो गई है। वार्षिक उत्सव समीप आ रहा है। दो हजार की आवश्यकता उसके व्यय के लिए है और पल्ले टका नहीं। यहाँ तक कि लंगरखाने में साधारण आवश्यकताओं के लिए रुपए की यहाँ तक जरूरत है कि गत माह के व्यय ऋण (करज) लेकर पूरे किए गए। सच कहा है कि 'मर्द की माया और वृक्ष की छाया साथ ही चली जाती है।'

महाशय गोपाल कृष्ण गोखले–18 दिसम्बर को बम्बई पहुँचेंगे। अब ज्ञात हुआ है कि उनके साथ पंडित दत्त चौधरी भी उसी तिथि को बम्बई पहुँचकर सीधे मद्रास कांग्रेस के जलसे में सम्मिलित होने चले जाएँगे। लाला लाजपतराय जी अभी तक इंग्लैंड में ही रहेंगे। उनकी ऋचाएँ बड़ी-बड़ी प्रसिद्ध सोसाइटियों में हुई हैं। यह काम और अन्य बहुत महाशय कर रहे हैं जिनकी प्रसिद्धि भी हो रही है। किन्तु यह परमात्मा को ही ज्ञात है कि गिरे भारत को उठाने का वास्तविक साधन क्या है ?

[सद्धर्म प्रचारक, 16 दिसम्बर, 1908]

जिसे पिया चाहे वही सुहागिनी

जिसे पिया चाहे वही सुहागिनी—यह प्रसिद्ध लोकोक्ति है। भला गरम पार्टी को तो पूछता ही कौन है। जबकि उनके अमल की ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की स्थिति के विरुद्ध है। (यद्यपि नागपुर में गरम दल के अधिवेशन को बन्द करने पर जो पूना के गरमों के रेजोल्यूशन किया उससे यही विदित होता है कि यदि उनका अधिवेशन होता तो वे भी लॉर्ड मोर्ले को धन्यवाद ही देते) कोई समय था कि गोरे मुँहवाले सर हेनरी काटन को भी कांग्रेस के प्रधान ही हैसियत से मिलने में भारत के वाइसराय ने संकोच किया था। किन्तु आज समय है कि एक नहीं, दो नहीं पाँच से अधिक काला लोग को 'इंडियन नेशनल कांग्रेस' के प्रतिनिधियों की हैसियत से मद्रास के गवर्नर महोदय ने बुलाकर खाना खिलाया। इधर लॉर्ड मिन्टो ने पहले ही बाबू सुरेन्द्रनाथ और बाबू मोतीलाल घोष तक से घंटों गुप्त बातचीत की। राजप्रतिनिधियों के इस अमल ने लोकोक्ति को पूर्ण कर दिया। 'जिसे पिया चाहे वही सुहागन, क्या साँवला, क्या गोरा रे।'

लॉर्ड मोर्ले ने अधिकार जो देने थे, हिन्दुस्तानियों को दे दिए। हिन्दू राजनीतिक बहुधा प्रसन्न हैं। गरमी को तो अब कोई पूछता भी नहीं। क्योंकि वे तो अभी सन्तुष्ट होंगे ही नहीं, किन्तु गवर्नमेन्ट के 'खास नमकहलाल' मुसलमान उनसे बढ़कर असन्तुष्ट हैं। उनके लीडर अली इमाम बैरिस्टर साहब ने एक ओर तो नरम दल के कांग्रेसवालों को भड़काया है कि यह अधिकार कुछ अधिकार ही नहीं, दूसरी ओर कांग्रेस के साथ सम्मिलित न होने का यह कारण बतलाया है कि कांग्रेसवाले गवर्नमेन्ट के सामने शोर मचाकर अपनी नमकहलाली का सबूत नहीं देते, किन्तु तीसरी ओर उसी व्याख्यान में गवर्नमेन्ट की नई कृपा को मुसलमानों के लिए अन्याययुक्त बतलाकर लॉर्ड मोर्ले के पास डेपुटेशन ले जाने पर जोर दिया है। यह तो हुआ मुसलमानों की नमकहलाली का दृष्टान्त। किन्तु कुछ हिन्दुस्तान का नमक खाए हुए अंग्रेजों ने लॉर्ड मोर्ले के लिए संशोधनों के रास्ते में विघ्न डालने का दृढ़ संकल्प कर लिया है जिसके कारण कांग्रेस के प्रधानादि ने इस संशोधनों की पड़ताल करना भी इस समय पाप बतलाया है। इसी हलचल के कारण बेचारे अश्विनी कुमार आदि नौ सभ्यों की ओर किसी की दृष्टि भी नहीं जाती। किन्तु

बात तो यह सधी-बधी हुई मालूम देती है। संशोधन पेश हो गया, अब देशनिकाला आदि हुए भी छोड़ दिए जाएँगे। और सम्भव है कि मि. गोखले बंग-भंग का भी कुछ संशोधन-सा करा दें, किन्तु यह कहना कठिन है कि जो बिगड़े हुए हैं वे सुधरेंगे या नहीं।

जिन राजनीतिक संशोधनों के लिए गरम दलवाले भी धन्यवाद के सिवाय कुछ नहीं कर सकते उनके भी कुछ मुसलमान भाई (जिनमें अधिकतर अलीगढ़ पार्टी के लोग हैं) विरुद्ध हैं। इसके लिए हेतु जानने की आवश्यकता नहीं। एक पंजाबी कहानी इन भोले भाइयों पर ठीक घटती है। एक जाट की औरत बड़ी उलटी थी। उसे जो कुछ कहा जाता था उसके विरुद्ध ही करती थी। एक दिन वह गुम हो गई। सन्देह हुआ कि कहीं नदी में बह न गई हो। जाट के इष्टमित्र उसकी आशा की तलाश में दरियाव के बहाव की ओर जाने लगे। जाट ने कहा बहाव के विरुद्ध चलो क्योंकि बहते हुए भी उसने अपनी प्रकृति काहे को बदली होगी। यही हाल कुछ मुसलमान भाइयों का है। जिस काम को हिन्दू अच्छा कहें उसे बुरा कहना उनका धर्म है। चाहे उससे ही उनको अधिक लाभ हो।

पंजाब की सरहद पर हिन्दुओं की बड़ी ही दुर्गति है। मुसलमान सरहदी आए दिन उनको लूट ले जाते हैं। सरकार अंग्रेजी जब धावे करते हैं तो यह लुटेरे भाग जाते हैं और जब सरकारी फौज लौट जाती है तो फिर मूँछों को ताव देने लगते हैं। सरकार को चाहिए कि सरहद के हिन्दुओं को अपनी रक्षा के लिए बिना लाइसेन्स के हथियार दे दे और उनके 16 से 60 वर्ष तक के मर्दों को हथियार चलाना और कवायद सिखा दिया करें। जब प्रजा की रक्षा की अपने में शक्ति न हो तो प्रजा को अपनी रक्षा के योग्य बनाने से रोकना उत्तम राजनीति के नियमों के विरुद्ध है। यदि सरकार इतनी सहायता भी न दे तो हिन्दुओं को चाहिए कि लाठी से ही काम लेना सीखें। और अपने शरीर ऐसे पुष्ट करें कि शत्रु के आघात उन पर काम न आ सकें।

श्रीयुत गोखले को राजनीतिक संन्यासी–कहना आर्यशास्त्रों की मर्यादा का उल्लंघन भले ही समझा जाए, किन्तु इसमें सन्देह नहीं है कि उन्होंने तीनों एषणाओं को जीत अवश्य लिया है। पुत्रेषणा से वह पहले ही मुक्त हैं। लोकेषणा से मुक्त होने का सबूत तो वह बकवास से बचकर दिन-रात दे रहे हैं और वित्तेषणा में तो कभी फँसे ही न थे। अब सुना गया है कि अमेरिका में उन्हें ऐसी संस्था में बोलने को बुलाया गया था जिसमें संसार के बड़े प्रसिद्ध सभ्यों को ही बोलने की आज्ञा होती है। जिन दिनों वह लेक्चर नियत थे। उन्हीं दिनों यहाँ काउन्सिल में आवश्यक विषय पेश होने थे। गोखले ने धन और प्रसिद्धि को छोड़ भारतवर्ष का रास्ता लिया। ऐसे आत्मत्यागियों से ही देश की भलाई की कुछ आशा हो सकती है।

[सद्धर्म प्रचारक, 6 जनवरी, 1909]

लन्दन में विद्यार्थियों की दशा

संसार-भर के शिरोमणि नगर लन्दन में बतलाया जाता है कि बड़ी संख्या ऐसे विद्यार्थियों की है जिन्हें पेट-भर खाना नहीं मिलता और वहाँ पाठशाला में सन्तान को न भेजने के लिए राजदंड मिलता है। इस समय पब्लिक चन्दे से 27000 पढ़ने वाले बच्चों को भोजन दिया जाता है। प्रति लड़का भोजन का व्यय एक सप्ताह में 5 शिलिंग अर्थात् 3111/- रुपए होता है। इसका मतलब यह है कि लन्दन के भूखे लड़कों के खाने पर महीने में 11/- एक व्यक्ति का खर्च आता है और भारतवर्ष में एक चपरासी 10/- मासिक में अपना और परिवार के दो-तीन और व्यक्तियों का गुजारा करता है। फिर यदि हिन्दुस्तानी प्रजा निर्धनता की शिकायत करे तो गवर्नमेन्ट को बड़ी दया से उसका आन्दोलन करना चाहिए। क्या भारत निवासी धनाढ्यों ने कभी इस ओर ध्यान दिया है कि कितने विद्यार्थियों को काश्यादि नगरों में भरपेट खाने को भी नहीं मिलता है।

नित्य नए मत नई और पुरानी दोनों दुनियाओं में बरसात के जन्तुओं की तरह पैदा होते और नाश को प्राप्त हो जाते हैं। अमेरिका से समाचार आया है कि वहाँ एक 'नानशार्प' नामी मनुष्य ने एक नया मत चलाया है जिसका स्वयं मुखिया है। शार्प ने अपना नाम 'आदम खुदा' (Adam God) रखा है और बहुत से अपराधी चेले-चाँटे जमाकर लिये हैं। पुलिस पाँच लड़कों को गिरफ्तार करना चाहती थी जिस पर आदम खुदा ने रिवाल्वर झोंक दी। फिर तो खूब जंग हुआ जिसमें एक पुलिसमैन मारा गया और दो घायल हुए। दूसरी ओर आदम खुदा ऐसा घायल हुआ कि उसके बचने की आशा नहीं है और एक 13 वर्ष की लड़की गोलियों से मारी गई। यूरोप और अमेरिका के मत प्रवर्तक बन्दूक और रिवाल्वर से सच्चे धर्म की शहादत देते हैं। इनके विरुद्ध भारतवर्ष में नए मतवादी केवल वाणी तथा लेखनी का ही आसरा लेकर युद्ध में प्रवृत्त होते हैं। मुडवारा निवासी बाबू हरीदास एक नए मत के प्रवर्तक हैं, जिसका नाम 'महज्जन पन्थ' है। इसकी इलहामी किताब तैयार हो गई है जिसका नाम 'हरीअगोचर प्रकाश' रखा गया है। हरीदास जी द्वैत का खंडन और अद्वैत मत का प्रतिपादन करते हैं, शास्त्रार्थ का चैलेंज देते हैं, किन्तु 'शास्त्र वाका वही प्रामाणिक मानेंगे जो इस विषय में अनुकूल वा उचित होंगे।'

तब तो अवश्य लोग शास्त्राचार्य को दौड़ेंगे। क्या नई पुस्तक बेचने को ही तो नया मत खड़ा नहीं हुआ ? अन्यथा अद्वैतवाद के पुस्तकों और मतों की कमी ही क्या है।

जिस फौजी अखबार ने निकालने की प्रतिज्ञा 'पायोनियर' ने की थी वह निकल आया। जिस रुडयार्ड किपलिंग ने लाहौर की गलियों में घूमकर और पंजाब का नमक खाकर होश सँभाला था और फिर भी जिसने अंग्रेजों को हिन्दुस्तानियों के विरुद्ध करने में कोई कसर नहीं छोड़ी—इसके लेखकों में से एक होगा। लॉर्ड किचनर इसके मुद्रित होने से बड़े प्रसन्न बतलाए जाते हैं और इसका मुख्य उद्देश्य हिन्दुस्तानी फौज के सिपाहियों को उनका कर्तव्य सिखाना है। मैंने सुना है कि लुधियाने का 'आर्मी न्यूज', जो बड़ी योग्यता से चलाया जाता था, बन्द हो गया है। किन्तु प्रश्न यह है कि क्या इस प्रकार देश के कामों की अन्य खबरें हिन्दुस्तानी सिपाहियों तक पहुँचनी बन्द हो जाएँगी। साधारण मनुष्यों को जिस काम से रोका जाए उससे अधिक हानि होती है। लॉर्ड किचनर यदि हिन्दुस्तानी सिपाहियों को राजभक्त बनाना चाहते हैं तो उन्हें मिलकर अपना समाचार पत्र अपने ढंग पर चलाने की आज्ञा दें।

इटली के पीड़ित मनुष्यों की सहायता के लिए चारों ओर से धन जा रहा है। और मनुष्य भी सर्वदेशों के दबे हुओं को निकाल रहे हैं। निजाम हैदराबाद ने 7500/- भेजने की प्रतिज्ञा की है। वाइसराय के प्राइवेट जलसा करने पर 21000/- जमा हो गए। भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों में भी चन्दा हो रहा है।

ब्रह्मसमाज की ओर से मद्रास में आस्तिक समिति का अधिवेशन, राजनीतिक कांग्रेस के साथ इस वर्ष भी हुआ। ईसाई अखबार उसे मसीह की बरकत ही बतलाते हैं, किन्तु सोशल कान्फ्रेंस की कार्यवाहियों से प्रतीत होता है कि हमारे ब्रह्मसमाजी भाई, ईसाई मत तथा इस्लाम से निराश होकर फिर से हिन्दुओं का एक पंथ बनाने की फिक्र में है। सांसारिक घटनाएँ मनुष्यों में विचित्र परिवर्तन उत्पन्न कर देती हैं, जो बात ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के समझाने पर न मानी गई वह उस बंग-विच्छेद ने जबरदस्ती मनवा दी।

बकरीद पर कलकत्ता में मुसलमानों ने मजिस्ट्रेट की आज्ञा के विरुद्ध गो हत्या की। हिन्दुओं ने जोश दिखलाया। मुसलमानों ने उनकी खबर ली। हाकिम शान्ति कराने आए। उन पर भी हमले हुए। कुछ पुलिसवाले और कुछ मुसलमान घायल हुए। बहुत से पकड़े गए। यह सब कुछ हुआ, किन्तु मुसलमानों को अब तक किसी ने बागी नहीं कहा, बल्कि नवाब सलीमुल्ला का धन्यवाद दिया गया। जब मनुष्य एक दल पर दबाव डालकर एक-दूसरे को मित्र कह चुके तो फिर मित्र के द्रोह करने पर उसकी करतूत पर पर्दा डालना ही पड़ता है, किन्तु राजधर्म का पालन इस तरह नहीं हो सकता।

लाहौर के महाशय दीनानाथ जी की विधवा ने 10,000/- रुपए नकद गुरुकुल में ब्रह्मचारियों के लिए निवास स्थान बनाने के अर्थ अपनी वसीयत द्वारा दान दिया है। इसी के साथ 10,000/- रुपए के मकान में ऐंग्लो-वैदिक कालेज को दिए हैं जिनकी आमदनी से बी.ए. की संस्कृत परीक्षा में प्रथम निकलने वाले को छात्रवृत्ति मिलेगी। छः हजार रुपए के जेवरात कूंडाबाबियाँ की पुत्री पाठशाला के मकान के लिए तथा 300/- लाहौर बच्छोंवाली आर्यसमाज की पुत्री पाठशाला को दान दिया है। इस प्रकार के दानों से ज्ञात होता है कि हिन्दुओं में दान शैली भी बदलती जाती है।

मिस्टर मालावारी ने फिर गवर्नमेन्ट खिताब से इन्कार कर दिया। अब की बार उनसे पूछा गया था कि के.सी.ए.आई. का खिताब वह स्वीकार करेंगे या नहीं। उत्तर फिर वही मिला कि उनका धर्म उन्हें खिताब लेने की आज्ञा नहीं देता। क्या निवृत्ति मार्ग के प्रर्वतक आर्य ऋषियों की सन्तान संन्यासी मालाबारी के जीवन से कुछ शिक्षा न लेंगे।

आर्यसमाज लाहौर के दोनों विभाग की कामयाबी तथा गुरुकुल और दयानन्द कालेज के लिए दो लाख लगभग दान की आय सुनकर सरकारी कालेजवालों से सहन नहीं हो सका। शिकायत है कि लोग सरकारी स्कूलों और कालेजों को क्यूँ दान नहीं देते। अब इसका प्रबन्ध यह सौदा हो गया है कि जो कोई दो-चार सौ भी छात्रवृत्ति के लिए दे तो गवर्नमेन्ट को ओर से उसका विशेष धन्यवाद समाचार पत्रों में छपा करे। इससे भी कुछ कार्य सफलता न होगी जब तक कि यह पता न लगाया जाए कि गुरुकुलादि को लोग इतना दान क्यूँ देते हैं।

शाह फारस ने सुलतान रूम को पार्लियामेन्ट खोलने पर मुबारकबाद का पत्र भेजा है। उत्तर में सुल्तान ने शाह के मुल्क का कल्याण चाहा है। किन्तु क्या इन नुमाइशों से फारस की प्रजा का दुख दूर हो जाएगा। ऐसी ही नुमाइश इस समय हमारे देश की बहुत सी समाजें कर रही हैं। जब तक मक्कारी का राज्य रहेगा सच्ची शान्ति आ नहीं सकती।

तिब्बत की सरकार पर अंग्रेजों ने इसलिए हमला किया था कि तिब्बतवाले उनके काबू आ जाएँगे, किन्तु परिणाम उलटा निकला। स्पेन हेडिन, यूरोपियन पथिक जो वहाँ से लौटे हैं बतलाते हैं, कि तिब्बती अंग्रेजों के विरुद्ध हो रहे हैं और इसके लिए चीन राज्य के काबू आ रहे हैं। मार-मारकर प्रेम किसी बिरले से ही कराया जा सकता है।

अनात्मा को आत्मा समझना अविद्या का एक लक्षण है। इसी की बदौलत भारतवर्ष को बहुधा कष्ट भोगने पड़ते हैं। तिनावलि (प्रान्त मद्रास) के प्रसिद्ध श्री सुब्रमोनया के मन्दिर में घुस किन्हीं बिगड़े दिलों ने मन्दिर के ठाकुर अनरेसिदेंग की मूर्ति का सिर तोड़ डाला। कहा जाता है कि यह करतूत इस देवता के एक

भक्त की है जिसने अपना कोढ़ दूर कराने के लिए बहुत-सी पूजाएँ की और अपनी इच्छित कामना को पूरी न होती देखकर क्रोध में आकर अपने इष्टदेव की ही खबर ले डाली। मन्दिर के पुजारियों ने प्रायश्चित के लिए राज्य त्रावणकोर से बहुत-सा धन माँगा है। राज्य से शायद धन मिल ही जाए और पुजारियों का पेट भर ही जाए, किन्तु जब तक आनात्मा में आत्मा की कल्पना करके लोग मूर्ति पूजा रूपी घृणित काम में फँसे रहेंगे तब तक कभी भी संसार के दुख दूर न होंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 13 जनवरी, 1909]

शुमाली देश में युद्ध की संभावना

शुमाली देश में युद्ध की सम्भावना–अफ्रिका के उत्तर पूर्व कोने पर जो शुमाली देश है उस के बड़े हिस्से का मालिक मुल्ला उन मुसलमानों को तंग कर रहा है जो अंग्रेजों से प्रेम रखते हैं। हाल में ही मुल्ला ने उनके दो सहस्र ऊँटों को छीन लिया है और अनेक पुरुषों को मार डाला है। अतः अपने मित्रों की रक्षा करने अर्थात् मुल्ला को दमन करने के लिए अंग्रेज सरकार 1600 योद्धाओं को शुमाली देश में भेजने का प्रबन्ध कर रही है। अच्छा हो कि युद्ध का समय उपस्थित न होवे और मुल्ला पूर्ववत शान्त हो जाए।

लोकैषणा की तृप्ति कैसे हो ? अमेरिकन महद्राज सभा के प्रधान रूजवेल्ट महाशय को इस समय कदाचित ही कोई राजनीतिक होगा जो न जानता हो। पतित हब्शियों को भी अपने हृदय से लगाते हुए जिस दया भाव का परिचय उन्होंने दिया है उससे अनेक्रों बार उनकी प्रशंसाएँ हो चुकी हैं। अमेरिका के बड़े-बड़े धनाढ्य वणिकों के के एका से ट्रस्टों के द्वारा जो साधारण पुरुषों और दोनों को बचाने के लिए जिस प्रबल शक्ति से ट्रस्टों को तोड़ने के लिए उन्होंने यत्न किया है यह भी प्रकट हो चुका है। परन्तु ऐसे दीनदयाल पुरुष को अमेरिका के सीनेट नाम महासभा में गत 11 जनवरी को मिस्टर टिलमेन ने व्याख्यान देते हुए कहा है कि प्रेसिडैंट रूजवेल्ट छली-कपटी पुरुष है। ईर्षा, द्वेष इसमें भरा हुआ है और कायर है। ऐसी घटनाओं को देखकर जो लोकैषणा अर्थात् अपनी प्रशंसा के भूखे हैं उन्हें समझना चाहिए कि लोगों को प्रसन्न करने के और उनसे प्रशंसा प्राप्त करने के लिए चाहे कितना भी यत्न क्यों न किया जाए परन्तु अनेक लोग ऐसे होंगे जो बदनाम करने के लिए यत्न किया करेंगे। अतः लोगों को प्रसन्न कर उनसे वाह-वाह सुनने की इच्छा परित्याग परमात्मा की आशा पालन करते हुए मनुष्य समाज के कल्याण में तत्पर होना चाहिए चाहे इस कर्त्तव्य पालन में सुनाम मिले वा दुर्नाम।

पुनः भूकम्प–मेसीना और कैलीबिया में भयंकर भूकम्पों के कारण जो दुर्घटनाएँ हुई हैं उन्हें पाठक पढ़ चुके हैं। अब समाचार मिला है कि दक्षिण आस्ट्रेलिया देश में भी अनेक भूकम्प आए हैं। वल्पेना नगर में रात्रि के समय भूकम्प आया। नगरनिवासी अपने मूल्यवान वस्तुओं और बच्चों को लेकर गृहों से निकल

भागे, परन्तु क्षति विशेष न हुई। उत्तर अमेरिका के टाउनसेंड नगर में गत 11 जनवरी को भूकम्प आया। कई मकानों की छतें टूट पड़ीं, खिड़कियाँ टूट गईं, जल कलों के टूट जाने से पानी का प्रवाह घरों में घुस गया। समीपवर्ती माउन्ट वेकर नाम ज्वालामुखी थोड़ी देर तक आग फेंकता रहा। शोक है कि इन दैवी दुर्घटनाओं को देखकर भी लोग नहीं चेतते। इस समय संसार में परमात्मा की भक्ति का सुप्रचार न होने से चारों ओर पाप फैल गया है। यूरोप और अमेरिका प्राकृतिक विद्या में उन्नत होकर भी अब तक परमात्मा की महिमा को भलीभाँति समझ न सके। अतः पापों का प्रवाह रुका नहीं। आवश्यकता है परमात्मा के उन सच्चे भक्तों की जो मानापमान को परित्याग, परमात्मा की आज्ञाओं को पृथ्वी के प्रत्येक खंडों के रहने वालों को सुनाते हुए उन्हें पापों के बचाएँ और परमात्मा के भक्त बनाएँ। ताकि पृथ्वी अपनी वर्तमान दुरावस्था को परित्याग, अपनी प्राचीन सुअवस्था को फिर से प्राप्त हो।

सुल्तान रूम और आस्ट्रिया नरेश–के बीच का अनबन अभी तक मिटा तो नहीं, परन्तु अब उसके दूर हो जाने के लक्षण दीख पड़ते हैं। बोसनिया और हर्जगोविना प्रदेशों को अपने राज्य में मिलाने के बदले आस्ट्रिया नरेश सुल्तान रूम को अब 25 लाख अशर्फी देना चाहते हैं। अतः अनुमान होता है कि बात अब अधिक न बढ़ेगी और झगड़े का निपटारा हो जाएगा। अच्छा हुआ नहीं तो वैमनस्य बढ़कर सहस्रों का रक्त शोषण कर डालता।

प्रचरित मतों की एक महती सभा–समाचार पत्रों से यह ज्ञात कर हर्ष हुआ कि कलकत्ता नगर के नम्बर 85 के स्ट्रीट में एक सभा (जिसके प्रधान श्री शारदाचरण मित्र पूर्व न्यायाधिपति कलकत्ता हाईकोर्ट तथा मन्त्री श्री भूपेन्द्रकुमार बोस एम.ए.बी.एल नियत हुए हैं) इस अभिप्राय के स्थापित की गई है कि वह बौद्ध, जैन, वैष्णव, शैव, सिक्ख, ब्राह्म, थियोसोफी, क्रिश्चियन, इस्लाम, पारसी, यहूदी आदि मतों तथा आर्य धर्मावलम्बियों के नेताओं को आमन्त्रित कर उनकी एक सभा कलकत्ता नगर में कराए जिस सभा में प्रत्येक मत का एक मुख्य पुरुष अपने मत वा धर्म के सिद्धान्तों और सुन्दरताओं को दूसरे मतों पर आक्षेप न करता हुआ अपने लेख द्वारा वर्णन करे। न मालूम अभी तक इस विषय की सूचना आर्य प्रतिनिधि सभाओं को पहुँची है या नहीं, यदि पहुँच चुकी हो तो उक्त महासभा के अधिवेशनादि का समय ज्ञात कर सुयोग्य आर्यों को उक्त सभा में भेजने का उद्योग करना चाहिए। आशा है कि आर्यसमाज, कलकत्ता इस विषय में आर्यप्रतिनिधि सभाओं को यथोचित सूचनाएँ भेजता रहेगा।

सुल्तान रूम के एक पुत्र–जहाज सम्बन्धी शिक्षाओं को ग्रहण करने के लिए अमेरिका को रवाना हुए हैं। भारत के देशी राजे-महाराजों को प्रायः विषयानन्द से ही अवकाश नहीं मिलता फिर उनकी उन्नति हो तो कैसे ?

आकाशयान–जिसे प्राचीन भारतवासी बड़ी उत्तमता के साथ चलाते थे और जिसके विषय में अपने संस्कृत ग्रथ में इतना उल्लेख है, उसके सुनिर्माण के लिए जर्मनी में बड़े-बड़े उद्योग हो रहे हैं। मालूम होता है कि साधारण आकाशयानों को नियमपूर्वक चलाने की विधि जर्मनीवाले अब सीख चुके हैं। उक्त देश के कैकफोर्ट नगर में आकाशयानों के चलाने के लिए एक कम्पनी स्थापित हुई है जिसने सात ऐसे-ऐसे आकाशयानों के निर्माण की आज्ञा दी है जिनमें से प्रत्येक में दस से पन्द्रह तक यात्री चढ़ सकें। ये आकाशयान प्रारम्भ में जर्मनी और नार्वे के पन्द्रह नगरों के बीच चला करेंगे। परीक्षा में उक्त आकाशयान यदि उपयोगी सिद्ध हुए तो आकाशयानों के द्वारा ही भूखंड की यात्रा को लोग अधिकतर पसन्द किया करेंगे।

[सद्धर्म प्रचारक, 20 जनवरी, 1909]

राज प्रतिनिधि की पुत्री का विवाह

राज प्रतिनिधि श्री लॉर्ड मिन्टो महोदय की पुत्री का विवाह भारतवर्ष के भूतपूर्व वाइसराय लॉर्ड लेन्सडौन के पुत्र के साथ कलकत्ता में हुआ। सिवाय तीन हिन्दुस्तानियों के, जिनमें सर जनरल प्रतापसिंह ईडर नरेश भी सम्मिलित थे, किसी हिन्दुस्तानी को विवाह के समय गिरजाघर (चर्च) में ठहरने की आज्ञा लाट पादरी साहब ने न दी। इस पर यद्यपि कुछ लोगों ने बुरा माना तथापि किया क्या जाता। रंग में भंग कौन डलवाना चाहता है ? क्या यह अवस्था सिद्ध करती है कि सरकार अंग्रेजी अपनी पालिसी में कामयाब हुई है ?

अमरीका के प्रेसीडेन्ट रूजवेल्ट ने ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के भारतवर्ष के राजशासन की बड़ी प्रशंसा की है। इनके विरोधी मिस्टर ब्रायन (Mr. Bryan) ने, जो अमरीकन राज्य के प्रधान पद से उम्मीदवार थे, भारतवर्ष में घूमकर अंग्रेजी राज्य शासन को हिन्दुस्तानियों के लिए हानिकारक बतलाया था। सम्भव है कि गत चुनाव में यदि रूजवेल्ट के आबुर्दे मि. ट्रेफ्ट (Mr. Taft) के स्थान में मिस्टर ब्रायन ही प्रधान बन जाते तो भारतवर्ष के राज शासन के विषय में उनकी सम्मति भी बदल जाती।

अंग्रेजी राज्य के विषय में पहले हिन्दुस्तानियों तथा अंग्रेज समाचार पत्रों के सम्पादकों को मतभेद था। जहाँ हिन्दुस्तानी कहते थे कि न्याय और प्रेम से बढ़कर कोई राजबल नहीं हो सकता, वहाँ गोराशाही समाचार पत्रों का कथन था कि ब्रिटिश कौम ने तलवार के बल से हिन्दुस्तान को विजय किया है और उसी के बल से वह उसे काबू रखेगी। किन्तु अब गोराशाही अखबारों के मुखिया 'पायोनियर' ने भी मान लिया है कि 'अंग्रेज का राज्य तलवार का राज्य नहीं है। यदि हमारे हिन्दुस्तानी राज की बुनियाद धर्म, न्याय, मनुष्यत्व, स्वतन्त्रता तथा योग्यता पर है।...' इस परिवर्तन का कारण क्या है ? यदि यह परिवर्तन सच्चे तजुरबे के कारण हुआ है तो राजा तथा प्रजा दोनों के लिए सुखदायी होगा; किन्तु यदि इस परिवर्तन का प्रेरक यह साधारण लोकोक्ति है, 'टेढ़ जान शंका सब काहू। वक्र चन्द्रमा ग्रहे न राहू' तो राजा तथा प्रजा दोनों के लिए ही यह गोराशाही अखबार दुखदाई सिद्ध होंगे।

प्रयाग के गोराशाही अखबार की ओर से 'फौजी अखबार' का नोटिस रखकर

चार रुपए तीन आने का खून करना मैंने आवश्यक ही समझा। मेरा यह अनुमान ठीक न निकला कि रोमन लिपि में अखबार निकलेगा। अखबार उर्दू टाइप में छपता है। इस अखबार का उद्देश्य यह है कि संसार का समाचार हिन्दुस्तानी सिपाहियों के सामने इस प्रकार रखा जाए कि वे जहाँ अपने देश के बड़े आदमियों से घृणित हो जाएँ वहाँ अंग्रेजों को देवता तथा अन्नदाता समझते रहे। लॉर्ड किचनर की विशेष सम्मति से यह अखबार चलाया गया है। संवाददाता सब फौजी होंगे और गोराशाहियों के बादशाह रुडियार्ड किपलिंग इसमें अपने चुटकले लिखकर सफेद आदमियों (white man) का देवत्व सिद्ध करेंगे। अपने नौकरों को अपना भक्त बनाने का प्रयत्न तो ऐसा है जिसमें दूसरों का दखल नहीं, किन्तु काम पेंचदार नहीं होना चाहिए। जो आर्थिक लाभ इस अखबार से 'पायोनियर' को होगा क्यों न वह लॉर्ड किचनर के कार्यालय का ही हो और क्यों न उक्त लॉर्ड महोदय के अधीन कुछ हिन्दुस्तानी सरदार ही इस पत्र का सम्पादन करें। किन्तु क्या ऐसे ढंगों से हिन्दुस्तानी फौजियों तक देश के समाचार पहुँचने बन्द हो जाएँगे ? इसका उत्तर लॉर्ड किचनर को चार सप्ताह में ही मिल चुका होगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 जनवरी, 1909]

मुसलमान और लॉर्ड मिन्टो

मुसलमानों ने लार्ड मिन्टो की सेवा में प्रार्थना पत्र भेजा है जिसमें यह याचना की है कि उनका भी एक प्रतिनिधि बड़ी कौंसिल में होना चाहिए। यह प्रार्थना पत्र पढ़कर हमारे हृदय में दो विचार उत्पन्न हुए, एक तो यह कि वह देश बड़ा ही दुर्भागी है जिसमें मुख्य-मुख्य पद योग्यता के अनुसार नहीं, किन्तु मत के अनुसार प्रदान किए जाते हैं। जब कभी किसी जज की पोस्ट रिक्त होती है तो मुसलमान झट कह देते हैं कि मुसलमान होना चाहिए। चाहे अन्य जातियों में बड़े योग्य पुरुष उपस्थित हों जिनकी कोई मुसलमान बराबरी न कर सकता हो। हम नहीं समझते कि यह बात यदि सदा हो जाया करे तो इसमें मुसलमान जाति को विशेष लाभ क्या है। क्योंकि जो कोई महोदय न्यायाधीश के आसन को सुशोभित करेगा वह राजनियम के अनुकूल ही फैसला करेगा। जज की कुरसी पर बैठा हुआ वह न हिन्दू होगा, न मुसलमान। किन्तु सत्य और न्याय का निष्पक्ष पोषक इन पदों पर नियत पुरुष जितना अधिक योग्य होगा उतना ही हिन्दू, ईसाई, मुसलमानों आदि सभी को अधिक लाभ योग्य होगा। कांग्रेसवालों की प्रार्थनाओं पर यह शंका नहीं उठ सकती, क्योंकि उनका पक्ष यह है कि हिन्दुस्तानियों को उनमें योग्यता होते हुए भी उच्च पद केवल इसलिए नहीं मिलते कि वह हिन्दुस्तानी हैं और कई बार उन अंग्रेजों की जो कई हिन्दुस्तानियों की अपेक्षा अयोग्य हैं, केवल इसलिए पद मिल जाते हैं वह अंग्रेज हैं। मुसलमान यह नहीं शिकायत करते कि योग्य मुसलमानों को मुसलमान होने के कारण किसी पद से वंचित रखा जाता है। वह तो यह चाहते हैं कि मुसलमानों के साथ मुसलमान होने के कारण रियायत की जाए। यदि गवर्नमेन्ट मुसलमानों की ऐसी अनुचित प्रार्थनाएँ स्वीकार करी गईं तो कोई समय आएगा जब और जातियाँ भी, जिनकी संख्या कम है, उसी प्रकार के अधिकार चाहेंगी। हम यह नहीं कहते कि मुसलमानों की सहायता न की जाए या उनको विशेष वजीफे देकर अपनी कमी को पूरा करने का अवसर न दिया जाए। किन्तु यह हम अवश्य कहते हैं कि उत्तरदायित्व के पद किसी मनुष्य को हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, अंग्रेज या हिन्दुस्तानी होने के कारण नहीं मिलने चाहिए। जो योग्य हों उसी को नियत करना उचित है। हमारा विचार जो हमारे मन में उत्पन्न हुआ है वह

यह है कि जो लोग यह समझते हैं कि धर्म के एक हुए बिना ही भारतवर्ष में एक जाति बन सकती है उनकी कितनी बड़ी भूल है। मुसलमानों में से बहुत से तो वास्तव में यहीं के रहने वाले हैं और जो अन्य देशों से आए थे उनको यहाँ रहते हुए भी कई शताब्दियाँ व्यतीत हो गई हैं। किन्तु उनमें से कई अपने आपको उतना ही विदेशी समझते हैं जितना कि बाबर के समय के मुगल समझते थे। वह बड़े अभिमान से कहते हैं कि वह तातारियों की सन्तान हैं, उनका इस देश पर राज्य रह चुका है इसलिए उनको विशेष अधिकार मिलने आवश्यक हैं। इतना कहने मात्र से ही वह अपने आपको देश से पृथक् सिद्ध करते हैं। जब तक सत्य धर्म के प्रचार से लोगों के अन्दर से तुच्छभाव दूर नहीं होते और जातीय और मतीय द्वेष प्रेम की पवित्र ज्वाला में भस्म नहीं हो जाते तब तक यह आशा रखनी वृथा है कि पोलिटिकल अधिकार भारतवासियों को कोई लाभ पहुँचा सकते हैं।

कैलिफोरनिया (अमरीका) की राजसभा में एक राज्यनियम पास हुआ है कि जापानी विद्यार्थियों के लिए पृथक् विद्यालय खुलने चाहिए और उनको साधारण विद्यालयों में पढ़ने की आज्ञा न होनी चाहिए। बिल का पास होना था कि हाहाकार मच गया। प्रधान रूजवेल्ट ने कैलिफोरनिया के अध्यक्ष को तार दिया कि यह बिल बहुत घृणित है। और अमेरिकन विराज्य के मौलिक नियमों के विरुद्ध है। अध्यक्ष ने यह सूचना राज्य सभा तक पहुँचाई। राज्यसभा ने इस बिल के अनुकूल कार्यवाही का होना इस समय बन्द कर दिया है। आशा पड़ती है कि यह बिल खंडित हो जाएगा। बलवानों और आत्मसम्मान रखने वालों से कोई बिगाड़ना नहीं चाहता।

आस्ट्रिया में एक सीजेक (Chizeck) जाति है जिसकी भाषा को बोहेमियन (Bohemian) कहते हैं। Bohemian भाषा बोलने वाले सदा से यह यत्न करते रहते हैं कि उनकी भाषा का कहीं नाश न हो जाए और जर्मन भाषा के अधिक प्रचार से उनके जात्यत्व का कहीं सर्वथा अभाव न हो जाए। पहले यह निर्णय हुआ था कि Bohemian और मोराविया (Moravia) के प्रदेशों में कोई पद किसी ऐसे पुरुष को न दिया जाए जो जर्मन और बोहेमियन, दोनों भाषाओं को भली प्रकार न जानता हो। अब जर्मन भाषा के बोलने वाले बिगड़े बैठे हैं। यह झगड़ा इतना बढ़ गया है कि अब की बार महाराज को राजसभा का अधिवेशन कोलाहल के कारण बन्द करना पड़ा। कुशिक्षित भारतवासी तो इस वाद को हास्यजनक समझते होंगे, क्योंकि वह तो अपनी भाषा के लिए अपने हाथों से चिता तैयार कर रहे हैं, जो आदमी विदेशी भाषा में बातचीत नहीं करता वह मूर्ख समझा जाता है। जो लेख विदेशी भाषा में लिखा हुआ नहीं होता वह मान्य की दृष्टि से नहीं देखा जाता। किन्तु इतिहास के विद्यार्थी भली प्रकार जानते हैं कि भाषा और जात्यत्व का परस्पर कितना गूढ़ सम्बन्ध है। किसी जाति का पृथक् व्यक्तित्व केवल

उसकी सभ्यता, साहित्य, संस्कारों और विचारों के कारण ही हो सकता है और यह सब भाषा में सुरक्षित रहते हैं। यदि किसी जाति की भाषा का नाश हो जाए तो इन सबका नाश हो जाता है या यों कहो कि जाति का भी (एक पृथक् व्यक्ति के ख्याल से) सर्वथा नाश हो जाता है। इससे सिद्ध हुआ कि जो जाति जातीय भाषा की उन्नति की ओर ध्यान नहीं देती वह आत्मघात के दोष से कदापि नहीं बच सकती। यदि इस सिद्धान्त को स्वीकार न लिया जाए तो यह मानना पड़ेगा कि जो लोग अपना सारा समय तो विदेशी भाषा और विदेशी विचारों के अभ्यास्कि प्रचार में लगाते हैं, किन्तु देशभक्ति की पुकार में सबसे आगे बढ़े हुए हैं, वह किसी अवस्था में भी सच्चे देश हितैषी नहीं कहे जा सकते। कितने शोक की बात है कि जिन लोगों की भाषाएँ त्रुटियों से भरी हुई हैं वह तो उनके प्रचार के लिए पूरा यत्न करते हैं। किन्तु वह जाति जिसको देववाणी, सब भाषाओं की माता और सबसे अधिक निर्दोष पैतृक सम्पत्ति की रीति से मिली है वह इसका तिरस्कार करती है। प्राचीन भारतवर्ष के इतिहास और संस्कृत की पुस्तकों की रक्षा के विषय में जितना काम हो रहा है उसके करने वाले प्रायः विदेशी ही हैं। क्या अधोगति का गढ़ा कभी इससे भी गहरा हो सकता है। क्या इस देश के भाग फिर न खुलेंगे ? क्या भारत के सुयोग्य सुपुत्र अपने मुख्य कर्तव्य की ओर ध्यान न देंगे। किन्तु देशभक्तों से आशा रखनी वृथा है जबकि आप जो संस्कृत के प्रचार को न केवल भारतवर्ष, किन्तु सारे संसार की उन्नति के साथ जोड़ते हुए इस विषय में अपना कर्तव्य पालन नहीं करते। कितने आर्यसमाजी हैं जो आज तक उर्दू तथा अंग्रेजी में पत्र व्यवहार करते हैं। कितने नेता है जो संस्कृत को मातृभाषा बतलाकर न केवल आर्यबालकों की, किन्तु आर्य बालिकाओं को भी मुख्यतया इंग्लिश भाषा ही पढ़ाना चाहते हैं। कितने आर्यसमाजी पति हैं जो अपनी धर्मपत्नियों की ओर प्रेम-भरी दृष्टि डालते हैं जब कभी उनके मुख से अंग्रेजी का कोई टूटा-फूटा शब्द भी निकलता है। कितने युवक हैं जिन्होंने अपनी धर्मपत्नियों को अंग्रेजी पढ़ाने के लिए विशेष अध्यापिका रखी हुई है और कितने ऐसे हैं जिन्होंने परिवारों में संस्कृत पढ़वाने का विशेष प्रबन्ध कर रखा है। कितने युवक हैं जिनको पहले अविश्वास की दृष्टि से देखा जाता था, किन्तु ज्यों ही उन्होंने अंग्रेजी बोलना अथवा लिखना सीख लिया वह नेता बन गए। कितनी आर्यसमाजों के रजिस्टर अब तक अंग्रेजी में रखे जाते हैं। यह प्रश्न हैं, जिनका उत्तर प्रत्येक आर्यसमाज के अग्रगामी कार्यकर्ता को अपनी आत्मा से माँगना चाहिए। यह शब्द कड़वे तो प्रतीत होंगे, किन्तु लीडर लोग नित्य प्रशंसा के वाक्य तो सुनते ही हैं, यदि कभी-कभी उनका ध्यान उनकी और उनकी समाज की त्रुटियों की ओर आकर्षित न किया जाए तो भय यह रहता है कि कहीं उनके यह उन्नतिनाशक विचार बिगड़ न जाए कि उनका काम सर्वथा निर्दोष है। क्या हम

आशा करें कि एक साधारण निर्बल त्रुटियों से भरे हुए पुरुष की निर्बलता सच्चे आवेश से रहित, किन्तु सत्य की घोषणा देने वाली शब्द आर्यसमाज के अग्रगामियों पर कोई प्रभाव डालेगा और वह उस ओर अधिक ध्यान देंगे ? पिछले साल जितना काम इस विषय में उन्होंने किया है वह वास्तव में प्रशंसनीय है। किन्तु अभी और काम की आवश्यकता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 10 फरवरी, 1909]

देशभक्ति की आड़ में अत्याचार

देश भक्ति की आड़ में जिस प्रकार के अत्याचार यूरोपियन देशों में होते हैं, उन पर यदि दार्शनिक दृष्टि डाली जाए तो भारत निवासी बहुत सी खराबियों से बच सकते हैं। अंग्रेजों का लन्दन नगर संसार-भर के देशभक्तों का माँ-बाप समझा जाता रहा है। लखनऊ के चण्डूखानों में अहदियों को वह पनाह नहीं मिलती जो लन्दन नगर में, फ्रांस, रूस तथा अन्य देशों के अत्याचारी राजविद्रोहियों को मिलती रही है; और अंग्रेज सदैव इसका अभिमान करते रहे हैं। अब लन्दन से समाचार आया है कि दो रूसी 'अनार्किस्टों' (नास्तिकों) ने न केवल खून ही किए प्रत्युत बीसियों को घायल कर दिया। घातक दो थे जिनमें से एक ने स्वयं गोली मारकर अपने आपको घायल कर लिया और दूसरा एक पुलिसमैन की गोली से मारा गया। अब सुना है कि उनके सभी रूसी सैकड़ों पिस्तौलें लिये घूमते हैं जिनसे भले मानस आदमियों को जान का भय है। अब अंग्रेजों की आँखें खुली हैं और हिन्दुस्तान के गोराशाही अखबार भी अपनी मूर्खता पर आँसू बहाने लग गए हैं।

हिन्दुस्तानी इस समाचार को सुन प्रसन्न हो रहे हैं। इन दुष्टों के साथ भली हुई; यह इसी योग्य थे। यह बच्चों का-सा प्रलाप है। प्रश्न यह है कि क्या इस घटना से हिन्दुस्तानियों ने भी कुछ शिक्षा ली। जब कोई अत्याचारी उन्मत्त, मूर्ख हिन्दुस्तानी आर्यों की शास्त्र मर्यादा के विरुद्ध यूरोपियन अबलाओं पर आक्रमण करते वा अंग्रेज राज कर्मचारियों का घात करते हैं। तब बहुत से भारत निवासी उन घातकों को उसी प्रकार पनाह देते हैं जैसे अंग्रेज अन्य देशों के राजविद्रोहियों को देते थे। किन्तु यह घातक किसी दिन अपने ही मनुष्यों के घातक न सिद्ध होंगे इसका क्या निश्चय है ? अभी से विचित्र डाके पड़ने लग गए हैं और यदि इस भयानक लहर को न रोका गया तो आर्यों का सनातन धर्म भी हमारी रक्षा के योग्य न रहेगा। आर्य पुरुषों को ऐसी पिशाच लीला के साथ तनिक भी सहानुभूति नहीं करनी चाहिए, प्रत्युत धर्म के उपदेश द्वारा लोगों के गिरे हुए आत्माओं को उठाने का प्रयत्न करना चाहिए।

जहाँ एक रोटी को बाँटकर दस सच्चे साधु अपना निर्वाह कर सकते हैं, वहाँ दो कुत्ते पाँच हड्डियों को भी बिना एक-दूसरे को काटे, भौंके हजम करने की ताकत

नहीं रखते। लॉर्ड मोर्ले ने हिन्दुस्तानियों की योग्यतानुसार कुछ सांसारिक अधिकार देने चाहे हैं। यह अभी प्रश्न ही है कि ये अधिकार भी हैं वा केवल छलावा ही हैं, और यह भी निश्चय नहीं ये सारे अधिकार मिल ही जाएँगे। किन्तु मुसलमान भाई डेपुटेशन ले चले हैं कि काउन्सलों में एक हिन्दू जाए तो एक मुसलमान भी लिया जाए और मुलसमनों को अधिकार उनकी संख्या से अधिक दिए जाएँ। इस मूर्खतामय प्रार्थना पर सम्भव था कि सारी डाली हुई हड्डियाँ उठाकर ही भौंका-भौंकी की समाप्ति कर दी जाती। किन्तु लॉर्ड मोर्ले ने सुन्दर वक्तृता से ही टालकर इशारा दे दिया है कि उनका राजशासन सम्बन्धी विचार अब टल नहीं सकता।

गरम दलवालों की भी इस समय चाँदी हो रही है, किन्तु नर्म दलवालों से भिन्न प्रकार पर। विपिन बाबू तो फर्स्ट क्लास में यात्रा कर पुत्र सहित लन्दन में विराजमान हैं। जिस प्रकार उनका खर्च चल रहा है वैसे ही किसी दानी के सिर पर सैयद हैदरजा देहली ने भी अमेरिका की राह ली है। कोई-कोई देशभक्त तो घाटे में नहीं रहते।

बाबू शारदाचरण मिश्र जो कभी हाईकोर्ट कलकत्ता की जजी से अलग हुए हैं और एक 'लिपि विस्तार परिषद्' के मन्त्री हैं, कलकत्ता में एक धर्म महोत्सव करने वाले हैं। जिसमें सर्व मतों के पंडित अपने-अपने मतों के गौरव प्रकट करेंगे। यह महासभा फरवरी मास के मध्य में एकत्र होगी। आर्यसमाज से इस समय भी आशा नहीं कि अपने धर्म के गौरव के अनुकूल काम कर सके। यदि भारतवर्षीय सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा सचमुच काम आरम्भ कर दे और एक उपसभा के अधीन वैदिक सिद्धान्तों की रक्षा का काम कर दे तो ऐसे समयों पर एक-दूसरे के मुँह ताकने पर ही काम की समाप्ति न हुआ करे।

हिन्दुस्तानियों के विवाह सम्बन्ध यूरोपियन स्त्रियों के साथ अधिक होने लग गए। गत छः माह के अन्दर कई ऐसे विवाह हो चुके हैं। अब बम्बई से डाक्टर सुखथन्कर का विवाह मिस बिशप के साथ हुआ है। वर इसमें एक ईश्वरवादी ईसाई है और वधू तीन खुदा मानने वालों की पुत्री। ऐसे सम्बन्ध उस समय बड़े भयानक होते हैं जबकि वर और वधू के धार्मिक विचार न मिलते हों। आर्यसमाज के लिए इस मामले में भी रास्ता साफ है। वैदिक धर्म को ग्रहण करते ही ईसाइयों और मुसलमानों के यहाँ जन्म होने पर भी एक स्त्री या पुरुष को पूरे अधिकार हो जाते हैं। हाँ, यह दूसरा प्रश्न है कि इस नियम पर अमल कितने आदमी करते हैं।

मुसलमानों में शिया व सुन्नी दो मुख्य विभाग हैं। शिये ताजिया बनाते और सुन्नी उसे बुत-परस्ती (मूर्ति पूजा) समझते थे। दोनों का अब युद्ध हो गया। सुन्नी ताजियों को न मानते हुए भी ताजियों के तमाशे में शामिल होते थे। अब उन्हें मौलवियों ने ताजिए बनाने से रोका। वह तो रुक गए, किन्तु हिन्दू ताजिए बनाने वालों ने एक न सुनी। इस पर कुछ हिन्दू व शिक्षित आश्चर्य करते हैं—क्या हिन्दू

भी ताजिए बनाते हैं ? मैंने सहस्रों हिन्दू लड़कों को सैयदोंवाली हरी पोशाक पहने मुहर्रम में सबीलों पर घूमते देखा है। ग्वालियर के हिन्दू नरेश अपने हाथ से ताजिया बनाते और उसके पुजारी बनते हैं। क्योंकि उनके दादा या परदादा को यह रियासत एक मुसलमान फकीर की दुआ से मिली थी। कितना ही प्रयत्न क्यों न किया जाए मनुष्यों के मन्तव्यों का निर्णायक अधिकतर उसका सांसारिक स्वार्थ ही होता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 3 फरवरी, 1909]

बाबू आशुतोष विश्वास का वध

बाबू आशुतोष विश्वास का वध—कलकत्ता अलीपुर कोर्ट के सरकारी वकील बाबू आशुतोष विश्वास को चारुचन्द्र बोस नामक एक बंगाली ने गत दस फरवरी को चार बजे दिन के समय मार डाला। चारुचन्द्र कई दिनों से आशुतोष बाबू के पीछे घूम रहा था। दस फरवरी को जबकि वह इजलास से उतरकर मिस्टर इंगलिस नामक बैरिस्टर के साथ कचहरी के हाते में आ रहे थे, उसी समय चारुचन्द्र ने आशुतोष बाबू पर अपने पिस्तौल से गोली चलाई। आशुतोष बाबू भागे, लेकिन चारुचन्द्र उनके पीछे-पीछे दौड़ता गया और क्रमशः तीन गोलियाँ उनकी पीठ में मारीं जो छाती फोड़कर बाहर निकल गईं। पिस्तौल की आवाज सुनते ही कचहरी के आदमी चारों ओर से पहुँच गए और दो कांस्टेबलों ने चारुचन्द्र को पकड़ लिया। आशु बाबू का शरीर रक्त से लथपथ हो रहा था। उन्हें डोली में उठाकर लोग पास के पुलिस अस्पताल में ले चले, लेकिन मार्ग में ही प्राणपखेरू शरीर से निकल गया। डाक्टरों ने शव की परीक्षा की और उसे आशुतोष बाबू के सम्बन्धियों को दाह कर्म के लिए सौंप दिया। चारुचन्द्र जब गिरफ्तार हो गया तो लोगों ने उसे पूछा कि तुमने आशुतोष बाबू को क्यों मारा तो उसने उत्तर दिया कि हमने अपना कर्तव्य पूरा किया है। ग्यारह फरवरी को पुलिस चारुचन्द्र से कई तरह की बातें दरयाफ्त करती रही। बारह फरवरी को वह स्थानिय मजिस्ट्रेट मिस्टर वोम्पास के इजलास में हाजिर किया गया। मजिस्ट्रेट ने अपराधी से पूछा कि वह अपनी ओर से कोई वकील नियम करना चाहता है या नहीं। अपराधी न उत्तर दिया, नहीं। जिन लोगों ने आशुतोष बाबू का वध देखा था उन गवाहों के इजहार हो जाने पर चारुचन्द्र ने मजिस्ट्रेट के प्रश्नों का उत्तर पुनः इस प्रकार दिया 'मेरा नाम चारुचन्द्र बोस है, मेरे पिता का नाम केशवलाल बोस है। मैं पहले नौकरी करता था, अब मैं नौकर नहीं हूँ। मेरा निवासस्थान 'सगुना' है। मैंने इस पिस्तौल से (पुलिस के हाथ में पिस्तौल को देखकर) बाबू आशुतोष विश्वास को मारा है। मारने का कारण यह है कि आशु बाबू देश के शत्रु थे, स्वदेशी निरपराध पुरुषों के विरुद्ध मुकदमे चलाया करते थे, मैंने यह काम निजेच्छा से किया है ऐसा करने के लिए किसी ने मुझ पर दबाव नहीं डाला, हाँ इस विषय में मुझे शिक्षा मिली है, इत्यादि।' अपराधी

के कथन समाप्त हो जाने पर मजिस्ट्रेट ने उसे सेशन सुपुर्द कर दिया। अपराधी प्रायः पच्चीस वर्ष की उम्र का एक दुबला पतला युवक है।

इस वध के कारण तमाम कलकत्ता में हलचल मच गया है। अनेक अंग्रेज और भारतवासी आशुतोष विश्वास के वध पर शोक कर रहे हैं। बंगाल के लाट साहब ने 'गजट' द्वारा अपना शोक प्रकाशित किया है, लाट साहब ने इनको योग्य परिश्रमी और सरकार का पूरा खैरख्वाह बतलाया है। श्रीमान बड़े लाट ने भी श्रीमान् छोटे लाट को पत्र लिखकर इस वध पर शोक प्रकाशित किया है। इनके वध के शोक में अलीपुर का कोर्ट एक दिन बन्द रहा है। बंगाल नेशनल चेम्बर ऑफ कामर्स में व्याख्यान देते समय गत 13 फरवरी को महाराज कुमार आर.सी. ला प्रधान ने कथन किया है कि अत्याचार और गुप्त अभिसन्धि से गवर्नमेन्ट को भयभीत करने की चेष्टा करना सर्वथा अनुचित है। इससे उन्नति नहीं हो सकती और न अभीष्ट सिद्ध हो सकता है। प्रत्येक पुरुष जो अपने देश की मंगलकामना रखता है ऐसे अत्याचारों को घृणा तथा भय की दृष्टि से देखेगा इत्यादि।

बाबू आशुतोष विश्वास के दो लड़के एम.ए. हैं। उनकी धर्मपत्नी जीती हैं।

जब से बाबू आशुतोष विश्वास मारे गए हैं तब से अलीपुर के जज (जो बम वाले मुकदमे को सुन रहे हैं) तथा सरकार के बैरिस्टर अर्डली नास्टन की रक्षा के लिए अनेक पुलिस सिपाही तथा अफसर तैनात किए गए हैं।

परमात्मा से प्रार्थना है कि यूरोप की अनार्किज्म नामक बला, जो भारत में आई है, वह शीघ्र दूर हो और मनुष्यमात्र के लिए कल्याणकारी वैदिक धर्म का प्रचार सर्वत्र हो जाए।

सम्राटों का सम्मिलन–कई दिनों से जर्मनी में सम्राट एडवर्ड सप्तम के स्वागत की तैयारियाँ हो रही थीं। 9 फरवरी को प्रशंसित सम्राट महारानी सहित जर्मनी की राजधानी बर्लिन में पहुँच गए। जर्मन सम्राट तथा उनकी प्रजा ने बड़े सम्मान के साथ आपका स्वागत किया। इस अवसर पर जो वृहद् भोज हुआ उसमें दोनों सम्राटों ने अपने को एक-दूसरे का प्रेमी बतलाया। जर्मनी के राजमन्त्री प्रिंस बूलो तथा अंग्रेज राजमन्त्री सर चार्ल्स हार्डिज के बीच दोनों देशों की राजनीतियों के विषय में भलीभाँति बातें हुईं और दोनों राजमन्त्री प्रसन्न हो कहने लगे कि जर्मनी और इंग्लिस्तान के बीच अब कोई भी ऐसी बात न रही जिससे दोनों देशों के बीच बिगाड़ होवे। मोरक्को के सम्बन्ध में फ्रांसीसी और जर्मनीवालों ने स्पष्ट कह दिया कि मोरक्को में हम अपनी किसी प्रकार का राजनीतिक स्वत्व स्थापन नहीं करना चाहते, उस देश में फ्रांस के राजनीतिक स्वत्वों में हस्तक्षेप करना नहीं चाहते, हमारा सम्बन्ध मोरक्को के साथ केवल वाणिज्य विषयक है। फ्रांसीसी भी इस सूचना से बहुत प्रसन्न हुए। अतः जर्मनी और फ्रांसीसियों के बीच का भी अनबन कुछ दूर हुआ। यूरोप में शान्ति संस्थापित रहने की आशा पूर्वापेक्षा अधिकतर दृढ़ हुई।

इस अवसर पर अन्यान्य तो सभी प्रसन्न हुए, परन्तु सोशलिस्ट नामक राजनीतिक सम्प्रदाय के लोग अप्रसन्न हुए इन लोगों ने उन जर्मन दीन पुरुषों को, जो बेरोजगार बैठे थे, अपने साथ लेकर नगर की सड़कों पर घूमना आरम्भ किया, उत्सव सम्बन्धी अनेक शोभा की तैयारियों को नष्ट कर दिया अपनी कई सभाएँ बैठाईं जिसमें कई प्रकार के विरुद्ध व्याख्यान दिए। ऐसे हर्ष के समय ऐसा उद्दण्ड व्यवहार दुखदाई होता है। यूरोप के लोग यदि आर्यों की प्राचीन वर्णव्यवस्था विषय पर विचार करें तो सम्भव है कि उनके बीच आज जो सामाजिक अशान्ति फैल रही है वह दूर हो जाए।

ईसाइयों की महासभा–जो हाल में अमेरिका में एकत्रित हुई थी उसने निश्चित किया है कि प्रायः आठ लाख रुपया भारतवर्ष में ईसाई धर्म प्रचार के लिए व्यय किया जाए। प्रायः पाँच लाख रुपया जापान में और पाँच ही लाख रुपया चीन में ईसाई धर्म फैलाने के लिए व्यय किया जाए और जापान की राजधानी टोकियो में ईसाई धर्मोपदेशक तैयार करने के लिए एक ईसाई कालेज स्थापित किया जाए। वैदिक धर्म प्रचारकों के पास इतना धन तो है नहीं कि वह धन बल से वैदिक धर्म प्रचार का साहस कर सकें। हाँ उनके पास कुछ धर्मबल है जिसकी वृद्धि अति शीघ्र हो सकती है, यदि वे परमात्मा की उपासना में सच्चे मन से संलग्न हो जाएँ उस उपासना से जो धर्म बल बढ़ेगा उसके सामने मत-मतान्तरों के प्रचारकों की विशेष चेष्टा भी सफल न हो सकेगी और सब मतों को वैदिक धर्म के सम्मुख शीश नमाना पड़ेगा।

सुल्तान रूम की राजसभा–अर्थात् उसकी पार्लियामेन्ट ने अभी कार्यारम्भ ही किया है, परन्तु इसने अपनी निर्भयता का परिचय अभी से देना आरम्भ कर दिया है। इस राजसभा के प्रधान मन्त्री कियामीजपाशा ने अलीरजा नामक एक अपने मन्त्री को पदच्युत कर दिया था जिसका कारण पार्लियामेन्ट के पूछने पर प्रधानमन्त्री ने बतलाने से इन्कार किया। अतः पार्लियामेन्ट ने बहुसम्मति से प्रस्ताव पास किया कि प्रधानमन्त्री में विश्वास न किया जाए। अतः अपनी मानहानि समझ कियामीलपाशा ने अपना पद परित्याग कर दिया। सुल्तान रूम ने इनके स्थान में टिल्मीपाशा को प्रधानमन्त्री बनाया है।

युद्ध की आशंका–डेनमार्क राजसभा के प्रधानमन्त्री ने राजसभा में एक बिल यह कहते हुए प्रस्तुत किया है कि यूरोपीय देशों के बीच अनबन होने की सम्भावना है। सम्भव है कि डेनमार्क के निकटवर्ती सागर में घोर समुद्री युद्ध हो। अतः डेनमार्क को उचित है कि अपना सैनिक बल पूरा-पूरा बढ़ा ले और अपने दुर्गों (किलों) की शीघ्र ही मरम्मत करा लें। यूरोप की राजनीति आर्यमय मालूम होती है। कहीं तो सम्राटों के सम्मिलन से स्थायी शान्ति की आशा बँधती है और कहीं इस प्रकार भावी घोर युद्ध की सूचनाएँ सुनने में आती हैं। फारस देश में अशान्ति फैल रही

है। तबरेजादि कई स्थानों में लड़ाइयाँ हो चुकी हैं। तबरेज फिर से शाह की सेना के हाथ आ गया है। रेशतनगर में शाह के गवर्नर तथा अन्यान्य कई सरकारी अफसरों को प्रजा ने मार डाला है। शाह के 400 सवार तथा गोलंदाजों का एक दल रेशत की ओर रवाना हुआ है। रेशतं में प्रजा ने अपना राज्य स्थापन कर लिया है। शोक है कि मुसलमान बादशाह सुल्तान रूम की कार्यवाहियों को देखकर भी शाह फारस नहीं चेतते। इस से ज्ञात होता है कि उनके नाश का दिन निकट आ रहा है।

[सद्धर्म प्रचारक, 17 फरवरी, 1909]

फारस में पुनः उत्पात

शाह फारस के सेनापति राकिम खाँ तबरेज नगर के निकटवर्ती फारसी प्रजा पर घोर अत्याचार कर रहे हैं। उनके सिपाहियों ने तबरेज और सफाया के बीच जितने ग्राम थे उन्हें लूट लिया है। शाह फारस के दूसरे अफसर आईन ईदौला के कैम्प में फारसी प्रजा ने बम के गोले फेंककर हलचल मचा दिया है। अंग्रेज तथा रूस गवर्नमेन्टों ने शाह फारस को लिख भेजा है कि वह राकिम खाँ को अधिक जुलम करने से रोकें। प्रजा दल ने शाह की सेना से फारस के दक्षिणवर्ती बूशहर को छीन लिया है। लाशान की फारसी प्रजा ने जिगलर साहब के व्यापार की कोठियों को लूट लिया है जिस से क्रुद्ध होकर सर जीबार्सले साहब ने फारस गवर्नमेन्ट को लिखा है कि वह अपने शिराज नगर के हाकिम को हुक्म दें कि वह लूट का माल बरामद कर जिगलर साहब को वापस दिलाएँ और लूटनेवालों को समुचित दण्ड दें। मालूम होता है कि फारस में अब उत्पात अधिक बढ़ गया है जिस कारण विदेशियों के धन और प्राण पर भी संकट आने की सम्भावना है। अतः अंग्रेजों और रूसी गवर्नमेन्टों ने सलाह कर निश्चित किया है कि फ़ारस के रेशत नगर में जो रूसियों की सेना रहती है वह आसपास के जितने यूरोपीय हैं, विपत्ति आने पर उनकी रक्षा करे तथा फारसी बन्दरगाह अब्बास तथा बूशहर के आसपास जो अंग्रेजों के जंगी जहाज रहते हैं उनके योद्धा, आपत्ति आने पर फारस के दक्षिण भाग में रहने वाले यूरोपियनों की रक्षा करें। फारस की प्रजा और राजा की लड़ाई उस देश के लिए बड़ा ही अहितकर है। यद्यपि विदेशी अभी तक फारस के शासन में हस्तक्षेप नहीं करते, परन्तु जबकि शाही सेना के लोग वा प्रजादल के सैनिक विदेशियों को पीड़ित करेंगे तो विदेशी अवश्य ही फारस शासन में हस्तक्षेप करेंगे और तब शाह को मालूम होगा कि अपनी प्रजा को नष्ट करने का परिणाम क्या होता है। जब किसी देश में विप्लव उपस्थित होता है तो उस देश के विविध प्रकार के ज्ञानों की उन्नति रुक जाती है और अनेक ज्ञानी मारे जाते हैं। जिससे उस देश की ज्ञान राशि घट जाती है और अज्ञानी प्रजा को उन्नति के मार्ग पर ले जाने वाले नेताओं की न्यूनता हो जाती है और प्रजा अविद्या में पड़ी हुई ठोकरें खाती रहती है। अतः प्रत्येक देश के शुभचिन्तकों को चाहिए कि शान्ति संस्थापन

के मुख्य सिद्धान्त 'परमात्मा को सबका पिता समझना तथा सब आत्माओं को उसका पुत्र मानना चाहिए' का प्रचार करते हुए अपने देश में द्वेष भावों को दूर रखें जिससे देश में फूट ही न फैले और न विपल्व उपस्थित हो। परन्तु शोक है कि सार्वभौम धर्म के प्रचारकों की अत्यल्पता के कारण ईर्ष्या और द्वेष बढ़ता ही जाता है। पाप का पुँज जितना अधिक हो उतने ही अधिक बल के साथ उसे दूर करने की आवश्यकता पड़ती है। अतः प्यारे धार्मिक सज्जनो ! अब बैठने का समय नहीं है। पापाग्नि लोगों को जला रही है, लोग व्याकुल हैं, आप अपने उपदेश सलिल की वृष्टि से त्रयतापों को बुझाते हुए लोगों को शान्ति दें जिसमें लोगों का मनुष्य जीवन सफल हो।

शोक है कि प्लेग प्रकोप—अभी तक नहीं घटा। 20 मार्च को समाप्त हुए सप्ताह में भारत राज्य के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में प्लेग से लोग इस प्रकार मरे : 'बम्बई प्रान्त में 1061, बंगाल में 501, युक्त प्रान्त में 1047, पंजाब में 1316, ब्रह्मदेश में 233, मध्य भारत में 290' प्लेग पीड़ित स्थानों के मनुष्यों को चाहिए कि जहाँ वह अपनी रक्षा तथा रोगी की चिकित्सा के लिए अनेक उपायों को अवलम्बन करते हैं वहाँ बड़े लाभकारी हवन-यज्ञ की विधि से भी अवश्य ही काम लिया करें। क्योंकि हवन से निकले हुए ऊष्ण वाष्प में रोगकारी सूक्ष्म विषों को दूर करने की बड़ी भारी शक्ति है।

अमीर काबुल का प्राण बच गया—काबुल के वर्तमान अमीर हबीबुलखाँ की विमाता वीली हलीमा एक समय अपने पति अब्दुरहमान खाँ के साथ काबुल शासन सम्बन्धी अनेक कार्यों को सम्पादन किया करती थीं। उसकी बड़ी अभिलाषा यह थी कि उसका पुत्र उमरजान काबुल के राज सिंहासन पर बैठे। परन्तु अमीर अब्दुर रहमान के अन्रातल समय उमरजान नाबालिग था और अमीर अब्दुर रहमान ने अपने बड़े बेटे हबीबुल्ला को राज शासन का कार्य सिखला दिया था। अतः उमरजान की माता की इच्छा पूर्ण न हुई। अब काबुल से 'पायोनियर' को जो समाचार मिले हैं उनसे ज्ञात होता है कि अमीर हबीबुल्ला तथा उनके बड़े लड़के को मार डालने का षड्यन्त्र बीबी हलीमा तथा उसके सहायकों ने रचा था। परन्तु भेद खुला गया और बहुत से बड़े-बड़े मुसलमानों को अमीर के अफसरों ने गिरफ्तार कर लिया। मालूम होता है कि काबुल में भी राजा को अदेवता समझने वाले बहुत से मनुष्य हैं। प्रजा जबकि राजा की पुत्रवत् है और राजा प्रजा का पितावत् तो प्रजा पुरुषों का राजा के प्राण हरण के लिए उद्योग करना कदापि सराहनीय है ? मालूम होता है कि काबुल में भी प्रजा वर्ग के कुछ ऐसे पुरुष हैं जो अपने राजा के साथ प्रेम नहीं रखते। पृथ्वी के भिन्न-भिन्न देशों के राजाओं तथा प्रजा मंडल को चाहिए कि वे उस सिद्धान्त का पता लगाए जिसके अवलम्बन करने से आर्य राजा अश्वपति अपनी प्रजा के प्राणवत् बने हुए थे और प्रजा को अश्वपति अपना प्राण समझता

था। सारी प्रजा असत्य, मद्यपान, द्यूत, चोरी आदि दुर्गुणों से बची हुई थी और पूर्ण शान्ति के संस्थापित रहने से लोग निर्द्वन्द्व हो आत्मचिन्तन में लगे हुए मनुष्य जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पूर्ण श्रम कर रहे थे। उस समय परमात्मा की भक्ति मानवस्नेह ही नहीं प्रत्युत प्राणीमात्र पर दया का भाव जो फैला हुआ था वही एक को दूसरे के साथ जोड़ते हुए सबको सबके कल्याण साधन के लिए उद्यत कर देते थे। उन्हीं के अभाव से संसार आज दुःखी है। उसी भक्ति और उसी प्रेम भाव के उदय होने से पुनः दुख की शिक्षा दूर हो सकती है।

[सद्धर्म प्रचारक, 31 मार्च, 1909]

सैयद अली इमाम साहब

जनाव सैयदअली इमाम साहब मुसलिम लीग के प्रधान बनाए गए थे। जब बेचारों ने पक्षपातहीन होकर हिन्दू-मुसलमानों की सुलह करानी चाही तो मुसलमानों ने उनकी लीडरी को ही धता बतला दी। उक्त महोदय लन्दन में मुसलमान लीडरों को सीधा करने गए थे, किन्तु उनकी किसी ने एक न सुनी। किन्तु वह निराश नहीं लौटे। आप कलकत्ता हाईकोर्ट के Standing Counsel गवर्नमेन्ट की ओर से नियत हुए हैं जिस पद का वेतन निन्दने के योग्य नहीं। भला तीर न लगा तो तुक्का ही सही।

इंग्लिश पार्लियामेन्ट के सभासद् श्री मिस्टर रेमजे मेकडानल्ड तथा उनकी धर्मपत्नी जी हिन्दुस्तान की सैर के लिए आए हैं। बम्बई नेशनल यूनियन की ओर से उनका समारोह के साथ स्वागत किया गया। पूना में गवर्नर बम्बई प्रान्त को मिलकर वह सैर को निकलेंगे। देखें यह किन के हत्थे चढ़ते हैं।

बाइकाट (बहिष्कार) की गाँठ मनाने के बंगाल गवर्नमेन्ट के प्रधानाध्यक्ष विरुद्ध नहीं, किन्तु उसमें विद्यार्थियों के सम्मिलित होने के वह विरुद्ध थे। इसीलिए एक घोषणापत्र द्वारा बंगाल के लाट महोदय ने विद्यार्थियों के पिताओं तथा अध्यापकों से सहानुभूति की याचना की थी। अब 'बंग-भंग' का वार्षिक दिन निकट आया है तो सर एडवर्ड बेकर ने फिर एक घोषणापत्र द्वारा विद्यार्थियों के पिताओं संरक्षकों तथा विद्यालयों के मुखियाओं की दृष्टि इस ओर दिलाई है कि विद्यार्थियों को उस दिन की सवारी में शामिल होने से रोकें। यद्यपि अन्य शिक्षाओं के साथ-साथ विद्यार्थियों को राजनीतिक शिक्षा देनी आवश्यक है तथापि ऐसी सवारियों में शामिल होने से युवक विद्यार्थियों में आवारगी फैलने के अतिरिक्त कोई उत्तम परिणाम निकलने की आशा नहीं। यदि 'बंग-भंग' से वास्तव में दिल दुखे है तो बड़े, बूढ़ों और गृहस्थ सज्जनों को स्वयं सवारी में शामिल होकर उसका प्रमाण देना चाहिए। और विद्यार्थियों का एक-एक पल पवित्र समझकर उन्हें विद्याध्ययन के कार्य से किसी समय भी जुदा नहीं करना चाहिए।

इंग्लैंड की पार्लियामेन्ट में इस समय घोर संग्राम चल रहा है। वर्तमान बजट पर हाउस ऑफ लाड्र्स में बड़ा आन्दोलन होगा। गवर्नमेन्ट यद्यपि लिबरलों की

है तथापि हाउस ऑफ लार्ड्स में बहुपक्ष कंजरवेटिवों का है। वे बजट को अस्वीकार करने को तैयार हैं, क्योंकि बजट का बोझ सनातनी अमीरों पर ही अधिक पड़ेगा। हाउस ऑफ कामन्स इसको पुरानी संस्था पर आक्षेप समझता है इसलिए वह इस मानधाता के समय के देवताओं को गद्दी से उतारने का प्रयत्न करेगा। इस झगड़े से यद्यपि इस समय भारतवर्ष को हानि-लाभ की सम्भावना नहीं प्रतीत होती तथापि इसका असर यहाँ की अवस्था पर भी अवश्य पड़ेगा।

लाहौर कांग्रेस की तैयारी तो हो रही है, किन्तु शोक कि लाला हरिकृष्ण लाल जी तथा लाला लाजपतराय के विरोध के कारण जहाँ पुरानी इन्डियन एसोसिएशन कांग्रेस के रास्ते में विघ्न डाल रही है, वहाँ लाला हरिकृष्ण लाल जी के अनुयायी इंडियन एसोसिएशन से किनारा कर रहे हैं। बहुत से भद्रपुरुषों को सन्देह है कि लाला लाजपतराय को लाला हरिकृष्ण लाल जी की शिकायतों ने डिपोर्ट कराया था। यदि लाला हरिकृष्ण लाल जी अपने लेख से इस कलंक को निर्मूल सिद्ध कर दें तो मैं समझता हूँ कि सैकड़ों पढ़े-लिखे पंजाबी, जो कांग्रेस के विरोधी हैं, उसके सहायक बन जाएँ।

[सद्धर्म प्रचारक, 13 अक्टूबर, 1909]

पंजाब हिन्दू कान्फ्रेंस

अक्टूबर की 23वीं प्रविष्टा के दिन पंजाब की हिन्दू एसोसिएशन का प्रथम अधिवेशन शुरू हो गया। सभा के सेनापति श्री सर प्रतुलचंद्र चटर्जी थे जो कि पंजाब की सब उन्नतिशील संस्थाओं में बहुत काल से भाग लेते रहे हैं। कान्फ्रेंस की स्वागतकारिणी के सभापति महाशय लालचन्द्र एम.ए. थे। इन दोनों महाशयों की प्रारम्भिक तथा लाला लाजपतराय जी की हिन्दू राष्ट्रीयता पर वक्तृताएँ उसी दिन छपकर 'पंजाबी' के ग्राहकों के पास भेज दी गई थीं। उन वक्तृताओं को देखकर जो सबसे प्रथम आशंका होती है यह है कि यह कोई ऐंग्लो-इंडियन एसोसिएशन है या हिन्दुओं की सभा। सबसे प्रथम कारण इस आशंका का उठाने वाला इस सम्मेलन का नाम है। एक हिन्दुओं की सभा और ऐसे हिन्दुओं की सभा जिनकी आदि मातृभाषा संस्कृत है और वर्तमान में जिनकी देशभाषा आर्यभाषा होनी चाहिए, और जो कि ऐंग्लो-इंडियनों के साथ घृणापूर्वक कार्य करना छोड़ने के कारण स्पष्ट तथा एण्टी-ऐंग्लो-इंडियन है, का नाम अंग्रेजी देखकर आश्चर्य होता है। क्या एसोसिएशन का पर्याय वाचक शब्द संस्कृत या देशभाषा में मिलना कठिन था ? जिस समय कि बोस जैसे वैज्ञानिक अपने नवीन यन्त्रों के नाम संस्कृत भाषा में रख रहे हैं, उस समय खास हिन्दुओं की एक सभा को एसोसिएशन के नाम से पुकारा जाना बिलकुल उपहास्य प्रतीत होता है। दूसरा कारण इस आशंका का यह है कि ये तीनों मुख्य-मुख्य वक्तृताएँ एक विदेशी भाषा में हैं। जिस सभा में यह विचार होना चाहिए कि भारत की एक भाषा कौन सी हो और कि समस्त हिन्दू लोग कौन सी भाषा का प्रयोग करें, उसमें जब सभापति की वक्तृता ही अंग्रेजी में होगी तो इसका स्पष्ट अभिप्राय है कि देश में हिन्दुओं के लिए सबसे अधिक ज्ञेय भाषा अंग्रेजी है और कि उसी भाषा को देशभाषा बनाना चाहिए। इस जातीय सम्मेलन में विजातीय भाषा का प्रयोग बड़ा ही उपक्षेप्य प्रतीत होता है।

प्रत्येक ऐसे साधारण सम्मेलन में, जो कि किसी विशेष उद्देश्यों को लेकर बनाया जाए, सभापति की वक्तृता सभा को सारी नीति तथा रीति का आदर्श होती है। इसी नियम के अनुकूल यदि हम यह कल्पना कर लें कि श्री सर प्रतुलचन्द्र जी की सम्मति ही हिन्दू एसोसिएशन की सम्मति है तो रीति विरुद्ध न होगा।

सभापति ने सबसे प्रथम अपनी वक्तृता में यह दिखाने का यत्न किया है कि यह हिन्दू एसोसिएशन किसी राजनीतिक उद्देश्य को लक्ष्य में रखकर नहीं बनाई गई, किन्तु इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक सुधार ही है। यदि इस एसोसिएशन का राजनीति से कोई भी सम्बन्ध नहीं तो बड़ी प्रसन्नता की बात है और जब सभापति ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि वे इस सभा का राजनीति से किसी तरह से सम्बद्ध नहीं समझते तो इसके ठीक होने में सन्देह करने की कोई आवश्यकता भी नहीं है। परन्तु स्थापना, स्थापना से आगे नहीं बढ़ती, जबकि हम सभापति महाशय के भी समस्त व्याख्यान को पढ़ते हैं। जिस अनुपेक्षणीय कठोरता से मुसलमानों की पोलिटिकल एसोसिएशन तथा ऐंग्लो-इंडियनों के प्रति-हिन्दू जनों की समीक्षा की गई है, वह राजनीतिक रास्ता नहीं है। उस सभा को, जिसमें कि Reform Scheme की समीक्षा हो और जो Land Alienation Act के दोषों पर व्याख्यान सुनें, अराजनीतिक कहना बहुत युक्त प्रतीत नहीं होता। सारांश यह कि यदि इस सभा का उद्देश्य राजनीतिक विषयों को विवाद में लाए बिना पूरा नहीं हो सकता तो यह घोषणा करने की क्या जरूरत है कि यह राजनीतिक नहीं है इसका सारा सम्बन्ध सामाजिक प्रश्नों से है। अगर इस सभा को आप राजनीतिक बनाना नहीं चाहते और यदि सचमुच आपको यह विश्वास हो गया है कि ऐंग्लो-इंडियन समूह हिन्दुओं को कभी उठने न देगा तो फिर Reform Scheme पर विचार करने से क्या लाभ है ?

आगे श्रीमान् सभापति जी ने सभा में भाग लेने वालों को उपदेश किया है कि जहाँ तक हो सके कट्टर-से-कट्टर सनातनी हिन्दुओं के मन के दुखाने वाली भी बात न कहें। आपने यह बताते हुए कि सैकड़ों बरसों से जमे हुए दूषण कभी एक दिन में नाश को प्राप्त नहीं हो सकते, कहा कि यह सभा धीरे-धीरे अपने कार्यों में अग्रसर होगी। साथ ही आपने मुख्तया ये तीन विषय सभा के सामने विचारार्थ पेश किए—(1) नीच जातियों को अपने अन्दर मिलाना। इस विषय को शायद अपने सबसे कम सनातनियों से विरोध पैदा करने वाला समझा है। जिन सनातनी भाइयों के यहाँ एक ब्राह्मण जातीय दूसरे ब्राह्मण जातीय के हाथ की रोटी नहीं खाता वहाँ यह प्रस्ताव करना कि नीच जातियों को अपने अन्दर मिला लेना चाहिए, शान्तिजनक समझना आश्चर्य है। (2) दूसरा विषय, जो अपने इस समय में विचारार्थ पेश किया है, विधवा-विवाह सम्बन्धी है। (3) और तीसरा विषय सब हिन्दू देवताओं के लिए समान आदर का भाव रखने के लिए है। ये तीनों विषय ऐसे हैं जिन्होंने कि हिन्दू जाति की ओर से बड़ा भारी विरोध उत्पन्न कर रखा है, परन्तु अब शायद हिन्दू सभा में पेश होने के कारण ये विषय हिन्दुओं के विरोध के कारण न हों। शायद हिन्दू नाम का जादू पुराने समस्त भेदभावों को मिटाकर सबकी सब आर्यों की सन्तान को एक कर दे। यद्यपि यह अभीष्ट है तथापि यह

सम्भव नहीं प्रतीत होता।

दूसरी वक्तता स्वागतकारिणी के प्रधान रायबहादुर लालचन्द्र जी की है। उसमें विशेष वक्तव्य एक ही बात पर है। वह सिद्धान्त, जिस पर कि रा.ब. लालचन्द्र जी हिन्दू सभा की बुनियाद रखते हैं, बहुत दूषित है। आपने मनु के निम्नलिखित श्लोक अपने सिद्धान्त रूप से स्थापित किए हैं–

प्राणस्यान्नमिदं सर्व प्रजापतिरकल्पयत्।
स्थावरं जंगमञ्चैव सर्वं प्राणस्य भोजनम्।।
चराणामन्नमचराः दंष्ट्रिणा मप्य दंष्ट्रिणः।
अहस्ताश्च सहस्तानां शूराणाञ्चैव भीरवः।।

भावार्थ आपने इस का यह निकाला है कि इस संसार में प्रबल का निर्बल भोज्य होता है। अर्थात् हर एक व्यक्ति और व्यक्ति समूह को अपनी रक्षा तथा स्थिति के लिए आपको प्रबल बनाने का सदा यत्न करना चाहिए। यदि आपकी सभा का यही सिद्धान्त है तो ऐसी सभा को दूर से प्रणाम करना चाहिए। जिस सभा का उद्देश्य प्रबल होकर निर्बलों को तंग करना या खा जाना हो उस सभा में एक धार्मिक भावनाओं वाले मनुष्य का रहना सर्वथा अधर्म है। मनुष्य का उद्देश्य सबल बनकर निर्बल को दबाना या अपने आपको सदा सबसे बलवान् ही करते रहना नहीं है—बल्कि मनुष्य का आध्यात्मिक उद्देश्य कुछ और ही हैं। मनुष्य के जीवन के मुक्ति रूपी उद्देश्य को यदि मनुष्य मान ले तो भी धार्मिक जीवन बिताना तो मनुष्य का उद्देश्य अवश्य ही है। मनुष्य को फल की उपेक्षा करके सकाम भाव से कार्य करना रहित है। अच्छा तथा उच्च जीवन उस पुरुष का है जो धर्म को धर्म के लिए सेवता है। किसी अनैतिक उद्देश्य से नहीं। प्रबल के निर्बल को दबाने की प्रथा संसार में दिखती अवश्य है, परन्तु यह आदर्श नहीं है। वह एक घटना है, एक फैक्ट है।

तीसरी वक्तृता लाला लाजपतराय जी की हिन्दू जातीयता पर है। इसमें आपने सबसे प्रथम इस विषय पर विवाद किया है कि हिन्दू शब्द में कौन-कौन लोग आने चाहिए। सबसे प्रथम हिन्दू शब्द में आपने उन लोगों को लेने का विचार किया है जो वैदिक कहा सकें। परन्तु फिर ब्राह्मण, जैन तथा सिक्खों के बिगाड़ के भय से इसे छोड़ दिया है। और यह स्थापित किया है कि जो कोई भी अपने आपको हिन्दू कहा ले वही इस सभा में आ सकता है। निस्सन्देह हिन्दू राष्ट्र भी एक विचित्र राष्ट्र होगा, जिसका कोई भी लक्षण नहीं हो सकता। संसार हिन्दू धर्म तथा जैन, बौद्ध धर्म को पृथक्-पृथक् समझता है। हिन्दू धर्म वस्तुतः एक अथाह सागर है जिसमें कि जो कुछ भी आ जाए, सब गर्क हो जाता है। देखें यह सागर सभा इन सब भिन्न-भिन्न भूमि के अंशों को अपने अन्दर नमक की तरह घोल लेती

है या कांग्रेस की तरह इस तरह सागर में भी ये सब मिट्टी की तहों की तरह जम-जमकर पहाड़ बन के इस सागर की लहरों से ही टक्करें मारने लगते हैं।

दूसरा बड़ा प्रश्न हिन्दू नाम का है। आपकी सम्मति यह है कि चाहे हिन्दू शब्द आदि में किसी ही घृणित अर्थ तथा भाव को लेकर प्रसिद्ध किया गया हो, अब वह हमारा हो चुका है। अब वह हमसे छूट नहीं सकता। हमारा कर्तव्य अब यह है कि हम स्वयं बढ़ें तथा उच्च बनें, ताकि वह नाम भी हमारे साथ ही बड़ा तथा उच्च बने। परन्तु यह बड़ी भारी गलती है। यदि हमारे पास हिन्दू शब्द से उच्चतर आर्य शब्द विद्यमान न होता तो हम अवश्य इस हिन्दू शब्द को स्वीकार करते। परन्तु आर्य शब्द की अवस्थिति में एक नीचार्थक शब्द से अपने आपको पुकारना स्वयं अपने आपको गिराना तथा नीचा करना है। यदि हम सबको आज 'काला आदमी' कहा जाए तो क्या हम इस शब्द को स्वीकार करके अपने को मूर्ख प्रकट करें ?

तीसरा विवादास्पद विषय है कि हिन्दू राष्ट्र के एक होने का मुख्य बीज क्या हो सकता है ? इस विषय में आपकी सम्मति है कि यह कोई आवश्यक नहीं कि वह राष्ट्र का धर्म भी एक हो और भाषा के भी एक होने की कोई जरूरत नहीं। जरूरत सिर्फ इतनी है कि सारे राष्ट्र के व्यक्तियों का कोई राष्ट्रीय उद्देश्य एक हो। Community of interest and spirit एक जाति या राष्ट्र बनाने के लिए काफी है। धर्म और भाषा का एक होना जरूरी नहीं। यह विषय बहुत लम्बा है, अतः इस पर सविस्तार कभी सही—परन्तु आज इतना ही कह देना काफी है कि धर्म एक राष्ट्र बनाने में बड़ा भारी तथा आवश्यक सहायक होता है। बने हुए राष्ट्र राष्ट्रीयता स्थिर रखने के लिए चाहे वह आवश्यक न हो। और साथ ही भारतवर्ष का अन्य देशों से यही भेद है कि यहाँ अन्य देशों में अन्य उन्नतियाँ धर्म के साथ को छोड़कर भी हो सकती हैं, वहीं भारतवर्ष में किसी प्रकार की भी उन्नति बिना धार्मिक उन्नति के नहीं हो सकती।

[सद्धर्म प्रचारक, 27 अक्टूबर, 1909]

प्रिंस ईटो

प्रिंस ईटो—वर्तमान जापान के साँचे में ढालने वालों में से एक थे। जब कोरिया देश जापान के आधीन हुआ तो ठीक प्रकार प्रबन्ध चलता उस स्थान में न देखकर जापान गवर्नमेन्ट ने प्रिंस ईटो को एकान्त सेवन से अलग करके वहाँ भेजा। अब समाचार आया है कि किसी कोरिया निवासी ने उनको जान से मार डाला है। जब धर्माधर्म का युद्ध होता था और रामचन्द्र से धर्मात्मा राजा दुष्टों को दण्ड देने के पश्चात् अन्य देश को विजय करके भी उसे उसी देश के किसी योग्य पुरुष के हवाले कर देते थे, उस समय इस प्रकार की हत्याओं की आवश्कयता न थी। किन्तु आज जबकि 'जिसकी लाठी उसी की भैंस' वाली लाकोक्ति ठीक सिद्ध हो रही है, ऐसे उल्कापात होते ही रहेंगे। ऐसी घटनाओं को दूर करने के लिए ही आर्यसमाज का जन्म हुआ था, जिस के सभासद् भी इस समय उलटी लहरों में बहे जा रहे हैं।

पंजाब हिन्दू कान्फ्रेंस—ने जन्म ही झगड़ों में लिया। इसलिए उसकी सर्वकार्यवाहियों में सन्देह-ही-सन्देह चला आता है। पहले तो यह सन्देह हुआ कि यह कान्फ्रेंस नेशनल कांग्रेस को हानि पहुँचाने के लिए खड़ी हो गई है। और यह सन्देह था भी ठीक। मैं उन्हीं दिनों जालन्धर गया तो मेरे सामने एक हिन्दू कान्फ्रेंस के हामी ने बतलाया कि पंजाब में कांग्रेस न किए जाने के विरुद्ध वे स्वयं लोगों के हस्ताक्षर करा रहे हैं। किन्तु कांग्रेसवालों का भला भी इसी में था कि हिन्दू सभावालों का उनसे विरोध सर्वसाधारण को तथा दोनों के विरोधी मुसलमानों तथा एंग्लो-इंडियन को न मालूम हो। एक-दूसरे की करतूत पर खूब पर्दे डाले गए—यहाँ तक सर्वसाधारण के सामने दोनों दल खूब गले मिले। फिर सनातनी हिन्दुओं ने शोर मचाया कि कहीं शुद्धि और विधवा-विवाह न प्रचलित हो जाए। कुछ आर्यसमाजी भाइयों ने भी सनातनी भाइयों को खुश करने के लिए बहुत हाथ-पैर मारे। यहाँ तक भी कहा कि हिन्दू शब्द यदि दूषित है तब भी हम उसे पवित्र बनाने का प्रयत्न करेंगे, किन्तु पंडित दीनदयालु जी ने कान्फ्रेंस में अपना ही राज्य जमा लिया, जिससे तंग आकर भी लाला लाजपतराय जी को अपने स्थान में उसी सायंकाल को कान्फ्रेंस की इस कायरता पर धन की चोटें लगानी पड़ी। अब

'ट्रिब्यून', 'प्रकाश', 'आर्यगजट' तो लिखते हैं कि नीच जातियों तथा विधवाओं की अवस्था सुधारने के रेजोल्यूशन सनातनियों के डर के मारे छोड़े गए, किन्तु एक बहादुर पंजाबी इस पर अड़ा हुआ है कि यह सब झूठ है। अब सच्चा कौन है इसका पता लगाना कठिन है।

मैं समझता हूँ कि जो लोग कांग्रेस के विरोध से हिन्दू कान्फ्रेंस में आए थे वे भी अब कांग्रेस के बन जाएँगे, क्योंकि जिन्हें बोलने का व्यसन है वे कुछ गँवाकर भी ऐसे सुअवसर को हाथ से कब जाने देते हैं। पुरानी पंजाबी लोकोक्ति सच है कि जब ढोल बजता है तो 'पुत्तर मैं रह ना सकना' की आवाज कई घरों से सुनाई दी है।

[सद्धर्म प्रचारक, 3 नवम्बर, 1909]

नेशनल सोशल कान्फ्रेंस

नेशनल सोशल कान्फ्रेंस का वार्षिक अधिवेशन, नेशनल (पोलिटिकल कांग्रेस) के साथ-साथ, बम्बई नगर में ही होगा। उसके महामन्त्री सर नारायण चन्द्रावर्कर महोदय की ओर से एक घोषणापत्र निकला है जिसमें सर्वधार्मिक तथा अन्य सभाओं से निवेदन है कि अपने सामाजिक संशोधन का वृत्तान्त कान्फ्रेंस को लिख भेजें। यह सम्मेलन भी सदा कांग्रेस का पुछल्ला ही बना रहा और इसका नाम भी अब तक निरर्थक ही बना रहा। जब मुसलमान, ईसाइयों इत्यादि का इसमें प्रवेश नहीं तो इसके नेशनल शब्द के साथ आर्य (हिन्दू) शब्द लगाया जाना चाहिए, नहीं तो सं. 1899 के लखनऊ कान्फ्रेंस की तरह मुफमी साहब भी बाल-विवाह के समर्थन और शुद्धि के विरोध में व्याख्यान देने आ खड़े होंगे। और दूसरों के कामों का वृत्तान्त देकर जीवन व्यतीत करना और उसके लिए वाह ! वाह ! लेना भी निकम्मों का काम है। धार्मिक और समाजिक संशोधन साथ-साथ चलते हैं। इस देश के लिए समाज संशोधन के काम को भली प्रकार आर्य समाज-सी धर्म सभा ही कर सकती है।

आर्य पुत्री पाठशाला–(शाहाबाद) का वार्षिक अधिवेशन 16, 17 अक्टूबर को होगा। मन्त्री महाशय भजनीकों तथा उपदेशकों को बुलाते हैं। पुत्री पाठशालाओं के अधिवेशनों में यदि सब काम शिक्षा सम्बन्धी ही हो और देवियाँ ही उसमें भाग लें तो ठीक है। पुरुष भजनीकों तथा उपदेशकों द्वारा प्रचार तो आर्यसमाजों के जलसों पर ही शोभा देता है।

गुरुकुल मुलतान–का वार्षिकोत्सव इस वर्ष नियत समय पर नहीं मनाया गया था। उस समय मुलतान में प्लेग फैल रहा था वह उत्सव भी 25, 26 सितम्बर को ही मनाया गया। सरस्वती सम्मेलन भी हुआ और व्याख्यान भी हुए। 12000 रुपए दान में रोक और प्रतिज्ञा रूप से मिला। मुलतान से आए पत्र द्वारा विदित हुआ कि जन उपस्थिति बहुत थी और दर्शकों ने जो दान देकर जबरदस्ती लौटा दिया और साथ ही उस समय की शाखा गुरुकुल देवबन्धु के न केवल 15 सहस्र की लागत के मकान ही दबा रखे हैं, प्रत्युत चार-पाँच सहस्र रोकधन भी देने में नहीं आते, जो उनके द्वारा, उक्त शाखा का उप सभा के प्रधान पद के कारण

साहूकार के यहाँ जमा कराए गए थे; उसके पश्चात् मुलतान निवासियों का यह प्रयत्न सराहनीय है। मुलतान गुरुकुल की आर्थिक दशा के ठीक होने की बड़ी भारी आशा श्री लाला परमानन्द जी वकील पर है जिनकी निष्काम उदारता से ही गत दो वर्षों में यह गुरुकुल स्थिर रहा है।

[सद्धर्म प्रचारक, 9 अक्टूबर, 1915]

कांग्रेस अधिवेशन में देवियाँ

इस वर्ष कांग्रेस के अधिवेशन में देवियाँ भी सम्मिलित होंगी। यों तो पहले भी देवियाँ कांग्रेस के प्लेटफार्म पर दिखाई देती रही हैं, परन्तु इस वर्ष उनको प्रतिनिधि रूप से लाने का प्रयत्न हो रहा है। यत्न बुरा नहीं, परन्तु सावधानी पहले से ही चाहिए जिससे कहीं इंग्लैंडादि की 'सवा मर्द' स्त्रियों की तरह कहीं भारतवर्ष की देवियाँ भी मर्दों के सभाभवनों तभा समाज मन्दिरों में आग लगाना न आरम्भ कर दें। यह चेतावनी विशेषतः बुद्धिमति देवियों के लिए है।

हिन्दुस्तानी स्त्री ग्रेजुएटों के लिए छात्रवृत्ति–दो सौ पाउन्डों (3000 रुपयों) की ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की ओर से स्वीकार की गई है जिस व्यय से ग्रेट ब्रिटेन वा अन्य देशों में डाक्टरी की शिक्षा प्राप्त की जा सके। पहली छात्रवृत्ति 1916 ई. में दी जाएगी। प्रान्तिक गवर्नमेन्ट से सिफारिश करा के ऐसे समय में भिजवानी चाहिए कि 15 मई, 1916 ई. तक गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया के पास पहुँच जाए।

गवर्नमेन्ट ने तो एक पग आगे बढ़ाया है, परन्तु हमारी आर्य प्रतिनिधि पंजाब ने जो छात्रवृत्ति स्त्री उपदेशिका तैयार करने के लिए एक दो वर्ष बजट में रखी थी वह भी रखना बन्द कर दी।

चीन में प्रजातन्त्रात्मक राज–की समाप्ति हो गई। चीनी रिपब्लिक के प्रधान 'युआन-शामई' ही अब वहाँ के सम्राट चुने गए। इन्हीं महाशय ने 'मुंचू राज परिवार' को स्वयं गद्दी से उतरने की सलाह दी थी और अब बिना रक्त बहाए Empreor वा शहंशाह बन गए। आपने भी रोमन सीजर की तरह परन्तु गवर्नमेन्ट के पुनः सर्व सम्मति से निवेदन करने पर श्रीमानों ने बड़ी उदारता से राजगद्दी पर बैठना स्वीकार कर लिया। राज्याभिषेक अगामी वर्ष होगा।

हिन्दू यूनिवर्सिटी का काम–बड़े उद्योग से चल रहा है। श्री पंडित मदनमोहन मालवीय जी राजपूताना से बहुत साधन लेकर दिल्ली के द्वारा लौटे हैं। डाक्टर सुन्दरलाल भी दिल्ली से लौट आए और दोनों महानुभाव मिलकर काशी गए हैं। संयुक्त प्रान्त के लाट साहब भी वाइसराय के आधारशिला रखने के जलसे के सम्बन्ध में देखभाल करने को काशी में गए थे। इसमें सन्देह नहीं कि जिन शर्तों पर हिन्दू यूनिवर्सिटी बनाई गई है प्रचारक उनके विरुद्ध रहा है और अब भी है,

परन्तु अब जब कि काम को उठाया जा चुका है तो उसे जहाँ तक हो सके उत्तम बनाने का प्रयत्न होना चाहिए। यही कारण है कि प्रचारक में स्वतन्त्र सम्मति दी जाती है जिस पर यदि इस यूनिवर्सिटी के चालक ध्यान देंगे तो कुछ अनुचित न होगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 18 दिसम्बर, 1915]

कुपात्र को विद्यादान

कुपात्र को विद्यादान देना पुराने आर्य पाप समझते थे। इस पर यूरोप मखौल उड़ाता रहा है और उन्हें संकुचित विचार से जंगली पुकारता रहा है। परन्तु कुपात्रों के हाथ में रसायनादि प्रबल विद्याओं का अत्याचार इस समय यूरोपियनों की आँखें शायद खोल रहा है। सबमरीन नित्य निर्दयता से सैकड़ों मनुष्यों का घात और लाखों की सम्पत्ति का नाश करते हैं। जो विद्या परोपकार में लगाई हुई संसार को स्वर्गधाम बना सकती थी वह बाइबल के शैतान की सन्तान के हाथ पड़कर इस समय जहन्नुम (Hell) का दृश्य दिखा रही है।

मैसोर (मद्रास प्रान्त) राज्य की ओर से–यह नया राजनियम बना है कि वहाँ की प्रजा को 7 और 11 वर्ष के भीतर के बच्चों को आरम्भिक शिक्षा के लिए पाठशाला में भेजना आवश्यक होगा। समझ में नहीं आता कि जिस ब्रिटिश जाति के उपदेशों को सुनकर हिन्दुस्तानी रियासतों की भी नींद खुल गई है वह गवर्नमेन्ट स्वयं गाढ़ निद्रा में क्यों पड़ी हुई है। परन्तु भारत की प्रजा का स्वयं भी कुछ कर्तव्य हैं। यदि परिमित बिरादरियों को अपने किए पाप का प्रायश्चित्त करना है तो चन्दा करके आरम्भिक शिक्षा के लिए अपनी आवश्यकतानुसार पुत्र तथा पुत्री पाठशालाएँ खोल दें और जो पिता अपनी सन्तान को नियत आयु के पश्चात् भेजें, उन्हें सामाजिक दण्ड दिया जाए।

आर्यजाति में संस्कृत और आर्यभाषा का गौरव तो बढ़ रहा है, परन्तु उससे भी बढ़कर काम होना चाहिए। यह भी नहीं कह सकते कि काम नहीं होता। दस वर्ष पहले की अपेक्षा बहुत काम हुआ है, परन्तु अभी मंजिल दूर है। लखनऊ में अभी क्षत्रिय कान्फ्रेंस हुई है जहाँ जिले-जिले में स्कूल और आश्रम तथा दो बड़े कालिजों के खोलने का प्रस्ताव हुआ। जमींदारों ने निश्चय किया कि माल गुजारी के प्रत्येक रुपए पर एक पैसा शिक्षानिधि के लिए वसूल किया जाए। उसी कान्फ्रेंस के साथ जो 'क्षत्रिय युवक सभा' का अधिवेशन हुआ उसके सभापति ने संस्कृत और आर्यभाषा को अपनाने पर बड़ा बल दिया। बल तो पंजाब में भी बहुत दिया जाता है, परन्तु जितने आर्यभाषा की शिक्षा पर धुआँधार व्याख्यान देते हैं वे सब समाचार पत्र निकालते तथा पढ़ते उर्दू में ही हैं। सम्भव है कि पहले कुछ कठिनाई

हो, परन्तु जितना किसी अनुष्ठान में कष्ट सहन किया जाए, उतना ही उसके साथ प्रेम का परिचय समझा जाता है।

[सद्धर्म प्रचारक, 6 मई, 1916]

सनातन धर्म कालेज

सनातन धर्म कालेज, लाहौर का सम्बन्ध दूसरे प्रार्थना पत्र पर पंजाब यूनिवर्सिटी ने स्वीकार कर लिया है। यह समाचार बड़े हर्ष से सुना जाएगा, परन्तु जो यह शर्त लगाई गई है कि प्रथम वर्षीय कक्षा में 60 से अधिक और तृतीय वर्षीय कक्षा में 20 से अधिक छात्र न भरती किए जाएँ, इसको सुनकर कुछ सन्तोष नहीं होता। यदि कालेज के प्रबन्धकर्ता अधिक प्रबन्ध कर सकें तो क्यों न अधिक छात्र प्रविष्ट हों। श्री रायबहादुर रामशरण दास जी के 50 सहस्र नकद देने पर स्वीकृति मिली है। एक शर्त गवर्नमेन्ट की ओर से बहुत अच्छी कराई गई है—वह यह कि कालेज भवन रावी के दूसरे किनारे, नगर से दूर, बनाया जाए।

प्रयाग हिन्दू बोर्डिंग हाउस के कुछ हिन्दू ग्रेजुएट और अन्डर ग्रेजुएट विद्यार्थियों के विषय में प्रयाग के मासिक 'विद्यार्थी' के सम्पादक लिखते हैं—'उनकी दृष्टि में तो समाज की कुरीतियाँ कोई दिखाई ही नहीं देती। यदि ऐसा न होता तो क्या वे उस दिन—होली के दिन—काला मुँह करके हाथ में झाड़ू टोकरा ले गधे पर सवार होकर घूमते-फिरते। श्रीमती एनी बेसेन्ट के एक अनन्य भक्त ने तो इस करनी का, बड़े गौरव के साथ समर्थन भी दिया !' पंजाब की राजधानी लाहौर में ऐसा होना असम्भव है, क्योंकि ऐसे विद्यार्थियों का सारा विद्यार्थी जगत् बहिष्कार कर देता। संयुक्त प्रान्त में नेता राजनीति की ओर अधिक झुके हुए हैं, परन्तु समाज सुधार की ओर उनका किचिंत् मात्र भी ध्यान नहीं है।

आर्य कन्या पाठशाला प्रयाग—के आठवें वार्षिक वृत्तान्त से ज्ञात होता है कि सं. 1915 के अन्त में कन्याओं की संख्या 249 थी और व्यय वार्षिक 4427॥- रुपए हुआ। पढ़ाई सरकारी मिडिल मदरसों की तरह होती है। मिडिल परीक्षा में 8 में से 6 उत्तीर्ण हुईं। अन्त में दर्शकों की सम्मतियाँ इंग्लिश भाषा में दी गई है जिनका अनुवाद साथ है।

उर्दू के पक्षपाती—ध्यान देकर पढ़ें। मौलवी अब्दुल करीम साहब बंगाल की मुसलिम तालिमी कान्फ्रेंस के प्रधान ने कहा—"मुझे सन्देह है कि बंगाल में मुसलमानों की शिक्षा को उन्नति को शिक्षा के माध्यम के अनुचित चुनाव के कारण बहुत रुकावट मिली है। मैं कह चुका हूँ कि एक समय में बंगाल के मुसलिम लड़कों

की प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम उर्दू बनाने पर बल देता था और किस प्रकार मुझे अपनी सम्मति बदलनी पड़ी। कलकत्ता, ढाका और मुर्शिदाबाद के नगरों के मुट्ठी-भर के अतिरिक्त, बंगाल के मुसलमानों की मातृभाषा बंगाली है और उर्दू, सर्वतया उनके लिए एक विदेशी भाषा की तरह है।' क्या हमारे मुसलमान भाई अब भी यह नहीं सोचेंगे कि जब उर्दू बंगाल, बम्बई, मद्रास, पंजाब और सिन्ध के मुसलमानों के लिए विदेशी भाषा की तरह है तो क्यों न देवनागरी अक्षर और हिन्दी राष्ट्रभाषा के वे भी पक्षपाती बनें। हमारी सम्मति में हिन्दी के पक्षपाती तो संस्कृत शब्दों का हिन्दी में अधिक घुसेड़ना छोड़ दें और मुसलमान अरबी-फारसी के शब्दों की उपेक्षा करके, एक हिन्दी भाषा का प्रचार सारे हिन्दुस्तान में करके एक राष्ट्र की बुनियाद डालें। परन्तु यह स्वप्न है जो शायद शीघ्र जागृत में नहीं बदल सकेगा।

[सद्धर्म प्रचारक, 13 मई, 1916]

खंड-2

श्रद्धा

(संपादकीय टिप्पणियाँ)

स्तम्भ : संसार समाचार पर टिप्पणियाँ

(30 अप्रैल 1920–8 अक्टूबर 1920)

पूर्वीय अफ्रीका के विषय में डेपुटेशन और मि. माण्टेगू

लॉर्ड इस्लिंगटन, जर्नल वेड्जवुड, भावागरी, के.जी. गुप्ता, सर जे. रास इत्यादि महानुभावों का बना हुआ एक डेपुटेशन गत 19 अप्रैल को मि. माण्टेगू के पास गया था। ईस्ट अफ्रीका में भारतीयों के साथ असम-व्यवहार और अन्य कई बाधाओं को दूर करवाना तथा एक निष्पक्षपात कमीशन को नियुक्त करवाना–इस डेपुटेश्न का उद्देश्य था। मि. माण्टेगू ने अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण उत्तर दिया। ठीक है। पर वस्तुतः बात यह है कि सहानुभूतिपूर्ण उत्तर तो हमें कई वर्षों से मिल रहे हैं, पर अवस्था फिर भी वही है। इसलिए, अब ऐसे उत्तरों की अपेक्षा कुछ वास्तविक काम भी होना चाहिए।

रूमानिया के राजकुमार का भारत में स्वागत

गत सप्ताह हमने रूमानिया के जिस राजकुमार के भारत में आने की सूचना दी थी। वे बम्बई में इस सप्ताह पधार गए हैं। बन्दरगाह पर उनका, राजकीय प्रतिनिधियों द्वारा, स्वागत हुआ। हम भी उनका हार्दिक स्वागत करते हैं। पर यह आश्चर्य की बात है कि जनता की ओर से कोई स्वागत नहीं हुआ और उस पार्टी में भी जनता का कोई प्रतिनिधि नहीं था। इसका क्या कारण है ? खैर तो भी हम यह आशा करते हैं कि राजकुमार जितने दिन तक भारत में रहेंगे, वे यहाँ की ऊपर की *पोचापाची* को ही नहीं देखेंगे, किन्तु जनता की वास्तविक अवस्था और देश की ठीक स्थिति का चित्र भी अपने साथ ले जाएँगे।

जर्नल डायर का इंग्लैंड के लिए प्रस्थान और अभिनन्दन पत्र

20 अप्रैल को जनरल डायर और लेडी डायर ने पंजाब से बम्बई द्वारा इंग्लैंड के लिए प्रस्थान किया। जालन्धर स्टेशन पर उसे प्रांत की 100 लेडियों द्वारा एक अभिनन्दन पत्र दिया गया। यद्यपि अभिनन्दन पत्र में जनरल डायर के अमृतसरवाले नृशंस कर्म के साथ सहयोगिता और सहमति दिखाई गई थी, पर उसमें एक पंक्ति ऐसी है जिससे सारे अभिनन्दन पत्र की पोल खुल जाती है। वह यह है 'जो जीवन नाश हुआ, उसके लिए हम दुख प्रकाशित करती हैं ।' हम नहीं समझते कि जब

पंजाब की 100 लेडिओं को जनरल डायर के काम के साथ पूर्ण सहमति है तब उन्हें इस जीवन नाश के लिए क्यों दुख है ? इसके लिए तो उन्हें प्रसन्न ही होना चाहिए। परन्तु क्या ही अच्छा होता यदि अमृतसर की वे सब स्त्रियाँ जिनके पति, पुत्र वा भाई जनरल साहब की ही 'पंजाब को बचाने वाली गोलियों से मारे गए हैं'—उन्हें इस 'शुभ अवसर' पर एक उचित अभिनन्दन पत्र देतीं ?'

विवाह सहभोज और खिलाफत

जब धार्मिक जोश अपनी उचित सीमा का भी उल्लंघन कर देता है, तभी ऐसी घटनाएँ होती हैं जैसी कि माननीय मि. फाजुल हक्क की लड़की के विवाह के उपलक्ष्य में दिए हुए सहभोज में 20 अप्रैल के दिन कलकत्ता में हुई है। उस सहभोज में कुछ ऐसे महानुभाव भी उपस्थित थे जिन्होंने गत शान्ति-महोत्सव में भाग लिया था। इस पर खिलाफत-आन्दोलन के कुछ नेताओं ने आशंका उठाई और उन्हें उस सहभोज में भाग न लेने देने के लिए मि. हक्क से कहा। मि. हक्क ने कहा कि 'शान्ति महोत्सव में भाग लेने वाले गैर सरकारी मेम्बरों को मैंने निमन्त्रण नहीं दिया।' इस पर वे लोग सन्तुष्ट हो गए। हम समझते हैं कि ऐसी बातें साधारण शिष्टाचार को सर्वथा प्रतिकूल हैं।

ब्रिटिश साम्राज्य में रंग जर्मनी से

समाचार आया है कि जर्मनी से हजार-हजार और तीन हजार टन के बीच में रंग का सामान ब्रिटिश साम्राज्य में आवेगा जिसमें से लगभग 15 % भारत के हिस्से में आवेगा। वस्तुतः यह बात बड़ी विचित्र प्रतीत होती है कि यद्यपि मित्र दल ने जर्मनी को सन्धि की शर्तों से बिलकुल कुचल डाला है और उसके रंग के कई कारखानों पर कब्जा कर लिया था, पर तो भी इस व्यापार में जहाँ वह युद्ध से पूर्व भी सब देशों से आगे बढ़ा हुआ था, उसका तत्त्व वहाँ वे अब भी नहीं पा सके हैं ? क्या यह जर्मनी की, व्यापार संसार में, क्रियात्मक विजय नहीं है।

लोकमान्य तिलक का घोषणापत्र

लोकमान्य तिलक ने हाल ही में एक उद्घोषणा पत्र प्रकाशित किया है, जिसमें उन्होंने नई सुधार स्कीम के अनुसार बनने वाली कौंसिलों के लिए कांग्रेस डेमोक्रेटिक पार्टी का भावी कार्य विभाग दर्शाया है। 'शिक्षा, आन्दोलन और संगठन' ये तीन आदर्श उन्होंने पार्टी के सम्मुख रखे हैं। पार्टी जिन सिद्धान्तों का अनुमोदन करेगी उनमें, औरों के अतिरिक्त, खिलाफत प्रश्न, स्वदेशी प्रचार, एक राष्ट्रभाषा और हिन्दू-मुसलमान एकता की वृद्धि—ये भी हैं। यह बड़ी विचित्र बात है कि इस प्रोग्राम में बाल-विवाह आदि सामाजिक प्रश्नों का कोई जिक्र नहीं है। वस्तुतः ये ही तो दोष

हैं जिनके कारण हमारे समाज की जड़ें खोखली हो रही हैं। यदि अपनी कौंसिलों द्वारा भी हम ये दोष दूर न कर सके, तो कब होंगे ?

'लीडर' और देशी भाषाएँ

इलाहाबाद के वैदिक पत्र 'लीडर' ने अपने 23 अप्रैल के अंक में डॉ. रवीन्द्र के बम्बई वाले भाषण पर टिप्पणी करते हुए देशी भाषाओं के प्रति अपनी बड़ी नाराजगी प्रकट की है। वह युक्ति यह देता है कि चूँकि देसी भाषाओं में उत्तम साहित्य नहीं है, इसलिए वे शिक्षा का माध्यम होने के योग्य नहीं हैं। यह कोई नई युक्ति नहीं है, किन्तु कई बार खंडित हो चुकी है। 'लीडर' के सम्पादक मि. चिन्तामणि महोदय यदि एंग्लो-इंडियन की इस युक्ति को ठीक मान लें कि 'भारतवासियों को स्वराज्य नहीं मिलना चाहिए क्योंकि वे उसके सर्वथा अयोग्य हैं।' तो हम भी उनकी देसी भाषाओं के विरुद्ध दी हुई उपर्युक्त युक्ति की वास्तविकता को सहर्ष स्वीकार कर लेंगे ? क्या आनरेबल चिन्तामणि इसके लिए तैयार हैं ? 'लीडर' के सम्पादक की यह कोई आज की सम्मति नहीं है। वे कई बार अपने भाषणों में देसी भाषाओं के प्रति अपनी अश्रद्धा और विरोध प्रकट कर चुके हैं। परन्तु इस अंक में उनकी सम्मति में कुछ शुभ परिवर्तन मालूम होता है। अपनी टिप्पणी के अन्त में वे लिखते हैं कि 'भारतीय आत्मा विदेशी भाषा में कभी प्रकट नहीं हो सकती। जल्दी वा देर में जातीय जीवन को प्रकट करने के लिए कोई उचित माध्यम अवश्य मिल ही जावेगा। 'लीडर' के सम्पादक महोदय से हम एक और प्रार्थना करेंगे और वह यह कि वे कृपा करके कभी गुरुकुल आवेंगे तो उन्हें प्रतीत होगा कि मातृभाषा के माध्यम से दी हुई शिक्षा का कितना उत्तम परिणाम होता है। जो उन्हें वा उन जैसे अन्यों को असम्भव प्रतीत होता है, वही यहाँ सम्भव हो रहा है। आनरेबल मि. शास्त्री के भी पहले ऐसे ही विचार थे, पर यहाँ की शिक्षा *प्रणाली* को देखकर उन्हें शिक्षा में मातृभाषा के माध्यम होने के महत्त्व को स्वीकार करना पड़ा।

[श्रद्धा, 30 अप्रैल, 1920]

आयरलैंड के प्रति ब्रिटिश नीति में परिवर्तन

लन्दन का 'डेली क्रॉनिकल' कहता है कि ब्रिटेन ने आयरलैंड के प्रति नई नीति का अवलम्बन निश्चित किया है। जिसके अनुसार अब वहाँ पर केवल हत्या के अपराध में ही पकड़ हुआ करेगी तथा और भी कई छोटी-छोटी अड़चनें दूर कर दी जावेंगी। पिछले दिनों ब्रिटेन ने जिस दमन नीति का आयरलैंड में प्रयोग किया था और जिस कारण वहाँ घोर अशान्ति और उपद्रव हुआ था, उसमें प्रतीत होता है, सरकार को अब स्वयं विश्वास नहीं रहा। यह भूल सरकार को अब मालूम हुई है। परन्तु क्या 'भारत सरकार' वर्तमान आन्दोलन से कोई शिक्षा न लेगी ? सरकार को यह भूल मान लेनी चाहिए कि ब्रिटिश सम्मान (Prestige) दमन नीति पर अवलम्बन है।

चीन के विद्यार्थियों की हड़ताल सरकार का विरोध

जो लोग यह समझते हैं कि चीन सोया हुआ है, उन्हें अब अपना यह भ्रम दूर कर देना चाहिए। क्योंकि वहाँ पर भी वे सब चिह्न अब प्रकट हो रहे हैं जिन्हें वर्तमान सफलता के अनुसार जागृति के चिह्न कहा जाता है। समाचार आया है कि 'शांघाई' के 'नेशनल स्टूडैन्ट्स फैडरेशन' ने अपनी सरकार को धमकी देते हुए आखिरी बात कह दी है कि यदि वह जापान से 'शांनृंग' के विषय में जितनी गुप्त संधियाँ की हैं उन्हें प्रकाशित नहीं करेगी तो वे सब हड़ताल कर देंगे। परिणाम यह है कि बीस हज़ार विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी है। इतना ही नहीं, फौज से इतनी मुठभेड़ भी हो गई; जिससे बारूदघर के पाँच हजार आदमियों ने हड़ताल कर दी। हम तो समझते हैं कि अन्ध-जोश में फँसे हुए नवयुवकों का, अपने विद्याध्ययन की ओर ध्यान न देते हुए, इस प्रकार देश में उत्पात मचाना अन्यत्र हानिकारक है।

कौंसिलों में स्नातकों के प्रतिनिधि

गत 19 वैशाख वा 30 अप्रैल को महाविद्यालय आश्रम में श्री पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी की अध्यक्षता में स्नातकों तथा उपस्नातकों की एक सभा हुई जिसमें सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुआ—

'गुरुकुलों और अन्य जातीय संस्थाओं में चरित्र गठन पर जो बल दिया जाता

है, उसे दृष्टि में रखते हुए स्नातकों और उपस्नातकों की यह सभा सरकार के इस कार्य पर आश्चर्य और असन्तोष प्रकट करती है कि उसने जातीय संस्थाओं के स्नातकों को नई कौंसिलों के सभासद् चुनने के लिए सम्मति का अधिकार नहीं दिया है। सभा भारतमन्त्री से इस अन्याय को दूर करने की प्रार्थना करती हुई, माननीय मि. पठेन से इस माँग को आंग्ल जनता तथा पार्लियामेंट के सम्मुख रखने के लिए निवेदन करती है, पंडित सत्यदेव विद्यालंकार ने इस प्रस्ताव को उपस्थित किया, पडित दीनानाथ सिद्धान्तालंकार ने अनुमोदन तथा ब्रह्मधर्म देव और रामगोपाल ने समर्थन किया। हम आशा करते हैं कि गुरुकुल का स्नातक मंडल तथा आर्यजनता इस विषय में *उचित आन्दोलन करने में कोई कसर नहीं छोड़ेगा।*

'सेनरिमो' कांग्रेस में भाग्यों का निपटारा

मि. लायड जार्ज ने हाउस ऑफ कामन्स में, व्याख्यान देते हुए कहा है कि सीरिया पर शासनाधिकार (Mandate) फ्रांस को, मैसेपोटोमिया, मोसुल और पैलेस्टाइन पर ब्रिटेन को दिया गया है और आरमीनिया लेने के लिए अमेरिका से विशेष प्रार्थना की जाएगी। हम समझते हैं कि मित्र दल में स्वार्थ का भाव बहुत जोर से काम कर रहा है। उनका यह काम किसी भी अंश में न्यायसंगत नहीं है। मित्र दल ने सदा अपने आपको 'अधिकार, स्वाधीनता और स्वतन्त्रता' के लिए लड़ने वाला कहा है। इतना ही नहीं, युद्ध के बाद भी 'लीग ऑफ नेशन्स' को स्थापित करते समय इसी प्रकार की उद्घोषणाएँ दी गई थीं, परन्तु हम देखते हैं कि 'शासनाधिकार' (Mandate) की आड़ में मित्र दल अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहा है। हम नहीं समझते कि फ्रांस, ब्रिटेन, इटली और अमेरिका को क्या अधिकार है कि वह वहाँ के निवासियों की बिना सहमति के अनेक भाग्यों के वारे-न्यारे कर दें। पर सच तो यह है कि 'कृशे कस्यास्ति सौहृदम्।'

[श्रद्धा, 7 मई, 1920]

तुर्की राज प्रतिनिधि एक मास विचार करें

मित्र दल के सन्धि की शर्तें तुर्की राज प्रतिनिधि को दे दीं और उन्हें उत्तर देने के लिए एक मास का अवकाश दिया है। इसका मतलब यह है कि टर्की का वक्तव्य जो है उसे भी सुनने के लिए मित्र दल तैयार है। अब सारा निर्भर टर्की की दृढ़ता पर है। हमारे वाइसराय को चाहिए कि यहाँ की मुसलमान प्रजा की जो उचित माँग है उससे ब्रिटिश महामन्त्री को सूचित कर दें और बतला दें कि यदि इस ओर ध्यान न दिया गया तो भारत का शासन एक कठिन समस्या का रूप धारण करेगी।

ओड्वायर और जनरल डायर को पारितोषिक

हन्टर कमिटी ने क्या सम्मति दी है यह अभी मालूम नहीं, परन्तु जनरल डायर और भूतपूर्व लाट ओड्वायर की करतूत पर सारा संसार धिक्-धिक् पुकार रहा है। जनरल डायर को पदच्युत करके इंग्लैंड बुला लिया गया है। इस पर यहाँ के गोरेशाही चिल्ला उठे हैं। ऐसी ऐंग्लो-इन्डियन सौ औरतें भी निकल आईं जिन्होंने डायर को हस्ताक्षर करके एक प्रशंसा पत्र दिया। परन्तु बहुत से धर्मात्मा अंग्रेजों ने विशेषतः 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के सम्पादक ने लिखा कि डायर की करतूत पर सब अंग्रेज स्त्री-पुरुषों के सिर लज्जा से झुके हुए हैं। अब गोरेशाही खूनी पर्चों का सरदार प्रयाग का दैनिक 'पायोनियर' न केवल स्वयं यह लिखता है कि अंग्रेजों में कोई स्त्री वा पुरुष ऐसा नहीं जो ओड्वायर और डायर की जोड़ी को अपनी जाति का रक्षक समझकर पूजनीय न समझता हो, प्रत्युत एक गुमनाम संवाददाता से यह प्रस्ताव कराया है कि चन्दा जमा करके भट युगल को मान असी (Sword of honour) भेंट की जाए। यदि सचमुच चन्दा जमा करके ऐसा किया गया तो जहाँ चन्दा देने वाले अपनी जाति के घातक सिद्ध होंगे, वहाँ भारत के गरम राजनीतिकों (extremist) के धन्यवाद के पात्र बनेंगे।

राज की मान-हानि इससे बढ़कर नहीं हो सकती

प्रयाग के दैनिक पत्र का एक संवाददाता सूचना देता है कि अफगानिस्तान के प्रतिनिधियों की आवभगत के लिए 400 रुपए दैनिक पुरस्कार पर दो वेश्याएँ मसूरी

भेजी गई हैं। जिन दिनों युद्ध के लिए भरती हो रही थी उन दिनों सुना जाता था कि पंजाब के अहलकार वेश्याओं का नाच कराते थे और जो युवक नाच देखने आते उन्हें यह कहकर भरती किया जाता कि युद्ध क्षेत्र में नित्य नाच देखना मिलेगा। भारत के किसानों की गाढ़ी कमाई का पैसा अफगानों की *विषम* कमाई को पूरा करने के लिए व्यय करने में राज की शान क्या रसातल को न जाएगी ?

इस जाति से निराश नहीं होना चाहिए

ब्रिटिश जाति ने यदि ओड्वायर, डायर, ओब्रायन वाशवर्थ और स्मिथ पैदा किए तो उसी ब्रिटिश जाति ने ब्रेडला, काटन, वेडर्बर्न से लेकर ऐन्ड्रूज तक-से भारत पर न्योछावर होने वालों को जन्म दिया। अभी कल की बात है कि महाशय फ्रेजर ने न केवल समाचार पत्रों में जनरल डायरादि की करतूत से घृणा प्रकट की प्रत्युत अमृतसर में जालियाँवाले बाग को देखकर वहाँ के स्मारक के लिए दस पाउन्ड चन्दा भी दिया। ब्रिटिश जाति यदि इस समय भी खड़ी है तो ऐसे धार्मिक उदार व्यक्तियों के कन्धों पर। अभी सुना है कि इंग्लैंड से लिबरल दल ने मिस्टर लायड ज्यार्ज से किनारा कर लिया है और इने-गिने लिबरल ही उनके साथ रह गए हैं। आश्चर्य न होगा, यदि लिबरल और श्रमी दल एक होकर राजकाज हाथ में ले लें और फिर से इंग्लैंड की राजनीति में सन्धी उदारता का भाव जाग उठे।

देवियों ने खूब सत्याग्रह किया

बम्बई के G.T.P. लाइन की ट्रेन में दो देवियाँ सवार थीं। उन्हें घाटकोंपर रेलवे स्टेशन पर उतरना था। उनका दर्जा स्टेशन प्लेटफार्म से दूर खड़ा हुआ। उन्होंने उतरने से इन्कार कर दिया। उन्हें बहुत कहा गया, परन्तु उन्होंने यही उत्तर दिया कि प्लेटफार्म पर गाड़ी जाएगी, तभी उतरेंगी। जब गाड़ी चलती वे अग्र-सूचक घंटी (Alarem-bell) की जंजीर खींच देतीं। अन्त को गार्ड हार गया और ट्रेन को प्लेटफार्म पर ले गयां तब वे देवियाँ उतर गईं। यदि पंजाब और अवध रुहेलखंड के गार्डों को भी यह शिक्षा दी जाए तो अत्युत्तम हो।

गार्ड मिलर भी अमर हो जाएगा

गार्ड मिलर ने नार्थ-वेस्टर रेलवे की लाइन के बड़े भाग पर हड़ताल करवा दी है। मिस्टर मिलर में शासन और संघटन शक्ति भी अपूर्व मालूम होती है। 15 हजार से अधिक ने काम छोड़कर उसका साथ दिया। परन्तु अब एक भी गड़बड़ नहीं हुई जिसमें पुलिस को दखल देने का मौका मिले। रेलवे वालों का ऊँचा सिंहासन भी हिल गया है और वे अपने नौकरों की बात सुनने को तैयार हो गए हैं। अब उपज की नहीं लेते। जिन सात को मौकूफ किया था उनको भी *बेहाल* कर दिया।

उनका दुख-सुख भी सुनेंगे। लोग कहते हैं कि यह सब इसलिए है कि मिलर अंग्रेज नहीं, आइरिश है। हम उत्तर देते हैं कि ओड्वायर भी तो आइरिश था और मिस्टर ऐन्ड्रूज इंग्लिशमैन थे। कोई जाति न सारी बुरी और न सारी भली होती है। पुरानी लोकोक्ति में बड़ी गहराई है कि–

'आदमी आदमी अन्तर।
कोई *हीरा कोई* कंकर।।

इस हड़ताल का अन्त कैसे हो ?

सुनते हैं कि रेलवे की हड़ताल बढ़ती जा रही है। रेलवे की पहली घोषणा थी कि लोग बिना शर्त काम में आ लगें, फिर उनकी शिकायतें सहानुभूति हृदयों से सुनी जाएगी। अब रेलवेवाले कुछ ढीले पड़े हैं और शिकायतें दूर करने का निश्चय दिलाते हैं। कर्मचारी लोग शिकायतें दूर होने पर ही कार्य में लगने को तैयार हैं वैसे नहीं। लाहौर के भारतीय संघ एवं लाला लाजपतराय ने प्रान्तीय लाट को *हस्तक्षेप* करने और एक कमेटी नियुक्त करने की सलाह दी है। मामला तब तय हो सकता है यदि कर्मचारियों की शिकायतें सुन ली जाएँ और सामयिक *महँगी* आदि को दृष्टि में रखते हुए उनकी भृत्तिएँ काफी मात्रा में बढ़ा दी जाएँ। पर यह कैसे हो ? यदि रेलवे के मालिकों में त्याग का भाव और सच्ची वैश्यवृत्ति हो।

[श्रद्धा, 14 मई, 1920]

टर्की भी चल बसा

देखते-देखते ही संसार के भूगोल पर के अनेक राष्ट्रों और साम्राज्यों की काया पलट गई। भारतीयों की दीन-प्रार्थना और विरोध करते-करते महामन्त्री तथा वाइसराय के विश्वास दिलाते-दिलाते भी बस अब टर्की भी चल बसा। भारतीय मुसलमानों के घाव पर नमक-मिर्च छिड़कते हुए वाइसराय और भारत सरकार उसकी मरहम पट्टी करते हुए मरे हुए को सदा जीते रहने का धीमा-धीमा आश्वासन दे रहे हैं। टर्की जाता हुआ वही पाठ पढ़ा रहा है जो कुछ दिन पहले वीर कैसर और स्वेच्छाचारी जार ने पढ़ाया था कि 'संसार में किसी का जमाव नित्य नहीं है। व्यक्तियों की तरह जातियों, घरों की तरह राष्ट्रों और नगरों की तरह साम्राज्यों के उजड़ते देर नहीं लगती। जो आज अपना पेट फुलाए सेठ बने बैठे हैं, कल वही दिवालिए बनकर दर-दर धक्के खाते हैं। जो कल भुवन कँपा रहे होते हैं उन्हीं के सिर पर काल का भूत चढ़ा नाच रहा होता है। इस तरह मालूम नहीं किसकी कब बारी आ जाए ?' इस चलाचली के मेले में यह पाठ पढ़ते हुए भारतवासी क्योंकर दस साल तक चुप साधे रहे; यह समझ नहीं पड़ता।

'हिजरत' या 'मातृ पूजा'—जब मान्य शौकत अली कलकत्ता में यह कह चुके हैं कि यदि खलीफा भी भारत पर हमला करते तो वह भारतीयों की व्यथा और स्वतन्त्रता के लिए उनके विरुद्ध लड़ते—तो अब मुलसमान भाई मातृपूजा करते हुए यहीं शरीरान्त कर देने की अपेक्षा कायरों की तरह 'हिजरत' कर यहाँ से भागने की तैयारी में क्यों हैं ?

न्याय तुला—जिस न्याय तुला पर टर्की को तोला उस पर आरमीनिया के लिए उसे सख्त सजा दे दी गई है और जिस न्याय तुला पर 'कार्क जूरी' ने मि. लायड जार्ज महामन्त्री, लॉर्ड फ्रेंच कमांडर इन चीफ आयरलैंड और मि. इन मैक्करसन आयरलैंड के मुख्यमन्त्री को कार्क के मेयर की हत्या के लिए दोषी ठहराया है—उस न्याय तुला पर राजभक्त भारतीयों के लिए न्याय तोलने को बाट नहीं हैं—यह अमृतसर के हत्याकांड और पंजाब के अत्याचारों ने साफ कर दिया है।

यूरोपियन संघ और टाइम्स ऑफ इंडिया—'टाइम्स आफ इंडिया' की पक्षपात शून्य सम्मति पर कि डायर की करतूत ने सबका सिर लज्जा से नीचा कर दिया

है बम्बई और कलकत्ता के यूरोपियन संघ झुँझला पड़े हैं और कहते हैं कि हन्टर कमेटी की रिपोर्ट प्रकट होने तक किसी भी राज-भृत्य पर जनता को सम्मति नहीं बनानी चाहिए। बहुत अच्छा होता यदि यही पाठ गोरेशाही के गोरे-काले (Anglo Indian) खूनी परचों और उनके संवाददाओं को कुछ मास पहले रटाया जाता।

पायोनियर और जनरल डायर–जनरल डायर के कारनामों के लिए बड़ा वकील, गोरेशाही का राहदर्शक प्रयाग का गोरा-काला पत्र जनरल के लिए गवाहियाँ ढूँढ़ता रहता है। अभी हाल ही में उस दिन '14 साल भारत में' नाम का खूनी गवाह उक्त पत्र में लिखता है कि 'यदि शूरवीर डायर यह हत्याकांड न करता तो उसे अपने सिंहासन से उतरकर हत्याकांड करना पड़ता।' चूँकि वीर डायर के बाद आप ही 'जनरल' बनने के उम्मीदवार होंगे। निश्चय यही गवाह अपनी जाति का बेड़ा उस पार लगाएँगे।

भारत-मित्रों को फ्रिक–जब से मान्य मुहम्मद अली इंग्लैंड और मान्य लाजपतराय भारत पहुँचे हैं तब से भारत की चिन्ता में व्यग्र कर्नल येट और चार्ल्स आमन को नींद नहीं आती। इसी फिकर के मारे वे पार्लियामेन्ट में भारत सचिव को भी चैन नहीं लेने देते।

भाई परमानन्द और काले पानी के अन्य कैदी–भाई परमानन्द को जैसे सरकार यथासमय छोड़ना भूल गई थी हम भी वैसे आपका यथासमय स्वागत करना भूल गए थे। अब हम आपका हार्दिक स्वागत करते हैं। भाई जी ने देशवासियों के प्रति धन्यवाद प्रकट करते हुए लिखा है कि अभी 50 राजनीतिक कैदी काले पानी की चाहरदीवारी के भीतर राजकीय घोषणा के अमृत बिन्दु के प्यासे पड़े तड़प रहे हैं। शायद राजकीय क्षमा की पहुँच उन तक नहीं हो सकती, क्योंकि मि. मिलर साहब ने नार्थ वैस्टर्न रेलवे में हड़ताल करा रखी है।

राजकीय घोषणा की व्याख्या–मि. हार्नीमैन भारत सरकार की दृष्टि में अभी भारतीय शान्ति के लिए कंटक हैं–अतः वे भारत न पधार सकेंगे। यही राजकीय घोषणा की यथार्थ व्याख्या है।

पटियाले को बधाइयाँ–कुम्भकर्ण की निद्रा और रावण के भोग-विलास में मस्त हमारे रियासती राजा लोग करवट बदलते हुए कुछ-न-कुछ कर ही दिखाते हैं। अभी पटियाले के महाराजा ने 20 हजार रुपया ओड्वायर स्मारक के लिए दिया है। बधाइयाँ ! यह उसी दिन का समाचार है जिस दिन आप शिमला के सरकारी घर से बाहर तशरीफ लाए थे। अब तक ब्रिटिश जाति का मान रसातल में पहुँचाने का उद्योग केवल काले-गोरे लोग ही कर रहे थे, अब हमारे रियासती राजाओं ने भी उस उद्योग में हाथ बटाया है। धन्यवाद।

पंजाब को चेतावनी–राजद्रोही सभा कानून (Sedtion meeting act) की ओर पंजाब का ध्यान खींचा गया है। पंजाबवासी बड़ी जल्दी 'मार्शल-ला' की अमोघ

शक्ति भूल गए।

अधिकार-चर्चा या वोट शिक्षा–जातीय विश्वविद्यालयों की ओर से की गई गुरुकुल विश्वविद्यालय के स्नातकों की मताधिकार चर्चा को 'सहयोगी प्रताप', कानपुर ने भिक्षा का नाम दिया है। शायद सहयोगी समझता है कि 'पराधीन जाति अपने प्रभुओं से भिक्षा ही माँग सकती है, पर अधिकार-चर्चा नहीं कर सकती।''

[श्रद्धा, 21 मई, 1920]

'विजय' को चेतावनी

सरकार ने हमारे देहली के सहयोगी 'विजय' को रियासती शासन विषय में लेख छापने के कारण चेतावनी दी है। सरकार का यह काम उसकी नीति के सर्वथा विरुद्ध है। रियासतों के आभ्यन्तरिक कार्यों के विषय में जब कभी सरकार से दखल देने के लिए अपील की जाती है तब सरकार यह कहकर टाल दिया करती है कि रियासतों के अन्दरूनी मामलों में वह दखल नहीं दे सकती। यदि सरकार का यह कथन ठीक है तो जब वहाँ के निवासियों में जागृति हो रही है और वे अपने शासन के दोषों पर टीका-टिप्पणी करते हैं, तब सरकार को बीच में दखल देने की क्या आवश्यकता है ? क्या यह परस्पर विरोध नहीं है ?

सरकार का उत्तर–जातीय विश्वविद्यालयों के स्नातकों को नई स्कीम के अनुसार कौंसिलों में अपने प्रतिनिधि भेजने के विषय में जो प्रस्ताव गुरुकुल की एक सार्वजनिक सभा में पास हुआ था, उसकी एक प्रति वाइसराय को मि. माण्टेगू तक पहुँचा देने के लिए भेजी गई थी। भारत सरकार के अन्डर सेक्रेटरी का उस विषय में हमारे पास जो उत्तर आया है, उसका हिन्दी अनुवाद यह है–

'उस प्रस्ताव की कापी को आगे भेजता हुआ जो कि 30 अप्रैल, 1920 को गुरुकुल आँगन में की गई सार्वजनिक सभा में पास हुआ था, मैं आपके 1 मई, 1920 के पत्र की रसीद को स्वीकार करता हूँ।'

आशा है इस पत्र से ही सरकार इस आवश्यक मामले को खटाई में न डाल देगी।

मद्रास सरकार का प्रशंसनीय कार्य–'कुम्भ कोनम' (मद्रास) की म्यूनिसिपल कौंसिल के लिए एक पंचम-अछूत को नामिनेटेड मैम्बर बनाने के कारण लॉर्ड विलिंग्डन की सरकार वस्तुतः धन्यवाद पात्र है। बहुत दिन हुए, लॉर्ड विलिंग्डन ने लैजिस्लेटिव कौंसिल में भी एक अछूत प्रतिनिधि को चुना था। यदि अन्य प्रान्तीय सरकारें भी ऐसे साहस के कार्य करें तो समाज सुधार में वस्तुतः बहुत सहायता मिले।

क्या सब अंग्रेज जनरल डायर के काम को पसन्द करते हैं ?–'पायोनियर' न जाने कहाँ-कहाँ से पत्र मँगवाकर जनरल डायर की प्रशंसा में राय अलापता हुआ यद्यपि यह दिखाने का प्रयत्न कर रहा है कि सब अंग्रेज जनरल की क्रूरता से सहमत हैं, पर वस्तुतः ऐसी बात नहीं है। इस बात का स्पष्ट प्रभाव उस पत्र में मिलता

है जो कि एक उदाराशय अंग्रेज ने हाल ही में अमृत बाजार पत्रिका में छपवाया है। वस्तुतः यह पत्र कलकत्ता में 'इंग्लिशमैन' के लिए लिखा गया था, पर वह अपनी अनुदारता के कारण छापने का साहस न कर सका। पत्र का अन्तिम भाग महत्त्वपूर्ण है कि 'यदि आप इसी प्रकार से लिखते रहेंगे तो आपको अपने लेखों में यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि यह सम्मति आपकी और आप जैसे थोड़े आदमियों की है, भारत के अंग्रेज समुदाय की नहीं। ऐसा कहने के लिए आपके पास कोई प्रमाण नहीं है और मैं घृणापूर्वक इससे इन्कार करता हूँ।' ये विचार प्रशंसनीय है।

मरहठों का अनुसरण करो–22 मई को बड़ौदा के मि. 'खासराव जादव' के सभापतित्व में बम्बई में आल इंडिया मरहठा कांफ्रेंस का अधिवेशन हुआ। सभापति महोदय ने अपने व्याख्यान में मरहठों को अपने पुराने गौरव को याद दिलाते हुए उन्हें नई कौसिलों में अपने वर्ग (Community) की ओर से प्रतिनिधि भेजने का जो विशेष अधिकार दिया गया है, उसके प्रति घृणा और सहमति प्रकट की है। उन्होंने कहा कि 'वर्गीय प्रतिनिधि निर्वाचन (Communal representation) जातीय जीवन को नाश करने वाला और उसमें फूट डालने वाला है। क्या विचित्र बात है ? एक वर्ग तो इस प्रकार के सिक्ख तथा अन्य कुछ एक वर्ग और सम्प्रदाय विशेष प्रतिनिधि का अधिकार प्राप्त करने के लिए शोर मचा रहे हैं। शोक है कि वे अपने तुच्छ स्वार्थो से अंधे हुए जातीय एकता के महत्त्व को नहीं समझते। वीर मरहठा वर्ग के ये भाव अत्यन्त सराहनीय हैं। पंजाब के सिक्खों और अन्य वर्गों से बलपूर्वक कहेंगे कि वे मरहठों का अनुकरण करें।

आर्यमित्र–हमारे सहयोगी आर्यमित्र ने जातीय शिक्षणालयों के ग्रेजुएट्स के वोट सम्बन्धी अधिकार पर लिखते हुए (निष्पक्षपात दृष्टि से) इस प्रश्न के साथ पूर्ण न्याय करने का यत्न कियां है। आपका प्रश्न है कि सरकार किस-किस को जातीय शिक्षणालय समझे ? बहुत विचारने पर भी हमें इस प्रश्न की पेचीदगी का पता नहीं लगता। यदि सरकार की जातीय शिक्षणालयों को स्वीकार करने की इच्छा हो तो इसके लिए आवश्यक गुण (qualifications) का निश्चित करना कोई मुश्किल बात नहीं। सरकार की सहायता के बिना जातीय संस्थाओं द्वारा प्रचलित शिक्षणालयों को ही जातीय शिक्षणालय समझना चाहिए। परन्तु उत्तरदातृत्व पाठशालाओं और जातीय शिक्षणालयों में भेद करना आवश्यक होगा।

इसके साथ सहयोगी की सम्मति में वोट अधिकार प्राप्त करने के लिए सरकार से किसी-न-किसी प्रकार का सम्बन्ध जरूर करना होगा। 'किसी-न-किसी प्रकार' का अभिप्राय यदि शिक्षा विषयक या परीक्षा विषयक है तब तो निस्सन्देह जातीय शिक्षणालयों को ऐसा सम्बन्ध न करना चाहिए। परन्तु ऐसे सम्बन्ध के न होने से वोट देने का अधिकार कैसे आयुक्त है, यह हमें समझ में नहीं आता।

[श्रद्धा, 28 मई, 1920]

स्वदेशी का प्रचार

महात्मा गाँधी द्वारा सम्पादित 'यंग इंडिया' में यह पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि उनके सत्याग्रह आश्रम में बुने हुए खद्दर के कपड़ों का बहुत प्रचार हो रहा है। उनके लिए बलोचिस्तान, नीलगिरी और अदन तक से आर्डर आ रहे हैं। खड्डियों, करघों और हस्तक्रिया कौशल से बने हुए पदार्थ ही सच्चे अर्थों में स्वदेशी हैं। गुरुकुल विश्वविद्यालय में भी, शीघ्र ही, इस विषय का एक विद्यालय खुलने वाला है जिसमें ब्रह्मचारियों को, खाली समय में, हाथ से कपड़ा बुनने का शिल्प सिखाया जावेगा। कपड़े के लिए हमारा जो करोड़ों रुपया प्रतिवर्ष विदेशियों के पेट में हजम होता है वह इसी उपाय से बन्द हो सकता है। ये लक्षण देश के लिए शुभ हैं।

'दैनिक भविष्य'

सर्वव्यापी प्रेस एक्ट द्वारा रौंधे जाने का प्रयत्न किए जाने पर भी 'भविष्य' के संचालकों ने उसे पुनः न केवल साप्ताहिक, किन्तु दैनिक रूप में भी प्रकाशित करके जिस साहस और उद्योग का परिचय दिया है, वह अत्यन्त सराहनीय है। सहयोगी का हम हार्दिक स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि उसका यह दैनिक रूप स्थिर रहेगा।

मुसलमान और गो रक्षा

हमारे मुसलमान भाई भी अब गो रक्षा की ओर ध्यान दे रहे हैं, यह प्रसन्नता की बात है। काबुल के अमीर का गो हत्या को बन्द कर देने के विषय में जो अभी उद्घोषणा पत्र प्रकाशित हुए था वह हमारे पाठक जानते ही हैं। अब 'बाम्बे क्रॉनिकल' द्वारा ज्ञात हुआ है कि मनगरोल के *पीर मोतामिया साहब* ने हिन्दू-मुसमलान एकता को बढ़ाने के लिए प्रत्येक गाँव और शहर में *गोवर्द्धक मंडलियाँ* स्थापित करने के लिए आन्दोलन प्रारम्भ किया है। जिसका उद्देश्य यह है कि प्रत्येक गृहस्थी को अपने घर में कम-से-कम एक गो रखने के लिए प्रोत्साहित किया जावे। पीर साहब कहते हैं कि इससे जहाँ आर्थिक लाभ होगा वहाँ गो रक्षा भी होगी। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह आन्दोलन कोई नया नहीं है। आज

से कई वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द ने गौ-करुणानिधि इत्यादि पुस्तकों द्वारा ही नहीं, किन्तु अपने जीवन में क्रिया द्वारा भी इस विषय का पूर्ण आन्दोलन किया था जिसका अनुकरण आर्यसमाज अब भी कर रहा है। तथापि, यह अवसर प्रसन्नता का है कि हमारे मुसलमान भाई भी अब इसकी आवश्यकता को समझने लगे हैं।

डॉ. ओहदेदार का स्वर्गवास

हमें यह समाचार सुनकर अत्यन्त दुख हुआ है कि लखनऊ के प्रसिद्ध डॉक्टर और देशभक्त रायबहादुर डॉक्टर ओहदेदार का गत सप्ताह, रात को अचानक, स्वर्गवास हो गया। आप समाज-सुधारक होने के साथ-साथ राजनीतिक क्षेत्र में भी काम करते थे। कांग्रेस के पुराने भक्त थे। गत वर्ष सहारनपुर की प्रान्तीय राजनीतिक-परिषद् के आप सभापति चुने गए थे। आपके परिवार के साथ हम हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हुए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि आपकी आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की विजय

मद्रास के मि. एस. श्रीनिवास आयंगर एडवोकेट जनरैलशिप से इस्तीफ़ा देकर, राजनीतिक क्षेत्र में प्रविष्ट हुए हैं। उनके वक्तव्य इसलिए विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। आपने, सभापति की हैसियत से, 'गन्जम' में होने वाले 'विद्यार्थी सम्मेलन' में यह कहा है कि "हमारी शिक्षा में अंग्रेजी का क्या स्थान होना चाहिए—इस विषय में मेरी सम्मति अब बदल गई है। मेरी अब यह दृढ़ धारणा है कि देसी भाषाओं को मुख्य स्थान देते हुए अंग्रेजी का दूसरा दर्जा होना चाहिए।" गुरुकुल में आयंगर महाशय की सम्मति क्रिया रूप में हो रही है। *क्या यह हमारी विजय नहीं है ?*

320 वर्ष का कोई आदमी नहीं

'श्रद्धा' के तीसरे अंक में हमने यह समाचार दिया था कि पानीपत में 320 वर्ष की आयु का एक साधु आया हुआ है। इस पर ख़ास वहीं के एक संवाददाता ने हमें निम्न पत्र भेजा है—"यहाँ पर 300 साल की आयु का कोई संन्यासी नहीं आया है। और ना ही इस प्रकार की कोई यहाँ अफवाह है। बाहर से इसी प्रकार से और भी कई पत्र आए हैं, परन्तु यह खबर बिलकुल गलत है।"

एक और महाशय ने हरिद्वार से हमें लिखा है—"मैंने हरिद्वार में खास पानीपत से आए हुए आदमियों से दरयाफ्त किया है। उन्होंने जवाब दिया कि वहाँ पर 300 वर्ष की आयु का कोई आदमी नहीं आया।"

गुरुकुल में श्री स्वामी शंकराचार्य जी

20 वैशाख वा 1 मई की दुपहर को गुरुकुल में श्री 108 जगद्गुरु स्वामी शंकराचार्य

जी का शुभागमन हुआ था। सब कुलवासियों की ओर से आपको एक अभिनन्दन पत्र दिया गया। जिसका उत्तर देते हुए आपने गुरुकुल के कार्य की अत्यन्त प्रशंसा की। आपके दो व्याख्यान हुए—एक संस्कृत में और दूसरा अंग्रेजी में—जिनका सारांश हम अगले अंक में देने का प्रयत्न करेंगे।

[श्रद्धा, 4 जून, 1920]

एक यूरोपियन महिला का आर्यसमाज में प्रवेश

गत 30 मई की शाम को लखनऊ आर्यसमाज मन्दिर में 'मिस बोइसिलजका बोगदावोविच' नाम की एक सरबियन महिला ने ईसाई मत से विश्वास के सर्वथा उड़ जाने के कारण वैदिक धर्म में प्रवेश किया। इनकी उम्र 22 वर्ष की है और ये एक पोस्ट और टेलिग्राफ के डायरेक्टर जनरल की सुपुत्री हैं। अब इनका नाम श्रीमती स्नेहलता देवी रखा गया है। उस अवसर पर भिन्न-भिन्न संस्थाओं को इन्होंने 30 रुपए दान दिए। लखनऊ आर्यसमाज के कार्य की सराहना करते हुए हम श्रीमती जी को यह विश्वास दिलाते हैं कि वैदिक धर्म में उनकी भटकी आत्मा को अवश्य सच्ची शान्ति मिलेगी।

रहस्य खुल गया–'हाउस ऑफ कामन्स' के मैम्बरों का स्वार्थ

युद्ध के दिनों में इंग्लैंड के व्यापारियों ने बहुत लाभ उठाया था। इस पर टैक्स लगाने की सूचना वहाँ के 'टैक्स बैंकर' ने दी जिसके परिणामस्वरूप एक कमेटी बिठाई गई जो इस मामले की पूरी जाँच करके रिपोर्ट करे। कमेटी ने यद्यपि युद्ध के दिनों में कमाए हुए धन पर टैक्स लगाने की आवश्यकता बतलाई, पर साथ ही सरकार से यह भी प्रार्थना की कि इससे व्यापारिक साहस को धक्का पहुँचेगा, इसलिए अच्छा हो कि ऐसा टैक्स न लगाया जावे। यद्यपि यह कोई बहुत अच्छी युक्ति न थी, पर इससे व्यापारियों को और भी अधिक धन बटोरने का अवसर मिला। परन्तु जब सरकार चाहती है और उसकी बनाई हुई कमेटी भी उससे सहमत है फिर क्यों वह टैक्स न लगाने की सलाह देती है। सचमुच यह एक विचित्र रहस्य था जोकि अभी तक सबको डाँवाँडोल कर रहा था पर 'टाइम्स ऑफ इंडिया' एक विलायती अखबार के आधार पर कहता है कि इसका रहस्य अब खुल गया है। अच्छी बात है कि इस प्रकार अधिक टैक्स लगाने का प्रभाव 75% हाउस ऑफ कामन्स के मैम्बरों पर पड़ेगा जिनकी स्वार्थ रक्षा के लिए कमेटी ने उपर्युक्त सलाह दी थी। जहाँ इस प्रकार के धन के लोभी शासक हों वहाँ क्या कभी उत्तम शासन की आशा की जा सकती है ? अब समझ में आ जाता है कि प्राचीन काल में शासन की बागडोर वसिष्ठ जैसे निरीह ब्राह्मणों के हाथ में क्यों थी ?

फिजी में भारतवासियों पर अत्याचार

भारत हितैषी मि. सी.एफ. एंड्रूज ने अंग्रेजी अखबारों में एक पत्र छपवाया है जिससे ज्ञात होता है कि वहाँ की 'कालोनियल शुगर रिफाइनिंग' कम्पनी के मजदूरों के थोड़े वेतन होने के कारण हड़ताल करने से पुलिस ने उनके साथ अत्यन्त पाशविक अत्याचार किया। इसके अतिरिक्त वहाँ के प्रसिद्ध नेता डॉक्टर मणिलाल जी एम. ए., एल.एल.बी. बैरिस्टर ने 'हिन्दू' में एक पत्र छपवाया है जिससे ज्ञात होता है कि उन्हें थाने में इंस्पेक्टर के सामने खास कान्स्टेबल द्वारा पीटा गया और उन्हें घर से बाहर न निकलने की आज्ञा दी गई। इतना ही नहीं, आपको भूख से मार डालने की भी चेष्टा की गई। गोरों के छोटे-छोटे बच्चे तक आपके नौकरों को पिस्तौल निकाल धमकी देते थे। इस प्रकार और भी सारी कहानी अत्याचार, क्रूरता और नृशंसता से भरी हुई है। बिना जाँच किए 'आरमीनिया' के जिस 'हत्याकांड' के लिए आज टर्की को बदनाम किया जा रहा है, क्या वे अत्याचार उससे कम हैं जोकि कई वर्षों से फिजी आदि देशों में भारतीयों पर हो रहे हैं ? परन्तु बात तो सारी सफ़ेद चमड़ी की है जिसके आगे आते ही सब कुछ श्वेत-कलंक कालिमाशून्य हो जाता है। सरकार को रायल कमीशन बिठाकर इस मामले की पूरी खोज करनी चाहिए।

शुभ-विवाह

यह समाचार सुन हमें अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि गुरुकुल के स्नातक पं. नन्दकिशोर जी विद्यालंकार, प्रोफेसर रामजस कालेज, देहली, का विवाह कलकत्ते के प्रसिद्ध व्यापारी म. शिवप्रसाद गर्ग की सुपुत्री श्रीमती सौभाग्यवती से गत सप्ताह कलकत्ते में आनन्दपूर्वक हुआ। वधू पक्ष की ओर से 500 रुपए और वर पक्ष की ओर से 125 रुपए का दान गुरुकुल को दिया गया। हम अपने स्नातक भाई को बधाई देते हुए इस जोड़ी के चिरायु रहने की परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

'सभ्यता'

पं. शेरसिंह जी आर्योपदेशक के सम्पादकत्व में इस नाम की एक मासिक पत्रिका 'मुजफ्फरगढ़' से निकलनी प्रारम्भ हुई। सुन्दर-सुन्दर कविताओं के अतिरिक्त लेख भी उत्तम खोजपूर्ण और रोचक होते हैं। हम सहयोगी का हार्दिक स्वागत करते हैं।

इन्दौर में आर्यसमाज पर अत्याचार

हमारे एक मान्य महोदय ने जिनके कथन में सत्यता में तनिक भी सन्देह नहीं हो सकता—हमें निम्न आशय का समाचार भेजा है—"...आर्यसमाज के उत्सव से लौटकर

दिल्ली के पंडित रामचन्द्र जी शर्मा यहाँ भी आए थे। उनके व्याख्यानों की व्यवस्था की गई तो पुलिस ने कहा कि सन् 1911 ईस्वी के अमुक रेगुलेशन के अनुसार बिना मजिस्ट्रेट की आज्ञा के ओपन एयर मीटिंग्स नहीं हो सकती। एतदर्थ प्रथम दिन केवल 15 मिनट में ही व्याख्यान बन्द कर देना पड़ा। दूसरे दिन जब आज्ञा के लिए प्रार्थना पत्र दिया गया तो मजिस्ट्रेट ने इस शर्त पर आज्ञा दी कि ईसाइयों और मुसलमानों के मतों पर रीजनेबल और अन-रीजनेबल, जस्ट और अनजस्ट कैसे भी रिमार्क न किए जावें और न इन मतों का रिफ्रेंस ही अपने पक्ष या विपक्ष में ही दिया जाए।''

मजिस्ट्रेट के इस अन्यायपूर्ण व्यवहार और धींगाधींगी का अत्यन्त विरोध करते हुए हम महाराज साहब से बीच में दखल देने की प्रार्थना करते हैं।

[श्रद्धा, 18 जून, 1920]

मारवाड़ियों में जागृति

जमाने की जबरदस्त लहरों की टक्कर से जगाए जाकर मारवाड़ी भाई अब अपना कर्तव्य समझ रहे हैं—यह प्रसन्नता की बात है। अभी उस दिन बम्बई में होने वाले 'मारवाड़ी-अग्रवाल सम्मेलन' में एक 'अग्रवाल जातीय फंड' खोला गया जिसमें लगभग 9 लाख रुपया एकत्रित हुआ।

सम्मेलन के अन्त में महात्मा गाँधी जी ने मद्रास में हिन्दी प्रचार के लिए 50 हजार रुपए की अपील की जिसमें बम्बईवालों ने 40 हजार और कलकत्ता के मारवाड़ियों ने 10 हजार रुपए दिए। धन का सदुपयोग इसे ही कहते हैं।

कन्या पाठशाला

मेरठ के मुंशी शम्भुदास पेशकार की विधवा धर्मपत्नी श्रीमती बिशन देवी ने हाल ही में 13 लाख रुपए का दान दिया है जिसमें से 25 हजार रुपया एक देवनागरी हाई स्कूल को और 25 हजार रुपए स्थानीय समाज की कन्या पाठशाला को 200 रुपया मासिक अलाउन्स के साथ दिया है। श्रीमती जी को धन्यवाद देने के साथ-साथ हम मेरठ समाज को भी बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि पाठशाला की दशा अब बहुत उन्नत हो जावेगी।

खंडेलवाल महासभा में आर्यसमाज की विजय !

गत सप्ताह इन्दौर में 'खंडेलवाल महासभा' का वार्षिक अधिवेशन हुआ जिसमें बाल-विवाह, वेश्याओं के नाच, स्त्रियों के गन्दे गीत और विवाह आदि संस्करों में फिजूलखर्ची के विरुद्ध प्रस्ताव पास हुए। इसके अतिरिक्त 132 जाति-बहिष्कृत परिवारों को पुनः सम्मिलित किया गया। आर्यसमाज और क्या कहता है ? क्या यह उसकी क्रियात्मक विजय नहीं है ?

रूटर की महिला

'बोल्शेविज़्म' के प्रसिद्ध नेता लेनिन के विषय में इलाहाबाद का 'लीडर' इस प्रकार से लिखता है—"कहा करते हैं कि जो अपनी मृत्यु के विज्ञापनों को पढ़ता है, वह

अधिक काल तक जीता है। गत वर्षों में 'लेनिन' की जितनी अधिक जन्म और मृत्यु हुई हैं, उतनी किसी की नहीं हुईं। प्राकृतिक वा राजनीतिक वायुमंडल के प्रत्येक परिवर्तन से उसकी मृत्यु की सूचना देने के लिए हमारा मित्र रूटर, सर्वसाधारण को खुश करने के लिए, सदा तैयार रहता है।

हम इससे सर्वथा सहमत हैं। परन्तु शोक है, इस बार समाचार पत्रों में जो तार छपा है, उसमें रूटर ने उसे मारा नहीं, किन्तु भगाया है। इस बार उसके मित्र 'ट्रोस्टकी' को मारा गया है। वाह जी ! रूटर !!!

यूरोप की आधुनिक दशा

युद्ध के बाद देश की जो भयंकर दशा होती है वही आजकल यूरोप की है। वे सब दृश्य वहाँ अब प्रकट हो रहे हैं जो किसी समय इस अभागे देश भारत ने भी देखे हैं। हाउस ऑफ कामन्स ने इसी विषय पर व्याख्यान देते हुए लॉर्ड मेसिल ने, गत सप्ताह, यूरोप की वर्तमान भयंकर दशा का वर्णन इन शब्दों में किया है–''जनता की बहुत बड़ी संख्या भूख और बीमारी का शिकार बनी हुई है। आर्थिक चक्रस्थान भ्रष्ट हो गया है और शिल्प उद्योग का काम बिलकुल बन्द पड़ा है। मध्य यूरोप की इस समय अत्यन्त भयंकर दशा है। यूरोपियन सभ्यता के इतिहास में ऐसा भयंकर दृश्य कभी उपस्थित नहीं हुआ।''

भारत को पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करने का जो उपदेश दिया करते हैं उन्हें लॉर्ड मेसिल जैसे राजनीतिज्ञ का यह कथन ध्यान से पढ़ना चाहिए।

इंग्लैंड क्यों उकसा रहा है ?

यूरोप की ऐसी भयंकर दशा का वर्णन जहाँ हम एक ओर सुनते हैं वहाँ दूसरी ओर इंग्लैंड की युद्ध तृष्णा अभी तक समाप्त हुई प्रतीत नहीं होती। इस सप्ताह विलायती डाक द्वारा आए हुए समाचारों से ज्ञात होता है कि इंग्लैंड अब भी चुपके-चुपके बारूद भेजता हुआ पोलैंड को रूस (बाल्शवीस्ट) से लड़ा रहा है। रूस इस युद्ध में यदि हार गया तो न केवल रूस की, परन्तु सारे यूरोप की दशा अत्यधिक शोचनीय हो जावेगी। इंग्लैंड के ये हथकंडे, उसकी उद्‌घोषित नीति के सर्वथा विरुद्ध नहीं हैं ?

दिये तले अँधेरा

समाचार आया है कि 'सेनेरिमो' कान्फ्रेंस में जाते हुए 'मारसेसीन' नामक स्थान में लायड जार्ज ने अपनी एक वकृत्ता में निम्न शब्द कहे थे–''मैं अपने आपको संसार की स्वाधीनता का वीर समझता हूँ और सब प्रश्नों पर इसी दृष्टि से विचार करता हूँ।'' लायड जार्ज का 'स्वाधीनता का वीर' होने का सबसे बड़ा प्रमाण टर्की और जर्मनी के साथ की गई सन्धि के अतिरिक्त भारत, मिस्र और एशिया में मिलता

है। खैर, इन सबको भुलाते हुए अपने पड़ोस में रहने वाले आयरलैंड के साथ कठोर-शासन का प्रयोग में लाते हुए अपने आपको 'स्वाधीनता का वीर' होने का जिस तरह परिचय दिया जा रहा है; वह किसी से छिपा नहीं है। क्या यह 'दीये तले अँधेरा' नहीं है।

जर्मनी और मित्र दल

'लीग ऑफ नेशन' की आड़ में मित्रदल द्वारा जिस प्रकार जर्मनी को कुचलने का प्रयत्न किया गया है, वह हमारे पाठकों से छिपा हुआ नहीं है। परन्तु यह अब प्रसन्नता की बात है कि मित्रदल का भाव अब बदल रहा है। विलायत के प्रसिद्ध समाचार पत्र 'रिव्यू-ऑफ-रिव्यूज़' के इस मास के अंक में 'मि. सिसली हडलस्टन' का इसी विषय पर एक रहस्यपूर्ण लेख छपा है। पिछले दिनों 'सेन-रिमो' में मित्रदल की जो कान्फ्रेंस हुई थी, उसमें ये सज्जन चूँकि स्वयं उपस्थित थे, इसलिए इनकी बातें सुनने योग्य हैं। कान्फ्रेंस का महत्त्व दर्शाते हुए और टर्की सन्धि का वर्णन करते हुए लेखक महाशय लिखते हैं कि मित्रदल ने यह बात अच्छी तरह से समझ ली थी कि "जर्मनी हमारी शत्रु नहीं है, किन्तु हमारा साथी है" मित्रदल के प्रतिनिधियों के इस भाव परिवर्तन का कारण, लेखक महाशय के शब्दों में, उनका यह समझ लेना है कि "यदि जर्मनी का नाश होगा तो सारे यूरोप का नाश होगा" जर्मनी की उन्नति से सबसे अधिक डरने वाले और इसीलिए सन्धि की शर्तों को अधिक-से-अधिक कठोर करने वाले फ्रांस ने भी अपनी भूल मान अब यह समझ लिया है कि "जर्मनी के नाश में फ्रांस का नाश है और जर्मनी की उन्नति में फ्रांस की उन्नति है।" फ्रांस ने अपना रुख क्यों बदला—इसमें भी एक रहस्य है। और वह यह कि, इंग्लैंड कुछ ही दिनों में जर्मनी के साथ आर्थिक सम्बन्ध जोड़ने वाला है जिसका अनुकरण महाद्वीप के अन्य सभ्य देश भी करेंगें। अब यदि फ्रांस ने अपनी पुरानी शत्रुता ही रखी और इस आर्थिक सन्धि का हिस्सेदार न बना तो वह बिगड़ जावेगा और सबसे अधिक घाटे में रहेगा।

यूरोप की आधुनिक राजनीति का रुख अब इधर की है। यद्यपि इस भाव के मूल में 'स्वार्थ' ही काम कर रहा है, पर तो भी आधुनिक राजनीति में यह एक विचित्र, पर शुभ परिवर्तन ला देगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

पटियाला महाराज

पटियाला महराज और दूसरे *झोलीचुक* सिक्खों को गुरुदासपुर में हुई सिक्ख सभा ने (13 जून) सिक्ख बिरादरी से बाहर कर दिया है। चूँकि इन लोगों—विशेषतः महाराज साहिब ने 20 हजार रुपए ओड्वायर फंड में देकर जाति पर काला धब्बा लगाया है। उसी सभा ने फैसला किया जब तक हमारे भाई कैद से न छोड़े जाएँगे

तब तक हम सेना में भरती न होंगे और जमीन का लगान सरकार को न देकर कैदी भाइयों के सम्बन्धियों को पालने में लगाएँगे। निजाम रामपुर आदि रियासतों के लिए भी मुसलमान भाई इस उदाहरण का अनुकरण करें। देश में ऐसी ही जागृति की आवश्यकता है।

[श्रद्धा, 25 जून, 1920]

पाश्चात्यों की मानसिकता

ईसा ने कहा था कि "अपने शत्रुओं से प्रेम करो और दाहिने गाल पर चपेट मारने वाले के सामने बाईं भी कर दो।" परन्तु उसका अनुकरण करने का दम भरने वाले ईसाइयों का चरित्र इससे सर्वथा विपरीत है। पाश्चात्यों में पारस्परिक घृणा और द्वेष का कितना राज्य है, इसका प्रमाण निम्नलिखित घटना से मिलता है। जापान के 'योकोहामा' नामक स्थान में फ्रांसीसियों का 'ओरिएंटल पैलेस' नामक एक होटल है। इसके दरवाजे पर मोटे अक्षरों में, ये शब्द लिखे हुए हैं 'जर्मनों को इस होटल में आने की आवश्यकता नहीं'। इतना ही नहीं एक बार भूल से एक जर्मनी परिवार सहित इसमें आ टिका। इस पर अध्यक्ष ने दो घंटे में होटल खाली कर देने की आज्ञा दी जो कि उस परिवार को करना पड़ा। इससे ज्ञात होता है कि यद्यपि युद्ध समाप्त हो गया है, पर पाश्चात्यों के हृदयों में से घृणा और विद्वेष के भाव अभी तक नहीं दूर हुए।

क्या रूस गरीब है ?

रूस के प्रतिनिधि क्रेस्सिन आजकल इंग्लैंड-फ्रांस में सुलह की शर्तों को तय करने के लिए आए हुए हैं। एक पत्र संवाददाता से बातचीत करते हुए उन्होंने अभी हाल ही में, यह कहा है कि रूस इस समय भी 2 व 3 मिलियन टन मिट्टी का तेल, 2-3 मिलियन टन उत्तम चमड़ा, 200 टन तारपीन का तेल और 10 हजार टन खाने के तेल बाहर अन्य देशों में भेज सकता है।

रूटर महाराज तो हमें, पिछले दिनों से, रूस की निर्धनता और दरिद्रता का बहुत भयंकर वर्णन सुना रहे हैं, परन्तु रूस-प्रतिनिधि के इस कथन से तो उसकी सफलता में बहुत सन्देह होने लगता है। परन्तु भूखे शेरों की तरह मोसुल की तेल की खानों के लिए लड़ने वाले सभ्यताभिमानी यूरोपियन राष्ट्र क्यों नहीं रूस से व्यापार सन्धि करके अपनी इच्छा पूरी कर लेते ?

ग्रेट ब्रिटेन को ईरान छोड़ना होगा

इस सप्ताह की विलायती डाक में आए हुए 'डेली मेल' में प्रसिद्ध संवाददाता 'लीवेट

फेसर' का एक विचारपूर्ण लेख है जोकि प्रत्येक देशभक्त अंग्रेज को आँखें खोलकर पढ़ना चाहिए। मध्य एशिया में अपना साम्राज्य बढ़ाने के लिए जिन कुटिल नीतियों का ग्रेट ब्रिटेन आजकल प्रयोग कर रहा है, लेखक महाशय ने कड़ी शब्दों में समालोचना की है। लेख का यह प्रश्न सर्वथा उचित है कि यदि यह बात मान भी ली जावे कि साम्राज्य वृद्धि के लिए सब अवस्थाएँ अनुकूल हैं तब भी मि. लायड जार्ज और उसके एक-दो पुछल्ले मन्त्रियों को क्या अधिकार है कि वे पार्लियामेंट से बिना सलाह किए अपने साम्राज्य के सिर पर एक और भारी साम्राज्य का भार लाद दें। उन्हें क्या अधिकार है कि वे पार्लियामेंट में बिना सलाह किए अपने ही उत्तरदातृत्व पर मैसोपोटामिया आदि देशों का शासनाधिकार (Mandate) के 'स्वीकार' करने का शोर मचावें ? लंदन के छोटे-छोटे तंग घरों में गन्दी गली में रहने वाले कीड़ों की तरह जीवन बिताने वाले गरीब मजदूरों के लिए उत्तम हवादार घर बनवाने के लिए तो लायड जार्ज की सरकार के पास पैसा नहीं है, परन्तु एशिया की भूमि को, कुचालों से, काबू करने के लिए सरकार की थैलियों का मुँह न जाने कहाँ से खुल जाता है ? लेखक महाशय के अन्तिम वाक्य भावी घटनाचक्र पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त हैं—"मैं बलपूर्वक कहता हूँ कि ग्रेट ब्रिटेन मध्य एशिया और भारत को अपने काबू में नहीं रख सकता और यदि सरकार ने इसी नीति का अनुसरण किया तो वह सम्पूर्ण साम्राज्य को नाश के किनारे पहुँचाएगी।"

[श्रद्धा, 2 जुलाई, 1920]

अंधों की सहायता

पिछले दिनों इंग्लैंड की पार्लियामेंट ने अंधों के विषय में एक कानून पास किया है, जिसके अनुसार स्थानीय म्युनिसिपेल्टी और कमेटीज़ अंधों के लिए न केवल शिक्षा, परन्तु जीवन-निर्वाह के लिए भी विशेष प्रबन्ध करें। इसके अतिरिक्त 50 वर्ष के ऊपर की आयुवाले अंधों को राज्य की ओर से पेन्शन दी जावेगी। पार्लियामेंट का यह काम, वस्तुतः प्रशंसनीय है। भारत सरकार और देशी रियासतों को भी इसका अनुकरण करना चाहिए।

पुत्र का पिता से विरोध

विदेश यात्रा के लिए लोकमान्य तिलक के प्रायश्चित्त करने के विषय में हम 'श्रद्धा' के किसी पिछले अंक में लिख चुके हैं। अब सहयोगी 'वन्देमातरम्' के द्वारा ज्ञात हुआ है कि लो.मा. तिलकजी के सुपुत्र ने 'इन्द्रप्रकाश' में एक पत्र छपवाकर यह उद्घोषित किया है कि "मैं अपने पिता के प्रायश्चित्त को सर्वथा नापसन्द करता हूँ।" *यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपारयानि नेतराणि।* इस उपनिषद् वाक्य का क्रियात्मक उदाहरण यही है।

अन्तर्जातीयता का ढोंग

बरसाती कीड़ों की तरह आजकल अंतर्जातीय सभाओं (International Conference) की यूरोप में धूम मची हुई है। कोई तीन-चार राष्ट्र मिलकर एक सभा खोल देते हैं और उसे 'अन्तर्जातीयता' का पहरावा पहना देते हैं। अभी उस दिन एक 'अन्तर्जातीय व्यापार सभा' की खबर मिली है, जिसके सभापति फ्रेंच राष्ट्रपति म. मिलरैंड थे। हम नहीं समझते कि वह सभा किस अधिकार से 'अन्तर्जातीय' कही जा सकती है। जबकि यूरोप के दो बड़े राष्ट्र, जर्मनी और रूस के साथ इन राष्ट्रों की व्यापार सन्धि अभी तक विचाराधीन है। मित्रदल को अब यह भ्रम दूर कर देना चाहिए कि संसार में केवल वे ही राष्ट्र नहीं हैं जोकि इसकी कूटनीति में हाथ बँटाते हैं। परन्तु और भी हैं जिनकी सत्ता उसे स्वीकार करनी होगी। 'हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और', वाली कहावत के अनुसार मित्र दल को 'अन्तर्जातीयता'

का ढोंग रचना ही पड़ता है।

निरक्षरता से आर्थिक हानि

'यूनाइटेड-स्टेट्स (अमेरिका) में 15 मिलियन मनुष्यों के अनपढ़ होने के कारण राज्य को वार्षिक एक बिलियन और पाँच सौ मिलियन डालर की आर्थिक हानि है। यदि यह ठीक है तो इस हिसाब से, भारत को कितनी वार्षिक आर्थिक हानि होगी जहाँ के 288 मिलियन लोग निरक्षर हैं ? (इंडियन विटनस)

उचित प्रस्ताव

सहयोगी 'कर्मवीर' के इस प्रस्ताव से हम सर्वथा सहमत हैं कि नई कौन्सिलों के लिए खड़े होने वाले उम्मीदवारों के लिए जिन प्रतिज्ञाओं की आवश्यकता है उनमें गोवध बन्द करवाने, और आयुर्वैदिक के प्रचार करने के विषय में भी प्रतिज्ञा करवाई जानी चाहिए। वस्तुतः इस समय इन दोनों की अत्यन्त आवश्यकता है। परन्तु इन दो प्रतिज्ञाओं के साथ तीसरी एक प्रतिज्ञा और जोड़ देनी चाहिए और वह शराब, मांस और अन्य मादक पदार्थों का सर्वथा निषेध कर देने के विषय में है। चूँकि आबकारी का सारा महकमा दत्त विषयों में से एक है, इसलिए इसका रोकना वा न रोकना हमारे गैर-सरकारी मैम्बरों के हाथ में ही है। हम आशा करते हैं कि मादक-निषेधक समितियाँ इस विषय में अवश्य आन्दोलन करेंगी। किसी उचित अवसर पर हम भी इस मामले पर अपने विचार अवश्य प्रकट करेंगे।

आयरलैंड की सुलझन

लोहे के पिंजरे में बन्द, किन्तु स्वच्छन्द विचरण करने के लिए कोशिश करते हुए पक्षी के साथ मालिक जैसा व्यवहार करता है, वही आज ब्रिटेन आयरलैंड के साथ कर रहा है। साम्राज्यवाद के मद में चूर इंग्लैंड, जहाँ दुनिया के सब छोटे राज्यों को हेय समझता हुआ उन्हें पददलित करना चाहता है वहाँ दूसरी ओर आयरलैंड भी स्वाधीनता की भूख से सताया जाकर पागल हो गया है और स्वतन्त्रता की देवी के चरणों में अपना सिर रख चुका है। इंग्लैंड की कोई भी शक्ति अब विरोध की उस प्रचंड ज्वाला को बुझा नहीं सकती। और यदि इंग्लैंड अपने फौजी शासन के नृशंस कृत्यों से इन मुट्ठी भर लोगों को रौंदने का प्रयास करेगा तो इससे जहाँ वह, संसार की दृष्टि में, अपने नैतिक आधार को खोएगा वहाँ दूसरी ओर, अपने पुराने असर पर धब्बा लगावेगा। बस, अब तो केवल एक ही मार्ग है और वह यह कि ब्रिटेन यह समझ ले कि उसकी सुरक्षा आयरलैंड की स्वाधीनता में ही है।

भावी युद्ध कहाँ होगा ?

कुछ समय पूर्व लॉर्ड कर्जन ने, हाउस ऑफ लार्ड्स में एक और महायुद्ध की आशंका प्रकट की थी। संसार का अत्याधुनिक घटनाचक्र तो इस आशंका को सत्य सिद्ध करने में लगा हुआ है, पर प्रश्न यही होता है कि इसका प्रारम्भ कहाँ होगा ? आस्ट्रेलिया के महामन्त्री ने जापानियों की वृद्धि की ओर ध्यान दिलाते हुए, हाल ही में, यह भविष्यवाणी की है कि भावी युद्ध 'शान्त महासागर' (Pacific) में होगा। लॉर्ड जैलिको ने विशाल सामुद्रिक कार्य की आवश्यकता दर्शाते हुए यह सलाह दी है कि ब्रिटेन का उत्तर महासागर में खड़ा हुआ सामुद्रिक बेड़ा प्रशान्त महासागर में ही बहुत जम जाना चाहिए। इतना ही नहीं, अमेरिका में नौ-सचिव ने भी अभी यह उद्घोषणा की है कि युनाइटेड स्टेट को, प्रशान्त महासागर (Pacific) में अपना जंगी बेड़ा तैयार करना चाहिए। इन लक्षणों से तो यही पता लगता है कि भावी अशान्ति का तूफान 'प्रशान्त महासागर' के किनारों से ही उठेगा। देखें, ऊँट किस करवट बैठता है ?

बाम्बे यूनिवर्सिटी में हिन्दी का अनादर

सर नारायण चन्द्रावरकर के प्रस्ताव और प्रिंसिपल परांजपे के संशोधन के साथ बाम्बे, यूनिवर्सिटी की सीनेट ने एक प्रस्ताव पास किया है। जिनके अनुसार बी.ए. पास करने वालों को निम्न दो समूहों में से कोई दो भाषाएँ चुननी होंगी—अंग्रेजी, संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, हिब्रू, अरबी, फ्रैंच, इनस्ता और पहलकी, पाली, पराशियन, जर्मन, अर्धमागधी, मराठी, गुजराती, कनारी, उर्दू। यूनिवर्सिटी की सीनेट पर हमें आश्चर्य है कि उसने 'अर्धमागधी', 'कनारी', 'पहलवी' जैसी अप्रसिद्ध भाषाओं को तो स्थान दिया है, परन्तु उस भाषा का, जिसके बोलने वाले कुमाऊँ से कुमारी तक हैं, जिसका प्राचीन साहित्य भी किसी से कम नहीं है, उस देश-भाषा 'हिन्दी' का क्यों निरादर किया है ? हिन्दी प्रेमियों को इस विषय में पूर्ण आन्दोलन करना चाहिए।

सरकार की भद्दी युक्ति

संयुक्त प्रान्त की 19-20 की जो वार्षिक 'स्वास्थ्य' रिपोर्ट निकली है उससे ज्ञात होता है कि प्रान्त में गत वर्ष जन्म संख्या 39-29 से गिरकर 32-39 हो गई थी जिसका कारण प्रान्तीय सरकार के मत में, लोगों का सैनिक बनकर यूरोप की युद्ध भूमि में जाना है। सरकार की इस भद्दी युक्ति पर हमें हँसी ही आती है। इसका क्या कारण है कि पंजाब—जहाँ के सैनिक सबसे अधिक संख्या में विदेश गए हैं—में जन्म संख्या घटने के स्थान पर बढ़ी ही है। 'गालिब ख़याल है अच्छा दिल खुश

करने को' के अनुसार हमारी प्रान्तीय सरकार के दिल को इस भद्दी दलील से तसल्ली मिल जावे तो हमें इसमें कोई उज्र नहीं है।

लेबर पार्टी से बहुमत की आशा मत करो

इंग्लैंड में स्कारबेरी नामक स्थान में होने वाली कान्फ्रेंस ने गतवर्ष पंजाब मार्शल ला की आड़ में किए गए हत्याकांड के प्रति घृणा और डायर की नृंशसता के प्रति रोष प्रकट करते हुए वाइसराय को वापस बुला लेने का प्रस्ताव पास किया। कान्फ्रेंस का यह काम अत्यन्त प्रशंसनीय है और हम सब भारतवासी को एक चेतावनी दे देना चाहते हैं और वह यह कि लेबर पार्टी से उन्हें बहुत अधिक आशा नहीं करना चाहिए। हम वह समय नहीं भूले जबकि साम्राज्य की बागडोर हाथ में आने से पूर्व लिबरल पार्टी भी हमारी दीन दशा पर तरस खाती हुई, हमें सब्जबाग दिखाने में कोई कसर न छोड़ती थी, परन्तु अधिकार मिलने पर वे सब सिद्धान्त काफूर हो गए थे। इस सारे मामले की घुंडी तो गोसाईं तुलसीदास का यह वाक्य अच्छी तरह से खोल देता है–'असको जनमा जग मांहि। प्रभुता पाय जाय मद नांही।'

लेबर पार्टी के प्रति भी हमारी यह आशंका सर्वथा निर्मूल नहीं है।

[श्रद्धा, 9 जुलाई, 1920]

सिनफिनर कौन है ?

हमारे पाठक सिनफिनरों का नाम समाचार पत्रों में प्रायः पढ़ते रहते हैं, परन्तु इस नाम की उत्पत्ति कैसे हुई—यह शायद थोड़ों को ही मालूम होगा। सहयोगी 'प्रभा' ने एक अंग्रेजी पुस्तक के आधार पर इसकी उत्पत्ति जो बतलाई है उसे हम पाठकों के विनोदार्थ यहाँ उद्धृत करते हैं :

सीनफीन का नामकरण इस प्रकार हुआ। आन्दोलनकर्ताओं को अपने आन्दोलन के लिए नाम की तलाश थी। इसलिए उन्होंने एक सुप्रसिद्ध आयरिश विद्वान् की सम्मति ली। उसने उन्हें एक दृष्टान्त देकर समझाया। उसने कहा कि मनूस्टर के एक आदमी ने अपने नौकर को मेले में घोड़ा बेचने के लिए भेजा। घोड़ा बिक गया, परन्तु नौकर कई दिन तक लौटकर न आया। जब वह लौटकर आया तब अनेक पड़ोसी मौजूद थे। मालिक ने पूछा कि इतने दिन तुम कहाँ थे ? नौकर ने यह कहकर प्रश्न को टाल दिया कि Sin Fein = Sinfein (सिन फ़ीन, सिनफीन = घर-ही-घर को) घर-ही-घर के अर्थात् घर के मामले घर ही के लिये हैं। तभी से इस आन्दोलन का नाम सिनफ़ीन पड़ गया। इस घटना से हमारे इन देशभाइयों को शिक्षा लेनी चाहिए जो कि अपने संस्थाओं के नाम रखने के लिए अंग्रेजी शब्दकोष की शरण लिया करते हैं।

सर पी.सी. राय का अनुकरण करो

नई काउन्सिलों के लिए उम्मीदवार खड़े होने के विषय में पूछे जाने पर विद्या-शिरोमणि सर पी.सी. राय ने उत्तर दिया कि "यद्यपि मुझे राजनीति से बड़ा प्रेम है, परन्तु मैं समझता हूँ कि भारत के लिए राजनीतिक पुरुष आवश्यकता से अधिक हैं। इस समय वैज्ञानिकों की बड़ी कमी है और राजनीति से बाहर रहता हुआ मैं उसी के लिए नवयुवकों को तैयार करना चाहता हूँ।" राजनीतिक क्षेत्र वस्तुतः बड़ा लुभावना है और हमारे अनुभव-शून्य दिलचले नवयुवकों के लिए लीडरी खरीदने का, दौर्भाग्य से, एक बड़ा उत्तम साधन बन गया है। यदि वास्तव में वे देशहित करना चाहते हैं तो उन्हें विज्ञान-तत्त्ववेत्ता राय महोदय का अनुकरण करना चाहिए।

रियासती अँधेर का एक और नमूना

हिन्दू धर्म के प्राणस्वरूप, उदयपुर महाराज के 'बिजोलिया' नामक प्रान्त में गरीब किसानों के प्रति जिस ओड्वायरशाही का परिचय दिया जा रहा है वह हमारे पाठकों से छिपा हुआ नहीं है। गुजरात के 'जनागध दरबार' ने भी अपनी एक विचित्र आज्ञा से, अपना नाम उसी श्रेणी में लिखवा लिया है। इस आज्ञा के अनुसार इस दरबार के आधीन 'बाहूद्दीन' नामक कालेज में काठियावाड प्रान्त के अतिरिक्त और कोई बाहर के विद्यार्थी दाखिल न हो सकेंगे। इस विचित्र आज्ञा के अनुसार लगभग 120 छात्रों को, जिनमें हिन्दू-मुसलमान सभी हैं, कालेज छोड़ देना होगा। ऐसा क्यों ? कि 'राजा करें सो न्याय'। उसमें से किसी को चूँ-चराँ करने का अधिकार नहीं है !!

सलाम की आज्ञा और प्रवासी भारतवासी

'ब्रिटिश-ईस्ट-अफ्रीका' के 'डाटइस्लाम' नामक प्रान्त के पोलिटिकल आफ़िसर ने इस आशय की एक विज्ञप्ति प्रकाशित की है कि "कोई भी भारतवासी जब कभी और जहाँ कहीं किसी शासक वा राजनीतिक कार्यकर्ता (पोलिटिकल आफ़िसर) को मिले, वहीं उसे उचित आदर के साथ सलाम करे।" यह आज्ञा उसी प्रकार की है जैसे कि गत वर्ष ओड्वायर-डायरशाही के दिनों में पंजाब में जारी की गई थी। मालूम होता है कि डायर-नान्सन-ओब्रायन-स्मिथ एंड कम्पनी के आदमी भारत में बाहर भी नौकरशाही के भावों का परिचय दे रहे हैं।

क्या यूरोपियन सहनशील हैं ?

पिछले दिनों जब बंगाल की लेजिस्लेटिव कौंसिल में मान.बा. अखिल चन्द्रदत्त ने नई कौन्सिल में एंग्लो-इंडियनों के दो अधिक मैम्बर न लिये जाने के विषय में एक प्रस्ताव उपस्थित किया, जिसका विरोध करते हुए मि. बैटस्टेन ने कहा कि "हम यूरोपियन लोग शान्तिप्रिय और सहनशील हैं। यदि वह (हिन्दुस्तानी) हमारे एक गाल पर तमाचा लगाने की भूल करेगा तो उसे विश्वास दिलाता हूँ कि हमारा धर्म चाहे जो कुछ कहे *हम उसके सामने अपना दूसरा गाल नहीं फेरेंगे। किन्तु इसके विरुद्ध इस जोर से मारेंगे कि वह घबरा जाएगा।"* (टेढ़े अक्षर हमारे हैं—सम्पादक) *यूरोपियन के अन्दर कितनी सहनशक्ति है* इसका सबसे उत्तम नमूना तो वक्ता महोदय के अन्तिम वाक्य हैं। सफेद चमड़ी की 'शान्तिप्रियता' और 'सहनशीलता' का यदि वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना हो तो मिस्र, साउथ अफ्रीका, ईस्ट अफ्रीका, चीन आदि का इतिहास पढ़ना चाहिए। जोकि इनकी 'सहनशीलता' और 'शान्तिप्रियता' के कारण ही खूनी रंग में लिखता गया है। बहुत दूर जाने की आवश्यकता ही क्या है ? टर्की, ईरान और मैसोपोटामिया के साथ श्वेतांगों का जो व्यवहार हो रहा है,

वह इसका ताजा नमूना है।

सुरेन्द्र बाबू सँभलो !

अमृत बाजार पत्रिका ने लिखा कि सुरेन्द्र बाबू हन्टर कमेटी के पक्ष में—नर्म दलवालों की सम्मति प्राप्त कर रहे हैं। इस पर आप बुरी तरह से बिगड़े हैं और अपने वकील मित्रों की सलाह से आपने मानहानि का मामला लेकर, अब अदालत का दरवाजा खटखटाया है। बाबू सुरेन्द्र महाराज ने अपने इस अभियोग में जैसा कि मि. विपिनचन्द्र पाल ने 'डेमोक्रेट' में ठीक कहा है, यह बात पहले से मान ली गई है कि बहु पक्ष की यह रिपोर्ट इतनी गर्हित और भयंकर है कि आत्मसम्मान को तिलांजलि दिए बिना कोई इसे छू भी नहीं सकता। क्या हाईकोर्ट इसे मान लेगा ? यदि नहीं तो श्री माननीय सुरेन्द्र बाबू को जरा सँभालकर, अपनी स्थिति सोचनी चाहिए क्योंकि कहीं से ऐसा न हो कि "चौबे जी छब्बे बनने गए, दुब्बे रह गए।"

[श्रद्धा, 16 जुलाई, 1920]

पहली अगस्त

पहली अगस्त का शुभ दिन जातीय जीवन में नई शक्ति संचार करेगा। नए उत्साह और उद्योग का भारत को पाठ पढ़ावेगा। हिन्दू-मुसलिम ऐक्य की माला में दो-चार मोती और जड़ जाएगा। देशवासियों को अपने आत्मिक बल की शक्ति का एक बार फिर परिचय दे जाएगा। माता एक बार फिर अपनी सन्तान को उसके लिए बलिदान होने को सन्नद्ध हुए देख मुसकराकर आशीर्वाद देगी कि 'जीवेत् शरदः शतम्।' उस दिन क्या करना है ?—

(1) सम्पूर्ण हड़ताल—कलाओं में कार्य करने वाले श्रमियों और अन्य सरकारी सेवा वालों को छोड़कर।

(2) उपवास 24 घंटे का यथासम्भव।

(3) सरकारी पदों और खिताबों का त्याग।

(4) विशेष प्रस्ताव की स्वीकृति।

(5) दिनभर आत्मबल की प्राप्ति के लिए प्रार्थना और उपासना

सारांश : इस दिन सहयोग त्याग के कार्य प्रारम्भ करने की शंखध्वनि होगी। सावधान !

राजकीय घोषणा

श्रीयुत मान्य जवाहरलाल नेहरू के मसूरी से हटाए जाने की घटना हुए अभी बहुत दिन नहीं हुए कि लोकमान्य लाला लाजपतराय जी के कसौली के होटल से हटाए जाने की घटना फिर हो गई है। एक ओर राजकीय घोषणा है, सहयोग के लिए अपील है दूसरी ओर सरकार की ऐसी बेढंगी चालें हैं। लाला जी लिखते हैं कि मेरा नाम खुफिया पुलिस के 11 नम्बर में है। लाला जी कसौली स्वास्थ्य सुधार के लिए गए थे। जब कसौली में अफगान प्रतिनिधि भी नहीं तब न मालूम किसके लिए होटल खाली करने की आवश्यकता थी ? भगवान् जाने।

चीन में विद्रोह

चीन में विद्रोह होने का समाचार मिला है। साथ ही 'डेली-मेल' के संवाद के अनुसार

यह भी मालूम पड़ा है कि संसार की शान्ति के ठेकेदार चीन पहुँच गए हैं। कहा जाता है कि अमेरिका अपने दूत की रक्षा के लिए 12 सौ नौसैनिक भेजती है, इटली भी कमर कस रहा है। हमारे श्रीमान् पहले ही से उत्तरीय चीन में सन्नद्ध हैं। फ्रांस भी शायद इस सवारी की तैयारी कर रहा होगा। भला हो यदि संसार की गति की शान्ति के ठेकेदार पहले अपने घरों की सुलगती आग को शान्त कर लें। अमेरिका को मैक्सिको, इंग्लैंड को आयरलैंड भारत तथा दूसरे स्थानों और इटली को ट्रिपोलो की सफाई कर लेनी चाहिए। जिसके घर में आग लग रही है वह बाहर भी आग ही लगाएगा। अंधे मिलकर दूसरों को क्या राह दिखलाएँगे ? यही कारण है जिससे अन्तर्जातीय संघ का संसार की शान्ति का ठेका लेने के 12 मास बाद भी आज संसार में 12 स्थानों से अधिक जगहों की सेनाएँ भिड़ रही हैं। शायद 20वीं सदी की शान्ति और सन्धि का यही अर्थ हो तो कोई आश्चर्य नहीं।

इसका रहस्य क्या है ?

उधर तो फ्रांस, अमेरिका और इंग्लैंड-रूस की बोल्शेविक सरकार से व्यापार सम्बन्धी सन्धि और कैदियों की अदला-बदली कर रहे हैं। इधर उनसे ईरान में युद्ध जारी है और पोलैंड की भी खींचातानी बनी हुई है। कुछ दिन पहले जो बोल्शेविक संसार की शान्ति को सड़पने वाले कह जाते थे और जिनसे अब भी युद्ध जारी है उन्हीं से यह सन्धियाँ हो रही हैं। इसका रहस्य क्या है ?

ऐसे सुधार क्या करेंगे

ज्वाइंट कमेटी ने नई कौन्सिलों के चुनाव सम्बन्धी घूसखोरी को रोकने के लिए कानून बनाने का आदेश किया है। हमारे सहयोगी 'विश्वमित्र' ने 18 जुलाई के अंक में मुख्य लेख में इस कानून की आवश्यकता जतलाई है। हमारा पूछना है कि ऐसे सुधार क्या करेंगे जिनकी हवा ही लोगों को बिगाड़ देगी और उसमें घूसखोरी का प्रचार कर देगी। यह सुधार नहीं बिगाड़ है।

महासभा का विशेषाधिवेशन

महासभा का विशेषाधिवेशन कलकत्ता में ही होगा, ऐसा निश्चय हो गया है। इस अधिवेशन के लिए जबलपुर, बम्बई, लाहौर, मेरठ और विशेषतः आन्ध्र प्रान्त के बहरामपुर के निवासियों का उठ खड़ा होना जातीय जीवन का सूचक है। इसी जातीय जीवन के गाँव-गाँव में संचार करने की आवश्यकता है। इस विशेषाधिवेशन में हन्टर कमेटी की रिपोर्ट और खिलाफत पर विचार होते हुए विशेषतः नए सुधारों के साथ सहयोग करने के विषय पर विचार होकर अगला जातीय कार्यक्रम नियत किया जाएगा। उक्त अधिवेशन के सभापति के आसन पर देश पंजाब-केसरी लालाजी को

देखना चाहता है।

शर्माजी को पुरस्कार

नए सुधारों के अनुसार वाइसराय की शासकसभा में दो भारतीय साहब बढ़ाए गए हैं, जिनमें एक की नियुक्ति एवं आय तथा कृषि विभाग के कार्य सँभालने का समाचार प्रकट हो गया है। यह हैं श्रीयुत बी.एन. शर्मा। अमृतसर में लॉर्ड चेम्सफोर्ड के वापस बुलाए जाने के प्रस्ताव का विरोध करने का यह आपको पुरस्कार मिला है।

शासक सभा में दो शफी हो गए, तीसरे भी साल के भीतर-ही-भीतर नियुक्त कर दिए जाएँगे। यह कौन होंगे ? जो डायर और ओड्वायर से पूरी हमदर्दी दिखाएँगे या वे जो खिलाफत आन्दोलन में कोई कारनामा कर जाएँगे। कहीं इलाहाबाद के लीडर (?) तो इस आशा में नहीं ?

डायर के लिए चन्दा

इंग्लैंड के गोरे पत्र 'मॉर्निंग पोस्ट' ने डायर पर तरस खाकर उसके लिए चन्दा इकट्ठा करने की अपील की है। यहाँ के काले-गोरे पत्रों ने भी अपने कालमों में इस चन्दे के लिए अपील की है। आंग्ल जाति के यश को द्युलोक और आंग्ल साम्राज्य की जड़ें पाताल में पहुँचाने के जिम्मेदार खड़े हो गए है—बस अब किसी बात की चिन्ता नहीं रही।

[श्रद्धा, 23 जुलाई, 1920]

पहली अगस्त

पहली अगस्त के शुभ दिन तक शायद यह 'श्रद्धा' पाठकों के हाथ पहुँच जाएगी। इस दिन प्रत्येक जातीयाभिमानी को 'श्रद्धा' की विशेषतया आराधना कर 'श्रद्धा के व्रत' का पालन करना है। देश और जाति के प्रति श्रद्धा के तथा देश बन्धुओं और जाति भाइयों के प्रति प्रेम के सम्बन्ध को दृढ़ करना है। अपने आत्मिक बल की परीक्षा देनी है। निश्चय ही यह परीक्षा का दिन है। जो इस दिन परीक्षा में फेल होगा उसे समझ लेना होगा कि देश के लिए उसका जीना व्यर्थ है।

महात्मा गांधी

महात्मा गांधी ने हाल के 'नवजीवन' में लिखा है कि ''वर्तमान सरकार के अन्याय, ढीठपन और पापों का पूरा खुलासा करना असम्भव है। एक झूठ के लिए दूसरा झूठ बोला जाता है। बहुत सा कार्य केवल धमकी या भय से ही कराया जाता है। जातीय उत्पात कदापि सम्भव नहीं, यदि जाति इन सब बातों को चुपके से सहती जाएगी। यदि भूखा आदमी भूख मिटाने का यत्न करें और यत्न में मरने तक को तैयार न होवे तो वह अपनी भूख की ही डोंडी पीटता फिरे कोई उसकी भूख पर विश्वास न करेगा।'' आगे आपने इस समय के लिए ओषधि ढूँढ़ निकालने के लिए कहा है और उचित ओषधि कौंसिलों का बायकाट ही बताया है। आपका कथन है कि ओब्रायन, स्मिथ और श्रीराम से दुष्ट व्यक्तियों का बहिष्कार यदि कठिन है तो उस सरकार का बायकाट सहज ही है जो इन्हें उभारती और अपनी प्रतिज्ञाएँ तोड़ती रहती है। अत्याचारी राजाओं को पीड़ित प्रजाएँ छोड़ती ही रहती हैं। प्रजा का यह अधिकार है। भारत में भी लोग निराश होकर राज्य को लात मारते ही रहे हैं।''

यद्यपि आपने यह गुजरातियों के लिए लिखा है, पर दूसरे प्रान्तवासियों को भी इस विचार कर लेना चाहिए।

मैम्बरी के बरसाती कीड़े

हमें एक पंजाबी भाई का पत्र मिला है जिसमें यह एक संवाद है कि ''यद्यपि इधर

वर्षा नहीं हुई फिर भी बरसाती जन्तुओं ने नाक में दम कर रखा है। यह बरसाती जन्तु मेंढक, मच्छर, बिच्छू, साँप आदि नहीं। यह उनसे भी अधिक शोर मचाने वाले, कान के पास आकर मधुर स्वर अलाप कर मोहित कर तुरन्त काट खाने वाले, चालाक और खूबसूरत परन्तु विषैले जन्तु हैं। बरसात अभी नहीं आई, परन्तु यह आ पहुँचे हैं। सम्पादक महोदय ! यह जन्तु मैम्बरी के बरसाती जन्तु हैं जिनसे सँभलने की बड़ी आवश्यकता है। अस्तु आप तो गंगा की परिक्रमा से घिरे कुल भूमि के दुर्ग में आनन्द कर रहे हैं वहाँ वर्षा का आनन्द लेते हुए भी आप इन जन्तुओं से तंग न आते होंगे।" हमने उन्हें लिख दिया है कि "श्रीयुत लालाजी इन्हीं के लिए खड़े हुए हैं और महात्मा गांधी जी भी वहाँ पहुँच चुके हैं।" यह तो पंजाबी भाई से बातचीत हुई पर यह अवस्था आज सारे देशवासियों की होगी। बड़ा भला होगा यदि देशवासी इन जन्तुओं की भली प्रकार परीक्षा करके ही इनसे नाता जोड़ेंगे। नहीं तो, नाता न जोड़ने का उपाय तो सहज है।

मि. माण्टेगू की बड़ी बातें

मि. माण्टेगू की महात्मा गांधी जी के विषय की स्थापना के पूरे शब्द अब भारत सरकार ने प्रकाशित दिए हैं। वह प्रायः वही हैं जो कि 'रायटर' ने तार पर चढ़ाकर यहाँ पहुँचाए थे। उसमें एक बात यह है कि "अनेक मनुष्य जिनका आचार बड़ा उच्च होता है पर वे राजनीतिक दृष्टि से बड़े शरारती या धूर्त होते हैं।" वस्तुतः आजकल 'धूर्त वही है जो आचारहीन नहीं है।' एक तो मि. माण्टेगू की बड़ी बात है दूसरी बड़ी बातें अभी आपने कही है कि "महात्मा गांधी का असहयोग आन्दोलन कभी सफल न होगा। असहयोग और युवराज के स्वागत के बहिष्कार को भी जनता न मानेगी।" अस्तु समय स्वयं दिखाएगा कि क्या होगा !

हिन्दू-मुसलिम ऐक्य

जलालाबाद के मुख्य पत्र ने कहा है कि सीमा प्रान्त में जो वहाँ के मुसलमान हिन्दुओं को लूटते हैं, वह केवल धन के लिए ही करते हैं। उसमें धर्म का मतभेद कारण नहीं है। और उन लोगों की इस लूट से हिन्दू-मुसलिम ऐक्य में भेद नहीं आना चाहिए। यदि वस्तुतः ही हिन्दू-मुसलिम ऐक्य को दृढ़ करना है तो इस ऐक्य की पहुँच उन गाँवों में भी होनी चाहिए। आशा है हिन्दू-मुसलिम नेता निश्चय ही इस ओर ध्यान देंगे।

[श्रद्धा, 30 जुलाई, 1920]

सहयोगी 'आनन्द' और सहयोग-त्याग

लखनऊ का सहयोगी 'आनन्द' महात्मा गांधी के सहयोग-त्याग से इसलिए विरुद्ध है क्योंकि इससे वैयक्तिक कष्ट होगा। यह बड़ी भद्दी युक्ति है। क्या सहयोगी संसार के इतिहास से एकमात्र प्राप्त इस शिक्षा को भूल गया कि बिना वैयक्तिक कष्ट उठाए कोई भी छोटे-से-छोटा आन्दोलन सफल नहीं हो सकता ? जगत् के विस्तृत इतिहास में से यदि एक भी ऐसा उदाहरण सहयोगी पेश करेगा तो हम सहर्ष अपनी भूल मान लेंगे।

'विजय' के नए सम्पादक

श्री पं. इन्द्र जी विद्यावाचस्पति के, गुरुजनों की आज्ञानुसार, दिल्ली छोड़कर गुरुकुल में कार्य सँभालने के कारण सहयोगी 'विजय' की गति पिछले कुछ सप्ताह से, जरा मन्द हो गई थी। हमें यह समाचार सुनकर, अब, अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि हमारे स्नातक भाई श्री सत्यदेव जी विद्यालंकार ने उसका सम्पादन-भार स्वीकार कर लिया है। इन द्वारा सम्पादित तिलक अंक को देखकर यह अब निस्संकोच कहा जा सकता है कि 'विजय' फिर अपनी पुरानी शान को सँभाल लेगा। अपने सहयोगी भाई पं. सत्यदेव जी की योग्यता, परिश्रम, उत्साह और कार्यशक्ति से हम अच्छी तरह परिचित हैं और हम विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि उन्हें इस कार्य में अवश्य ही सफलता होगी।

शैतान के घर दिवाली

हमारे हृदय-सम्राट लोकमान्य तिलक के देहावसान पर जहाँ न केवल भारत में अपितु इंग्लैंड और अमेरिका में भी हाहाकार मच गया है और वहाँ कुछेक गोरे पत्रों के घरों में सचमुच दिवाली खुशियाँ मनाई जा रही हैं। कलकत्ता का 'स्टेट्समैन' और बम्बई का 'टाइम्स ऑफ इंडिया' इस संकुचित और गर्हित उदाहरण हैं, 'जिस पत्तल में खाया, उसी में छेद किया' वाली कहावत के अनुसार ये हमारा खाते और हमारी ही जड़ें खोखली करते हैं। इसका एक ही उपाय है। अंग्रेज बनियों की जात है, वे जो कुछ करते हैं, रुपए के लिए करते हैं। इसलिए जब कभी इनकी भरी हुई थैली

पर आक्रमण होता है तब ये बुरी तरह से होश सँभालते हैं। इनकी इस निर्बलता से लाभ उठाते हुए भारतीयों को चाहिए कि वे इसे खरीदना और इसमें विज्ञापन देना एकदम बन्द कर दें। प्रसन्नता का अवसर है हमारे भाई इस मामले में सचेत हैं जिसका यह परिणाम है कि कलकत्ता आदि शहरों में धड़ाधड़ बहिष्कार के प्रस्ताव पास हो रहे हैं।

[श्रद्धा, 13 अगस्त, 1920]

हैदराबाद में गोवध निषेध

यह समाचार अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सुना जावेगा कि निजाम हैदराबाद ने ईद पर गोवध सर्वथा बन्द कर दिया है। यद्यपि निजाम ने आर्थिक कारणों से प्रेरित होकर ही ऐसी आज्ञा दी है, पर तो भी उनका यह कार्य गोवंश की रक्षा में अत्यन्त सहायक होगा।

क्या बोल्शेविक बहुत बुरे हैं ?

बोल्शेविकों के अत्याचार और क्रूर-कर्मों का वर्णन गोरे पत्रों में हम प्रायः पढ़ते रहते हैं, पर उनके कार्य कभी-कभी इसके विरुद्ध ही साक्षी दिया करते हैं। एक ताजे उदाहरण से हमारा अभिप्राय स्पष्ट होगा। मित्र दल ने जर्मनी के साथ सन्धि करते हुए जिन शर्तों को उपस्थित किया था और सोवियत रूस ने, अभी हाल ही में, पोलैंड के लिए जो शर्त रखी हैं, उनसे स्पष्ट ज्ञात हो सकता है कि नैतिक दृष्टि से मित्र दल ऊँचा है वा बोल्शेविक ? रूस ने पोलैंड का एक इंच जमीन पर भी अपना हक़ नहीं दिखाया, अपितु रूस साम्राज्य की छोटी-छोटी रियासतों ने भी स्वाधीनता स्वीकार की है। इसके विरुद्ध मित्रदल ने जर्मनी के साथ जिन शर्तों पर सन्धि की थी—वह आज सारा संसार जानता ही है।

क्या लेनिन क्रूर और नृंशस है ?

हमें यह प्रायः कहा जाता है कि लेनिन बड़ा ही क्रूर, नृशंस, अभिमानी और शुष्क व्यक्ति है। परन्तु इंग्लैंड के 'नेशन' पत्र में रूस से लौटे हुए विशेष संवाददाता ने 'लेनिन' से स्वयं मिलकर उसके विषय में जो सम्मति प्रकाशित की वह इसके सर्वथा विरुद्ध है। वह कहता है ''...यह स्पष्ट है कि उसे ऐशो-आराम से बिलकुल प्रेम नहीं है। *वह बड़ा मृदु, मिलनसार, सादा और अभिमानशून्य है*। एक अनजान आदमी उसके चेहरे को देखकर यह कभी नहीं कह सकता कि वह बड़ा शक्तिशाली वा किसी अंश में महानात्मा है। *उससे कम अभिमानशून्य व्यक्ति मैंने कोई नहीं देखा*। वह खूब हँसता है। अपने दर्शकों को वह गहरी और तेज नजरों से देखता है। वह सर्वथा शान्त, निर्भीक और असाधारण रूप से स्वार्थशून्य व्यक्ति है। एक अध्यापक की

न्याई (तरह) वह अपनी थ्यूरी को समझाने अपने विरोधियों का पक्ष खंडन करने और अपने विषय में अशुद्ध मत को दूर करने में वह बड़ा चतुर और सदा उत्सुक रहता है।''

क्या अब भी पंजाबी कौन्सिलों का बहिष्कार नहीं करेंगे ?

भारत हितैषी कर्नल वैड्ज बुड ने विशेष तार द्वारा भारत सचिव मि. माण्टेगू के उस कथन की सूचना दी है, जोकि उसने पंजाब के नेताओं के विषय में गत सप्ताह, हाउस ऑफ कामन्स में किया है। इसके द्वारा पंजाब के वे नेता जो गत वर्ष मार्शल ला के कैदी बने थे वे नई कौंसिलों के लिए उम्मीदवार नहीं बन सकते। क्योंकि यद्यपि वे छोड़ दिए गए हैं, पर उन्हें राजकीय घोषणा के अनुसार क्षमा नहीं किया गया है। पंजाब के साथ वस्तुतः यह घोर अन्याय है। भारत सचिव को यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि इस संकुचित नीति से सुधार स्कीम कभी कृतकार्य नहीं हो सकती। पर हमारा प्रश्न तो सीधा पंजाबियों से यह है कि अपने आत्मसम्मान का ख्याल करते हुए क्या अब भी वे कौंसिलों का बहिष्कार नहीं करेंगे ?

टिहरी और बेगार प्रथा

गत 3 अगस्त के दिन टिहरी महाराज का जन्मोत्सव था। सहयोगी 'गढ़वाली' कहता है कि उस दिन के उपलक्ष्य में महाराज ने टिहरी-रियासत से बेगारी प्रथा सर्वथा उड़ा देने की घोषणा की। गढ़वाल और कुमाऊँ के पर्वतों की ओर जाने का हमें कई बार अवसर पड़ा है और हम अपने अनुभव से कह सकते हैं कि इस कुप्रथा के कारण वहाँ की गरीब-असहाय और अशिक्षित पहाड़ियों पर अत्यन्त अत्याचार, कठोरता की जाती है। इस कुप्रथा को उड़ा देने के लिए उधर चिरकाल से आन्दोलन हो रहा है, पर अभी तक उसका कुछ विशेष फल नहीं निकला था। टिहरी नरेश के इस कार्य की हार्दिक प्रशंसा करते हुए हम ब्रिटिश सरकार से भी इसका अनुकरण करने का अनुनय करते हैं।

क्या गुरुकुल के स्नातक अंग्रेजी नहीं बोल सकते ?

हमारे पाठकों से यह छिपा नहीं है कि सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री पं. सत्यव्रत जी सिद्धान्तलंकार वैदिक धर्म का प्रचार करने गए हुए हैं। वे वहाँ पर कितना उत्तम काम कर रहे हैं, यह इसी घटना से ज्ञात हो जावेगा कि गत शनिवार को उनका एक व्याख्यान 'थियोलॉजिकल कालेज' (Theological College) में 'गुरुकुल में हमारा जीवन' इस विषय पर अंग्रेजी में हुआ। सभापति का आसन इसी कालेज के प्रिंसिपल डॉ. लार्गन एल.एल.डी. ने सुशोभित किया था। व्याख्यान के अन्त में स्नातक की प्रशंसा करते हुए उन्होंने ये शब्द कहे–

"The government should take the lesson from the graduates of the Gurukula. Sanskrit is the first language in the Gurukula as the speaker said. Hindi is the second language and English is the third language. The Gurukula graduates can speak English, though they have it as a third language, much better than the average number of the B.A. of the Madaras University."

इसका आशय यह है—"सरकार को गुरुकुल के स्नातकों से शिक्षा लेनी चाहिए। वहाँ पर, जैसा कि वक्ता ने कहा, संस्कृत मुख्य भाषा है, हिन्दी दूसरे और अंग्रेजी तीसरे नम्बर पर है। यद्यपि वहाँ पर अंग्रेजी तीसरी भाषा है, पर तो भी गुरुकुल के स्नातक मद्रास यूनिवर्सिटी के औसतन बी.ए. पासों से कई गुणा अच्छी अंग्रेजी बोल सकते हैं।"

एक निष्पक्षपात विद्वान् की यह सम्मति गुरुकुल के उन विरोधियों का मुँह बन्द करने के लिए पर्याप्त है जोकि हमारे स्नातकों की अंग्रेजी की योग्यता पर प्रायः आक्षेप किया करते हैं।

[श्रद्धा, 20 अगस्त, 1920]

पायोनियर की दुधारी तलवार

असहयोग का अवलम्बन करने के कारण जिन्होंने सरकारी नौकरियों से इस्तीफे दिए हैं उनकी संख्या होम मेम्बर के कथनानुसार 284 है। इसमें अधिक संख्या चपरासियों और पुलिस के सिपाहियों की है। इस पर टिप्पणी करता हुआ 'पायोनियर' कहता है कि इस्तीफा देने वालों में से कोई भी महत्त्वपूर्ण पद पर नहीं था। क्या 'पायोनियर' इससे यह भाव प्रकट करना चाहता है कि शिक्षित दल इस आन्दोलन के साथ नहीं है ? यह भी विचित्र युक्ति है। अब तक कांग्रेस, स्वराज्य इत्यादि के आन्दोलनों को 'पायानियर' एंड कं. थोड़े से पढ़े-लिखों की हलचल कहकर दुत्कार देती थी, अब जब अनपढ़ भी साथ देने लगे तो शिक्षितों को दूर हटाते हुए 'अनपढ़ों की बेसमझ' कहकर उड़ा दिया। गोरे पत्रों की इस दुधारी तलवार का थोथापन किसी से छिपा हुआ नहीं है।

कीचड़ से कमल

मित्रदल ने टर्की के साथ जो कु-व्यवहार किया है उसके लिए हम कई बार खेद प्रकट कर चुके हैं, परन्तु इससे एक ऐसा लाभ भी अवश्य हुआ है जिसकी अपेक्षा नहीं की जा सकती। वह यह है कि इस अत्याचार के कारण एशिया में एक नवीन जागृति आ गई है। ईरान, अरब, मैसोपोटामिया, भारत, अफगानिस्तान, चीन इत्यादि में सर्वत्र प्रतिनिधि सत्तात्मक राज्य, जातीयता और राष्ट्रीय आन्दोलन के भाव पैदा हो रहे हैं और जनता अपने अधिकारों का महत्त्व समझने लगी है। एशिया की इस एकदम नवीन जागृति को देख युरोपवाले बड़े घबरा रहे हैं और एक अंग्रेज लेखक ने तो यहाँ तक कह दिया है कि "एशिया में 30 साल में वह उन्नति की है जो कि युरोप सौ साल में नहीं कर सका।" लेखक की सम्मति में एशिया में इतने बड़े और तेज परिवर्तन हो रहे हैं कि युरोप उसके मुकाबले में बिलकुल ठहरा हुआ प्रतीत होता है। यदि यह सम्मति ठीक है, जैसा कि सर्वथा ठीक प्रतीत होती है, तो वह क्या कोई कम लाभ है ?

कौंसिलों का बायकाट और लाला लाजपतराय

'ट्रिब्यून' के प्रतिनिधि से भेंट करते हुए लाला लाजपतराय ने कहा कि कांग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार अब हरेक को कौंसिलों का बहिष्कार कर देना चाहिए। यहाँ तक हम भी उनसे सहमत हैं, पर आगे उन्होंने कहा कि "शेष तीन बातें प्रत्येक के लिए बाधित रूप से नहीं है।" ऐसा क्यों ? प्रश्न यह है कि कांग्रेस का असहयोग प्रस्ताव आज्ञा रूप से है वा सलाह रूप से। यदि तो आज्ञा रूप से है तब तो वह प्रस्ताव सम्पूर्ण रूप से, प्रत्येक के लिए, बाध्य है। उस अवस्था में लालाजी का यह कोई अधिकार नहीं है कि वे उसके टुकड़े-टुकड़े करके किसी को बाधित और किसी को ऐच्छिक का जामा पहना दें। और यदि यह प्रस्ताव सलाह रूप से है तब भी लालाजी का यह कथन सर्वथा अशुद्ध ठहरता है क्योंकि सलाह की बात प्रत्येक के लिए बाधित कैसे हो सकती है ? लाला जी के पास इसका क्या उत्तर है ?

'सुबह का भूला शाम को घर पहुँच गया'

भारत सचिव मि. माण्टेगू ने, पिछले दिनों, एक प्रश्न के उत्तर में कहा था कि मार्शल ला के जो कैदी मुक्त किए गए हैं, उन्हें चूँकि राजकीय क्षमा का अभयदान नहीं दिया गया है, इसलिए वे नई कौंसिलों के लिए उम्मीदवार नहीं बन सकते। इस पर पंजाब में तथा अन्यत्र भी खूब आन्दोलन हुआ। परन्तु भारत सरकार की चुप्पी से इससे कोई बाधा नहीं पड़ी। अब उसे अपनी भूल मालूम हुई और उसने एक विज्ञप्ति द्वारा शिमला की ऊँची चोटियों से क्षमा का अमृत-बिन्दु बरसाया है जिससे तृप्त हो वे सब व्यक्ति अब उम्मीदवारी के लिए, निःशंक, खड़े हो सकेंगे। पता नहीं, चेम्सफोर्ड की सरकार लोकमत के साथ चलना कब सीखेगी। खैर, फिर भी 'सुबह का भूला हुआ शाम को घर पहुँच जावे' तो भी भला ही है।

इटली में उपद्रव

इधर इंग्लैंड, आयरलैंड, पोलैंड, जर्मनी, रूस इत्यादि में अशांति के समाचार सुनकर नहीं थके थे कि इस सप्ताह इटली से भी भयंकर उपद्रव के समाचार आ रहे हैं। मन्त्रिमंडल में गड़बड़ है; मजदूर दल ने पुतलीघरों पर अधिकार कर लिया है और शासन की बागडोर बहुत कुछ उपद्रवकारियों के ही हाथ में है। देखें, ऊँट किस करवट बैठता है ?

क्या इंग्लैंड दिवालिया हो गया ?

भारत के प्रभु इंग्लैंड की जलशक्ति और सैन्यशक्ति दोनों ही अत्यन्त प्रबल है। उसकी यह बलशालिता सभी को स्वीकार करनी पड़ती है। इनके आधार पर वह

जिस देश को चाहे दबा सकता है। नहीं-नहीं, वह सचमुच दबाता भी है, इतना होने पर भी वह अपने आधीन देशों को सँभालने में न जाने आजकल क्यों असफल हो रहा है ? उसके पड़ोस में रहने वाले आयरलैंड में उपद्रव है जिसे वह अभी तक दमन नहीं कर सका। मैसोपोटामिया का सफेद हाथी अभी तक उसकी नकेल से बाहर है। ईरान उसकी सैन्यशक्ति का खम ठोककर मुकाबला कर ही रहा है। इस विचित्र अवस्था को देख कभी-कभी यह सन्देह हो जाता है कि इंग्लैंड कहीं दिवालिया तो नहीं हो गया ? क्या वर्तमान अवस्था का कारण प्रभुता का मद तो नहीं है ?

[श्रद्धा, 24 सितम्बर, 1920]

पति नीलामी पर !!

भारत में आजकल जितनी महँगी है, उससे कई गुणा अधिक यूरोप और अमेरिका में है। इसी से बाधित हो, पिछले दिनों, कई माताओं ने अपने बच्चों को बेचने का विज्ञापन दिया है जिसकी आमदनी से वे अपना पेट भरेंगी। इस सप्ताह विलायती डाक से जो समाचार आया है, उसे सुन हमारे पाठक बहुत ही चकित होंगे। और वह यह कि मिसेज़ रूसेल नाम की एक महिला ने अब अपने पति को नीलाम करने की सूचना दी है। वह कहती है कि मुझे इससे 20 हजार पाउंड की आमदनी होगी। भारतीय महिला जिन पापों के लिए स्वप्न में भी नहीं विचार सकती, पाश्चात्य महिलाएँ वे ही कुकर्म डंके की चोट पर करती हैं। ये ही तो घटनाएँ हैं जो पूर्व और पश्चिम के वास्तविक भेद को दिखाती हैं।

क्या डायरशाही समाप्त हो गई ?

ब्रिटिश-पूर्वीय-अफ्रीका के असली निवासियों पर अंग्रेजों ने, कुछ मास हुए, जो अत्याचार किए थे वे अभी तक सर्वसाधारण से छिपाकर ही रखे गए थे। परन्तु सर एच.एच.जी. हन्स्टन नामक एक उदारशय अंग्रेज सज्जन ने उन्हें प्रकाशित कर वस्तुतः बड़ा उपकार किया है। उनके कथनानुसार बडुरू नामक स्थान में, वहाँ के निवासियों पर, इतनी कठोरता से बैंत मारे गए और भयंकर अत्याचार किए गए कि डॉक्टरों के कथनानुसार, उन गरीबों के "पुट्ठों के अन्दर का मांस तक बाहर फूट निकला" और कई अवस्थाओं में "बैंत लगाने और दंड दिए जाने के कारण यम का ग्रास बनना पड़ा।" अंग्रेजों की 'न्याय और स्वतन्त्र-प्रियता' का यह एक ताजा नमूना है। हम आशा करते थे कि 'डायरशाही' अब फिर दुबारा न होगी, पर प्रतीत होता है कि डायर चक्र अभी चल रहा है।

अमरीका में कुछ अंग्रेज महिलाओं का व्यर्थ क्रोध

कलकत्ता का 'मॉर्डन रिव्यू' इस समाचार के लिए उत्तरदाता है कि गत जून के महीने में 'सान-फ्रांसिस्को' में मि. सुरेन्द्र कार नाम के एक भारतीय सज्जन ने व्याख्यान देते हुए भारत में ब्रिटिश शासन की बड़ी समालोचना की। इस पर कई अंग्रेज

महिलाएँ आपे से बाहर हो गईं और व्याख्यान की समाप्ति पर वक्ता के सिर पर गन्दी गालियों की बौछार कर दी। एक ने कहा, "तुम्हें फाँसी पर लटका देना चाहिए" दूसरी चिल्लाई "तुम्हें देशनिकाले का दंड मिलना चाहिए।" तीसरी ने हल्ला मचाया कि "जेल ही तुम्हारे लिए उपयुक्त स्थान है" इत्यादि। इतना ही नहीं कई रमणियों ने मुक्का दिखाकर अपने वीरत्व का परिचय देना चाहा। जिसका उत्तर मि. कार ने मीठी मुसकराहट से दिया। जानबुल की पुत्रियों ने इतने पर भी सन्तुष्ट न होकर कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी के प्रेसीडेन्ट के पास मि. कार से डिप्लोमा छीन लिये जाने के लिए प्रार्थना पत्र भेजा। प्रेसीडेन्ट ने घृणापूर्वक इसे अस्वीकृत कर दिया। भारतवासियों में 'सहनशक्ति' न होने का प्रायः दोष लगाया जाता है। पाश्चात्यों में इसकी कितनी मात्रा है उसके लिए यह उदाहरण पर्याप्त है।

गोरक्षा का आन्दोलन

रतोना में खोले जाने वाले कसाईखाने का विचार यद्यपि सरकार ने स्थगित कर दिया है, पर उससे जनता को इतना तो अवश्य ज्ञात हो गया है कि इस मामले में सरकार के कितने भयंकर विचार हैं। फिर कभी सरकार ऐसा करने का साहस न कर सके, इसके लिए प्रबल आन्दोलन के साथ कुछ क्रियात्मक कार्य की भी आवश्यकता है। प्रसन्नता का अवसर है कि देश के गण्य-मान्य सज्जनों के उत्साह और परिश्रम से कलकत्ते में एक करोड़ रुपए कि पूँजी से एक 'गोरक्षक सभा' स्थापित की गई है जिसके 26 लाख से ऊपर हिस्से बिक चुके हैं। गोवंश नाश में चारागहों की कमी एक प्रधान कारण है। यह कम्पनी इस कमी को दूर करने की ओर विशेष ध्यान देगी। देश के अन्य भागों में भी इस आन्दोलन की आवश्यकता है।

इंग्लैंड में कोयला क्रान्ति

मशीन-प्रधान सभ्यता में कोयले का कितना उच्चासन है—यह बताने की आवश्यकता नहीं। इसकी प्रधानता को देखकर ही एक विद्वान् ने आजकल के समय को 'कोयले की दासता' का युग कहा था। यदि किसी आधुनिक सभ्य देश में 'जमाने के मालिक' इस कोयले की व्यवसाय में ही गड़बड़ पड़ जाए तो उस देश की शोचनीय दशा का अनुमान लगाना कठिन नहीं है। इंग्लैंड में यह अवस्था अब शीघ्र ही उपस्थित होने वाली है क्योंकि कोयले की खानों में काम करने वाले मजदूर, वर्तमान वेतन से असन्तुष्ट होने के कारण, हड़ताल करने की तैयारी में हैं। प्रधानमन्त्री मि. लायड जार्ज के बीच में दखल देने के कारण यद्यपि हड़ताल स्थगित कर दी गई है तथापि मामला शीघ्र सुलझता नहीं दीखता।

योग्यतम पिता का योग्य पुत्र

स्वर्गीय राष्ट्र सूत्रधार लो.मा. तिलक के सुपुत्र 'श्रीधर बाल तिलक' ने, जो पूना कालेज की बी.ए. श्रेणी में पढ़ता था, अपना नाम इसलिए कटवा लिया है क्योंकि वह कालेज सरकार की सहायता लेता है। वह कहता है कि कांग्रेस के विशेषाधिवेशन के निश्चय के अनुसार वह ऐसे कालेज में नहीं पढ़ सकता। बिहार तथा अन्य प्रान्तों से भी इसी तरह कई छात्रों ने स्कूलों और कालेजों से अपने नाम कटवा लिये हैं। देश के लिए ये लक्षण शुभ हैं।

[श्रद्धा, 1 अक्टूबर, 1920]

राजा राममोहनराय और असहयोग

गत सप्ताह बैंगलोर में राजा राममोहनराय का 87वां जन्मोत्सव मनाया गया। राजा के जीवन और कार्य पर व्याख्यान देते हुए मि. रेड्डि ने कहा कि राजा राममोहनराय प्रथम पुरुष थे जिसके अन्दर सहयोग, त्याग के सिद्धान्त काम कर रहे थे। यह भी खूब ! वह व्यक्ति जिसने बिना पढ़े ही हमारे प्राचीन आगाध ज्ञान और विद्याभंडार पर थूकते हुए उस अंग्रेजी शिक्षा को, बड़े उत्साह के साथ, भारत में निमन्त्रित किया, जिसकी दासता से मुक्त करना ही असहयोग सिद्धान्त का एक मुख्य भाग है, ऐसा व्यक्ति भी यदि सहयोग त्यागी कहा जा सकता है तो प्रेस एक्ट पास कराने में मुख्य भाग लेने वाले मि. गोखले को भी हम, निस्संकोच, सहयोग त्यागी कह सकते हैं। हम यह तो समझते हैं कि मि. रेड्डि के इस अशुद्ध नवीन आविष्कार से राजा राममोहनराय का तो महत्त्व कुछ नहीं बढ़ता, पर हाँ, इतना अवश्य प्रतीत होता है कि कम-से-कम असहयोग के सिद्धान्तों का तो जनता में इतना अधिक प्रचार हो गया है कि वह किसी भी व्यक्ति के महत्त्व पर इसी दृष्टि से विचार कर सकती है।

आयरलैंड में सैनिक अत्याचार

आयरलैंड का दमन करने के लिए भेजी हुई इंग्लैंड की सेना ही, वस्तुतः इस समय सारी बगावत कर रही है। 'शान्ति और न्याय' की मालिक पुलिस और सेना ही इस समय अपने पाशविक अत्याचारों के कारण, इस अशान्ति को बढ़ा रही है। एक उदाहरण ही हमारे कथन की सत्यता को स्पष्ट कर देगा। बागियों से लड़ाई करते हुए सेना ने दो 'टाउन हाल' पर आग लगा दी, जिससे आसपास के कई मकान और दूकानें भी राख हो गईं। लोग डर के मारे पास के जंगलों और पहाड़ों में जा छिपे। इस तरह के पाशविक अत्याचारों से आयरलैंड में कभी शान्ति नहीं हो सकती। इंग्लैंड यदि आज ही सेना वापस बुला ले तो हम समझते हैं कि शीघ्र ही शान्ति हो जावेगी क्योंकि *उपद्रव का दमन उपद्रव से नहीं हो सकता।*

एक बूझन

ईशर समिति की रिपोर्ट प्रकाशित होने से देश भर में आन्दोलन मच गया है, परन्तु वह रिपोर्ट भारत-हित की दृष्टि से कैसी होगी, यह हमारे पाठक स्वयमेव जान लेंगे यदि वे इन दो बूझनों को बूझ देंगे ?

(1) इस समिति के मुख्य सदस्य एक ऐसे 'उदारशय' अंग्रेज सज्जन थे जिन्होंने भारत के सब आन्दोलनों और शिक्षित व्यक्तियों के साथ 'अत्यन्त स्नेह' रखने और गत वर्ष पंजाब की घटनाओं के कर्ता-हर्ता-धर्ता होने के कारण 'अत्यन्त यश' प्राप्त किया था।

(2) इसी समिति के एक और सदस्य काले होने से ऊपर से यद्यपि 'भारतीय' हैं, पर उनका हृदय सर्वथा 'श्वेतांगमय' है। वे जन्म से ही कट्टर 'देशभक्त' और 'देशहितैषी' हैं। पंजाब की पिछली घटनाओं में उन्होंने भी अपने हृदय की 'दयालुता' का अच्छा परिचय दिया था।

बूझो, जो इनके नाम बूझ सकता है।

क्या अब भी असहयोग नहीं करोगे ?

कलकत्ता के एसोसिएटेड प्रेस के संवाददाता ने समाचार भेजा है कि भारत सरकार 4 लाख टन गेहूँ कराँची की बन्दरगाह द्वारा अगले मार्च तक विदेश में भेज देने के लिए अभी से इकट्ठी कर रही है। सरकार की इस संकुचित नीति का हम प्रबल विरोध करते हैं। अभी आस्ट्रेलिया की 'प्रतिनिधि सभा' में वहाँ के प्रधानमन्त्री मि. हग्स ने कहा था कि उस देश में ढाई मिलियन टन गेहूँ फालतू है। इस अवस्था में हम नहीं समझते कि भारत जैसे दरिद्र देश से छीन विदेश में अन्न भेजने की क्या आवश्यकता है, जबकि न केवल आस्ट्रेलिया, किन्तु अर्जन्टाईन भी भेजने को तैयार है। किन्तु इस इस दशा में हम अपने देशभाइयों से एक प्रश्न करना चाहते हैं। वह यह कि क्या आप अब भी उस सरकार से सहयोग-त्याग नहीं करेंगे जबकि आपका और भूख से छटपटाते आपके नन्हे-नन्हे बच्चों के मुख का एक-एक कौर छीनने का प्रयत्न कर रही है ? क्या आपको विदेशी सरकार अधिक प्यारी है वा अपना और अपने बच्चों का पेट ?

[श्रद्धा, 8 अक्टूबर, 1920]

खंड-3

द लिबरेटर

(8 अप्रैल, 1926–9 दिसम्बर, 1926)

हिन्दू महासभा में अस्पृश्यता का प्रस्ताव

पंडित दीनदयाल शर्मा ने उपरोक्त विषय पर एक वक्तव्य प्रेस को भेज दिया। दिल्ली में हिन्दू महासभा द्वारा पारित अस्पृश्यता का प्रस्ताव एक अन्य पत्र में भी प्रकाशित किया गया था। इस प्रस्ताव का एक युक्तिसंगत उत्तर कार्यकारिणी समिति के तीन सदस्यों के हस्ताक्षरों द्वारा एक समाचार पत्र में छपा। इस प्रकार के परिवर्तन एवं पंडित मालवीय जी के दृष्टिकोण को स्पष्ट करने के लिए मैं एक और तथ्य को बताना चाहता हूँ। इलाहाबाद का प्रस्ताव, जिसमें अछूतों को यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार, वेदों को पढ़ने का अधिकार एवं उनका अन्य जाति के व्यक्तियों के साथ भोजन करने का वर्णन था, आर्यसमाज के व्यक्तियों पर विपरीत प्रभाव पड़ा। इस प्रस्ताव के पुनर्मुद्रण को व्यापक रूप में मुसलिम मौलवियों द्वारा उत्तर में तथा नान ब्राह्मण नेताओं द्वारा दक्षिण में प्रसारित किया गया, ताकि पीड़ित समुदाय को हिन्दू महासभा के प्रभाव से मुक्त कराया जा सके। इनके प्रभाव को निष्फल करने के लिए रोहतक के हिन्दू सम्मेलन में माननीय पंडित मालवीय जी ने एक संशोधित प्रस्ताव पास करा दिया। पंडित दीनदयाल शर्मा ने स्वीकार किया है कि वास्तव में इस संशोधित प्रस्ताव में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ था। इस परिवर्तन का शुद्ध कारण सनातन धर्म के नेताओं एवं हिन्दू सभा के व्यक्तियों के बीच में उत्पन्न संघर्ष को समाप्त करना था ? वे इस संगठित हिन्दू समाज को विरोधियों से बचाना चाहते थे।

[द लिबरेटर, 8 अप्रैल 1926]

शिक्षा का माध्यम

पं. चिंतामणि वैद्य ने अपने दीक्षांत भाषण में हरिद्वार के गुरुकुल के स्नातकों को सम्बोधित करते हुए कहा था—"यहाँ की मुख्य विशेषता है कि सभी विषयों को यहाँ हिन्दी माध्यम से पढ़ाया जाता है, जो यहाँ के छात्रों की अपनी मातृभाषा है। विश्व में सैकड़ों विश्वविद्यालय हैं, परन्तु भारत के अतिरिक्त एक भी ऐसा देश नहीं है जहाँ विदेशी भाषा में शिक्षा दी जाती हो। कोई भी व्यक्ति इस 'सत्य कथन' पर प्रश्न नहीं कर सकता कि अपनी मातृभाषा में पढ़ाए गए विषय को सरलता से ग्रहण किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त मातृभाषा के माध्यम से पढ़े गए विषय में मानसिक शक्ति का भी कम प्रयोग होता है। जब इस प्रकार की भाषा का प्रयोग महाविद्यालयों की उच्च शिक्षा देने में प्रयोग होता है, विशेष रूप में इतिहास, राजनीतिशास्त्र एवं अर्थशास्त्र, तो वह विषय सरलता से ग्रहण हो जाता है। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि आपका महाविद्यालय हिन्दी भाषा को अधिक समृद्ध बनाएगा और यंह लोक-भाषा पूरे भारत की भाषा बन जाएगी।

[द लिबरेटर, 8 अप्रैल, 1926]

अछूतों का उत्पीड़न

दलितोद्धार सभा, देहली के सचिव ने एक बहुत ही दुखद एवं खेदजनक घटना की सूचना मुझे दी है। जनपद गुड़गाँव के फरीदाबाद के निकट खेरी ग्राम में गूर्खी नामक एक हरिजन व्यक्ति ने उच्च जाति के ढंग से अपनी बेटी की शादी में एक शानदार दावत दी। उस गाँव के जाटों ने उसका यह एक अपराध माना कि एक अछूत ने एक उच्च वर्ग के ढंग से दावत देने का साहस कैसे किया ? आभिजात्य वर्ग के लोगों ने इस आशय के लिए एक सभा बुलाई कि अपने सम्मान को पुनः प्रतिष्ठित किस प्रकार से करना चाहिए और उस हरिजन के विरुद्ध किस प्रकार का दंड रखा जाए ? 21 मार्च, 1926 की प्रातः कुछ जाटों, उनकी महिलाओं तथा बच्चों ने लाठियों सहित उस हरिजन को सबक सिखाने की ठान ली तथा फरीदाबाद के लिए चल दिए। हरिजन बालिका के दादा का घर पूर्ण रूप में जलाकर खाक कर दिया गया। जाटों ने गाँव को घेर लिया। एक भी हरिजन गाँव के बाहर नहीं जा सकता था। गाँव के बनियों को भी कहा गया कि वे इन हरिजनों को कोई सामान न बेचें।

फरीदाबाद की पुलिस ने इन उत्पीड़ित व्यक्तियों की शिकायत तब तक नहीं लिखी जब तक आर्यसमाज के कुछ स्थानीय सदस्य वहाँ पर नहीं पहुँचे। दलितोद्धार सभा के सचिव ने हरिजनों से कहा कि कोढ़ी हरिजन, जो गम्भीर रूप से घायल हो गया था, को चिकित्सालय में इलाज के लिए ले जाएँ तथा वहाँ से चिकित्सा प्रमाण पत्र प्राप्त करें। परन्तु जाटों का एक समूह लाठियों सहित आया और उन्होंने हरिजनों को बाध्य किया कि वे उस घायल व्यक्ति को पुनः गाँव में वापस ले जाएँ। सभा के सचिव ने पुलिस सब-इंसपैक्टर, जो जाटों को मात्र चेतावनी देकर जाने वाला था, से इस घटना की रिपोर्ट लिखने के लिए कहा। वह घायल हरिजन गाँव में ही पड़ा रहा, जब तक कि सचिव महोदय ने जनपद अधिकारियों को पूरी बात की जानकारी नहीं दी। जब जनपद के पुलिस अधीक्षक को इस दुखद घटना की सूचना दी गई तो केवल इस घटना की पूछताछ की गई। उन्होंने दलितोद्धार सभा के सचिव स्वामी रामानन्द को टेलीफोन द्वारा आमंत्रित किया। सचिव महोदय ने इस कार्य को आगे बढ़ाया। जाटों तथा हरिजनों को बुलाया गया तथा उनसे

विचार-विमर्श किया गया। दोनों के बीच समझौता करा दिया गया। जाटों ने इस दुखद घटना पर खेद व्यक्त किया तथा भविष्य में इस प्रकार की पुनरावृत्ति न करने का आश्वासन दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी वचन दिया कि वे हरिजनों के प्रति अच्छा व्यवहार करेंगे। दोनों दलों ने तत्काल एक पंचायत बनाई। इस प्रकार आत्मसम्मान से पीड़ित जाटों एवं जख्मी हरिजनों के मध्य एक स्नेहपूर्ण समझौता हो गया।

[द लिबरेटर, 8 अप्रैल 1926]

कांग्रेस का लाहौर अधिवेशन

मैंने किसी भी आन्दोलन में निष्क्रिय होकर कार्य नहीं किया था। यद्यपि मैं कांग्रेस आन्दोलन की सभी गतिविधियों के विषय में अध्ययन करता था और इसके प्रत्येक वार्षिक अधिवेशन में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करता था, फिर भी इन कार्यक्रमों में मैं व्यक्तिगत रूप में सक्रिय होकर भाग नहीं लेता था।

1993 के प्रारम्भ में प्रथम बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नवम् वार्षिक अधिवेशन में मुझे पंजाब का प्रतिनिधित्व करने के लिए आमंत्रित किया गया। लाहौर, जो पंजाब की राजधानी थी, को भारतीय देशभक्तों का आतिथ्य इस बार करना था। रईस सरदार दयाल सिंह मजीठिया एक सार्वजनिक भावना रखने वाले नगर के प्रमुख सम्भ्रान्त व्यक्ति थे। उन्होंने इस अधिवेशन की स्वागत समिति के अध्यक्ष पद पर कार्य करने के लिए अपनी सहमति प्रदान कर दी। इसका कारण यह था कि स्वर्गीय राय बहादुर सर प्रफुल्लचन्द्र बनर्जी, जो उस समय के भारतीय वकीलों में उच्चकोटि का स्थान रखते थे, को पंजाब की उच्च न्यायालय में न्यायाधीश पद पर प्रोन्नत कर दिया गया था और उन्होंने इस पद से त्याग पत्र दे दिया था। स्व. बख्शी जयश्रीराम वकील को स्वागत समिति का कार्यवाहक मन्त्री का कार्य सौंपा गया। बख्शी जी से मेरी घनिष्ठ मित्रता थी, अतः उन्होंने मुझसे आग्रहपूर्वक निवेदन किया कि मैं कांग्रेस की विचारधारा को जन-जन तक पहुँचाने में उनकी सहायता करूँ। यह वह समय था जबकि अंग्रेजी पढ़े-लिखे व्यक्ति भी भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के विषय में अधिक जानकारी नहीं रखते थे। जहाँ तक साधारण जनता का प्रश्न है, वे लोग इस राष्ट्रीय आन्दोलन के विषय में बिलकुल अनभिज्ञ थे। वे तो यह भी नहीं जानते थे कि कांग्रेस किसी एक व्यक्ति का नाम है अथवा पशु का अथवा यह कोई पूजा की वस्तु है। मैं अपने मित्र बख्शी जी को नकारात्मक उत्तर नहीं दे सका और मैंने उनको आश्वासन दिया कि मैं कांग्रेस के लक्ष्य एवं उद्देश्यों पर दस अथवा बारह व्याख्यान अवश्य दूँगा। मैं इससे अधिक आश्वासन देना कठिन समझता था, क्योंकि कुछ समय पहले ही मुझे आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के आर्यसमाज, जो एक प्रतिनिधि-संगठन था, का प्रशासन-दायित्व सौंपा गया, जो अपने आप में एक चुनौती पूर्ण कार्य था।

यह निश्चय किया गया कि व्याख्यान माला का प्रथम व्याख्यान अमृतसर में दिया जाए। अमृतसर का 'वन्देमातरम् सभागार' इस कार्य के लिए चुना गया। इसमें 1500 व्यक्तियों के बैठने की व्यवस्था थी। नगर के सभी मुख्य स्थलों पर बड़े आकार के पोस्टर लगाए गए तथा इनके अतिरिक्त एक हजार से अधिक सूचना पत्र भी नगर में वितरित किए गए थे। मैं अमृतसर सभा के आरम्भ होने से कुछ समय पूर्व ही वहीं पर पहुँच गया था। यहाँ पर आर्यसमाज के सचिव के घर पर लगभग 30 आर्य बन्धु मेरे साथ व्याख्यान स्थल तक आए और सभा स्थल के मंच के सामने बैठ गए। मंच पर बख्शी जयश्रीराम के अतिरिक्त लाहौर से आए हुए 5-6 अन्य व्यक्ति वहाँ पर उपस्थित थे। व्याख्यान प्रारम्भ होने तक वहाँ पर 40 से अधिक की उपस्थिति नहीं थी। आयोजकों ने मुझसे निवेदन किया कि 15 मिनट तक और प्रतीक्षा की जाए। अब यह संख्या 63 तक पहुँच चुकी थी। मुझसे कहा गया कि अब प्रतीक्षा न की जाए। मैंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों पर डेढ़ घन्टे तक व्याख्यान दिया। जब मैंने व्याख्यान समाप्त किया तो वहाँ पर श्रोताओं की संख्या 67 थी।

परन्तु मैं उस समय आश्चर्यचकित रह गया जब मैंने तीन दिन पश्चात् दैनिक 'ट्रिब्यून' में एक सम्पादकीय लेख पढ़ा जिसमें अमृतसर में मनाए गए जलसे के उत्साह की चर्चा की गई थी। इस सम्पादकीय लेख में लिखा गया था कि अमृतसर की बैठक में श्रोताओं की अपार उपस्थिति के कारण पूरा सभागार श्रोताओं से भर गया था तथा मेरे द्वारा दिए गए जोशीले तथा धारा-प्रवाह भाषण को सुनकर श्रोताओं ने महान् हर्ष ध्वनि की थी। मैंने अपने स्वभाव के अनुसार सम्पादक महोदय को पत्र लिखकर कहा कि वे इस अतिशयोक्तिपूर्ण विवरण के प्रकाशन के प्रतिवेदन में एक अन्य लेख प्रकाशित करें और उसमें उक्त बैठक की सही स्थिति को प्रकाशित करें। परन्तु मेरे उक्त प्रतिवेदन को कभी भी प्रकाशित नहीं किया गया। इसके विपरीत मुझे इस कार्य से छुट्टी मिल गई। इस घटना के पश्चात् मुझे किसी भी कांग्रेस के कार्यक्रम में कांग्रेस की ओर से बोलने के लिए आमंत्रित नहीं किया गया।

परन्तु कांग्रेस समिति अपने अनुसार कार्य करती रही। सर सैयद अहमद का कांग्रेस विरोधी रवैया परेशानी पैदा कर रहा था और कांग्रेसजनों ने इस प्रतिरोध को रोकने का एक उत्तम उपाए यह सोचा कि एक ऐसे मुसलिम मुख्तार की सेवाएँ प्राप्त की जाएँ, जो समस्त प्रान्त में भ्रमण कर मुसलमानों को कांग्रेस के प्रति आकृष्ट करें तथा उन्हें कांग्रेस का सदस्य बनाए तथा वह इन मुसलमानों के मध्य कांग्रेस को लोकप्रिय कार्यक्रम प्रस्तुत करें। जिस व्यक्ति को इस कार्य के लिए नियुक्त किया गया, उसने इच्छापूर्वक इस कार्य को प्रारम्भ किया। उसके निष्ठापूर्वक कार्य का फल यह निकला कि लाहौर के कांग्रेस अधिवेशन में बहुसंख्यक मुसलमान

प्रतिनिधि बनकर आए। मैं कांग्रेस से इन मुसलिम सदस्यों के सम्बन्धों के विषय में चर्चा आगे करूँगा।

भारत के वयोवृद्ध महापुरुष दादाभाई नौरोजी 1893 में ब्रिटेन के हाउस ऑफ कॉमन्स में उत्तरदलीय प्रत्याशी के रूप में मध्य फिन्सबरी निर्वाचन क्षेत्र से चुनकर आए। उन्हें कांग्रेस की इस सभा की अध्यक्षता के लिए आमंत्रित किया गया। श्री नौरोजी जी ने इस आमंत्रण को स्वीकार कर लिया था। उस समय पूरे देश में एक उत्साह की लहर चल रही थी। अतः जब यह महापुरुष, जिसे लोग अपने लक्ष्यपूर्ति के प्रति समर्पित व्यक्तित्व को पागल तक कह देते थे, लाहौर आए तो उन्हें एक अपूर्व स्वागत प्राप्त हुआ स्नातकों एवं शहर के रईस व्यक्तियों ने असीमित श्रद्धा के कारण श्री दादाभाई नौरोजी की घोड़ागाड़ी के घोड़ों को हटाकर स्वयं उनकी सवारी को खींचा। इस प्रकार एक भव्य जुलूस के रूप में श्री दादाभाई को नगर की सड़कों पर ले जाया गया। समाज के शिक्षित वर्ग ने तो यह महसूस किया कि एक भारतीय ब्रिटिश लोकसभा का सदस्य बना है, किन्तु भारत की लाखों की भीड़, जो शहर की मुख्य सड़कों के दोनों ओर खड़ी हुई थी, राजनीति के विषय में बिलकुल ज्ञान नहीं रखती थी। उनका तो एकमात्र लक्ष्य उस व्यक्ति को सम्मान देना था, जो अंग्रेज शासकों की श्रेणी में प्रविष्ट हो गया था। वे दादाभाई से एक ही उम्मीद रखते थे कि वे अनाज को सस्ता करा दें।

[द लिबरेटर, 8 अप्रैल, 1926]

पंडित मालवीय जी का भाषण

संगम थियेटर में मदनमोहन मालवीय जी ने अपनी 'न्यू नेशनलिस्ट' पार्टी पर एक प्रभावशाली भाषण दिया। यद्यपि इस सभा में श्रोताओं की संख्या बहुत अधिक नहीं थी, परन्तु इसमें प्रबुद्ध श्रोतागण उपस्थित थे। पंडित जी ने स्वराज पार्टी की अपने भाषण में आलोचनात्मक व्याख्या की। उनका स्पष्ट दृष्टिकोण था कि एक नई पार्टी का जन्म होना चाहिए। अपने धाराप्रवाह एवं प्रभावशाली भाषण के बावजूद भी वे श्रोताओं को अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर पाए। उनका स्वराज पार्टी सम्बन्धी विरोध श्रोताओं को पसन्द नहीं आया। इस सभा में कोई भी मुसलिम नेता उपस्थिति नहीं हुआ तथा हिन्दू नेता, जैसे आर.पी.एल. रामभरन दास और राजा सर रामपाल सिंह आदि व्यक्तियों ने भी इस नई पार्टी का समर्थन नहीं किया।

[द लिबरेटर, 8 अप्रैल, 1926]

गैर जिम्मेदारी कथन का शुद्धिकरण

कुछ समय पहले जब मैं लखनऊ गया तो मेरी पं. मोतीलाल नेहरू जी से भेंट हुई। मैंने उनसे अनेक पार्टियों के विषय में लम्बी बातचीत की। अनेक समाचार पत्रों ने मेरी पं. मोतीलाल नेहरू से हुई बातचीत को इस तरह से प्रस्तुत किया कि जिसे पढ़कर मुझे बहुत खेद हुआ, क्योंकि जिन बिन्दुओं पर उन्होंने मेरे वार्त्तालाप को आधार बनाया था, उनमें से एक भी बिन्दु पर मैंने उनसे बात नहीं की थी। उन्होंने कहा था कि "उन्हें गांधी जी के मौलिक कार्यों में पूर्ण विश्वास है और वे कांग्रेस को एक सही दिशा में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करेंगे। वे इन अंग्रेजों के खिलाफ अवज्ञा आन्दोलन शीघ्र ही शुरू करेंगे। अखबारों ने इस प्रकार की बात छापी थी कि वे (श्रद्धानन्द) मोतीलाल नेहरू की नई पार्टी के विरोधी थे।" वास्तव में जो बात मैंने पंडित जी से कही थी उसका आशय था कि मैं गांधी जी के निर्माणात्मक कार्य में पूर्ण विश्वास रखता हूँ एवं उसका समर्थन करता हूँ। इन समाचार पत्रों में मेरा विरोध पं. नेहरू की नई पार्टी के विषय में नहीं लिखा गया, अपितु यूनाइटेड नेशनल पार्टी के विरोध में भी लिखा गया। ये समाचार पत्र भ्रमित समाचार देकर स्वराज पार्टी का विरोध करना चाहते थे। इन पत्रों के पास अपना कोई भी रचनात्मक प्रोग्राम नहीं था। हर चुनाव क्षेत्र से मैं स्वराज पार्टी के सदस्यों को चुनाव में सफलता प्राप्त करने के लिए प्रयास कर रहा था। मैं चाहता था कि जनता स्वराज पार्टी के सदस्यों को अधिकतम वोट देकर विजयी बनाए, परन्तु इसके विपरीत ब्यूरोक्रेट्स (शासकीय व्यक्ति) ऐसा नहीं चाहते थे। वे चाहते थे कि स्वराज पार्टी के व्यक्तियों को सफलता न मिले। मैंने इस सन्दर्भ में स्व. कवि अकबर की ये पंक्तियाँ उद्धृत कीं–

"मरे सैयाद की तालीम की है धूम गुलशन में।
वहाँ जो आज फँसता है वह कल सैयाद होता है।"

मैं मानता हूँ कि स्वराज पार्टी के सदस्यों को लोकसभा तथा विधानसभा में बड़ी संख्या में प्रतिनिधित्व करना चाहिए। मेरा मानना है कि जब स्वराज पार्टी अवज्ञा आन्दोलन की बागडोर अपने हाथ में ले लेगी तो कांग्रेस पार्टी को इस कार्य

को करने की आवश्यकता नहीं होगी। जो बात मैं यहाँ कह रहा हूँ वही बात मैंने पहले भी अनेक बार कही और लिखी भी है। मैंने कहा है कि "असंख्य व्यक्तियों के द्वारा अवज्ञा आन्दोलन चलाना सरल कार्य नहीं है। जब यह कार्य प्रारम्भ होता है तो इसमें एक दैवीय शक्ति का सहयोग भी स्वतः प्राप्त हो जाता है, तब कोई भी शक्ति इस कार्य को रोक नहीं सकती है। और जब इसमें सफलता प्राप्त होगी तो मेरे सहयोग एवं मेरी भूमिका की लोग सराहना करेंगे।" हमें शारीरिक एवं नैतिक रूप में अपने देश के भावी कर्णधारों को देश के निर्माण के लिए सुदृढ़ करना चाहिए। ये भावी देश निर्माता ही देश की कीर्ति एवं भव्यता बनाए रखने में अपनी भूमिका निभाएँगे।

मैं सभी के हित के लिए कार्य करना चाहता हूँ। मेरा विनम्र विचार है कि कांग्रेस को इस प्रकार से राजनीतिक कार्यों से अपने को अलग कर लेना चाहिए। प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति जैसे हिन्दू, मुसलमान और ईसाई को अपने जातीय एवं धार्मिक भावनाओं की पूर्वग्रहित भावनाओं को त्यागकर कांग्रेस में सर्वहितकारी सदस्य के रूप में प्रवेश करना चाहिए। इन व्यक्तियों को तत्काल स्वराज प्राप्त करने के स्थान पर शारीरिक, आर्थिक और नैतिक रूप से देश को सुदृढ़ बनाने का प्रयास इसलिए करना चाहिए, ताकि भारत आत्मनिर्भर बनकर उन्नति प्राप्त कर ले। मैं समझता हूँ कि वर्तमान में कांग्रेस राष्ट्रीय हित की भावना से अधिक कार्य नहीं कर रही है। मेरा विनम्र निवेदन है कि इन सभी पार्टी के सदस्यों को अपने समस्त मतभेद भुलाकर राष्ट्र के निर्माण में सहयोग की भावना से कार्य करना चाहिए।

[द लिबरेटर, 8 अप्रैल, 1926]

महात्मा गांधी एवं 'द लिबरेटर'

'द लिबरेटर' की एक विशाल योजना है, यदि यह पत्रिका इन उद्देश्यों को पूर्ण कर लेती है तो स्वामी श्रद्धानन्द को इन कार्यों के लिए ख्याति प्राप्त होगी।

हमारा मूल लक्ष्य विदेशी वस्तुओं से अपने आपको मुक्त करना है। परन्तु कुछ विशेष वर्ग विदेशी वस्त्र को पहनकर अपने को गौरवान्वित करता है। भारत की 80 प्रतिशत जनसंख्या गाँव में रहती है, परन्तु उस पर शहर की 20 प्रतिशत व्यक्तियों का प्रभाव पड़ रहा है। यदि यह पत्रिका अपने लेख एवं विचारों के द्वारा गाँव की 80 प्रतिशत जनसंख्या को शहरी अपसंस्कृति के प्रभाव से बचाने में सफल हो जाती है तो इस पत्रिका का लक्ष्य सफल माना जाएगा। मेरा मानना है कि यह कार्य जनता में चरखे के महत्त्व को समझाकर एवं उसका बहुसंख्यक व्यक्तियों में प्रयोग करके ही सम्भव है।

–महात्मा गांधी

साबरमती आश्रम, 11 मार्च, 1926

टिप्पणी–मैं महात्मा गांधी जी को विश्वास दिलाता हूँ कि मैं उनके द्वारा प्रस्तावित चरखे के प्रयोग को ' दि लिबरेटर' के माध्यम से जनता तक पहुँचाऊँगा।

[द लिबरेटर, 8 अप्रैल, 1926]

त्रिवेन्द्रम में सत्याग्रह

जब मैंने 'द लिबरेटर' का अंक प्रारम्भ किया उसी समय त्रिवेन्द्रम में भी सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ। मि.टी.के. वैल्थुपिल्लई, जो नैय्यर कम्युनिटी के भी अध्यक्ष थे, की अध्यक्षता में 1 अप्रैल को शुक्रवार के दिन त्रिवेन्द्रम में एक सभा का आयोजन किया गया। स्वामी सत्यव्रतथान के द्वारा सभा का प्रारम्भ प्रार्थना के द्वारा किया गया। इस सभा में महात्मा गांधी जी का संदेश, जो पहले छप चुका था, पढ़ा गया। आन्दोलन के लिए एक प्रस्ताव पास किया जिसके माध्यम से 25 हजार रुपए एकत्र किए जाने थे। इसके अलावा एक जनरल कमेटी और एक वर्किंग कमेटी का भी निर्माण किया गया, ताकि इस आन्दोलन का सुचारु रूप से नियंत्रण किया जा सके। इस कार्य का प्रारम्भ बहुत ही अच्छी प्रकार से हुआ, परन्तु कुछ उच्च वर्ग के व्यक्तियों ने इसके विरुद्ध अदालत की शरण ली। उनका विचार था कि यह आन्दोलन सामान्य से धार्मिक स्तर पर व्यक्तियों में सद्भावनाओं को बिगाड़ेगा। लेकिन सौभाग्य से ऐल्लापिल्लई के जनपद के न्यायमूर्ति श्री भास्कर मैनन ने इन संभ्रान्त व्यक्तियों के प्रयासों को असफल कर दिया (उनके इस कार्य का संक्षिप्त विवरण अन्यत्र दिया गया है)। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया था कि अभी भी संसार में न्याय मौजूद है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि मि. परमेश्वरम् पिल्लई और अन्य व्यक्तियों ने इस कार्य के लिए अपना प्रदर्शन किया और मैंने ईश्वर से प्रार्थना की कि वह इनके इस कार्य को सफल बनाने में अपना आशीर्वाद दें।

[द लिबरेटर, 15 अप्रैल, 1976]

स्वामी जी की अपील

मैं समस्त संगठनों, सोसाइटियों और व्यक्तियों से यह निवेदन करता हूँ कि वे छुआछूत की अमानवीय प्रवृत्ति को समाप्त कर दें। ये संगठन जो समाज सुधार के कार्य जैसे हिन्दू संगठन, शुद्धि, शरण गृह, विवाह सुधार इत्यादि कार्यक्रमों की सूचना दें। भारत के किसी भी कोने में समाज सुधार के द्वारा जो शुद्धिकरण एवं दलित उद्धार के कार्य किए जाएँ, उनकी भी विस्तृत सूचना सम्पादक 'द लिबरेटर' श्रद्धानन्द जी के पास समुचित कार्यवाही हेतु समय पर पहुँचनी चाहिए।

[द लिबरेटर, 15 अप्रैल, 1926]

भारत उत्थान के लिए कार्य

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने 1922 में कांग्रेस की अवज्ञा आन्दोलन की जाँच समिति (इन्क्वायरी कमेटी) में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा—''मैं इस बात में विश्वास नहीं करता कि कांग्रेस केवल इस अवज्ञा आन्दोलन पर ही जोर दे। मैं चाहता हूँ कि वह अपने संगठन को शक्तिशाली बनाने के लिए भी कार्य करें। यदि अवज्ञा आन्दोलन को स्थगित कर अन्य कार्यक्रमों को प्रोत्साहित किया जाए तो देश में स्वराज्य लाने में हम सफलता प्राप्त कर सकते हैं। कार्यकर्ताओं को अन्य रचनात्मक कार्य करने में भी अधिक रुचि लेनी चाहिए। सरकार को करों की अदायगी न करना भी उचित नहीं होगा।''

मुझे इस बात का अनुमान है कि हिन्दू एवं मुसलमान आपस में विश्वास की भावनाएँ समाप्त करते जा रहे हैं। अतः हमारा प्रथम कार्य इनमें पुनः विश्वास प्राप्त कराना है। हिन्दू नेताओं को संगठन पर जोर देना चाहिए तथा मुसलिम नेताओं को हिन्दुओं के कार्यों की खिलाफत को छोड़कर स्वराज प्राप्ति के लिए सहयोग की भावना से कार्य करना चाहिए।

अहिंसा की भावना केवल बाह्य एवं शारीरिक ही नहीं होनी चाहिए, अपितु अहिंसा भावनात्मक रूप में भी होनी चाहिए।

अवज्ञा आन्दोलन से कोई विशेष उपलब्धि नहीं होगी। यदि अवज्ञा आन्दोलन को वास्तव में ही सफल बनाना चाहते हैं तो यह भारत के समस्त प्रान्तों में एक साथ प्रारम्भ होना चाहिए। आंशिक रूप में इस आन्दोलन को प्रारम्भ करने से सफलता की आशंका है। कांग्रेस को चाहिए कि वह इस प्रकार का देशव्यापी सन्देश पहुँचाए कि यदि कोई व्यक्ति आन्दोलन में हिंसा का सहारा लेगा तो उसके लिए कांग्रेस कमेटी जिम्मेदार नहीं होगी। कांग्रेस ने जब अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ कर ही दिया है तो उसे इस कार्यक्रम को जारी रखना चाहिए। अब उसके लिए इस कार्यक्रम को रोकना उचित नहीं है।

असहयोग आन्दोलन ने देश में आश्चर्यजनक कार्य किए हैं। इसने डेढ़ वर्ष में ही वह सफलता प्राप्त कर ली है जो 50 वर्षों में ही होनी चाहिए थी। दबाव के द्वारा इस आन्दोलन को नहीं रोकना चाहिए। (दिल्ली में इस आन्दोलन में एक

विशेष सफलता न मिलने का एकमात्र कारण यह था कि वहाँ के कार्यकर्ताओं ने इस कार्य में विशेष रुचि नहीं ली थी।) बारडोली प्रस्ताव ने इस उत्साह को समाप्त कर दिया। दिल्ली रेजुलेशन ने भी इसकी गति में अवरोध पैदा किया था। मैंने जैसा कि सुझाव दिया था कि अवज्ञा आन्दोलन को स्थगित कर दिया जाए तो असहयोग आन्दोलन की गति में शिथिलता न आती और यह आन्दोलन सफलता की चरम सीमा को छू लेता और कांग्रेस की पूरी शक्ति एवं ध्यान असहयोग आन्दोलन की ओर ही लग जाता। यदि नेताओ में असहयोग आन्दोलन की भावना सुदृढ़कर दी जाती और वे इसमें पूर्ण उत्साह का परिचय देते तो कांग्रेस को अन्य संस्थाओं के दरवाजे खटखटाने की आवश्यकता नहीं थी तथा राजतंत्र के व्यक्तियों को इस आन्दोलन को दबाने में सफलता न मिल पाती।

[द लिबरेटर, 22 अप्रैल, 1926]

शराब से मुक्ति

शराब एक ऐसा विनाशकारी दैत्य है जिसने आदिकाल से मानव समाज को हानि पहुँचाई है। इसके द्वारा हमारे पूर्वजों, बेटों, और मित्रों का नैतिक पतन हुआ है। 1876 में इसके विरुद्ध एक राजनीतिक आन्दोलन छिड़ा था। हम सभी को इस आन्दोलन पर गर्व है। शराब रूपी कीटाणु आदि काल से ही विकसित होता जा रहा है और वर्तमान में इसने सम्पूर्ण विश्व के मानव पर अपना प्रभाव स्थापित कर लिया है। इसने मानव को अनेक प्रकार की बीमारियाँ प्रदान की हैं। इसने मानव के जीवन में अनेक दुख दिए हैं। इसने असंख्य बच्चों को अनाथ बना दिया है, अनेक महिलाओं को विधवा बना दिया है तथा असंख्य व्यक्तियों को करुण अवस्था में छोड़ दिया है। अब्राहम लिंकन ने अमरीका के व्यक्तियों को दासता के बन्धन से मुक्त करते हुए अपने ग्यारह-सूची विचार रखे थे।

नोट—स्वामी श्रद्धानन्द जी ने शराब के कुप्रभाव पर अपने विचार लिंकन का उदाहरण देकर प्रस्तुत किए थे। वे शराब को स्वस्थ समाज को नष्ट करने में एक घुन के समान मानते थे।

[द लिबरेटर, 22 अप्रैल, 1926]

एक अछूत स्नातक

जलालाबाद के महाराज राणा बहादुर समाज में सुधार के पक्षधर थे। उनके राज्य में मि. रामचन्द्र, जी एक अछूत व्यक्ति थे, ने परम्परा से चलते आ रहे अछूतों के सामाजिक बन्धनों को तोड़ने का साहस किया। इसकी महाराजा ने प्रशंसा की और उसे इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया। महाराज ने उसके लिए पुस्तक तथा छात्रवृत्ति भी प्रदान की। रामचन्द्र ने इस पुस्तक का मनोयोग एवं परिश्रम से अध्ययन किया और उसने महाराज के द्वारा व्यक्त किए गए सम्मान को साकार रूप दिया। उसने विज्ञान में स्नातक उपाधि प्राप्त की। बाद में उसे राज्य में सरकारी नौकरी प्राप्त हो गई। उसने सरकारी सेवा में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया तथा ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का पालन किया। वह अछूत अन्य सरकारी अधिकारियों के साथ सद्भावनापूर्ण व्यवहार रखता था तथा उनके साथ सहभोज में भी भाग लेता था। कुछ समय के पश्चात् महाराज ने उसे दरबार में प्रोन्नत कर दिया।

नोट–स्वामी श्रद्धानन्द ने महाराजा राणा बहादुर के अछूतोद्धार विचार की प्रशंसा तो की ही साथ ही स्वामी जी ने अछूत जाति के रामचन्द्र की भी प्रशंसा की कि उसने अपने निष्ठापूर्ण कार्य से यह सिद्ध कर दिया कि प्रतिभा किसी जाति विशेष की बसौती नहीं होती है।

[द लिबरेटर, 6 मई, 1926]

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (प्रथम राष्ट्रपति) के छुआछूत पर विचार

बिहार और उड़ीसा के छपरा अधिवेशन में बाबू राजेन्द्र प्रसाद ने अछूतों के विषय में अपना प्रस्ताव प्रस्तुत किया। उन्होंने मन्दिर के अधिकारियों से कहा कि वे हरिजनों को कुओं से पानी लेने, सड़कों का प्रयोग करने तथा आम-सभाओं में अन्य जाति के लोगों की तरह उन्हें भी पूरा अधिकार दें। इसके साथ ही उन्होंने हरिजनों को भी सुझाव दिया कि वे शराब तथा पशुओं का मांस खाना छोड़ दें। उन्होंने कहा कि यह सब कार्य तीन हिस्सों में बाँट देना चाहिए। प्रथम हिन्दू वर्ग हरिजन भाइयों से क्या आशा करता है ? द्वितीय मंदिर के अधिकारी उनसे किस प्रकार का सहयोग चाहते हैं और तृतीय, हरिजनों से किस प्रकार के कार्य करने की आशा की जाती है। उन्होंने कहा कि वे इस प्रस्ताव को रचनात्मक रूप देना चाहते हैं, लेकिन वे चाहते थे कि यह प्रस्ताव ज्यों-का-त्यों पास हो जाए। वे इस प्रस्ताव में किसी भी संकीर्ण भावना को महत्व नहीं देना चाहते थे। 22 करोड़ हिन्दुओं में 7 करोड़ अछूत हैं। उनके साथ अन्य वर्ग के व्यक्तियों के द्वारा अमानवीय व्यवहार होता है। उनका कहना था कि उच्च वर्ग के व्यक्तियों के यहाँ कुत्ते व बिल्ली भी सरलता से प्रवेश कर सकते हैं, लेकिन यह एक विडम्बना है कि उनके यहाँ अछूतों का प्रवेश वर्जित है। यह एक विचित्र बात है कि जब एक डोर्म (अन्त्रज) अपना नाम परिवर्तन करके मि. डोभिंगों रख लेता है तो इन व्यक्तियों को इससे मिलने अथवा उससे स्नेहपूर्वक हाथ मिलाने में कोई आपत्ति नहीं होती है। यह एक शर्म की बात है। यह उनके धर्म के प्रति निष्ठा का द्योतक नहीं है। वे ऐसा कार्य एवं व्यवहार कब तक करते रहेंगे ? अछूत भी आखिरकार मनुष्य ही हैं। उनके अन्दर भी उन्हीं के समान हृदय है जो उन्हीं की भाँति भावनाएँ रखता है। यदि समाज पर कोई विपत्ति आती है तो अछूत ही इसका शिकार बनता है। जितनी सेवाएँ अछूत हमारे लिए करते हैं हम उतना उन्हें पारिश्रमिक नहीं दे पाते हैं। अतः हमारा यह कर्तव्य है कि हम तत्काल ही उन्हें कुओं से पानी भरने दें तथा उन्हें स्कूल तथा कालिजों में भी प्रवेश की अनुमति दें। सौभाग्य से उन्हें सड़क

पर चलने का अधिकार पहले ही प्राप्त हो चुका था। अतः अब समय आ गया है कि मन्दिर के अधिकारी भी उन्हें मन्दिर में पूजा-अर्चना करने का पूरा अधिकार दें। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को भगवान् के दर्शन करने से रोकने का कोई अधिकार नहीं है। साथ ही डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी ने हरिजनों से भी यह आशा व्यक्त की कि वे शराब पीना तथा पशुओं का मांस खाना भी छोड़ दें।

[द लिबरेटर, 6 मई, 1926]

सेना के अन्दर

जब मैं अपने आश्रम में लौटा तो मैंने उस दिन के प्रमुख समाचार पत्र 'लीडर' में मि. शास्त्री के यूकेज के विरोध में एक पत्र पढ़ा। मैंने महात्मा गांधी को एक टेलीग्राम भेजा जिसमें मैंने लिखा कि मुझे सत्याग्रह में शामिल होकर ऐसा लग रहा है कि जैसे मैं कोई धर्म युद्ध कर रहा हूँ। मेरा टेलीग्राम महात्मा गांधी के लिए देहली जा चुका था, उसके अगले ही दिन महात्मा जी देहली के लिए जा चुके थे। वे सेन्ट स्फीफेन्स कालिज के प्राचार्य मि. रुद्र जी के यहाँ ठहरे। उन्होंने अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा प्राचार्य रुद्र के साथ रहना अधिक उचित समझा। निम्न पत्र जो महात्मा गांधी ने मुझे लिखा, उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है।

21 अक्टूबर, 1914

प्रिय महात्मा जी,

मि. एन्ड्रूज ने मुझे आपका नाम एवं आपके कार्यों के विषय में बताया है। मुझे अब आपको पत्र लिखते हुए ऐसा प्रतीत हो रहा है कि मैं यह पत्र किसी अजनबी व्यक्ति को नहीं लिख रहा हूँ। मुझे आशा है कि जब मैं आपके लिए 'तुम' शब्द का प्रयोग कर रहा हूँ तो आप इस शब्द का प्रयोग करने के लिए मुझे क्षमा कर देंगे। यह शब्द मैं और मेरे मित्र एंड्रूज आपके लिए प्रयोग कर रहे हैं। मि. एंड्रूज ने मुझे बताया है कि किस प्रकार से प्राचार्य रुद्र, रवीन्द्रनाथ टैगोर और आपने उन्हें प्रभावित किया। उन्होंने मुझे यह भी बताया कि किस प्रकार से आपके गुरुकुल के शिष्यों ने लगातार निष्ठापूर्वक देश के हित के लिए कार्य किया है तथा उन्होंने अपने कार्यों के द्वारा गुरुकुल को ख्याति प्रदान कराई है। मैं उनके इन उत्तम कार्यों से बहुत प्रभावित हुआ हूँ। इन कार्यों ने ही मुझे भारत के इन तीन सपूतों के द्वारा संचालित संस्थाओं को जाकर देखने की प्रेरणा प्रदान की है।

आपका शुभचिन्तक
मोहनदास कर्मचन्द गांधी

उपरोक्त पत्र में जो बातें महात्मा गांधी जी ने लिखी हैं उनकी व्याख्या करने की आवश्यकता है। अब 1914 में महात्मा गांधी ने शान्तिपूर्वक अंग्रेजों का विरोध किया था। मि. गोखले ने भारत की जनता से इस उत्तम कार्य के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त करने की प्रार्थना की थी, लेकिन लोगों ने इसमें रुचि नहीं ली थी। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने 1500 रुपए एकत्र किए। उन्होंने एक माह तक दूध व घी का बहिष्कार किया। उन्होंने अपनी संस्था के तीन दिन के अवकाश के दिनों में हरिद्वार में बनाए जा रहे बाँध में साधारण मजदूरों के समान काम करके कुछ धन एकत्र किया। जब मि. गोखले अपने लक्ष्य में निराश हो रहे थे उस समय गुरुकुल के छात्रों द्वारा घी एवं दूध के द्वारा बचाया हुआ धन एवं तीन दिन का पारिश्रमिक उन्होंने मि. गांधी का गुरुदेव से तात्पर्य डॉ. रवीन्द्रनाथ टैगोर, जो संसार के महान् कवि थे, से है। महात्मा गांधी जी का पहला पत्र मुझे प्राप्त हुआ था। वे अप्रैल 1915 में गुरुकुल आए। उनका यह अन्तिम पत्र था जिसे उन्होंने मुझे अंग्रेजी भाषा में लिखा था। मैंने इस पत्र का उत्तर उन्हें हिन्दी में दिया जिसमें मैंने यह व्यंग्य करते हुए लिखा था कि एक देशवासी को दूसरे देशवासी को अपनी राष्ट्रभाषा छोड़कर विदेशी भाषा में पत्र लिखने का कोई अधिकार नहीं है।

[द लिबरेटर, 13 मई, 1926]

स्वामी जी का संदेश

प्रत्येक समाचार पत्र (मासिक, साप्ताहिक, अथवा दैनिक) को जब प्रारम्भ किया जाता है तो उसके लिए किसी सम्भ्रान्त नागरिक के आशीष वचन की आवश्यकता होती है। ऐसे नए समाचार पत्र को छापने वाले सम्पादकों के लिए मेरा एक संदेश है—"उन्हें अपने समाचार पत्रों को न्याय एवं निष्ठापूर्वक प्रकाशित करना चाहिए। ऐसा करने पर ईश्वर उनकी स्वयं ही सहायता करेगा।" हिन्दू जनरल के विशेष अंकों के सम्पादकों से मेरा केवल एक ही निवेदन है कि वे राष्ट्रहित में अपने व्यक्तिगत मतभेद एवं शत्रुता की झलक अपने समाचार पत्रों में न आने दें। जिन्हें आप अपना विरोधी मानते हैं उन्हें अपने समाचार पत्रों में न आने दें। जिन्हें आप अपना विरोधी मानते हैं उन्हें अपने समाचार पत्रों में बाधक न मानते हुए अपने स्वच्छंद विचारों को निर्भीकता से प्रकाशित करें। मैंने अपने समाचार पत्र 'द लिबरेटर' में इन विचारों को स्थान दिया है। उपरोक्त संदेश के पश्चात् मैं यह समझता हूँ कि मुझे व्यक्तिगत पत्रों के उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है।

[द लिबरेटर, 27 मई, 1926]

हटाने योग्य या स्थायित्व

मैंने दैनिक उर्दू में पढ़ा था महात्मा गांधी जी से प्रेरित होकर सेठ रामेश्वर दास बिरला ने अमरैली में अछूतों के लिए मन्दिर बनवाने हेतु 25 हजार रुपए दान में दिए थे। यह मन्दिर बनकर तैयार हो गया था और इसका उद्घाटन समारोह 14 मई, 1926 को किया गया। (मैंने भी इसमें 5200 रुपए का सहयोग दिया।) मुझे इस बात का आश्चर्य है कि इस मन्दिर का निर्माण क्या छुआछूत को खत्म करने के लिए किया गया था या केवल इसका उद्देश्य केवल मन्दिर निर्माण करना था, जब मैं किसी धर्म अथवा मिशन के माध्यम से दलित एवं पीड़ित व्यक्तियों के लिए शिक्षालय के निर्माण की बात सुनता अथवा पढ़ता हूँ तो मेरे मन में ऐसे कार्यों की सफलता के लिए आशंका पैदा हो जाती है। अछूत बच्चों के लिए विशेष नए विद्यालय खोलना इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि पहले से ही स्थापित सामान्य विद्यालयों में इन तथाकथित इन अछूत बच्चों को प्रवेश देना महत्त्वपूर्ण है। इन अछूत बच्चों को आर्थिक सहायता देने के लिए विशेष छात्रवृत्तियाँ देकर हम इन अछूतों की समस्या को कुछ हद तक हल कर सकते हैं। मुझे आशा है कि महात्मा जी अपने प्रभाव से अपने हिन्दू शिष्यों को प्रभावित करके, जो पूज्य देवालय पहले से ही स्थापित हैं, उनमें अछूतों को प्रवेश दिलाएँगे। इस कार्य के लिए धन की आवश्यकता नहीं है, बल्कि इच्छा शक्ति की आवश्यकता है। इससे ही इस समस्या का समाधान हो सकता है। गुजरात में इस प्रकार के कार्यों में अभी तक निराशा ही मिली है। मैंने 12 मई, 1926 के बाम्बे क्रॉनिकल में पढ़ा था कि "जम्बूसर नगरपालिका के चुनाव में एक हरिजन के चुनाव के कारण वहाँ पर एक उत्तेजनात्मक एवं सनसनी खेज प्रचार हुआ। चार उच्च वर्ग के हिन्दू सदस्यों ने इस बात का आश्वासन दिलाया कि वे अछूत सदस्यों को नहीं छुएँगे। यदि गलती से वे अछूतों को छू भी लेंगे तो वे तत्काल स्नान करेंगे।" 'सिविल डिसओबिडियेन्स' को जब प्रारम्भ किया जाना था तो मैंने अछूतोद्धार की कहानी सुनी। महात्मा गांधी जी के सम्मुख तो उच्च वर्ग के हिन्दू अछूतों से प्रेमपूर्वक मिले, लेकिन जब वे घर लौटे तो सभी ने स्नान किया तथा अपने कपड़े धोए। जब तक हिन्दू समाज अपने आपको तन-मन से शुद्ध नहीं करता और वे बिना भेदभाव से समस्त मानवों को अंगीकार नहीं करते, तब तक इस कार्य में सफलता नहीं मिल सकती है। *[द लिबरेटर, 27 मई, 1926]*

हिन्दू संगठन

धामत्री में प्रान्तीय एवं छत्तीसगढ़ के राजपूतों का महासम्मेलन सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में शुद्धि एवं समाज को संगठित करने वाले कार्यक्रमों को शामिल किया गया। इस सम्मेलन के अध्यक्ष ठाकुर उदयवीर सिंह थे। उन्होंने वहां के व्यक्तियों को अपना पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन दिया।

महान् देशभक्त एवं शिक्षाविद् बाबू गोपाल बन्धु दास ने हिन्दू महासभा से प्रार्थना की कि वे पुरी, जो तीर्थयात्रियों का बहुत ही महत्त्वपूर्ण केन्द्र है, में विधवाओं तथा निस्सहाय स्त्रियों के लिए एक उद्धारगृह खोलें।

यह-उद्धारगृह मुख्य रूप में वहाँ की देवदासियों के उद्धार के लिए होना चाहिए। हम मद्रास में इस प्रकार के कार्यों की सेवा हेतु कुछ वर्षों तक 'कलावन्तलु सभा' के तत्त्वावधान में कार्य करते रहे थे। इसका नाम 'हिन्दू युवती शरणागृह' रखा गया था और इस शरण-गृह की संचालिका यामिनी पुरना तिलक अम्मा थी।

नोट—स्वामी श्रद्धानन्द जी ने उपरोक्त कार्यक्रमों को एक स्वस्थ समाज के लिए आवश्यक माना है।

[द लिबरेटर, 7 जून, 1926]

गुरुकुल की रजत जयन्ती

मैं एक कार्यक्रम हेतु उत्तर प्रदेश के आगरा और अवध में गया था। परन्तु मेरी आयु और बीमारी ने मुझे पाँच दिन के बाद ही मुझे लौटने के लिए विवश कर दिया। मैंने अपने हिन्दू भाइयों को आश्वासन दिया कि मैं उन्हें अपने संदेश प्रेस के माध्यम से पहुँचा दूँगा। आज मैं उसी संदेश का प्रथम भाग अपने हिन्दू भाइयों तक पहुँचा रहा हूँ।

हिन्दू समाज के लोग जब तक सात करोड़ से अधिक अपने अछूत भाइयों को अपने समाज में समानता का स्थान नहीं देंगे तथा पौराणिक वैदिक धर्म के द्वार सर्वसाधारण के लिए नहीं खोलेंगे, तब तक वे अपने उद्देश्य में सफल नहीं होंगे। हिन्दू धर्म जब तक अपनी संकीर्णता छोड़कर बाल-विवाह का निषेध नहीं करता तथा आठ लाख बाल विधवाओं को पुनः विवाह की अनुमति नहीं देता, तब तक इस धर्म का अस्तित्व खतरे में है। अतः इन बुराइयों को दूर करना नितान्त आवश्यक है। इन बुराइयों पर तत्काल ही सुधारात्मक कार्य करने चाहिए। यह सुधार तब तक सम्भव नहीं हो सकता है, जब तक मानव निर्मित वर्ण-व्यवस्था में परिवर्तन नहीं लाया जाएगा। जब तक सैकड़ों जाति और उपजातियों को समाप्त कर मानव जाति को महत्त्व नहीं दिया जाता, हिन्दू धर्म का अस्तित्व खतरे में है। जब तक नैतिक एवं आध्यात्मिक सुधार नहीं होता तथा वैदिक धर्म का पुनर्जागरण नहीं होता, हिन्दू धर्म का अस्तित्व सम्भव नहीं है। अतः इसके लिए गुरुकुल की प्रणाली नितान्त आवश्यक है, जहाँ पर मानसिक, आध्यात्मिक एवं शारीरिक शिक्षा का एक सन्तुलित समन्वय है।

शिक्षा की इस पद्धति को जो भारत में 2400 वर्ष पूर्व थी, पुनः हरिद्वार में गंगा के पवित्र तट पर गुरुकुल पद्धति के द्वारा पुनर्स्थापित किया गया। इस पद्धति के लगभग एक दर्जन आश्रम देश के अन्य विभिन्न भागों में भी खोले गए। जब गुरुकुल की रजत जयंती मनाई जाएगी तो उस समय तक गुरुकुल काँगड़ी की स्थापना के (मार्च के तीसरे सप्ताह सन् 1927 को) 25 वर्ष में पूरे हो जाएँगे। उस शुभ अवसर पर मैं, भी ज्ञान की देवी सरस्वती को अपना विनम्र नमन करूँगा। मेरा उन सरस्वती-प्रेमियों से विनम्र निवेदन है कि जो इस गुरुकुल शिक्षा पद्धति

में विश्वास रखते हैं और सरस्वती माँ के प्रति मेरी विनम्र सेवाओं का सम्मान करते हैं, वे इस संस्था के लिए आर्थिक सहायता देकर मुझे सरस्वती माँ की और सेवा करने का सुअवसर प्रदान करें।

[द लिबरेटर, 22 जुलाई, 1926]

पहला कदम

पिछले सप्ताह हिन्दू महासभा की मातुंगा ब्रांच के विषय में हमने लिखा था कि वहाँ पर एक ऐसे मन्दिर का निर्माण किया जा रहा है, जहाँ पर अछूतों सहित सभी हिन्दू जाति के व्यक्तियों के लिए बिना किसी भेदभाव के प्रवेश तथा अर्चना की कोई रुकावट नहीं होगी। इस पुनीत कार्य के लिए जनता से धन संचय किया गया। इस समाचार के पूरे प्रचार के लिए हमने स्वामी श्रद्धानन्द जी की पुस्तिका 'हिन्दू संगठन' का साधार प्रयोग किया।

हिन्दुओं को संगठित करने के लिए पहला प्रयास क्या किया जाना चाहिए ? अपने भारत-भ्रमण के समय मैंने शिक्षित व्यक्तियों को देखा है कि वे अछूतों से आपस में मिलना पसन्द नहीं करते हैं। ऐसे बहुत ही कम अवसर होते हैं जबकि वे मिल-जुलकर सामाजिक समस्याओं पर विचार-विमर्श करते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि उनके पास आपस में मिलकर बैठने का कोई भी स्थल नहीं होता है। दिल्ली में हिन्दुओं के लिए एक मात्र मिलकर बैठने का स्थल लक्ष्मी नारायण धर्मशाला में है जिसमें एक समय में 800 से अधिक व्यक्ति बैठ सकते हैं। हिन्दू और मुसलमानों की सभाओं में एकमात्र अन्तर यह है कि मुसलमानों की सभाओं में शोरगुल नहीं होता है, जबकि इस धर्मशाला में बाहर के यात्रियों का शोरगुल इतना होता है कि अन्दर बोलने वाले वक्ता की आवाज श्रोताओं तक ठीक से नहीं पहुँच पाती है।

अतः मैं अपना प्रथम सुझाव देता हूँ कि प्रत्येक शहर व महत्त्वपूर्ण कस्बों में एक राष्ट्र मन्दिर का निर्माण होना चाहिए। ऐसा राष्ट्र मन्दिर इतना बड़ा होना चाहिए जिसमें 25 हजार व्यक्ति एकत्र हो सकें तथा इसमें एक बड़ा हॉल भी होना चाहिए जिसमें भगवद्गीता का पाठ, उपनिषद्, रामायण और महाभारत के कार्यक्रम प्रस्तुत किए जा सकें। यह राष्ट्र मन्दिर स्थानीय हिन्दू सभा के नियंत्रण में होना चाहिए। इसके प्रांगण में कुश्ती के लिए अखाड़े तथा अन्य खेल के कार्यक्रम भी होने चाहिए। हिन्दू मन्दिर विशेष देवी-देवताओं के नाम पर बनाए जाते हैं। कट्टरपन्थी हिन्दुओं के मन्दिर मात्र तीन देवियों सरस्वती देवी, गऊ माता और भू माता के नाम पर ही बनने चाहिए। सरस्वती माँ के विचारों को हर मंदिर के केट

के ऊपर इसलिए अंकित करना चाहिए, ताकि उसके विचारों से प्रेरित होकर प्रत्येक हिन्दू अपनी अज्ञानता को दूर कर सके। इनके द्वारा भारत का प्रत्येक बच्चा यह अनुभव कर सकेगा कि भूतकाल में भारत की सभ्यता और कीर्ति कितनी अधिक महान् थी। परन्तु दुर्भाग्य से लगातार उसका ह्रास हो रहा है। अतः इस कीर्ति को पुनः स्थापित करना प्रत्येक भारत की सन्तान का कर्तव्य है।

[द लिबरेटर, 24 जून, 1926]

आजाद नेहरू की सार्वजनिक घोषणा

मैंने आजाद नेहरू मैनीफैस्टो का पूर्ण रूप से अध्ययन किया है, परन्तु मैं यह नहीं समझ पाया कि इस घोषणा का उद्देश्य क्या है। 'इंडियन नेशनल पार्टी' पहले से ही इस प्रकार के कार्य कर रही थी और स्वराज पार्टी भी धार्मिक एवं साम्प्रदायिक अवगुणों को दूर करने के लिए प्रयत्नशील है। इस नई पार्टी ने यह घोषणा की है कि उसका देश की राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा तथा इसका मूल लक्ष्य सभी जाति एवं सम्प्रदायों में एकता एवं माधुर्य बनाए रखना होगा, परन्तु मेरे विचार में इस पार्टी ने एक त्रुटि यह की है कि जिस राजनीति से इस पार्टी को दूर रखने का संकल्प लिया गया था, उसी का रंग इसके प्रथम सम्मेलन में देखने को मिला है। इस नई पार्टी के उद्देश्य गलत नहीं हैं, परन्तु प्रश्न इस बात का है कि ऐसे व्यक्तियों को कहाँ से लाया जाए जिनका सम्बन्ध किसी जाति अथवा सम्प्रदाय से न हो। मैं यह भी नहीं समझ सका कि ऐसा होने पर पार्टी किस प्रकार से साम्प्रदायिकता से संघर्ष कर सकेगी ? परन्तु यदि वे उन व्यक्तियों को, जो किसी-न-किसी साम्प्रदायिक संगठनों से जुड़े हुए हैं, को निकाल दें तो पार्टी को चलाना संभव नहीं होगा।

इसके अतिरिक्त मैंने यह भी अनुभव किया है कि यह पार्टी दोनों वर्गों (हिन्दू व मुसलिम) को समान महत्त्व देने में असफल रही है। इन्होंने पं. मदन मोहन मालवीय तथा अन्य प्रमुख हिन्दू नेताओं को इस पार्टी में सलाह के लिए आमंत्रित इसलिए नहीं किया, क्योंकि वे हिन्दू सम्प्रदाय से जुड़े हैं। इसके विपरीत हाकिम अजमल खान जो मुसलिम धर्म का कट्टरपन्थी हैं तथा खिलाफत सम्मेलन का अध्यक्ष है, का इस सम्मेलन में स्वागत किया गया। मेरा मानना है कि इस नई पार्टी को कट्टर साम्प्रदायिक व्यक्तियों को महत्त्व नहीं देना चाहिए, अन्यथा यह पार्टी अपने मूल लक्ष्य में सफल नहीं हो सकेगी।

मैं अब अपनी बात को यहीं पर समाप्त करता हूँ और इस पार्टी के आगामी कार्यक्रमों की तब तक प्रतीक्षा करूँगा, जब तक कि इसकी प्रथम सभा जो 19 अगस्त को इलाहाबाद में होनी है, सम्पन्न नहीं हो जाती। इस सभा में पार्टी के नियम एवं उद्देश्य भी प्रतिपादित किए जाने हैं। मेरी हिन्दू तथा मुसलिम, दोनों

ही सम्प्रदाय के व्यक्तियों को यही शुभकामनाएँ हैं कि इन दोनों ही सम्प्रदाय के व्यक्ति एक-दूसरे को सही रूप में समझें एवं आपस में सद्भावना बनाने का प्रयास करें।

[द लिबरेटर, 5 अगस्त, 1926]

कलकत्ता में अंग्रेजी का अध्ययन

एक अंग्रेज व्यक्ति भी इतनी अच्छी अंग्रेजी नहीं सीख सकता है जितना कि एक बंगाली व्यक्ति सीख सकता है। लॉर्ड इरविन की मातृभाषा अंग्रेजी है, परन्तु उन्हें भी अंग्रेजी शब्द 'रिलीजियन' का सही अर्थ सीखने के लिए बंगालियों के ऑफिस में जाना चाहिए। धर्म की परिभाषा लॉर्ड इरविन ने ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के आधार पर इस प्रकार से दी है—"धर्म वह आस्था है जिसमें ईश्वर तथा आध्यात्मिकता के द्वारा मनुष्य की भावनाओं को नियंत्रण में रखा जाता है।" चैम्बर्स ट्वैन्टियस्ट सैनचुरी में धर्म की परिभाषा इस प्रकार दी गई है—"धर्म वह शक्ति है जिसमें पारभौतिक शक्तियाँ होती हैं और जिनके द्वारा मनुष्यों को अपनी जीवनशैली में उच्च आदर्शों का पालन करने की आज्ञा दी जाती है।" परन्तु 'बंगाली' पत्र के सम्पादक के लिए धर्म की इन परिभाषाओं का कोई भी महत्त्व नहीं है। इंग्लिश भाषा के ज्ञाता यह कह सकते हैं कि विद्वान् बंगाली सम्पादक 'रिलीजियन' और 'रिलीजियोसिटी' में अन्तर व्यक्त कर सकता है, लेकिन इसके प्रत्युत्तर में बंगाली कह सकता है कि श्रीमन् को 'रिलीजियोसिटी' का अर्थ भारत में आकर सीखना चाहिए। हमें हाल ही में हुए वाद-विवाद की बात याद है जिसमें कलकत्ता के एक जनरल में दो शब्द 'डिस्टर्ब' और 'डिस्ट्रैक्ट' का अन्तर समझाया गया है। अब हमें 'रिलीजियन' की व्याख्या को समझना है कि उसका वर्तमान में क्या अर्थ है तथा वास्तव में उसका अर्थ क्या होना चाहिए। अब हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि लॉर्ड हार्डिंग ने कलकत्ता क्यों छोड़ा था ? वास्तविकता तो यह थी कि वे इतने वृद्ध हो चुके थे कि वे अब नई चीजों को सीखने में असमर्थ थे।

[द. लिबरेटर, 5 अगस्त, 1926]

छुआछूत हटा दी गई

सूरत में बारडोली एक तालुका है। हमें इस बात की रिपोर्ट दी गई थी कि उस क्षेत्र में छुआछूत का अभिशाप समाप्त कर दिया गया है। सन् 1926 में हमें इस बात की सूचना मिली थी कि अछूतों के बच्चों को प्राथमिक पाठशालाओं में प्रवेश नहीं दिया जाता है, इस पर अधिकारियों ने विद्यालय संचालकों को धमकी दी कि वे यदि हरिजन बालकों को प्रवेश नहीं देंगे तो उनके विरुद्ध कठोर कार्यवाही की जाएगी। जिस कार्य को धर्म के नाम पर सम्पन्न नहीं कराया गया वह अधिकारियों की धमकी से तत्काल पूरा कर दिया गया। हमें इस बात का आश्चर्य है कि पाठशालाओं में हरिजनों के प्रवेश के लिए अधिकारियों के पास इतनी प्रेरणा कहाँ से मिली ? यह एक खुला रहस्य है, वहाँ के संचालकों ने सरकार की इस आज्ञा का स्पष्ट पालन किया। सरकारी पत्रों को भी अनदेखा कर दिया जाता है, परन्तु यहाँ पर इस विषय में ऐसा कुछ नहीं हुआ। यदि बम्बई की सरकार इस बात को गम्भीरता से लेती तो वह प्राथमिक शिक्षण संस्थाओं से अछूतों के प्रवेश की समस्या को हमेशा के लिए समाप्त कर सकती है।

[द लिबरेटर, 5 अगस्त, 1926]

दलित-उद्धार सभा, दिल्ली की अपील

दलित उद्धार सभा की स्थापना 1913 में की गई थी। इसमें दलितों के उद्धार के लिए एक मिशन बनाया गया। सन् 1921 में स्वामी श्रद्धानन्द जी को इस सभा का अध्यक्ष बनाया गया। इस कार्य को सफल बनाने के लिए सेठ जुगल किशोर बिड़ला ने अपना पूर्ण सहयोग दिया। दिल्ली, मेरठ, गुड़गाँव, बुलन्दशहर, अलीगढ़ और मथुरा आदि शहरों में स्वामी जी के पथ-प्रदर्शन में हजारों दलितों का उद्धार किया गया। उनके शराब पीने तथा मीट खाने की आदत को छुड़ाकर उन्हें वैदिक धर्म की पवित्र धारा में प्रविष्ट कराया गया, हजारों दलितों को हिन्दू धर्म छोड़कर अन्य धर्मों में प्रवेश करने से रोकने के अतिरिक्त बड़ी संख्या में उन लोगों को वैदिक धर्म में लाकर शुद्ध किया गया, जो किसी कारणवश अपने मूल धर्म को छोड़कर अन्य धर्म में प्रवेश कर चुके थे। उपरोक्त जनपदों के दलितों की जीवन पद्धति में भी सुधार लाया गया तथा उन्हें अन्य हिन्दू जाति के व्यक्तियों के समान सम्मान दिया गया।

देहली के दलितों के पास अपने रहने के लिए मकान नहीं थे। उन्हें गन्दे इलाकों में किराए के मकानों में दयनीय अवस्था में रहना पड़ता था। इस सभा ने दिल्ली के अधिकारियों के पास जाकर उनसे माँग की कि इन दलितों के लिए एक ऐसा स्थान दिया जाए जहाँ पर इनके लिए एक आदर्श गाँव बनाया जा सके। हमें इस बात की प्रसन्नता है कि अधिकारियों ने हमारी इस बात को स्वीकार कर लिया तथा इस प्रकार का एक भूखंड पहाड़गंज में दिया। यह स्थान दिल्ली में रेलवे लाइन के समीप अजमेरी गेट की तलहटी में था। इस भूखंड पर रहने वाले दलितों को स्वयं अपने निवास गृहों का निर्माण करना होगा। परन्तु इन दलितों को बौद्धिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए एक विद्यालय एवं एक मन्दिर का निर्माण करना आवश्यक समझा गया। अतः मन्दिर तथा स्कूल के निर्माण हेतु 12,500 रुपए का अनुमान लगाया गया। इसमें से स्कूल निर्माण के लिए 6000/- रुपए की आवश्यकता होगी। सरकार 3000/- रुपए की अनुग्रह राशि देगी। शेष 9,500 रुपया जनता के चन्दे के द्वारा एकत्र किया जाएगा।

अछूतों की जीवन पद्धति में सुधार लाने की नितान्त आवश्यकता है। अब

ये दलित स्वयं भी जागरूक हो गए हैं। वर्तमान परिस्थितियों एवं उनसे जुड़ा हुआ सार्थक धर्म किसी को भी यह विश्वास दिला सकता है कि हिन्दू धर्म के लिए अछूतों को हीन भावना से देखना अपमानजनक है। तथाकथित छह करोड़ दलितों की सहायता करना वास्तव में हिन्दू धर्म की ही सहायता करना है। अतः हिन्दुओं से यह प्रार्थना है कि इस पुनीत कार्य को सफल रूप देने के लिए वे अपना पूर्व सहयोग दें तथा यश के भागीदार बनें।

[द लिबरेटर, 5 अगस्त, 1926]

हिन्दुओं को जानना चाहिए

20 जुलाई, 1926 को कोलोनेल वैडग्वुड ने हाउस ऑफ कामन्स में कहा था—"मुसलमान लोग अधिक पौरुष वाले व्यक्ति हैं, जबकि इनके स्थान पर हिन्दुओं का पौरुषत्व कम होता है। हिन्दुओं को अपना पौरुष बढ़ाना चाहिए। हम मुसलमानों के पौरुष की प्रशंसा करते हैं हिन्दुओं को भी मुसलमानों से प्रेरणा लेनी चाहिए। पं. मदन मोहन मालवीय जी को अपने हिन्दू भाइयों को शारीरिक व्यायाम एवं सैनिक अनुशासन की शिक्षा देनी चाहिए। इसके द्वारा उनमें आत्मसम्मान तथा सुरक्षा बढ़ेगी तथा उनके मन से गुलामी की भावना समाप्त होगी। इसके द्वारा वे मुसलमानों के प्रति घृणा की भावना तथा असम में कत्लेआम की भावना को भी प्रोत्साहित नहीं करेंगे। वर्तमान समय में देश में जो अव्यवस्था फैल रही है वह देश के लिए दुर्भाग्य की बात है। इसी अव्यवस्था से स्वतंत्रता प्राप्त करने के मार्ग में अवरोध आ गया है, परन्तु मैं देश की आजादी की सफलता से हतोत्साहित नहीं हूँ। अच्छा तो यही है कि दोनों ही समुदाय के व्यक्ति एक-दूसरे की भावनाओं की कद्र करें। दोनों ही समुदाय के व्यक्तियों को यह सीखना चाहिए कि एकता में बहुत बड़ी शक्ति निहित है।

[द लिबरेटर, 27 अगस्त, 1926]

गाँवों की उन्नति

मि. एल. लायड जॉर्ज ने ग्रेट ब्रिटेन के बारे में कहा था—"मैं उन व्यक्तियों में से हूँ जो इस बात का विश्वास करते हैं कि किसी भी देश की वास्तविक स्वतंत्रता उस देश के ग्रामीण इलाकों की उन्नति पर निर्भर करती है। जो राष्ट्र शक्तिविहीन हो जाते हैं उन्हें पुनः ऊर्जा देने की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार से जो राष्ट्र अपने ग्रामीण क्षेत्रों की उन्नति पर ध्यान नहीं देते, उनका विनाश हो जाता है। हमने भौतिकवाद के चक्कर में पड़कर ग्रामीण क्षेत्रों की ओर ध्यान देना बन्द कर दिया है। निस्संदेह ही हमने भौतिकवाद में सफलता प्राप्त कर ली है, परन्तु हमने ग्रामों के उद्धार पर ध्यान न देकर एक बहुत बड़ी भूल की है। गाँव से हर प्रकार की शक्ति को लेकर हमने खानों में, फैक्ट्रियों में, कस्बों में तथा स्लम में लगा दी है जिससे ग्रामीण इलाके ऊर्जाहीन हो गए हैं। देश की उन्नति के लिए यह एक बड़ी भूल है। मुझे आशा है कि ऐसा भी समय आएगा जब सभी दलों के व्यक्ति इस बात का अनुभव करने लगेंगे कि देशवासी इस गलती को समझेंगे और वे देश के विकास के लिए गाँव को प्राथमिकता देंगे।"

[द लिबरेटर, 23 सितम्बर, 1926]

स्वराज्य

आस्ट्रेलिया के सीनेटर रैड् की हम कुछ पंक्तियाँ उद्धृत करते हैं—"पिछले वर्ष मैंने भारत, जो 32 करोड़ की आबादी वाला देश है, का भ्रमण किया था, तब मैंने यह महसूस किया कि हमें अपने देश की आबादी बढ़ानी चाहिए भारत अपनी जनसंख्या का भार सरलतापूर्वक उठा सकता है तथा जीवन की समस्त मूलभूत आवश्यकताओं को उन्हें उपलब्ध करा सकता है। परन्तु अंग्रेजों के कुशासन के कारण भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या की समस्या उत्पन्न हो गई है। यह संसार का सबसे अधिक धनी देश है। इस देश में उस समय भी भूमि पट्टे की प्रथा तथा सभ्यता थी जिस समय ब्रिटिश राज्य के व्यक्ति असभ्य थे। भारत में अंग्रेजों के आने से पूर्व निर्धनता नहीं थी। मैं भारत में स्वराज्य का पक्षधर हूँ। भारत एशिया महाद्वीप की माता है। यहाँ की जनसंख्या पूरे विश्व की जनसंख्या की 1/5 है। भारत को स्वराज्य देने का अर्थ है आस्ट्रेलिया को सुरक्षा देना। भारत में इस समय जितने भी प्राकृतिक साधन हैं वे सभी अंग्रेज़ों के अधीनस्थ हैं। भारत की शक्ति के बिना ब्रिटिश साम्राज्य विश्व में अपना उचित स्थान नहीं बना सकता है। अतः अंग्रेजों को चाहिए कि वे अपने साम्राज्य के अन्तर्गत ही भारत को स्वराज्य का दर्जा प्रदान करें।

[द लिबरेटर, 23 सितम्बर, 1926]

अछूतों के लिए शिक्षा

अधिकांश प्रान्तों ने दलित वर्गों के लिए सूचना भेजी है कि उन्होंने दलितों के लिए अनेक प्रकार की छात्रवृत्तियों का प्रबन्ध किया है। उदाहरणार्थ बिहार और उड़ीसा में अछूतों के लिए 51 विद्यालय खोले गए हैं। इन विद्यालयों में दलितों की 50 प्रतिशत से कम उपस्थिति नहीं हुई है। इससे भी अधिक सन्तोषजनक बात यह है कि सामान्य विद्यालयों में भी इतने ही दलितों ने प्रवेश लिया है। उदाहरणार्थ, मद्रास में आदि-द्रविड़ और आदि आंध्र के विद्यालयों में दलित छात्रों की संख्या 13,000 तक पहुँच गई है।

[द लिबरेटर, 23 सितम्बर, 1926]

अछूतों के लिए शिक्षा

दलित वर्ग के नेता मि. आर. वीरियन एम.एल., ने मद्रास लेजिस्लेटिव काउंसिल में निम्न प्रश्न पूछे, और मान्य शिक्षामंत्री ने तदनुसार उत्तर दिए :

प्र. 1. क्या सम्माननीय शिक्षामंत्री इस बात का उत्तर देंगे कि जी.ओ. नं. 756 के अनुसार। मई 1926 तक पंचायत विद्यालय खोलने के लिए अब तक कितने प्रार्थना पत्र प्राप्त हो चुके हैं।

2. अब तक उनमें से कितने पंचायत विद्यालय आरम्भ किए जा चुके हैं,

3. इन पंचायत स्कूलों को संचालित करने के लिए कौन सी प्रबन्ध समिति कार्य कर रही है,

4. क्या इसके लिए कोई अधिसूचना जारी की गई है कि इनमें प्रवेश के लिए जाति का कोई बन्धन नहीं होगा और जी.ओ. नं. 329 (शिक्षा) में गृह मंत्रालय के अनुसार 17 मार्च, 1919 तक सभी जाति के छात्रों को बिना भेदभाव के प्रवेश दिया जाएगा,

5. दलित छात्रों के लिए अब तक कितने पंचायत विद्यालय खोले जा चुके हैं, और

6. इन पंचायत विद्यालयों में किनके द्वारा अध्यापकों की नियुक्ति की गई है ?

इसके उत्तर में माननीय शिक्षामंत्री ने कहा कि–

(1) अब तक 793 प्रार्थना पत्र प्राप्त हो चुके हैं।

(2) 300 पंचायती विद्यालयों को खोलने की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है। आज तक की तिथि तक 262 विद्यालय खोलने की स्स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है,

(3) संबंधित पंचायतों के द्वारा ये विद्यालय संचालित हो रहे हैं। विभाग के इंस्पैक्टरों के द्वारा इन विद्यालयों का निरीक्षण होता है। इन विद्यालयों की मान्यता सम्बन्धित पद की काउन्सिल के द्वारा दी जाती है। पंचायत के जनरल रजिस्ट्रार के द्वारा इन विद्यालयों के लिए आर्थिक सहायता स्वीकृत की जाती है।

(4) इनमें से एक शर्त रजिस्ट्रार जनरल के द्वारा यह भी है कि इन विद्यालयों की बिल्डिंग की देखभाल वहाँ की सम्बन्धित पंचायत करेगी। सरकार ने भी इसी के समान नियम बनाए हैं।

(5) इन पंचायती विद्यालयों में एक स्कूल नार्थ आरकोट जनपद के बन्दीवाश तालुक में मारटांडु नामक स्थान पर खोला गया और दलितों के लिए कुछ स्कूल रामनंद जनपद के श्रीविलिपुत्तर तालुका में मनसापुरम् पंचायत के द्वारा खोले गए। दो विद्यालय आदि-द्रविड़ों के लिए खोलने की आशा है। इनमें से एक मेल शीशामंगलम, जो नॉर्थ आरकोट डिस्ट्रिक्ट में चैयर तालुका नाम के स्थान पर खुलेगा तथा दूसरा स्कूल रामनद जनपद के श्रीविलीपुत्तूर तालुका में पैरी-आपोट्टलपट्टी में खुलने की आशा है। यह स्कूल मुख्य रूप में आदि-द्रविड़ों के लिए होगा। बाकी छात्रों को सामान्य विद्यालयों में दाखिला मिल जाएगा।

(6) इन विद्यालयों में अध्यापकों की नियुक्ति का अधिकार सम्बन्धित पंचायतों को दिया गया है तथा इन नियुक्तियों की स्वीकृति वहाँ के सम्बन्धित तालुक बोर्ड के अध्यक्ष को दी गई है। यदि पंचायत एवं बोर्ड का अध्यक्ष किसी की नियुक्ति पर सहमत नहीं होते तो उनका केस रजिस्ट्रार जनरल को भेज दिया जाता है जिसका निर्णय अन्तिम एवं मान्य होता है।

[द लिबरेटर, 30 सितम्बर, 1926]

एक दुखान्त घटना

स्वामी सत्यव्रत की मृत्यु एक महान् क्षति है। इनकी मृत्यु से भारत के दक्षिणी तट के रहने वाले हरिजनों के लिए एक और भी बड़ी क्षति है और मालावार के टियास के क्षेत्र के व्यक्तियों के लिए इस महामानव की मृत्यु अपूर्णीय क्षति है। स्वामी सत्यव्रत श्रीनारायण गुरुस्वामी, जो टियास से मालाबार और ट्रावनकोर के मुखिया थे, के दाएँ हाथ थे। इस क्षेत्र के दलित वर्ग ने इस महापुरुष का विशेष सम्मान से स्वागत किया था जिसके लिए वास्तव में ये अधिकारी थे, क्योंकि इन्होंने इन व्यक्तियों के लिए बहुत अधिक कार्य किए थे। उनकी मृत्यु पर 20 करोड़ से अधिक व्यक्तियों ने शोक व्यक्त किया। उनका जीवन प्रेम और बलिदान से भरपूर था। इनका जन्म एक धनाढ्य नैयर परिवार में हुआ था। उन्होंने अपने उच्च जाति और वंश की मर्यादाओं को त्याग कर दलितों की सेवा करना अपना परम कर्तव्य समझा। जब वे अपनी वृद्ध माता की सेवा कर रहे थे, उसी समय वे मियादी बुखार से पीड़ित हो गए। दलित अछूतों की उन्नति के लिए उस समय स्वामी सत्यव्रत जैसे बहुत ही कम व्यक्ति थे। उनकी मृत्यु एक ऐसे समय में हुई जब दलित अछूतों के लिए उनकी विशेष आवश्यकता थी। वास्तव में अछूतों का उद्धार राष्ट्र का उद्धार था। इसीलिए उनकी मृत्यु पर दलितों के लिए ही क्षति नहीं है, अपितु यह तो पूरे ही राष्ट्र की क्षति है।

[द लिबरेटर, 30 सितम्बर, 1926]

महात्मा गांधी का जन्म दिन

महात्मा गांधी का जन्म दिवस का मनाया जाना दैनिक समाचार पत्रों में उत्साह हीनता से छपा था। इस अवसर पर प्रत्येक स्थान पर बहुत कम लोगों ने इसमें भाग लिया। जब महात्मा गांधी जी दिल्ली आए तो वहाँ के अध्यक्ष ने उनकी उपस्थिति और उनके जन्म दिन के उत्सव पर आए हुए व्यक्तियों की तुलना की। उनके जन्म दिवस पर बहुत ही कम व्यक्तियों ने भाग लिया था। वहाँ पर थलबल की गिरफ्तारी के बाद प्रथमबार जब वे देहली में आए तो सड़कों के दोनों ओर लगभग डेढ़ लाख व्यक्तियों ने खड़े होकर उनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया। ये संभ्रान्त व्यक्ति यह भूल गए थे कि भीड़ किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की महानता का प्रतीक नहीं है, अपितु, उस व्यक्ति के विचार एवं आदर्श को अपनाने वाले व्यक्तियों के द्वारा उनकी पहचान मानी जाती है। इन्हीं आदर्श विचारों के माध्यम से उस महापुरुष का इतिहास बनता है। इटली के युद्ध में जब नेपोलियन दि ग्रेट को महान् सफलता मिली तो उसकी सभी जगह जय-जयकार हो रही थी। उस समय उसने कहा था, कि जब उसके विरुद्ध मृत्यु की सजा सुनाई जाएगी तो उसे फाँसी लगते हुए देखने के लिए उससे भी अधिक संख्या में व्यक्ति एकत्र हो जाएँगे।

जनता की भीड़, महात्मा गांधी, जो एक आध्यात्मिक पिता है, के जन्म दिवस को मनाने में कोई उत्साह नहीं दिखाती है। वे तो भौतिक साधनों के माध्यम से सिपाहियों के द्वारा खून बहाकर विजय प्राप्त करने को ही महत्त्व देते हैं। जब महात्मा गांधी जी ने उनकी इस पाशविक इच्छाओं के विपरीत अहिंसा एवं शांति का मार्ग सुझाया तो उनकी समझ में गांधी जी की बात नहीं आई। परन्तु सिद्धान्तों और विचारों के दृढ़ महात्मा गांधी जी को पूर्ण विश्वास था कि वे सत्य, अहिंसा एवं सामाजिक न्याय के द्वारा इन व्यक्तियों को समझाने में अवश्य ही सफल हो जाएँगे। जब मैं पानीपत से दिल्ली की यात्रा करके लौट रहा था, मैंने इस महापुरुष के 58वें जन्म दिवस पर रेलवे के कम्पार्टमेन्ट में बैठकर प्रार्थना की कि ईश्वर उन्हें वैदिक धर्म के अनुसार स्वीकृत सौ वर्ष या इससे भी अधिक की आयु प्रदान करे और साबरमती आश्रम में वे ज्ञान ज्योति की धारा को प्रवाहित करते रहें।

[द लिबरेटर, 7 अक्टूबर, 1926]

हिन्दू मिशन

जब मैंने हैड क्वार्टर 67, कालिज स्ट्रीट, कलकत्ता में 'हिन्दू मिशन' की स्थापना के बारे में सुना तो मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। इस संस्था का मुख्य कार्यक्षेत्र असम में तथा बंगाल डिस्ट्रिक्ट के पास बार्डर क्षेत्र में था। इस मिशन ने बहुत ही दुर्लभ कार्य अपने हाथों में लिया। इसकी आवश्यकता समझते हुए क्षेत्रीय हिन्दुओं ने इनके कार्यों में अपना पूर्ण सहयोग दिया। इस संस्था ने पहाड़ के व्यक्तियों की जीवन-पद्धति में सकारात्मक परिवर्तन लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। ऐसा कार्य ईसाई अथवा अन्य संस्थाओं ने कभी नहीं किया था। इस संस्था का कार्य पहाड़ी क्षेत्रों के व्यक्तियों के जीवन में सुधार लाना था। इस सभा का मुख्य कार्य अछूत प्रथा, जो हिन्दुओं के लिए अभिशाप तथा क्षय रोग के समान थी, को समाप्त करना था। जो व्यक्ति ईसाई धर्म से लौटकर अपने हिन्दू धर्म में प्रवेश करना चाहते थे, परन्तु दुर्भाग्यवश कट्टरपन्थी हिन्दुओं ने ऐसा करने की उन्हें अनुमति प्रदान नहीं की थी, उन्हें हिन्दू धर्म में प्रविष्ट कराना तथा उनका पुनरोद्धार करना था। इस संस्था के अन्य कार्य–पुराने मन्दिरों का जीर्णोद्धार, नए मन्दिरों का निर्माण, स्कूल, पुस्तकालय, दवाखाने, शरणाश्रम, अनाथालय, इत्यादि खोलना था। इसके अतिरिक्त यह संस्था समाज के उद्धार के लिए पुस्तकें भी छापती थी।

इस संस्था ने अपने उद्देश्यों में आशातीत सफलता प्राप्त की। स्वामी सत्यानन्द जी इस संस्था के संस्थापक अध्यक्ष थे। इन्होंने थोड़े समय में ही इस संस्था के लिए बहुत अधिक कार्य किए थे। उनकी आय का स्रोत बहुत ही कम था क्योंकि इनको आर्थिक सहायता करने वाले ब्रह्मचारी एवं स्वयं सेवक ही थे। छह माह 1926 में जनवरी से जुलाई तक की अल्प अवधि में उन्होंने 51 ईसाई धर्म अपनाए हुए व्यक्तियों को हिन्दू धर्म में परिणित किया। उन्होंने 107 हिन्दुओं को जो शरणाश्रम चला रहे थे, प्रोत्साहन दिया। इन्होंने गोपालगंज, मैमन सिंह, सुसौंग, गुहाटी, शिलांग, हिबूगढ़, जोरहाट और तेजपुर में अपने केन्द्र स्थापित किए। शिलांग में इन्होंने खासी जाति के लोगों के लिए बंगाली पढ़ाने का प्रबन्ध किया। इस कार्य के लिए इन्होंने संघ खासी स्कूल में एक बंगाली

अध्यापक भी नियुक्त किया। इस क्षेत्र में इन्होंने बहुत अधिक कार्य किए। अतः यह आशा की जाती है कि बंगाली व्यक्ति भी इस मिशन में सक्रिय होकर कार्य करेंगे।

[द लिबरेटर, 21 अक्टूबर, 1926]

सभी हिन्दुओं के लिए एक मन्दिर

जैसा कि अभी हाल में ही गणपति उत्सव में घोषित किया गया है कि बम्बई की मातुंगा हिन्दू सभा एक मन्दिर का निर्माण कराना चाहती है इस मन्दिर में हिन्दुओं के लिए एक व्यायामशाला भी होनी चाहिए। जिसमें जाति-भेद अथवा छुआछूत न हो। हिन्दू समाज के लिए इस प्रकार की संस्था के लाभ गिनवाने की आवश्यकता नहीं है। इस भूक्षेत्र में अन्य कार्यक्रम भी किए जा सकते हैं। शहर के उत्तर भाग में ऐसा कोई भी सामान्य स्थल नहीं है जहाँ पर पाँच सौ से अधिक व्यक्ति एक साथ बैठ सकें। जैसा कि इस मन्दिर की योजना से विदित होता है कि हिन्दू महासभा का कोई भी कार्यक्रम ऐसा नहीं होगा जो यहाँ पर सम्पन्न न किया जा सके। पीड़ित व्यक्ति भी इस स्थल पर उतने दिन तक निवास कर सकता है, जब तक कि इस सभा के व्यक्ति उनको रहने के लिए उचित स्थान प्राप्त न करा दे। इस मन्दिर के सभागार का प्रयोग स्थायी रूप में दलित एवं पीड़ित व्यक्तियों के लिए रात्रि में प्रौढ़ शिक्षा की कक्षाएँ लगाने के लिए भी किया जा सकता है।

बम्बई के सुधार ट्रस्ट के द्वारा उत्तर दिशा में लगभग 2000 गज के क्षेत्रफल का एक भूखंड प्राप्त किया जा सकता है। इस भूखंड पर मन्दिर, व्यायामशाला, पुस्तकालय कक्ष, निरीक्षकों के कक्ष हों। इन सभी की लागत 25000 रु. होगी। इस भूखंड में एक बार में लगभग 1000 व्यक्ति एकत्रित हो सकेंगे। इस पूरी योजना के सामान्य खर्च, जिसमें लीज रैन्ट, नगरपालिका के विभिन्न कर, तथा निरीक्षक खर्च लगभग 2000 रु. प्रतिवर्ष होंगे। इस योजना का प्रबन्ध एक ट्रस्टी बोर्ड के हाथों में होगा। इस बोर्ड की नियुक्ति निम्न प्रकार से होगी।

अ–अध्यक्ष बोम्बे प्रोविन्स हिन्दू सभा।

ब–हिन्दू सभा द्वारा चुने हुए प्राविन्सियल कमेटी के दो सदस्य।

स–वे धनदाता जिन्होंने 25 रु. से अधिक दान दिया है, के द्वारा चुने हुए दो व्यक्ति।

द–हिन्दू सभा मातुंगा ब्रांच के चुने हुए तीन व्यक्ति।

मि. आर. जयाकार, बेली लखामसी, भागवन्त्रो, वैरेलकर, एस.के. बोले,

जिवराज जी, जैन्से, आर.ए. पैरुलकर, जी.एल. खोटके, विशालराव, डी.के. माथुर, एम.बी. उड़गानकर व अन्य व्यक्तियों ने इस सुझाव पर अपने हस्ताक्षर किए।

[द लिबरेटर, 18 नवम्बर, 1926]

गुरु नानक देव

यह हमारा कर्तव्य है कि आज हम सिख धर्म के संस्थापक गुरुनानक देव की जन्म तिथि, जो 19 तारीख को पड़ रही है, पर अपनी मानवीय भावनाएँ उनको अर्पित करें। हमारे सम-सामयिक पत्र 'पंजाब' ने खास निरंकारी अंक इस अवसर पर निकाल कर हमें भिजवाया है। यह हम अपना वजूद समझतें हैं कि इन्सानियत की भावनाओं को उन्होंने पंजाब के लोगों तक पहुँचा कर उन्हें नई जिन्दगी का पाठ पढ़ाया। सिख धर्म एक कट्टर विश्वास का नाम है तथा अकाली सिख इसकी शिक्षाओं को आगे बढ़ाने में लगे हुए हैं–''सिख भाइयों को इस अवसर पर हमारी हार्दिक बधाइयाँ। इस अवसर पर गुरुनानक देव के प्रति हम अपनी भावनाएँ प्रकट करते हैं।

[द लिबरेटर, 18 नवम्बर, 1926]

घनश्याम दास बिरला

10 नवम्बर 1926 को टॉउन हॉल बनारस में बाबू शिवप्रसाद गुप्ता की अध्यक्षता में पंडित मोतीलाल ने घनश्याम दास बिरला के बारे में कहा—"मैं बिरला जी के प्रति बहुत अधिक आदर रखता हूँ। उन्होंने देश की बहुत बड़ी सेवा की है और बहुत अधिक धन समाज की भलाई के लिए लगाया है। हम उन्हें उतना सम्मान नहीं दे पा रहे हैं। बिरला जी फैजाबाद से खड़ा होना चाहते हैं, लेकिन मालवीय जी ने उन्हें इसकी अनुमति नहीं दी। मैंने उन्हें यह कहते हुए सुना है। मैं बिरला जी के फैजाबाद से खड़े होने पर तभी मंजूरी दूँगा जब रणंजय सिन्हा स्वराज पार्टी छोड़कर मालवीय जी के साथ मिल जाएँ। यह सच नहीं है। मेरी पार्टी वहाँ से चुनाव नहीं लड़ रही है, यदि कोई वहाँ से है तो मैं उसे वहाँ से हटा दूँगा। मैं बिरला जी के लिए वहाँ की जगह अब भी खाली कर दूँगा यदि वे चाहें तो।"

यह वक्तव्य 'इंडियन डेली टेलीग्राफ' के 12 तारीख (डाक संस्करण 13 तारीख) के अंक से लिया गया है। इस अंक में प्रकाशित पंडित मोतीलाल के भाषण के उक्त अंश के गलत होने की कोई सम्भावना नहीं है। सेठ बिरला के गुणों को इतनी स्पष्टता से मंजूर किया गया है हम पंडित जी से उनकी उम्मीदवारी के खिलाफ पार्टी के मत को देखते हुए विवाद नहीं करना चाहते। हम चाहते हैं तथा विश्वास दिलाते हैं कि वे हमारे इस दृष्टिकोण को समझने में अन्यथा बात नहीं लेंगे।

[द लिबरेटर, 18 नवम्बर, 1926]

दलित वर्ग, शराब और मिशन

भारतीय काउंसिल के सदस्य मि. एम.एन. मलिक ने ईस्ट इंडियन एसोसिएशन की मीटिंग में विदेशी शराब के कुछ कटु सत्यों का रहस्योद्घाटन किया। उन्होंने कहा, "आपका यह कहना गलत है कि हमने इस देश से अफीम के व्यापार को भारत से हटाकर भारतीयों का मौलिक स्तर ऊँचा किया है, परन्तु आप शायद यह नहीं जानते हैं कि आप लाखों टन विदेशी शराब भारत में मँगाते हैं और इस शराब को भारत के गाँव तक पहुँचाकर लोगों को पीने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। इस प्रकार यह शराब अफीम से भी अधिक भारतीयों को नुकसान पहुँचा रही है। इस प्रकार हम इस बात पर विश्वास नहीं कर सकते कि अंग्रेजों ने भारत से अफीम का व्यापार समाप्त करके कोई नैतिकता का परिचय दिया है।"

ईसाइयों ने इस पर अपनी टिप्पणी करते हुए कहा था–"यद्यपि मि. मलिक ने इस कार्य में कुछ प्रावधान दिया है, परन्तु वास्तविकता यह है कि भारत के पूर्वी क्षेत्रों में शराब के प्रोत्साहन से हमारे राष्ट्र के सम्मान को ठेस लगी है जिसे नकारा नहीं जा सकता है। क्या हम यह नहीं जानते हैं कि ईसाई धर्म के व्यक्ति भारतीय व्यक्तियों का धर्म परिवर्तन कर रहे हैं और उनके द्वारा छोड़े हुए धर्म-एजेन्ट्य यहाँ के मूल निवासियों का विनाश कर रहे हैं ?

इस सम्बन्ध में निम्न विरोधाभास उल्लेखनीय है–"मालाबार के दलित व्यक्तियों की असमर्थता सर्वविदित है। यहाँ पर पिछले दो वर्षों से ईसाई धर्मावलम्बी तथा मुसलिम धर्म गुरु यहाँ के आदिवासियों को अपने-अपने धर्म के अनुसार उनका धर्म परिवर्तन कर रहे हैं। प्रारम्भ में उन्हें भारत के हिन्दू धर्मावलम्बियों के विरोध का सामना करना पड़ा। अतः कुछ समय के लिए उन्हें धर्म परिवर्तन के कार्य को स्थगित करना पड़ा। लेकिन जब सब कुछ शांत हो गया और उनके विरोधी वहाँ से चले गए तो उन्होंने पुनः धर्म परिवर्तन का कार्य शुरू कर दिया। हमें इस प्रकार की रिपोर्ट समय-समय प्राप्त हो रही है।

हमें समाचार प्राप्त हो रहे हैं कि हिन्दुओं का लगातार धर्म परिवर्तन हो रहा है। यह जानकारी एक सूचना का विषय है। अधिकांश धर्म परिवर्तन करने वाले ये व्यक्ति अपने समुदाय के प्रभावशाली व्यक्ति हैं।

हिन्दू मिशन के स्वामी सत्यानन्द जी ने उन व्यक्तियों के विषय में बताया है जिन्होंने की संख्या में ईसाई धर्म को ग्रहण कर लिया है।

"हिन्दुओं को यह बात जाननी चाहिए कि ये जाति यदि हिन्दू समुदाय में शामिल कर ली जाए तो भारत के पुनरोद्धार के लिए ये रीढ़ की हड्डी बन सकते हैं।

[द लिबरेटर, 25 नवम्बर, 1926]

विधवा-विवाह

विधवा-विवाह सभा, लाहौर (पंजाब) से सूचना प्राप्त हुई है कि पूरे भारत में इस संस्था के द्वारा अक्टूबर 1926 में विभिन्न केन्द्रों में 202 विधवाओं के पुनः विवाह हुए हैं। वर्तमान में जनवरी से लेकर अक्टूबर 1926 तक कुल 2406 विवाह हो चुके हैं–जिनका विवरण निम्न है–

(1) **जाति के अनुसार**–इन विवाहों में ब्राह्मणों के 443, खत्री 315, अरोड़ा 429, अग्रवाल 318, कायस्थ 87, राजपूत 217, सिक्ख 199, मिश्रित 398 हुए। इस प्रकार कुल मिलाकर 2406 विवाह हुए।

(2) **प्रान्तों के अनुसार**–पंजाब और एन.डब्ल्यू., एफ.पी. 1462, सिन्ध 163, देहली 75, यू.पी. 534, बंगाल 96, मद्रास 7, बम्बई 6, सी.पी. 8, असम 6, बिहार और उड़ीसा में 49। इस प्रकार इन सभी प्रान्तों में 240.6 विवाह सम्पन्न हुए।

(3) इस शुभ कार्य के लिए अक्टूबर मास में 14 रु. दान स्वरूप प्राप्त हुए और पूरे वर्ष में 1885 रुपए प्राप्त हुए।

[द लिबरेटर, 25 नवम्बर 1926]

छुआछूत उद्धार

दयानन्द दलित उद्धार मंडल, पंजाब, होशियारपुर के लाला सन्त सिंह, उपदेशक की प्रेरणा के द्वारा तथा अन्य हमीरपुर तहसील, डिस्ट्रिक्ट काँगड़ा के निवासी थे, को वैदिक धर्म में परिवर्तन किया गया। उनका अछूतोद्धार किया गया तथा उन्हें हिन्दू जातियों के साथ समाज व सम्मान प्राप्त होने लगा। यह एक सुखद आनन्द का विषय है कि कट्टरपन्थियों ने इस कार्य का कोई विरोध नहीं किया। इन सभी व्यक्तियों को पवित्र जनेऊ भी धारण कराए गए।

जम्मू राज्य के डूमों के मध्य महासभा के अध्यक्ष श्री सतपाल जी महाराज पिछले दो माह से कार्य कर रहे हैं। उनके अथक प्रयास और सार्थक उपदेशों से 177 डूमों को वैदिक धर्म में परिवर्तित किया गया। राजपूतों के विरोधी होने पर भी इन व्यक्तियों ने वैदिक धर्म को स्वीकार करना उत्तम समझा और इस प्रकार उनकी सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति हुई। इस मंडल की इच्छा है कि वह जम्मू राज्य में अपने दल के सदस्यों की शक्ति को बढ़ाए और इस राज्य में लगभग 2 लाख अछूतों का पुनरोद्धार करके अपने अधूरे कार्यों को पूरा करे, परन्तु इस पुण्य कार्य में धन की कमी ने बाधा उत्पन्न कर दी। बुद्धिजीवी हिन्दुओं को इस कार्य के महत्त्व को समझना चाहिए और इस प्रकार मंडल को शक्ति प्रदान करनी चाहिए।

[द लिबरेटर, 9 दिसम्बर, 1926]

एक अद्वितीय विवाह

विधवा-विवाह सहायक सभा, लाहौर, के अन्तर्गत 24 नवम्बर, 1926 के शुभ अवसर पर पंजाब के एक क्षत्रिय मि. लाला मथुरा दास सहगल ने बनारस की एक विधवा ब्राह्मणी का विवाह सम्पन्न कराया। विवाह सनातन धर्म की रीति के अनुसार ही सम्पन्न हुआ। विवाह सम्पन्न होने के पश्चात् सर गंगाराम ने सभी उपस्थित लोगों को मिठाइयाँ बाँटी तथा दुलहिन को 25 रुपए मूल्य के वस्त्र उपहारस्वरूप दिए।

[द लिबरेटर, 2 दिसम्बर, 1926]

शान्ति देवी-केस

आर्यसमाज के सामने असगरी बेगम का धर्म परिवर्तन का केस आया। जिसे मुसलिम वर्ग ने अपराध की संज्ञा दी। शिकायतकर्ताओं ने श्रद्धानन्द संन्यासी सहित अन्य लोगों को इस केस में अभियुक्त बनाया था, परन्तु न्यायाधीश महोदय ने इन सभी व्यक्तियों को दोषमुक्त ठहराया क्योंकि आई.पी.सी. की अनेक धाराओं के अन्तर्गत इन अभियुक्तों पर कोई भी धारा लागू नहीं होती। असगरी बेगम ने धर्म परिवर्तन के बाद अपना नाम शान्ति देवी रख लिया था। इस महिला के केस में मजिस्ट्रेट ने अपने निर्णय में कहा कि शान्ति देवी अपने बच्चों को मातृत्व प्रेम के वशीभूत स्वयं लेकर आई हैं। अतः इन बच्चों को रखना उस महिला का न्यायसंगत अधिकार है। अतः एसोसिएशन प्रेस के द्वारा दिया हुआ निर्णय का सन्देश यह सिद्ध करता है कि इसमें बनाए हुए अभियुक्त दोषी नहीं है।

[द लिबरेटर, 9 दिसम्बर 1926]

परिशिष्ट

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे

"ہم سب آپس میں مترہ بھاو سے برتیں" "ایشوریہ نیم کا پالن"

اُدیش

اخبار

ست دھرم پرچارک

نیم

اُردو سد्धर्म प्रचारक के मुख पृष्ठ की छवि।

نمبر ۲۵ | مورخہ ۲۸ ستمبر ۱۸۹۴ء مطابق ۱۴ اسوج سنہ ۱۹۵۱ جالندھر | جلد ۶

ایڈیٹوریل نوٹس

لالہ کشمیری لال صاحب دینانگر نواسی کی چٹھی پچھلے اخبار میں ہمارے پاٹھکوں نے پڑھی ہوگی۔ اسوقت جہاں جہاں ماس پرچارکوں کی اصلیت بخوبی پُرشوں کو معلوم ہوئی ہے ان کو انسے نفرت ہوگئی ہے۔ آخر ست کی جے ہوتی ہے۔ بہت سے مقامات میں لوگوں کو بالکل اندھیرے میں رکھا گیا ہے سنا ہے کہ لوگ جلدی انکی اندرونی آریہ سماج کو برباد کرنیوالی پالیسیوں سے واقف ہونگے۔

ماس پرچارکوں کی جب کچھ چال میں بخوبی پُرش نہیں آتے۔ تو وہ جھٹ گالی گلوچ پر آمادہ ہو جاتے ہیں۔ کوئیٹہ کا حال معلوم ہو چکا ہے۔ بشنو کی کا سر دائی ظاہر ہے۔ اب وزیر آباد سے لالہ کرمچند جی جو گویا ایسا معلوم ہوتا ہے۔ کہ ماس پرچارکوں سے ہمدردی رکھتے ہیں۔ گالی گلوچ کی برشا وہاں کے ممبروں پر کرتے ہیں۔ افسوس مرتا کیا نہ کرتا

لدھیانہ میں حد درجہ کا اتیاچار کرنے کے بعد جب ناکامیاب ہوئے۔ تو وہی مہاتما پارٹی کو دوش دینا شروع کر دیا۔ ماس پرچارکوں کی عجیب حالت ہے۔ اینپر وہی مثال صادق آتی ہے۔ کہ مارتے بھی جانا اور روتے بھی جانا۔ ہمکو اچھی طرح سے معلوم ہے۔ کہ جو جو ناجایز کوششیں سکاریاں انکے چیلے معضلات میں کرتے ہیں۔ اگر وہ ظاہر ہو گئیں۔ تو لوگ حیران ہوں مگر جب ناکامیاب ہوتے ہیں تو پھر مہاتما پارٹی کا نام لیکر چلانے لگتے ہیں۔

ماس پرچارکوں کے چیلے۔ ہم نے حیرانگی سے معلوم کیا۔ کہ بعض وقت یہہ بھی کہدیتے ہیں کہ ہم تو ماس خور کو پاپی سمجھتے ہیں۔ مگر خیر فلاں شخص کو سماج میں رہنے دیا جاوے۔ کیونکہ وہ پرچار کر رہے ہیں۔ ایسے لوگوں میں بعض ایسے اشخاص ہیں۔ جو بعض مقامات میں کٹّے چیلے مشہور ہیں۔ کچھہ دیر تک باتیں کرنے کے بعد یہہ لوگ ضد میں آکر ماس کو جایز بھی بتلا دیتے ہیں۔ ہم ایسے لوگوں کی حالت پر حیران ہوتے ہیں اور افسوس کرتے ہیں۔

ہم ماس کا پرچار کہاں کرتے ہیں۔ یہہ فقرہ بہت دفعہ ماس پرچارکوں کے ترکاری مزاج دوست و اخبار لکھا کرتے ہیں۔ ناظرین سبھا پرشن جو بلبھ بہار ستہ سدھار نامی سے چھپا ہے۔ ملاحظہ فرماویں اور معلوم کریں۔ ماس کے کھنڈن کی دونیوں کو کس طرح وہاں بدلا ہوا ہے۔ مشاہیر میں جگت سنگھ کی کتاب پنچ نیر سے ظاہر ہوتا تھا۔

بعض ایسے بھائی بھی ہیں جو یہہ کہتے ہیں کہ اگر لالہ منشی رام جی ہمیں منہ سے یہہ کہدیں کہ ماس کھالو تو ہم کھالیں گے۔ ایسے لوگ کچے دیکھے پیر پرن تھے۔ واہ گورو پرستو تم کیا کیا نہ کروگے۔

پربھان پرتی ندھی سبھا کی کونسل یا شرا کو پڑھکر ماس پرچارک آرگن چلاتا ہے۔ کہ یہہ دیکھو گورو پرستی یہہ دیکھو انکی ہوتری کی چالیں۔ پیارے بھائیو تم یاترا ہی کیا لکھو۔ بتلاؤ تو سہی شملہ آتے ہوئے راستہ میں آپکے گورو جی غیرہ کو دو انبالہ لودھیانہ سے کیا جواب ملا۔ تم کہو تو خاک لکھنے کو تو تمہارا جی چاہتا ہے۔ مگر کیا لکھو۔ افسوس۔

لاہور سے چلکر لالہ لاجپت رائے جی سیدھے ایبٹ آباد ہی پہونچے۔ کیا راستہ میں کوئی سماج کا حامی نہ بنا یا یہہ کہ روند بر روند گئے۔

unpopularity سے ڈر کر اب جمع کیا کرایا کے سمیٹنے کی فکر ہے۔ بے شک کالج سے سب کو ہمدردی ہے۔ ایسے حساب سے گزشتہ سوسائٹی کے جلسہ پر کثرت رائے کالج کے موجودہ انتظام کے حق میں ہوگی۔

جالندھر کی ہر ایک بات سے ماس پرچارکوں کو خوف آتا ہے۔ کیا لالہ لاجپت رائے کو جوڈلوں کی ایوسی سے خوف چھایا وہ سب نے بانٹ لیا ہے۔ ماس پرچارک آرگن لکھتا ہے۔ کہ جالندھر کی برادریوں نے مشنری گرلز سکولوں سے اور مہاودیالہ سے لڑکیوں کو روک لیا۔ اور اسی طرح مہاودیالہ کو بدنام کرنا چاہتا ہے۔ بات صرف اتنی ہوئی ہے۔ کہ دو لڑکیاں بیوہ عیسائی ہونے لگی تھیں۔ ایک ہو بھی گئی۔ اسلئے برادری کے لوگوں نے جنکی کثرت اندرہ آدمیوں کی ہے

Registered No. L. 39

ओ३म्

सद्धर्म-प्रचारक

THE SADDHARMA PRACHARAK.

यस्तन्नवेद किमृचा करिष्यति । ऋक० ॥
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे । यजु० ॥

वार्षिक मूल्य *
सर्व साधारण से .... ३।)
विद्यार्थियों से .... २॥)
भारत भिन्न देशों से ५=)

विज्ञापन की छपाई के नियम

सम्पादक—महाशय मुन्शीराम
मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल ।

सहायक सम्पादक—महाशय ब्रह्मानन्द
भूतपूर्व सम्पादक ... आर्य्यावर्त्त

भाग १८ } श्रीमद्दयानन्दाब्द २४
जालन्धर नगर शुक्रवार २५* फाल्गुन सं० १९६२ ता० ८ मार्च ... ई० } संख्या ४८

* यह सौर वर्ष के अनुसार है । गताङ्क में चान्द्र वर्ष के अनुसार चैत्र कृष्ण २ सं० १९६३ भूल से छपगया था । पूर्व नियमानुसार आगामी अङ्कों में भी सौर वर्ष की ही तिथि दी जाया करेगी ।

हिन्दी सद्धर्म प्रचारक के मुख पृष्ठ की छवि।

ओ३म्

"हम प्रातःकाल श्रद्धा को बुलाते हैं, मध्याह्न काल में श्रद्धा
को बुलाते हैं"

श्रद्धा

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।
(ऋ० मं० १ सू० १० सू० १५१, मं० ५)
"सूर्यास्त के समय भी श्रद्धा को बुलाते हैं । हे श्रद्धे ! यहां
(इसी समय) [illegible] "

सम्पादक—श्रद्धानन्द सन्यासी

शुक्रवार को
[illegible]शित होता है

१२ वैशाख सं० १९७७ वि० { दयानन्दाब्द ३७ } ता० २३ अप्रैल सन् १९२० ई०

संख्या १
भाग १

ओ३म्

श्रद्धाञ्जलिः

दीक्षमाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
[illegible]या श्रद्धामाप्नोति श्रद्धयासत्यमाप्यते ॥ यजु० १९ । ३० ॥
[illegible]ग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयतेहविः ।
[illegible]भगस्यमूर्धनि, वचसा वेदयामसि ॥ ऋग्वेद । मं० १० । सूक्त १५१ ॥

[illegible]को धारण कर होते हैं नर दीक्षाके अधिकारी ।
[illegible]त होने से मिलती है पुण्य दक्षिणा सुखकारी ।
[illegible] दक्षिणा मन में श्रद्धा का अंकुर उपजाती है ।
असत्य को दूर हटा कर सत्य प्राप्त करवाती है ॥ १ ॥
कुण्ड में श्रद्धा से ही अग्निदीप्त की जाती है ।
ही उस दीप्त अग्नि में आहुति भी दिलवाती है ।
ही बन मुकुट, धर्म के सिर पर शोभा पाती है ।
की यह अद्भुत महिमा श्रुति स्वयं बतलाती है ॥ २ ॥
२ जहां तर्क के पंख मंद होजाते हैं ।
विफल हो प्रतिभा के भी नेत्र बंद होजाते हैं ।
भाव से जहां कि तारे झिलमिल २ करते हैं ।
हृदय अति उन्नत, वहां स्वतन्त्र विचरते हैं ॥ ३ ॥
[illegible]र की विमल कला से हृदय कुमुद खिलजाता है ।
[illegible]शान्ति के रम्य राग में सुख अनुपम मिलजाता है ।
[illegible]क विक्षोभ जहां से नीचे ही रह जाते हैं ।
शुभ दृश्य यहां पर अपनी छटा दिखाते हैं ॥ ४ ॥
हटा तिमिर, आलोकमयी शुभ उषा मनोहर आती है ।
खिलीं लतायें झूम रहीं हैं कोकिल कूक सुनाती है ।
श्रद्धा को यह मञ्जुअञ्जलो है बसन्त का नव उपहार ।
प्रिय पाठक ! स्वीकार कीजिये सुख गुम्फित नित सुरभित हार ॥५॥

"धात्री"

श्रद्धा

हे ! भीम झञ्झावात ! बस तेरी कुटिल चालें रहें,
उन कंटीली झाड़ियों में वेग से जा कर बहें ।
देख, श्रद्धा-कुसुम का होता यहां उल्लास है,
स्वर्गीय-पावन-रम्य ओह ! कैसा मधुरतमहास है ॥ १ ॥
इस की मनोहर क्यारि में कैसी अनूठी गन्ध है,
सारा महकता बाग़ है करतीं सभी दुर्गन्ध हैं ।
प्रेममय-अमृत-जलों से एक इस को सींचते,
स्वच्छन्द हो, निर्भीक हो, भौंरे यहां हैं गूंजते ॥ २ ॥
विषमय पवन इसके मृदुलतम देह का बस स्पर्श कर,
होता सुरभिमय छोड़ देता एकदम अपनी लहर ।
संसार के सब रूप हैं इसकी मनोहर कान्ति में,
रहता सदा इस से ही यह सारा जगत् सुख शान्ति में ॥ ३ ॥
सच्चे हृदय का एक ये ही तन्तु तव आधार है,
जुड़ता यहीं-पर सब निराला एकता का तार है ।
क्या रङ्क क्या राजा सभी हैं एक सम सुस्थान में,
हर बहीं, ईर्ष्या नहीं जाकर यहां उस स्थान में ॥ ४ ॥

"आनन्द"

'श्रद्धा' के मुख पृष्ठ की छवि।

The Liberator.

SUBSCRIPTION
Rs. 4 per year
Post Free.

अदीनाः स्याम् शरदः शतम ।

PRICE
Single copy.
One anna

Editor—Shraddhanand Sanyasi. *Joint Editor*—P. R. Lele, B. A., LL.B.

PUBLISHED AT DELHI EVERY THURSDAY.

Vol. I. | DELHI, THURSDAY 1st APRIL, 1926. | No. 1.

In and out of the Congress.

Long before the first Congress met in the name of the Indian nation, and a few oligarchs passed certain resolutions in a drawing room in Bombay, I was a regular student of the Pioneer and the Lahore Tribune. I knew as much about the political movements in the country as a citizen was expected to know.

The first time that I heard of the proposal to start a national political society was, probably, in September 1885 A. D., when Mr. Allan O'Hume made a tour through India for inducing educated Indians to join the new movement. Mr. Hume brought out a pamphlet with the title—"Star in the East"—and went round distributing it and interviewing prominent Indians with a view to enlisting their sympathy for the new movement. I was, then, in Lahore attending lectures for my final examination in law and had become a member of the Aryasamaj. Mr. Hume found that he was not trusted by the Indian gentlemen there. Some put him off with the excuse that they had no leisure, others promised to think over the matter. If any one of them was taken unawares and promised to join the movement he was sure to send an apologetic letter the next day with some pretext to back out of his promise.

Mr. Hume was much put out at his failure to secure the sympathy of the Panjabis. Full of energy, he set to an inquiry and found that the mischief was done by an Aryasamajist M. A. who held a responsible post under the British Government. [illegible] materials for exposing the gentleman publicly, the impulsive Mr. Hume wrote to the President of the Lahore Aryasamaj [illegible] member of the [illegible] founded by the revered [illegible] Pandit Dayanand Saraswati Swami.

After that a few intellectuals from all parts of the country met under the presidentship of the late Mr. W. C Bonnerji and laid the foundation of a patriotic oligarchy under the title of "the Indian National Congress." I followed the proceedings of the Congress—as it was called—and its activities with great attention.

In 1888 A D. I came in somewhat close touch with the national movement. The session of the Congress was to be held in the last week of December 1888 at Allahabad. Sir Auckland Colvin was Lieutenant Governor of the United Provinces, of which Allahabad was the capital. Sir A. Colvin issued a secret circular prohibiting Government servants from joining the Congress and placed other obstacles in its way. Mr. Hume wrote a stringent letter of protest putting straight, inconvenient questions to the Governor who wrote a strong reply and sent it to the Press.

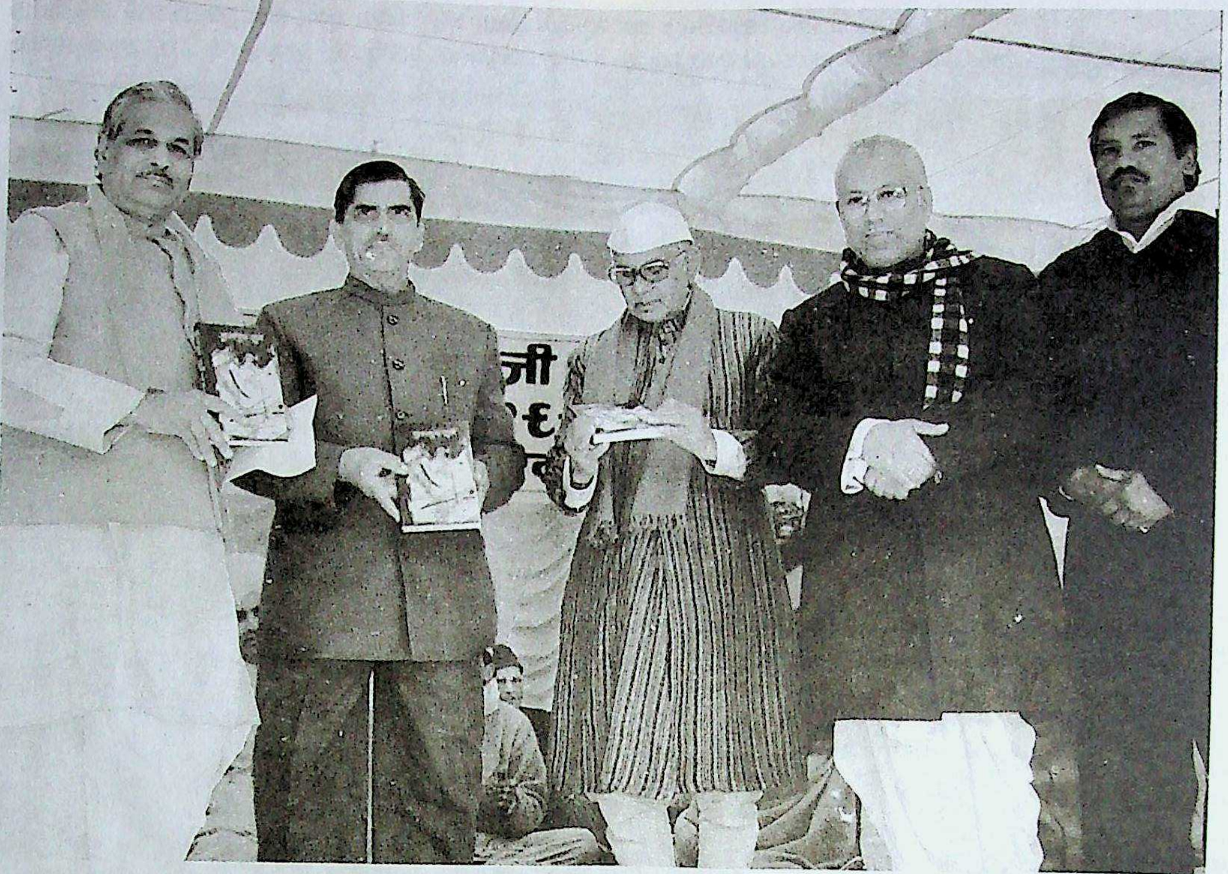
No sooner was the Lieutenant Governor's printed reply received by Mr. Hume at Simla than a counter-reply was prepared within 12 hours which appeared in pamphlet form covering some 80 printed pages. It was a crushing rejoinder and roused the Indian community to a sense of their duty. Sir Syed Ahmed Khan's anti Congress Muslim (miscalled Patriotic) League had already come into existence and was strengthening the hands of the beaurocracy in their divide and rule policy.

Both the Congress and the anti-Congress propaganda were pushed on in the Panjab. Kali Babu, then sub-Editor of the Lahore Tribune, was deputed to establish a Congress Committee at Jalandhar City where I was practising as a Pleader. Kali was a friend of mine and an Aryasamajist. I called to my [illegible] relation and friend Lala Balak Ram. He was a Municipal

अंग्रेजी पत्र लिबरेटर के मुख पृष्ठ की छवि।



अमृतसर कांग्रेस 1919 के अधिवेशन की अध्यक्षता श्री मोतीलाल नेहरू ने की थी। इसके स्वागताध्यक्ष स्वामी श्रद्धानंद महाराज थे। चित्र में कुर्सी पर श्री मोतीलाल नेहरू के बायीं तरफ स्वामी श्रद्धानंद, फिर श्रीमती एनीबेसेंट तथा पं. मदनमोहन मालवीय बैठे हुए हैं।



स्वामी श्रद्धानंद बलिदान पर्व पर गुरुकुल के उद्भव एवं विकास की यात्रा का सर्वेक्षण प्रस्तुत करनेवाली कृति 'कुलपुत्र सुनें' का विमोचन पूर्व केंद्रीय मंत्री एवं गुरुकुल के वर्तमान परिद्रष्टा प्रो. शेरसिंह ने किया। चित्र में बायें से डॉ. धर्मपाल (कुलपति), श्री सूर्यदेव (कुलाधिपति), प्रो. शेरसिंह (परिद्रष्टा), डॉ. विष्णुदत्त राकेश (निदेशक, श्रद्धानंद प्रकाशन केंद्र), डॉ. जगदीश विद्यालंकार (पुस्तकालयाध्यक्ष) हैं।



श्री स्वामी श्रद्धानन्द अनुसन्धान प्रकाशन केन्द्र के प्रकाशन

स्वामी श्रद्धानन्द	*पं. सत्यदेव विद्यालंकार*	500.00
वेद का राष्ट्रीय गीत	*वेदमार्तण्ड आचार्य; आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति*	200.00
श्रुतिपर्णा	*डॉ. विष्णुदत्त राकेश*	95.00
वैदिक साहित्य, संस्कृति और समाजदर्शन	*डॉ. विष्णुदत्त राकेश*	500.00
वेद और उसकी वैज्ञानिकता भारतीय मनीषा के परिप्रेक्ष्य में	*आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति*	300.00
शोध सारावली	*सम्पादित*	220.00
भारतवर्ष का इतिहास *(दो खंडों में)*	*आचार्य रामदेव*	350.00
Glimpses of Environmental Percepts	*Dr. B.D. Joshi*	50.00
Classical Writings on Vedic & Sanskrit Literature	*Dr. Suryakant Shrivastava* *Dr. Jagdish Vidyalankar*	800.00
दीक्षालोक	*सं. डॉ. विष्णुदत्त राकेश; डॉ. जगदीश विद्यालंकार*	500.00
स्वामी श्रद्धानन्द *(समग्र मूल्यांकन)*	*डॉ. रणजीत सिंह*	300.00
पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति कृतित्व के आयाम	*डॉ. कुशलदेव शंकरदेव कापसे*	300.00
स्वामी श्रद्धानन्द के सम्पादकीय लेख	*सं. डॉ. विष्णुदत्त राकेश; डॉ. जगदीश विद्यालंकार*	500.00
कुलपुत्र सुनें	*सं. डॉ. विष्णुदत्त राकेश; डॉ. जगदीश विद्यालंकार*	300.00